PDMTI S1 01

One year postgraduate Diploma Programme
(CBCS and Accordance with NEP 2020)

1st Semester

अनुवाद: सिद्धांत, परंपरा और आयाम

“बाधाओं से परे शिक्षा—
सुलभ, समावेशी और समान अवसर आधारित अधिगम का संकल्प”
- कृष्णकांत हेंदिक

“Education Beyond Barriers —
A Commitment to Accessible, Inclusive, and Equity-Based Learning.”
-Krishna Kanta Handique

विषय विशेषज्ञ

प्रोफ़ेसर देवराज सेवानिवृत ,अनुवाद एवं निर्वचन विद्यापीठ ,प्रोफ़ेसरवर्धा ,एमजीएएचवी ,

प्रोफ़ेसर हरीश कुमार सेठी दिल्ली ,इग्नू ,निर्देशक ,अनुवाद अध्ययन एवं प्रशिक्षण विद्यालय ,

प्रोफ़ेसर दिलीप कुमार मेधी, हिंदी विभाग, गौहाटी विश्वविद्यालय, असम

एसोसिएट प्रोफ़ेसर मनोज कुमार स्वामीरवीन्द्रनाथ टैगोर विश्व ,हिंदी विभाग ,विद्यालय ,(विभागाध्यक्ष)असम

पाठ्यक्रम समन्वयक: डॉउज्जवल डेका बरुआ .,सहायक प्राध्यापक, कृष्णकांत हेंदिक राज्यिक मुक्त विश्वविद्यालय, असम

एसएलएम् तैयारी टीम

इकाइयाँ	**योगदानकर्ताओं के नाम**
1-14	.उज्जवल डेका बरुआ, सहायक प्राध्यापक, कृष्णकांत हेंदिक राज्यिक मुक्त विश्वविद्यालय, असम

Editors

Content	:	डॉ सहायक , टिंकू छेत्री .प्राध्यापिका, कृष्णकांत हेंदिक राज्यिक मुक्त विश्वविद्यालय, असम
Language	**:**	विकास कुमार, सहायक प्राध्यापक, पीजीडीएवी महाविद्यालय सांध्य, दिल्ली
Structure & Format	**:**	डॉ. उज्जवल डेका बरुआ, सहायक प्राध्यापिका, कृष्णकांत हेंदिक राज्यिक मुक्त विश्वविद्यालय, असम

February, 2026

This Self Learning Material (SLM) of the Krishna Kanta Handiqui State Open University is made available under a Creative Commons Attribution-Non Commercial-Share Alike 4.0 License (international) http://creativecommons.org/licenses/by-nc-sa/4.0/

ISBN: xxxxxxxxxxxxxxxxx

Printed and published by Registrar on behalf of the Krishna Kanta Handiqui State Open University.

Headquarters: Patgaon, Rani Gate, Guwahati - 781 017

City Campus: NH 37, Resham Nagar, Khanapara, Guwahati - 781 006; www.kkhsou.in

अनुक्रमणिका

इकाई 1 – अनुवाद: अर्थ, अवधारणा और स्वरूप **9-28**

अनुवाद' शब्द की संकल्पना और अर्थ-विस्तार, परिभाषाएँ: पारंपरिक और आधुनिक दृष्टियाँ, अनुवाद और रूपांतरण, अनुवाद की अवधारणाएं: भाषा, अर्थ और संदर्भ का संबंध, संप्रेषण प्रक्रिया के रूप में अनुवाद की अवधारणा, अनुवाद का स्वरूप: भाषिक, शैलीगत और सांस्कृतिक आयाम, अनुवाद का संदर्भ |

इकाई 2 – अनुवाद के विविध क्षेत्र **29-53**

अनुवाद के प्रकार: विद्वानों के विविध विचार, अनुवाद के प्रमुख प्रकार, अनुवाद के विविध क्षेत्र |

इकाई 3 – अनुवाद की चुनौतियाँ: भाषाई और सांस्कृतिक **54-68**

अनुवाद की चुनौतियाँ: अर्थ और स्वरुप, भाषा संरचनावादी और उत्तर-संरचनावादी अवधारणा, अनुवाद की समस्याएँ: बहुस्तरीय परिप्रेक्ष्य, भाषिक संरचना से संबंधित चुनौतियाँ, सांस्कृतिक अंतर और अनुवाद की समस्या |

इकाई 4 – भारतीय अनुवाद- चिंतनधारा **69-78**

भारतीय अनुवाद की प्रारंभिक चिंतनधारा, प्राचीन भारत का राजकाज और अनुवाद चिंतन, मुगलकालीन अनुवाद चिन्तक, देशीय अनुवाद चिन्तक की कुछ आतंरिक धाराएं |

इकाई 5 – पाश्चात्य अनुवाद- चिंतनधारा **79-91**

पाश्चात्य अनुवाद चिंतकों की परंपरा (1950-वर्तमान तक), पाश्चात्य अनुवाद चिंतक: दृष्टि एवं अनुवाद संबंधी दृष्टिकोण, पाश्चात्य अनुवाद चिंतकों की अवधारणा: उपयोगिता / प्रासंगिकता,अनुवाद का स्वरूप: अनुवाद चिंतकों की अवधारणाओं के संदर्भ में |

इकाई 6 – अनुवाद: अनुसृजन, पुनर्लेखन एवं नवलेखन **92-101**

अनुवाद और सर्जनात्मक साहित्य, अनुवाद और अनुसृजन, अनुवाद और पुनर्लेखन, पुनर्लेखन की प्रक्रिया के रूप में अनुवाद: पाठीय हस्तक्षेप का साधन, अनुवाद और नवलेखन |

इकाई 7 – भारतीय अनुवाद परंपरा: प्राचीन, मध्यकालीन और आधुनिक **102-118**

भारतीय अनुवाद परंपरा की प्राचीनता एवं उसके विविध ऐतिहासिक सोपान, मध्यकालीन अनुवाद परंपरा, हिंदुस्तानी पाठ के अरबी और फ़ारसी अनुवाद की परंपरा, अरबी ग्रंथों के भारतीय भाषाओं में अनुवाद, फारसी भाषा के दस्तावेजों का भारतीय भाषा में अनुवाद, उपनिवेशकालीन भारतीय अनुवाद की परंपरा, आधुनिक काल में संस्कृत, अरबी फारसी के हिंदी एवं अन्य भाषाओँ में अनुवाद, स्वतंत्रोत्तर भारत में अनुवाद की स्थिति, आधुनिक काल में अनुवाद का विस्तार |

इकाई 8 – पाश्चात्य अनुवाद परंपरा: प्राचीन, मध्यकालीन और आधुनिक **119-141**

प्राचीन विश्व में अनुवाद परंपरा, मध्यकालीन पश्चिम की अनुवाद परंपरा, औपचारिक अनुवाद परंपरा, आधुनिक युग में अनुवाद (19वीं–20वीं शताब्दी), अमेरिकी अनुवाद परंपरा एवं आधुनिक अनुवाद सिद्धांत कनाडाई अनुवाद परंपरा और सिद्धांत"

इकाई 9 – अनुवाद अध्ययन: ज्ञानानुशासन के रूप में यात्रा **142-151**

ज्ञानानुशासन के रूप में अनुवाद अध्ययन: अर्थ, निर्मिति और विकास, अनुवाद और भाषा विज्ञान, अनुवाद अध्ययन: अंतर-अनुशासनिक दृष्टि और वैचारिक संरचना,अनुवाद और सांस्कृतिक दृष्टि, तुलनात्मक साहित्य में अनुवाद की अवधारणा और अनुवाद अध्ययन का विकास, अनुवाद अध्ययन की आगामी संभावनाएँ

इकाई 10 – अनुवाद का पुनर्निरीक्षण और समीक्षा **152-183**

पुनरीक्षण: अर्थ एवं परिभाषा,अनुवाद में पुनरीक्षण: भाषिक, अर्थगत और शैलीगत परिष्कार, पुनरीक्षण: भूमिका, प्रशिक्षण और उपयोगिता, पुनरीक्षण का अभ्यास, अनुवाद मूल्यांकन के प्रमुख परीक्षण एवं मुख्य आयाम ,अनुवाद समीक्षा: स्वरूप, भेद और साहित्यिक तुलनात्मक दृष्टि, अनुवाद समीक्षा: साहित्येतर संदर्भ

इकाई 11 – अनुवाद: उत्तर आधुनिकता और अस्मिताओं के संदर्भ में **184-198**

उत्तर आधुनिकता की संकल्पना, अस्मिता की अवधारणा,उत्तर आधुनिकता और अस्मिता का अंतर्संबंध, उत्तर आधुनिकतावाद एवं अनुवाद - वैचारिक अवधारणा, पैरोडी एवं पेश्टीच, माध्यम के माध्यम से विचार प्रस्तुति, दलित साहित्य के अनुवाद की वैचारिकी, दृश्य अनुकूल और प्रसारण अनुकूल शैली, चित्र और संकेतों से भाव प्रस्तुति, पाठ की उपयोगिता स्त्रीपाठ की दृष्टि

इकाई 12 – भूमंडलीकरण, बाजारवाद और अनुवाद **199-208**

भूमंडलीकरण की अवधारणा, भूमंडलीकरण के प्रमुख आयाम, बाजारवाद का अर्थ, बाजारवाद की विशेषताएँ, भूमंडलीकरण और बाजारवाद का अंतर्संबंध,अनुवाद: अवधारणा और स्वरूप, भूमंडलीकरण के संदर्भ में अनुवाद बाजारवाद के संदर्भ में अनुवाद

इकाई 13 – लिप्यान्तरण और लिप्यंकन **209-219**

लिप्यंतरण और लिप्यंकन: अभिप्राय,अनुवाद और लिप्यंतरण के बीच भेद, लिप्यंकन: अवधारणा, पद्धति और अनुवाद, अनुवाद प्रक्रिया में लिप्यंतरण: शब्द प्रकार और उपयोगिता", देवनागरी–रोमन लिप्यंतरण,भारतीय भाषाओं के मध्य लिप्यंतरण

इकाई 14 – अनुवाद की सीमाएं **220-233**

अनुवाद की सीमाएँ, अर्थ एवं स्वरूप, भाषा की प्रकृति के स्तर पर अनुवाद की सीमाएँ ,सामाजिक सांस्कृतिक संदर्भ में अनुवाद की सीमाएँ, लोकोक्ति मुहावरों का अनुवाद,अनुवाद की स्थानीयपरक सीमाएँ,पाठ की प्रकृति और अनुवाद की सीमाएँ,वैज्ञानिक और तकनीकी साहित्य के पाठ के स्तर पर अनुपाद

विषय प्रवेश

कृष्णकांत हेंदिक राज्यिक मुक्त विश्वविद्यालय के एक वर्षीय स्नातकोत्तर डिप्लोमा कार्यक्रम के प्रथम सेमेस्टर में सम्मिलित "अनुवाद: सिद्धांत, परंपरा और आयाम" पत्र अनुवाद अध्ययन को एक संगठित और स्वतंत्र ज्ञान-विषय के रूप में प्रस्तुत करने वाला महत्वपूर्ण पाठ्यक्रम है। यह पाठ्यक्रम अनुवाद को केवल भाषा परिवर्तन की साधारण क्रिया न मानकर एक गहन वैचारिक, सांस्कृतिक और सृजनधर्मी प्रक्रिया के रूप में समझने की दृष्टि प्रदान करता है। बहुभाषिक समाज में ज्ञान, साहित्य और विचारों के आदान-प्रदान में अनुवाद की केंद्रीय भूमिका को यह पाठ्यक्रम क्रमबद्ध रूप से स्पष्ट करता है। इस पत्र के अंतर्गत अनुवाद की मूल अवधारणा, अर्थ-विस्तार, स्वरूप और कार्य-प्रकृति का व्यवस्थित अध्ययन कराया गया है। साथ ही अनुवाद के सिद्धांतों, परंपराओं और विकसित होते आयामों को समग्र रूप में समझाया गया है, जिससे शिक्षार्थी अनुवाद को एक बहुआयामी बौद्धिक गतिविधि के रूप में ग्रहण कर सकें। इसमें अनुवाद की प्रक्रिया, उसके प्रकार, कार्यक्षेत्र और व्यवहारिक सीमाओं पर भी विस्तार से विचार किया गया है। इस अध्ययन से विद्यार्थी यह समझ पाएंगे कि अनुवाद भाषा और संस्कृति के बीच सक्रिय सेतु के रूप में कैसे कार्य करता है।

पाठ्यक्रम की संरचना इस प्रकार तैयार की गई है कि शिक्षार्थियों में केवल सैद्धांतिक जानकारी ही न बढ़े, बल्कि विश्लेषण क्षमता, भाषिक सजगता और संदर्भ-बोध भी विकसित हो। आरंभिक इकाइयों में अनुवाद के अर्थ, स्वरूप, प्रकार और भाषाई-सांस्कृतिक चुनौतियों पर ध्यान केंद्रित किया गया है, जिससे आधारभूत समझ निर्मित होती है। इसके उपरांत भारतीय और पाश्चात्य अनुवाद-चिंतन तथा परंपराओं का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत है, जो अनुवाद-विमर्श के ऐतिहासिक विकास को समझने में सहायक है। इस पत्र में अनुवाद को पुनर्लेखन, अनुसृजन और नवलेखन की दृष्टि से भी देखा गया है, जिससे स्पष्ट होता है कि अनुवाद कई स्थितियों में रचनात्मक पुनर्निर्माण का रूप ग्रहण कर लेता है। अनुवाद अध्ययन को एक ज्ञानानुशासन के रूप में स्थापित करते हुए उसके भाषा-विज्ञान, तुलनात्मक साहित्य और सांस्कृतिक अध्ययन से अंतर्संबंधों पर भी प्रकाश डाला गया है। इससे विद्यार्थियों को अनुवाद के अंतर्विषयी स्वरूप की स्पष्ट समझ प्राप्त होती है।

आगे की इकाइयों में अनुवाद के पुनर्निरीक्षण, परीक्षण और समीक्षा की प्रक्रियाओं को समझाया गया है, जिससे अनूदित पाठ की गुणवत्ता का मूल्यांकन करने की दृष्टि विकसित होती है। उत्तर आधुनिक विचारधाराओं, अस्मिता विमर्श, दलित और स्त्री लेखन के संदर्भ में अनुवाद की भूमिका को भी रेखांकित किया गया है, जो अनुवाद को सामाजिक और वैचारिक हस्तक्षेप के माध्यम के रूप में सामने लाता है।

वर्तमान वैश्विक परिवेश में भूमंडलीकरण, बाजारवाद और बहुभाषिक संचार के बढ़ते प्रभाव के बीच अनुवाद की उपयोगिता और आवश्यकता को भी इस पाठ्यक्रम में समुचित स्थान दिया गया है। लिप्यंतरण और लिप्यंकन जैसी तकनीकी प्रक्रियाओं के साथ-साथ अनुवाद की व्यावहारिक तथा सैद्धांतिक सीमाओं पर भी विचार किया गया है, ताकि शिक्षार्थी यथार्थपरक अनुवाद दृष्टि विकसित कर सकें। प्रत्येक इकाई को स्व-अध्ययन की दृष्टि से व्यवस्थित किया गया है। इकाइयों में रूपरेखा, उद्देश्य, मुख्य विवेचन, महत्वपूर्ण बिंदु, प्रगति-जाँच, अभ्यास प्रश्न और आगे अध्ययन के संकेत दिए गए हैं। इस प्रकार शिक्षार्थी अध्ययन के साथ-साथ स्वयं मूल्यांकन भी कर सकेंगे और इकाई से संबंधित प्रश्नों का समाधान करने में सक्षम बनेंगे। समग्र रूप में यह पाठ्यक्रम अनुवाद को एक सृजनात्मक, विश्लेषणात्मक और सांस्कृतिक कौशल के रूप में विकसित करता है तथा विद्यार्थियों को बहुभाषिक ज्ञान-संसार और साहित्यिक संवाद से सक्रिय रूप से जोड़ने का कार्य करता है।

इकाई 1 – अनुवाद: अर्थ, अवधारणा और स्वरूप : सबसे पहले यह इकाई अनुवाद की मूल बौद्धिक आधारभूमि तैयार करती है। इसमें अनुवाद शब्द की उत्पत्ति, अर्थ-विस्तार, पारंपरिक और आधुनिक परिभाषाओं का विवेचन किया जाएगा। भाषा, अर्थ और संदर्भ के त्रिस्तरीय संबंध को स्पष्ट करते हुए अनुवाद को संप्रेषण की सृजनात्मक प्रक्रिया के रूप में समझाया जाएगा। अनुवाद और रूपांतरण के बीच के भेद, समतुल्यता की अवधारणा तथा व्यापक और

सीमित संदर्भों का अध्ययन भी शामिल है। इस इकाई से शिक्षार्थी अनुवाद-विमर्श की बुनियादी शब्दावली और वैचारिक ढाँचे को समझ पाएंगे तथा आगे की इकाइयों के अध्ययन के लिए सैद्धांतिक तैयारी प्राप्त करेंगे।

इकाई 2 – अनुवाद के विविध क्षेत्र : इसके पश्चात यह इकाई अनुवाद के बहुविध कार्यक्षेत्रों की जानकारी प्रदान करती है। यहाँ साहित्यिक, वैज्ञानिक, तकनीकी, प्रशासनिक, मीडिया और व्यावसायिक अनुवाद के रूपों का परिचय कराया जाएगा। विभिन्न विद्वानों द्वारा दिए गए अनुवाद-प्रकारों के वर्गीकरण को सरल रूप में समझाया जाएगा। साथ ही यह भी बताया जाएगा कि विषय, पाठक-वर्ग और उद्देश्य के अनुसार अनुवाद की शैली और पद्धति बदलती है। इस इकाई का अध्ययन विद्यार्थियों को यह समझने में सहायता देगा कि अनुवाद केवल साहित्य तक सीमित न रहकर ज्ञान-विस्तार और व्यवहारिक जीवन का भी महत्वपूर्ण उपकरण है।

इकाई 3 – अनुवाद की चुनौतियाँ: भाषाई और सांस्कृतिक : यह खंड अनुवाद प्रक्रिया में उपस्थित जटिलताओं को केंद्र में रखता है। भाषिक संरचना के अंतर, बहुअर्थक शब्द, मुहावरे, लोकोक्तियाँ और सांस्कृतिक संकेत किस प्रकार अनुवाद को कठिन बनाते हैं, इसका विश्लेषण किया जाएगा। संरचनावादी और उत्तर-संरचनावादी दृष्टिकोणों के संदर्भ में अर्थ-निर्माण की समस्याओं पर भी विचार होगा। उदाहरणों के माध्यम से यह स्पष्ट किया जाएगा कि शब्द समानता हमेशा अर्थ समानता नहीं देती। इस इकाई के अध्ययन से शिक्षार्थियों में समस्या-पहचान और समाधान-उन्मुख अनुवाद दृष्टि विकसित होगी तथा वे व्यावहारिक अनुवाद में सावधानियाँ बरतना सीखेंगे।

इकाई 4 – भारतीय अनुवाद-चिंतनधारा : भारतीय बौद्धिक परंपरा की ओर उन्मुख यह इकाई देशज अनुवाद दृष्टियों का परिचय कराती है। प्राचीन ग्रंथों, धार्मिक साहित्य, राजकीय प्रयोजनों और ज्ञान-संप्रेषण में अनुवाद की भूमिका को ऐतिहासिक क्रम में समझाया जाएगा। भारतीय चिंतकों द्वारा प्रतिपादित विचारों और प्रवृत्तियों का उल्लेख किया जाएगा। अनुवाद को व्याख्या, अनुकरण और पुनर्प्रस्तुति के रूप में कैसे देखा गया — इस पर भी चर्चा होगी। इस इकाई से विद्यार्थियों को भारतीय संदर्भ में अनुवाद की वैचारिक जड़ों का ज्ञान होगा और वे समझ सकेंगे कि भारतीय परंपरा में अर्थ-संरक्षण और भाव-निष्ठा को विशेष महत्व दिया गया है।

इकाई 5 – पाश्चात्य अनुवाद-चिंतनधारा : पश्चिमी विचारधारा पर केंद्रित यह इकाई प्रमुख अनुवाद सिद्धांतकारों और उनके मतों का व्यवस्थित परिचय देती है। अर्थ-निष्ठा, शैली-निष्ठा, डायनामिक इक्विवैलेंस, फंक्शनल दृष्टिकोण तथा पाठ-समतुल्यता जैसे सिद्धांतों की व्याख्या की जाएगी। प्राचीन से आधुनिक काल तक विकसित विचार-परंपराओं को तुलनात्मक ढंग से रखा जाएगा। इस अध्ययन से शिक्षार्थी जानेंगे कि पाश्चात्य चिंतन ने अनुवाद को एक वैज्ञानिक और विश्लेषणात्मक अनुशासन के रूप में विकसित करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। यह इकाई सैद्धांतिक समझ को अंतरराष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य प्रदान करती है।

इकाई 6 – अनुवाद: अनुसृजन, पुनर्लेखन एवं नवलेखन : रचनात्मक विस्तार को सामने लाती यह इकाई अनुवाद और पुनर्सृजन के संबंधों पर विचार करती है। इसमें अनुवाद को केवल भाषांतरण नहीं, बल्कि कई स्थितियों में पुनर्लेखन और नवलेखन की प्रक्रिया के रूप में समझाया जाएगा। पाठीय हस्तक्षेप, शैली परिवर्तन और सृजनात्मक अनुकूलन के उदाहरणों पर चर्चा होगी। यह भी स्पष्ट किया जाएगा कि कब अनुवाद मूल के निकट रहता है और कब अनुसृजन का रूप ले लेता है। इस इकाई के माध्यम से विद्यार्थी अनुवादक की सृजनात्मक भूमिका और उसकी जिम्मेदारी को बेहतर ढंग से समझ सकेंगे।

इकाई 7 – भारतीय अनुवाद परंपरा: प्राचीन, मध्यकालीन और आधुनिक : ऐतिहासिक विकासक्रम को प्रस्तुत करती यह इकाई भारतीय अनुवाद परंपरा की यात्रा का विस्तृत चित्र देती है। संस्कृत से लोकभाषाओं में, अरबी-फारसी से भारतीय भाषाओं में तथा उपनिवेशकालीन अनुवाद प्रयासों का उल्लेख किया जाएगा। आधुनिक काल में अनुवाद के संस्थागत और शैक्षणिक विस्तार पर भी विचार होगा। इससे शिक्षार्थी समझ पाएंगे कि भारतीय समाज में ज्ञान-संचार

और सांस्कृतिक सेतु-निर्माण में अनुवाद की निरंतर भूमिका रही है। यह इकाई ऐतिहासिक चेतना और भाषाई समन्वय की दृष्टि विकसित करती है।

इकाई 8 – पाश्चात्य अनुवाद परंपरा: प्राचीन, मध्यकालीन और आधुनिक : इतिहास की दूसरी धारा को सामने रखती यह इकाई पश्चिमी विश्व में अनुवाद की परंपरा का क्रमिक अध्ययन कराती है। धार्मिक ग्रंथों के अनुवाद, शास्त्रीय युग, मध्यकालीन प्रयासों और आधुनिक संस्थागत अनुवाद आंदोलनों की चर्चा की जाएगी। अमेरिकी और कनाडाई सिद्धांतों का भी संक्षिप्त परिचय मिलेगा। इस इकाई से विद्यार्थियों को यह बोध होगा कि अनुवाद ने विश्व स्तर पर ज्ञान और साहित्य के प्रसार में केंद्रीय भूमिका निभाई है तथा विभिन्न युगों में उसकी प्रकृति बदलती रही है।

इकाई 9 – अनुवाद अध्ययन: ज्ञानानुशासन के रूप में यात्रा : शैक्षणिक दृष्टि से महत्वपूर्ण यह इकाई अनुवाद अध्ययन को स्वतंत्र अनुशासन के रूप में स्थापित करती है। इसमें अनुवाद और भाषा-विज्ञान, सांस्कृतिक अध्ययन तथा तुलनात्मक साहित्य के अंतर्संबंधों की चर्चा होगी। अनुवाद अध्ययन की निर्मिति, विकास और वर्तमान स्थिति का विश्लेषण किया जाएगा। विद्यार्थी जानेंगे कि अनुवाद अब केवल कौशल नहीं, बल्कि शोध और सिद्धांत का विषय भी है। यह इकाई उच्च स्तरीय अकादमिक समझ विकसित करने में सहायक सिद्ध होगी।

इकाई 10 – अनुवाद का पुनर्निरीक्षण और समीक्षा : व्यावहारिक गुणवत्ता पर केंद्रित यह इकाई अनुवाद के पुनरीक्षण और मूल्यांकन की पद्धतियों को स्पष्ट करती है। भाषिक, अर्थगत और शैलीगत सुधार के उपायों का वर्णन किया जाएगा। अनुवाद समीक्षा के मानदंड, परीक्षण और तुलनात्मक विश्लेषण की प्रक्रिया समझाई जाएगी। इससे विद्यार्थी अनूदित पाठ की गुणवत्ता परखने और उसे परिष्कृत करने की क्षमता विकसित करेंगे। यह इकाई पेशेवर अनुवाद अभ्यास के लिए विशेष रूप से उपयोगी है।

इकाई 11 – अनुवाद: उत्तर आधुनिकता और अस्मिताओं के संदर्भ में : विमर्शपरक दृष्टिकोण प्रस्तुत करती यह इकाई अनुवाद को उत्तर आधुनिक और अस्मिता-आधारित परिप्रेक्ष्य में रखती है। दलित, स्त्री और हाशियाई साहित्य के अनुवाद की वैचारिकी पर विचार होगा। माध्यम, प्रस्तुति और पाठ की वैचारिक उपयोगिता को समझाया जाएगा। यह स्पष्ट किया जाएगा कि अनुवाद सामाजिक प्रतिनिधित्व और वैचारिक हस्तक्षेप का माध्यम भी बन सकता है। इससे विद्यार्थियों में आलोचनात्मक और संवेदनशील दृष्टि विकसित होगी।

इकाई 12 – भूमंडलीकरण, बाजारवाद और अनुवाद : समकालीन संदर्भों से जुड़ी यह इकाई वैश्वीकरण और बाजार व्यवस्था के बीच अनुवाद की भूमिका को स्पष्ट करती है। बहुभाषिक संचार, ज्ञान उद्योग और भाषा की आर्थिक उपयोगिता पर चर्चा होगी। अनुवाद की मांग, अवसर और चुनौतियों का विश्लेषण किया जाएगा। इससे विद्यार्थी समझेंगे कि वर्तमान समय में अनुवाद वैश्विक संपर्क और व्यावसायिक विस्तार का महत्वपूर्ण साधन है।

इकाई 13 – लिप्यंतरण और लिप्यंकन : तकनीकी पक्ष पर केंद्रित यह इकाई लिप्यंतरण और लिप्यंकन की अवधारणाओं को स्पष्ट करती है। दोनों के भेद, पद्धति और उपयोग को उदाहरण सहित समझाया जाएगा। देवनागरी और रोमन सहित विभिन्न लिपियों के बीच रूपांतरण के नियम बताए जाएंगे। यह इकाई भाषा रूपांतरण की तकनीकी समझ विकसित करती है और अनुवाद कार्य में सहायक सिद्ध होती है।

इकाई 14 – अनुवाद की सीमाएँ : अंततः यह इकाई अनुवाद की व्यावहारिक और सैद्धांतिक सीमाओं का विवेचन करती है। भाषिक असमानता, सांस्कृतिक विशिष्टता, मुहावरों और तकनीकी पाठों के अनुवाद की कठिनाइयों पर चर्चा होगी। समतुल्यता की सीमा और अर्थ-हानि की संभावनाओं को स्पष्ट किया जाएगा। इससे विद्यार्थी संतुलित और यथार्थवादी अनुवाद दृष्टि विकसित करेंगे।

इकाई 1 - अनुवाद: अर्थ, अवधारणा और स्वरूप

इकाई की रुपरेखा

1.0 उद्देश्य
1.1 प्रस्तावना
1.2 अनुवाद' शब्द की संकल्पना और अर्थ-विस्तार
1.3 अनुवाद की परिभाषाएँ: पारंपरिक और आधुनिक दृष्टियाँ
1.4 अनुवाद और रूपांतरण
1.5 अनुवाद की अवधारणाएं: भाषा, अर्थ और संदर्भ का संबंध
1.6 संप्रेषण प्रक्रिया के रूप में अनुवाद की अवधारणा
1.7 अनुवाद का स्वरूप: भाषिक, शैलीगत और सांस्कृतिक आयाम
1.8 अनुवाद का संदर्भ
1.7.1 अनुवाद का व्यापक संदर्भ
1.7.2 अनुवाद का सीमित संदर्भ
1.8 सारांश
1.9 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)
1.10 अधिक जानने के लिए पढ़ें
1.11 अभ्यास प्रश्न

1.1 उद्देश्य:

इस इकाई के अध्ययन से आप:-

- अनुवाद शब्द की व्युत्पत्ति, ऐतिहासिक पृष्ठभूमि तथा भाषिक-सांस्कृतिक संदर्भ का स्पष्ट परिचय प्राप्त करेंगे।
- अनुवाद के विविध अर्थ, उसके भाषिक-भावात्मक और संदर्भगत स्तरों के सम्बन्ध में समझ विकसित करेंगे।
- अंतर्भाषिक, अंतर-भाषिक और अंतर-प्रतीकात्मक अनुवाद के प्रकारों एवं उसके व्यवहारिक उदाहरणों से अवगत रहेंगे।
- अनुवादप्रक्रिया में भाषा, अर्थ और संदर्भ के पारस्परिक संतुलन की पहचान कर पाएँगे।
- अनुवाद और रूपांतरण के बीच अंतर, समानताओं तथा समतुल्यता की कसौटियों का विश्लेषण कर सकेंगे।

1.1 प्रस्तावना

मानव सभ्यता के विकास में भाषा की भूमिका अत्यंत केंद्रीय रही है, क्योंकि भाषा ही वह माध्यम है जिसके द्वारा मनुष्य न केवल अपने विचारों, अनुभूतियों और ज्ञान को व्यक्त करता है, बल्कि अपने अस्तित्व और सांस्कृतिक स्मृतियों को भी संरक्षित करता है। विश्व की भाषाई विविधता मानव समाज की सांस्कृतिक समृद्धि का प्रतीक है तथा अलग-अलग

भाषाओं में विचार करने और अभिव्यक्त होने की क्षमता मनुष्य को विशिष्ट बनाती है। ऐसे बहुभाषिक संसार में परस्पर संवाद तभी संभव हो पाता है, जब विभिन्न भाषाओं के बीच कोई सेतु उपस्थित होऔर वह सेतु है- अनुवाद। अनुवाद मात्र शब्दों का रूपांतरण नहीं है, बल्कि वह अर्थ, भाव, शैली, संस्कृति और संदर्भ के रूपांतरण की सृजनात्मक प्रक्रिया है। किसी भी पाठ को दूसरी भाषा में रूपांतरित करते समय अनुवादक को स्रोत भाषा की भाषिक संरचना, सांस्कृतिक संकेतों, ऐतिहासिक पृष्ठभूमि और लेखक की मूल मंशा का सूक्ष्म अध्ययन करना आवश्यक है; तभी वह अर्थ का सही संप्रेषण कर सकता है। इसीलिए अनुवाद दो भाषाओं के बीच सेतु ही नहीं बनाता, बल्कि दो समाजों, संस्कृतियों और चिंतन-परंपराओं के बीच गहरा संवाद स्थापित करता है। प्राचीन सभ्यताओं में धार्मिक ग्रंथों के प्रसार, शिक्षा के विस्तार और सांस्कृतिक आदान-प्रदान के लिए अनुवाद एक आवश्यक उपकरण थी। भारतीय परंपरा में बौद्ध ग्रंथों के बहुभाषीय अनुवाद, उपनिषदों के विभिन्न भाषाई संस्करण, तथा रामायण-महाभारत के अनेक रूपांतर इस बात के प्रमाण हैं कि अनुवाद ने भारतीय ज्ञान-धारा और साहित्यिक चेतना को निरंतर समृद्ध किया है।

आधुनिक काल में वैश्वीकरण और तकनीकी विस्तार के कारण अनुवाद का महत्व और भी व्यापक हो गया है। यह अब केवल साहित्यिक जगत का विषय नहीं, बल्कि प्रशासन, शिक्षा, विज्ञान, न्याय, मीडिया, व्यापार और बहुराष्ट्रीय संपर्कों की एक अनिवार्य आवश्यकता बन चुका है। आज अनुवाद को एक स्वतंत्र, व्यावसायिक और बहु-विषयी शैक्षणिक अनुशासन के रूप में स्वीकार किया जाता है, क्योंकि इसकी प्रभावशीलता सीधे अर्थ-निर्माण और संप्रेषण की दक्षता से जुड़ी होती है। अनुवाद की प्रक्रिया में सबसे महत्वपूर्ण तत्व है- 'अर्थ'। अर्थ केवल शब्दों में निहितनहीं होता; वह संदर्भ, परिस्थिति, सांस्कृतिक संकेत, वक्ता की मंशा और पाठक की अपेक्षाओं से निर्मित होता है। इसी कारण कई शब्द ऐसे होते हैं जिनका सरल, एक-रेखी अनुवाद संभव नहीं होता; जैसे- धर्म, कला, संस्कृति, संस्कार- ये शब्द बहुस्तरीय अर्थों से भरे पड़े हैं, जो अनुवादक से विशेष संवेदनशीलता और विवेक की मांग करता है। अनुवाद मूलतः संप्रेषण की वह प्रक्रिया है जिसमें स्रोत भाषा से लक्ष्य भाषा में अर्थ का प्रवाह सहज रूप से होना चाहिए। इस प्रवाह को सफल बनाने के लिए दोनों भाषाओं के व्याकरण, शैली, ध्वनि-विन्यास, अर्थ-व्यवस्था और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि की गहन समझ आवश्यक है।अनुवादक के लिए संदर्भ की भूमिका अत्यंत निर्णायक होती है, क्योंकि संदर्भ के बिना न अर्थ स्पष्ट होता है और नसटीक अनुवाद। यही कारण है कि अनुवाद को केवल भाषाई कौशल नहीं, बल्कि एक रचनात्मक, विश्लेषणात्मक और सांस्कृतिक उत्तरदायित्व से पूर्ण क्रिया माना जाता है, जो मानवीय ज्ञान और वैश्विक संवाद को नई दिशा प्रदान करती है।

1.2 'अनुवाद' शब्द की संकल्पना और अर्थ-विस्तार

1.2.1अनुवाद शब्द की उत्पत्ति

अनुवाद वह प्रक्रिया है जिसमें स्रोत भाषा की अभिव्यक्ति, अर्थ और संदेश को लक्ष्य भाषा में रूपांतरित किए जाते हैं, लेकिन इस प्रक्रिया की जड़ों को समझने के लिए इसके शब्द-व्युत्पत्ति पर विचार करना अत्यंत आवश्यक है। भारतीय भाषाओं में प्रयुक्त शब्द 'अनुवाद' संस्कृत धातु "वद्" से निर्मित है, जिसका अर्थ है- कहना, बोलना या वाणी के माध्यम से अभिव्यक्त करना। 'वद्' धातु के साथ उपसर्ग 'अनु' जुड़ने पर यह 'अनुवाद' बन जाता है। 'अनु' उपसर्ग का अर्थ है- पीछे, क्रम से, अनुसरण करते हुए या किसी मार्ग का पालन करते हुए। 'अनुवाद' का शाब्दिक अर्थ हुआ- कहे हुए के पीछे-पीछे चलना, उसका अनुसरण करते हुए उसे लक्ष्य भाषा या अन्य रूप में पुनः प्रस्तुत करना। यह व्युत्पत्ति स्पष्ट करती है कि अनुवाद किसी भी प्रकार की स्वतंत्र रचना नहीं, बल्कि मूल कथन या अभिव्यक्ति का पुन:कथन है, जिसमें अनुकरण तो है, परंतु यांत्रिक पुनरावृत्ति नहीं। "अनु" उपसर्ग यह भी बताता है कि अनुवाद मूल पाठ से पूर्णतः हटकर नहीं चलता; वह उसके मार्ग काअनुसरण करता है, बल्कि उसकी संरचना और अर्थ को समझकर उसी का पुनः प्रकटीकरण है।

भारतीय परंपरा में इस शब्द का व्यावहारिक अर्थ भी अत्यंत रोचक है। प्राचीन शिक्षा-पद्धति में गुरुकुलों में शिक्षण मूलतः मौखिक रूप में संपन्न होता था। गुरु जो भी शिक्षा, मंत्र या श्लोक उच्चारित करते थे, शिष्य उन्हें उनके पीछे-पीछे दोहराते थे। यह 'अनुसरण करते हुए कथन'- यानि गुरु-वचन की पुनरुक्ति - उस समय 'अनुवचन' अथवा 'अनुवाक्' कहलाती थी। यही प्रक्रिया शब्द के व्युत्पत्तिमूल अर्थ के अनुकूल है, जिसमें 'अनुवाद' का मूल आशय किसी कथन को पुनः दोहराना या अर्थपूर्ण और उद्देश्यपूर्ण रूप से प्रस्तुत करना निहित है।

अंग्रेजी में प्रयुक्त शब्द 'Translation' लैटिन शब्द Translatum तथा मूल क्रिया Transferre से विकसित हुआ है। यहाँ Trans का अर्थ है - दूसरी ओर, उस पार, एक बिंदु से दूसरे बिंदु तक और Ferre का अर्थ है - ले जाना या ढोना। इस प्रकार सेTranslation का शाब्दिक अर्थ है– स्रोत भाषा से लक्ष्य भाषा तक अर्थ या विचार को ले जाना। इस व्युत्पत्ति में 'स्थानांतरण' का भाव अत्यंत स्पष्ट है। यह बताता है कि किसी भाषा की अर्थ-व्यवस्था, उसकी सांस्कृतिक संकेत प्रणाली तथा संदेश को किसी भाषा-समूह से दूसरे भाषा-समूह तक पहुँचाना ही मूलतः Translation का उद्देश्य है।

फ्रेंच में इसे Traduire अथवा Traduction, जर्मन में Übersetzen तथा Übersetzung कहा जाता है। स्पैनिश में इसका रूप Traducir या Traducción है, जबकि इतालवी में यह Traslare और Traduzione के रूप में प्रयुक्त होता है। विश्व की विविध भाषाओं में 'Translation' शब्द के भिन्न-भिन्न रूप मिलते हैं, जिससे यह स्पष्ट होता है कि अनुवाद की अवधारणा सार्वभौमिक है और प्रत्येक भाषा ने इसे अपनी सांस्कृतिक एवं भाषिक संरचना के अनुसार अभिव्यक्त किया है। इन दोनों व्युत्पत्तियों के तुलना से स्पष्ट होता है कि-

- "अनुवाद" में अनुसरण का भाव प्रमुख है।
- "Translation" में स्थानांतरण का भाव प्रमुख है।

दोनों प्रक्रियाएँ अर्थ-संचरण के दायरे में आती हैं, परंतु दोनों शब्दों के मूल भाव अलग-अलग आयाम प्रस्तुत करते हैं। जहाँ 'अनुवाद' शब्द भाषा-रचना और मूल पाठ के संरचनात्मक अनुकरण का संकेत देता है, वहीं Translation भाषा, अर्थ और संदर्भ के वाहक रूप को इंगित करता है। इसीलिए भारतीय साहित्यिक परंपरा में अनुवाद को केवल रूपांतरण की प्रक्रिया न मानकर एक गहन अर्थ-व्यवस्था के संवाहक रूप में देखा गया है।

महत्वपूर्ण बिंदु

अनुवाद के संदर्भ में स्थानांतरण का अर्थ है– स्रोत भाषा में निहित अर्थ, भाव, विचार और सांस्कृतिक संकेतों को लक्ष्य भाषा में पहुँचाना। यह केवल शब्दों के स्थान परिवर्तन का कार्य नहीं, बल्कि मूल पाठ के संपूर्ण आशय को लक्ष्य भाषा की संरचना, शैली और सांस्कृतिक उपयुक्तता के अनुरूप पुनः अभिव्यक्त करना है। इस प्रक्रिया में संदेश अपने मूल रूप से हटकर एक नये भाषिक रूप में प्रवेश करता है, किंतु उसका भावार्थ सुरक्षित रहता है। स्थानांतरण का उद्देश्य यही है कि लक्ष्य भाषा के पाठक को वही भाव प्राप्त हो, जो स्रोत भाषा के पाठक को प्राप्त हुआ था। इस प्रकार अनुवाद में स्थानांतरण अर्थ-संचरण और प्रभाव-समानता दोनों को सुनिश्चित करने वाली केंद्रीय प्रक्रिया है।

1.2.1 अनुवाद का अर्थ

अनुवाद के अर्थ को समझने के लिए यह देखना आवश्यक है कि भाषा केवल संप्रेषण का साधन नहीं, बल्कि संस्कृति, अनुभव और समाज का वाहक भी है। जब किसी पाठ का अनुवाद किया जाता है, तो उस पाठ के शब्दों के साथ-साथ उसमें निहित सांस्कृतिक संकेत, सामाजिक संदर्भ, ऐतिहासिक अर्थ और साहित्यिक शैली भी नई भाषा में प्रवेश करती है। इसलिए अनुवाद का अर्थ अत्यंत व्यापक है- यह अर्थ, भाव, संस्कृति और संदर्भ का संचार है। कई विद्वानों ने इस

बात पर बल दिया है कि अनुवाद अर्थ के प्रति निष्ठा का कार्य है; अर्थात अनुवादक का प्रमुख उद्देश्य यही होता है कि वह मूल पाठ में व्यक्त आशय कोलक्ष्य भाषा के पाठकों तक यथासंभव उसी रूप और प्रभाव में पहुँच सके।

यह भी ध्यान देने योग्य है कि अनुवाद का अर्थ विभिन्न स्तरों पर बदलता है। एक स्तर पर अनुवाद भाषाई संरचनाओं के परिवर्तन का कार्य है, जहाँ वाक्य-विन्यास, व्याकरण और रूप-रचना को लक्ष्य भाषा के अनुसार ढाला जाता है। वहीँ, दूसरे स्तर पर अनुवाद अर्थ-निर्भरता का कार्य करता है,जहाँ शब्दों की विविध संभावनाओं, अनेकों अर्थ और प्रसंग-विशेष अर्थ पर ध्यान देना पड़ता है। तीसरे स्तर पर अनुवाद भाव-रचना की प्रक्रिया है, जिसमें मूल पाठ के भावानुभव, उसकी शैलीगत लय, कथन-शैली और साहित्यिक प्रभाव को लक्ष्य भाषा में पुनर्सृजित करने का प्रयास किया जाता है। यही कारण है कि अनुवाद को केवल एक भाषिक कार्य कहना उसके वास्तविक महत्व को सीमित कर देना है।
अनुवाद का अर्थ संचार के सिद्धांतों से भी गहराई से जुड़ा है। संप्रेषण-विज्ञान के अनुसार अर्थ तभी प्रभावी होता है जब संदेश भेजने वाले और प्राप्त करने वाले दोनों के बीच सांस्कृतिक एवं संदर्भगत समानता हो। अनुवाद इसी समानता को स्थापित करने का काम करता है। वह स्रोत और लक्ष्य दोनों समाजों के बीच अर्थ-सेतु का निर्माण करता है। यदि यह सेतु कमजोर हो जाए, तो न तो मूल पाठ का अर्थ स्पष्ट हो पाता है, न उसकी संवेदना लक्ष्य भाषा में जीवंतहो पाती है।

समकालीन युग में अनुवाद का अर्थ और भी विस्तृत हो गया है। आज अनुवाद केवल साहित्य तक सीमित नहीं, बल्कि तकनीकी, वैज्ञानिक, प्रशासनिक, कानूनी, व्यावसायिक और मीडियाक्षेत्र में भी अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। प्रत्येक क्षेत्र में अनुवाद की अर्थ-समझ अलग होती है; कहीं शाब्दिक सटीकता महत्वपूर्ण होती है, तो कहीं भावानुवाद अधिक उपयुक्त माना जाता है।

1.3 अनुवाद की परिभाषाएँ: पारंपरिक और आधुनिक दृष्टियाँ

अनुवाद के अर्थ और उसके स्वरूप पर विचार करते हुए यह स्पष्ट होता है कि विश्व के प्रमुख अनुवाद-सिद्धांतकारोंने इसे मात्र भाषा-परिवर्तन की तकनीक न मानकर अर्थ, शैली और समतुल्यता पर आधारित एक जटिल सृजनात्मक प्रक्रिया माना है। यूजीन नाइडा और चार्ल्स टेबर ने दि थ्योरी एंड प्रैक्टिस ऑफ ट्रांसलेशन में जिस "निकटतम सहज समतुल्य" (closest natural equivalent) की संकल्पना प्रस्तुत की है, उसमें अर्थ को प्राथमिक और शैली को द्वितीय महत्त्व दिया गया है; अर्थात् सफल अनुवाद वही है जो स्रोत भाषा के संदेश को स्वाभाविक ढंग से लक्ष्य भाषा में पुनर्स्थापित कर सके। दूसरी ओर जे.सी. कैटफर्ड का दृष्टिकोण अधिक भाषावैज्ञानिक है, जहाँ वे अनुवाद को "पाठ्य सामग्री के प्रतिस्थापन" - स्वन, शब्द, संरचना आदि भाषाई इकाइयोंके स्तर पर समानार्थक सामग्री द्वारा रूपांतरित करना मानते हैं। नाइडा जहाँ अर्थ-संप्रेषण को केंद्रीय महत्व देते हैं, वहीं कैटफर्ड भाषाई संरचना और शिल्पगत प्रतिस्थापन को प्रमुख मानते हैं। पीटर न्यूमार्क भी अनुवाद को एक "शिल्प" बताते हुए इस बात पर बल देते हैं कि अनुवादक का कार्य मूल संदेश को लक्ष्य भाषा में इस प्रकार प्रस्तुत करना है कि न तो अर्थ की हानि हो और न अभिप्राय की। इसी प्रकार डॉ. सैमुअल जॉनसन और ए.एच. स्मिथ दोनों ही अनुवाद में अर्थ-संरक्षण को प्रधान मानते हैं; जॉनसन इसे "अर्थ को बनाए रखते हुए भाषा-परिवर्तन" बताते हैं, जबकि स्मिथ "यथासंभव अर्थ-संरक्षण" पर ज़ोर देते हैं।

महत्वपूर्ण बिंदु

यूजीन ए. नाइडा प्रसिद्ध अमेरिकी भाषावैज्ञानिक और अनुवाद-सिद्धांतकार थे। वे विशेष रूप से भाषावैज्ञानिक, अनुवाद सिद्धांत, डायनेमिक इक्विवैलेंस और फंक्शनल इक्विवैलेंस के लिए जाने जाते हैं। नाइडा का कार्य मुख्यतः बाइबिल अनुवाद, संचार के सिद्धांत, अंतर-भाषीय अर्थानुवाद तथा अनुवाद की वैज्ञानिक पद्धति पर केंद्रित था। उन्होंने अनुवाद को केवल शब्दानुवाद नहीं, बल्कि अर्थ-आधारित संप्रेषणीय प्रक्रिया माना और अनुवाद में अर्थ एवं शैली की समतुल्यता को

सर्वोपरि महत्व दिया।

भारतीय अनुवाद-चिंतकों ने भी अनुवाद को समतुल्यता, संरचनात्मक पुनर्गठन और सांस्कृतिक उपयुक्तता के संदर्भ में समझा है। प्रो. रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव अनुवाद को "संगठनात्मक रूपांतरण" और "सृजनात्मक पुनर्गठन" की प्रक्रिया बताते हैं, जहाँ मूल पाठ के तथ्य संरक्षित रहते हैं, परंतु भाषा और संरचना लक्ष्य भाषा के अनुरूप पुनर्संगठित होती है। डॉ. नगेंद्र ने अनुवाद को "निकटतम पर्याय शब्दावली और वाक्य-विन्यास" द्वारा मूल पाठ के संपूर्ण आशय और रूपबंध को लक्षित भाषा में प्रतिस्थापित करने का कार्य कहा है। डॉ. भोलानाथ तिवारी आदर्श अनुवाद में शब्दानुवाद और भावानुवाद दोनों की संतुलित उपस्थिति आवश्यक मानते हैं, ताकि मूल अर्थ व शैली की रक्षा के साथ लक्ष्य भाषा की सहजता भी बनी रहे। प्रो. कृष्णकुमार गोस्वामी अनुवाद की प्रक्रिया को मूल पाठ की "निकटतम समतुल्यता" के आधार पर लक्ष्य भाषा में पुनर्सृजन मानते हैं, जिसमें न केवल अर्थ का बल्कि पाठ्य-संरचना और अभिव्यक्ति की विशिष्टताओं का भी समुचित ध्यान रखा जाता है। इस प्रकार विभिन्न विद्वानों के मतों से स्पष्ट होता है कि अनुवाद केवल भाषाई रूपांतरण नहीं, बल्कि अर्थ-संप्रेषण, शैली-संरक्षण, समतुल्यता, सांस्कृतिक अनुकूलन और सृजनात्मक पुनर्निर्माण का बहुआयामी कला-विज्ञान है।

1.3.1 भारतीय विद्वानों द्वारा अनुवाद की परिभाषाएँ

1. **आचार्य रामचंद्र शुक्ल-**उनके अनुसार अनुवाद वह प्रक्रिया है जिसके माध्यम से किसी भाषा के भाव, विचार और अनुभव दूसरी भाषा में इस तरह ढलते हैं कि पाठक को मूल रचना की अनुभूति मिल सके।
2. **हज़ारीप्रसाद द्विवेदी-**वे अनुवाद को दो संस्कृतियों के बीच संवाद मानते हैं। उनके अनुसार अनुवाद में केवल शब्दों का नहीं, बल्कि संपूर्ण संवेदना का स्थानांतरण होना चाहिए।
3. **नामवर सिंह-**वे अनुवाद को ''अर्थ का पुनर्सृजन'' कहते हैं। उनके अनुसार अनुवादक केवल माध्यम नहीं, बल्कि सह-रचनाकार होता है जो मूल विचारों को नए संदर्भ में जीवंत करता है।
4. **महावीर प्रसाद द्विवेदी-**उनके मत में अनुवाद भाषा-ज्ञान का विस्तार है, जिसमें अनुवादक को दो भाषाओं की व्याकरणिक और सांस्कृतिक विशेषताओं का संतुलित उपयोग करना पड़ता है।
5. **डॉ. नगेन्द्र-**वे अनुवाद को ''भाव-संप्रेषण का रचनात्मक कार्य'' कहते हैं, जिसमें अनुवादक को मूल पाठ की आत्मा को पकड़कर नई भाषा में पुनर्रचना करनी होती है।
6. **डॉ. रामविलास शर्मा-**उनके अनुसार अनुवाद वैचारिक स्पष्टता और सामाजिक संदर्भों की सटीक अभिव्यक्ति का माध्यम है। अनुवाद तभी सफल है जब वह मूल विचारधारा को सही ढंग से पहुँचाए।
7. **विश्वनाथ त्रिपाठी-** इनके अनुसार ''अनुभूति की पुनर्रचना'' बताते हैं, अर्थात मूल रचना की संवेदना को नई भाषा के पाठक तक विश्वसनीय रूप से पहुँचाना।
8. **श्यामसुंदर दास-** अनुवाद की परिभाषा का जिक्र करते हुए कहते हैं कि"अनुवाद भाषाई समरूपता की खोज है, जिसमें अर्थ, शैली और भाव-संतुलन पर विशेष ध्यान देना चाहिए।"
9. **किशोरीदास वाजपेयी-**किशोरीदास वाजपेयी के मुताबिक अनुवाद भाषाई दक्षता का अभ्यास है, जो विचार-समता और अभिव्यक्ति की सटीकता पर आधारित होता है।
10. **केशवप्रसाद मिश्र-**उनका मत है कि अनुवाद एक सांस्कृतिक यात्रा है, जहाँ अनुवादक मूल भाषा के भाव-जगत को लक्ष्य भाषा की संवेदनाओं से जोड़ता है।

1.3.2 पाश्चात्य विख्यात विद्वानों द्वारा परिभाषाएँ

1. **Cicero -**Translation, for Cicero, is sense-for-sense, not word-for-word.
   उनके अनुसार अनुवाद में अर्थ-संप्रेषण प्रमुख है।
2. **Horace-**He believed that translation should preserve the spirit of the original work.
   यानी मूल पाठ की आत्मा को सुरक्षित रखना अधिक महत्वपूर्ण है।
3. **John Dryden-**Dryden defined translation through three modes—metaphrase, paraphrase, imitation.
   उनके अनुसार अच्छा अनुवाद इन तीनों संतुलनों का संयोजन है।
4. **Alexander Tytler-**He stated that translation must give a complete transcript of the original ideas.
   अर्थात् अनुवाद मूल विचारों का सटीक और संपूर्ण रूप होना चाहिए।
5. **Friedrich Schleiermacher-**He suggested two methods: move the author towards reader or move the reader towards author.
   वे अनुवाद को सांस्कृतिक सेतु का कार्य मानते हैं।
6. **Eugene Nida-**Nida emphasized dynamic equivalence, meaning the same effect on the reader.
   उनके अनुसार अनुवाद का उद्देश्य भावानुभूति की समानता है।
7. **Roman Jakobson**- Jakobson described translation as interlingual interpretation.
   उनके अनुसार यह भाषाओं के बीच अर्थ-व्याख्या है।

यूजीन नाइडा: "Translating consists in reproducing in the receptor language the closest natural equivalent of the source language message, first in terms of meaning and secondly in terms of style."

जे.सी. कैटफर्ड: "The replacement of textual material in one language by equivalent textual material in another language."

डॉ. सैमुअल जॉनसन: "To translate is to change into another language, retaining the sense."

अपनी प्रगति जांचें

प्रश्न 1. अनुवाद' शब्द की व्युत्पत्ति पर संक्षेप में टिप्पणी कीजिए।

प्रश्न 2. अनुवाद के संदर्भ में 'स्थानांतरण' का क्या अर्थ है? स्पष्ट कीजिए।

प्रश्न 3. यूजीन नाइडा की अनुवाद-दृष्टि की मुख्य विशेषता क्या है?

प्रश्न 4. भारतीय विद्वानों के अनुसार अनुवाद की प्रक्रिया का स्वरूप किस प्रकार समझा जाता है?

प्रश्न 5. Cicero और Horace की अनुवादसंबंधी मान्यताओं में मुख्य अंतर क्या है?

1.3.3 समकालीन अनुवादकों द्वारा अनुवाद की परिभाषाएँ

1. **अनामिका-**वे अनुवाद को रचनात्मक सह-यात्रा मानती हैं, जहाँ अनुवादक मूल भाव को आत्मसात कर नये रूप में व्यक्त करता है।
2. **अशोक वाजपेयी-**उनके अनुसार अनुवाद साहित्य को वैश्विक अनुभवों से जोड़ने वाला सृजनशील कर्म है।
3. **नीलाभ अश्क-**वे अनुवाद को बहुभाषिक चिंतन की निरंतर प्रक्रिया बताते हैं, जहाँ भाषा और संस्कृति दोनों का संतुलन आवश्यक है।
4. **मनोज रुपड़ा-** वे इसे ''सांस्कृतिक अनुवर्तन'' मानते हैं, जो नई संवेदनाओं को जन्म देता है।
5. **प्रभात रंजन-**उनके अनुसार अनुवाद आधुनिक पाठक और मूल पाठ के बीच सेतु बनाता है और अर्थ को नए संदर्भ में जीवंत करता है।
6. **संजय द्विवेदी-**अनुवाद को संवाद का विस्तृत रूप मानते हैं, जिसमें समाज की बदलती जरूरतों के अनुसार अर्थ-निर्माण होता है।
7. **अनिल जनविजय-**उनके अनुसार अनुवाद साहित्य की बहुभाषिक चेतना को उभारने का महत्वपूर्ण साधन है।
8. **मनीषा कुलश्रेष्ठ-** अनुवाद को संवेदना की पुनर्बहाली मानती हैं, जिसमें शब्दों के साथ-साथ सामाजिक संदर्भ भी अनूदित होते हैं।

1.4 अनुवाद और रूपांतरण

हिंदी में 'अनुवाद' की संकल्पना किसी एक निश्चित अर्थ में कभी स्थिर नहीं रही। यह शब्द समय के साथ 'अनुवचन', 'अनुवाक', 'अनुकथन', 'भाषांतरण', 'तर्जुमा' और 'उल्था' जैसे विविध पर्यायों के प्रयोग और प्रतिस्पर्धा से विकसित होकर अपने वर्तमान रूप तक पहुँचा है। इसके बावजूद समकालीन अनुवाद-विमर्श में 'अनुवाद' और 'रूपांतरण' के अर्थ-क्षेत्र, उनकी सीमाओं तथा पारस्परिक भेदों को लेकर निरंतर बहस चलायी जाती है। दिलचस्प तथ्य यह है कि इस बहस का विस्तार हिंदी की तुलना में अंग्रेजी में लिखने वाले अनुवाद-सिद्धांतकारों के लेखन में अधिक सक्रिय और सुव्यवस्थित रूप से दिखाई देता है।

अनुवाद-विमर्श पर केंद्रित चर्चाओं में यह मत प्रबल है कि भारत की भाषिक-सांस्कृतिक बहुलता और ज्ञान-परंपराओं की विविधता के कारण ''रूपांतरण'' शब्द अनुवाद की बहुविध प्रक्रियाओं को अधिक समग्रता से व्यक्त करता है। अनुवाद केवल भाषा-स्तर का अंतरण नहीं है; वह विषय-वस्तु, शैली, अभिव्यक्ति, माध्यम तथा विधा - सभी स्तरों पर परिवर्तन की संभावनाओं को समाहित करता है। उदाहरणस्वरूप, रामकथा का संस्कृत से अन्य भारतीय भाषाओं में संक्रमण शाब्दिक अनुवाद से अधिक एक ऐसे रूपांतरण का परिणाम है, जिसमें मूल का भाव-तत्व केंद्रीय रहा है, न कि शब्द-निष्ठ पुनरुत्पादन। इस प्रकार की प्रक्रियाएँ कथावाचन, रंगमंच, नृत्य, दृश्यकलाओं और लोक-नाट्य रूपों के माध्यम से निरंतर विकसित होती रहती हैं, जिससे रूपांतरण की अवधारणा अधिक गत्यात्मक, सृजनशील और व्यापक बन जाती है।

वास्तविक अनुवाद की प्रक्रिया में तीन मूलभूत अवयव महत्वपूर्ण होते हैं- मूल संदेश (विचार/कथ्य), स्रोत भाषा और लक्ष्य भाषा। अनुवादक का दायित्व होता है कि वह इन तीनों के मध्य की दूरी को न्यूनतम रखते हुए मूल आशय को दूसरे भाषिक संदर्भ में इस प्रकार प्रस्तुत करे कि वह स्वाभाविक और बोधगम्य प्रतीत हो। इसीलिए अनुवाद को 'भाषांतरण' कहा जाता है, क्योंकि इसमें मुख्य परिवर्तन भाषास्तर का होता है, न कि कथ्य का। भाषा-अंतरण के दौरान रूप (फॉर्म) बदल जाना स्वाभाविक है, इसीलिए कभी-कभी अनुवाद को 'रूपांतरण' भी कह दिया जाता है-किन्तु यहाँ रूपांतरण का अर्थ केवल भाषा-रूप में परिवर्तन है, न कि किसी व्यापक सृजनात्मक पुनर्गठन का ।

समस्या तब उत्पन्न होती है जब 'रूपांतरण' शब्द का प्रयोग अनुवाद की सामान्य परिभाषा के स्थान पर किया जाने लगता है। जीवविज्ञान, समाजशास्त्र, कला, मीडिया-लेखन और रंगमंच जैसे क्षेत्रों में 'रूपांतरण' का प्रयोजन बहुअर्थी तथा विस्तृत होता है। इन संदर्भों में 'रूप'केवल दृश्य रूप तक सीमित नहीं है; यह संरचना, माध्यम, शैली, विषय-वस्तु और अभिव्यक्ति-सभी स्तरों पर परिवर्तन को इंगित करता है। इसलिए जब रूपांतरण की अवधारणा को अनुवाद पर लागू किया जाता है, तो वह मात्र भाषा-परिवर्तन से आगे बढ़कर विधा-परिवर्तन, माध्यम-परिवर्तन,स्थानीयकरण, पुनर्सृजन और अभिग्रहण तक विस्तृत दिखाई देती है।

रूपांतरण के ये व्यापक रूप कई स्तरों पर प्रस्तुत होते हैं-

- मूल पाठ का लक्ष्य भाषा में पुनर्निर्माण,
- मूल भाषा की कथा का दूसरी भाषा में रंगमंचीय रूपांतरण,
- स्रोत-पाठ पर आधारित फिल्म या दृश्य-प्रस्तुति का निर्माण,
- एक ही भाषा में एक माध्यम से दूसरे माध्यम में अनुकूलन।

इन सभी स्थितियों में भाषा अनिवार्यतः नहीं बदलती; कई बार केवल माध्यम या विधा परिवर्तित होती है। इसीलिए एकभाषिक रूपांतरण (Same-Language Adaptation) को अनुवाद की श्रेणी में नहीं, बल्कि मीडिया-लेखन या रचनात्मक लेखन के अंतर्गत माना जाता है। परंतु जब रूपांतरण में भाषा-परिवर्तन भी शामिल हो जाए, तब वह अनुवादक्षेत्र से संबद्ध हो जाता है।

इस दृष्टि से रूपांतरण को अनुवाद की एक विशिष्ट विधा कहा जा सकता है-किन्तु अनुवाद का पर्याय नहीं। रूपांतरण की प्रक्रिया में स्थानीयकरण, अभिग्रहण, शैली-परिवर्तन और नए प्रारूप का विकास जैसे सृजनात्मक स्तर शामिल होते हैं। परिणामस्वरूप कई बार लक्ष्यभाषा में प्रस्तुत पाठ मूल से इतना दूर चला जाता है कि वह ''छायानुवाद'', ''अनुसृजन'' या ''अंतरप्रतीकात्मक रूपांतरण'' की श्रेणी में पहुँच जाता है, जो अनुवाद नहीं, बल्कि एक नवीन पाठसृजन होता है।

अनुवाद और रूपांतरण की सीमारेखा ''समतुल्यता'' (Equivalence) के माध्यम से स्पष्ट होती है। अनुवाद का आधार तुल्यता होता है- अर्थ, शैली और भाव में यथासंभव एक-सी छवि बनाए रखना। इसके विपरीत, रूपांतरण में समतुल्यता केवल तभी संभव है जब मूल कथ्य में सार्वकालिक या सार्वभौमिक तत्व हों, जो विभिन्न संस्कृतियों और देशों में सहज रूप से ढल सके। स्थानीय संदर्भों और सांस्कृतिक विशिष्टताओं से परिपूर्ण कृतियों का रूपांतरण कठिन होता है और कई बार नया रूप मूल से पर्याप्त दूरी बना लेता है।

स्पष्तः कहा जा सकता है कि अनुवाद और रूपांतरण दोनों परस्पर संबद्ध होते हुए भी स्वतंत्र अवधारणाएँ हैं। अनुवाद मुख्यतः भाषिक अंतरण पर आधारित है, जबकि रूपांतरण में भाषा के साथ-साथ माध्यम, विधा, शैली और सांस्कृतिक रूपों का अंतरण भी सम्मिलित हो सकता है। इस प्रकार रूपांतरण को अनुवाद की एक रचनात्मक विधा अवश्य माना जा सकता है, पर उसे अनुवाद का पर्याय नहीं कहा जा सकता। रूपांतरण का मूल स्वरूप तभी सार्थक सिद्ध होता है जब वह लक्ष्यभाषा और संस्कृति के अनुरूप ढलकर भी मूल कृति के प्रभाव, विचार-तत्व और भाव-आधार को जीवित रख सके; अन्यथा वह अनुवाद की सीमा से बाहर निकलकर अनुसृजन के क्षेत्र में प्रवेश कर जाता है।

1.5 अनुवाद की अवधारणाएं: भाषा, अर्थ और संदर्भ का संबंध

अनुवाद केवल भाषा रूपांतरण की तकनीकी प्रक्रिया नहीं, बल्कि एक बहुआयामी संप्रेषणीय क्रिया है जिसमें भाषा, अर्थ और संदर्भ के आपसी संबंध को संतुलित किया जाता है। किसी भी पाठ या संदेश को स्रोत भाषा (Source Language) से लक्ष्य भाषा (Target Language) में रूपांतरित करने के लिए अनुवादक को न केवल भाषिक ज्ञान होना

चाहिए, बल्कि उसे अर्थ की गहन समझ और पाठ के सामाजिक-सांस्कृतिक संदर्भ की जानकारी भी आवश्यक होती है। प्रारंभिक दृष्टि में अनुवाद को शाब्दिक शब्दानुवाद या वाक्य-प्रतिलिपि समझा जाता था, किन्तु आधुनिक अनुवादसिद्धांतों ने इसे एक रचनात्मक और अर्थ-निर्माणात्मक प्रक्रिया के रूप में परिभाषित किया है। यूजीन नाइडा और चार्ल्स टेबर के अनुसार, अनुवाद का उद्देश्य स्रोत भाषा में व्यक्त संदेश का लक्ष्य भाषा में निकटतम प्राकृतिक समतुल्य प्रस्तुत करना है, जिसमें पहले अर्थ और फिर शैली का संरक्षण अत्यंत महत्वपूर्ण होता है। इसी दृष्टिकोण से यह स्पष्ट होता है कि अनुवाद में केवल भाषिक रूपांतरण पर्याप्त नहीं है; अर्थ, शैली और संदर्भ का समन्वय अनिवार्य है।

अनुवाद केवल भाषा रूपांतरण की तकनीकी प्रक्रिया नहीं, बल्कि एक बहुआयामी संप्रेषणीय क्रिया है जिसमें भाषा, अर्थ और संदर्भ के आपसी संबंध को संतुलित किया जाता है। किसी भी पाठ या संदेश को स्रोत भाषा (Source Language) से लक्ष्य भाषा (Target Language) में रूपांतरित करने के लिए अनुवादक को न केवल भाषिक ज्ञान होना चाहिए, बल्कि उसे अर्थ की गहन समझ और पाठ के सामाजिक-सांस्कृतिक संदर्भ की जानकारी भी आवश्यक होती है। प्रारंभिक दृष्टि में अनुवाद को शाब्दिक शब्दानुवाद या वाक्य-प्रतिलिपि समझा जाता था, किन्तु आधुनिक अनुवादसिद्धांतों ने इसे एक रचनात्मक और अर्थ-निर्माणात्मक प्रक्रिया के रूप में परिभाषित किया है। यूजीन नाइडा और चार्ल्स टेबर के अनुसार, अनुवाद का उद्देश्य स्रोत भाषा में व्यक्त संदेश का लक्ष्य भाषा में निकटतम प्राकृतिक समतुल्य प्रस्तुत करना है, जिसमें पहले अर्थ और फिर शैली का संरक्षण अत्यंत महत्वपूर्ण होता है। इसी दृष्टिकोण से यह स्पष्ट होता है कि अनुवाद में केवल भाषिक रूपांतरण पर्याप्त नहीं है; अर्थ, शैली और संदर्भ का समन्वय अनिवार्य है।

1. **भाषा का महत्व-**अनुवाद की प्रक्रिया में भाषा सर्वाधिक प्रमुख तत्व है, क्योंकि विचारों, भावों और अनुभवों का संप्रेषण भाषा के माध्यम से ही संभव होता है। अनुवादक का दायित्व केवल शब्द खोजने तक सीमित नहीं होता, बल्कि वह दो भिन्न भाषाओं की संरचना, शैली, शब्दविन्यास और सांस्कृतिक संकेतों को समझकर उसका रचनात्मक रूपांतरण करता है। भाषा के विभिन्न स्तर-ध्वन्यात्मक गुण, शब्द-रूप, वाक्य-रचना, अलंकारिक प्रयोग और व्याकरणिक भिन्नताएँ-अनुवाद की गुणवत्ता को गहराई से प्रभावित करते हैं।

   कई बार स्रोत भाषा में प्रयुक्त किसी शब्द का अर्थ केवल उसके शाब्दिक रूप से स्पष्ट नहीं होता। उदाहरण के लिए, संस्कृत या अरबी जैसे भाषाई-साहित्यिक संदर्भों में शब्द एक विशिष्ट सांस्कृतिक अर्थ-विस्तार रखते हैं, जिसे हिंदी या अंग्रेजी में साधारण रूप से बदल देने से मूल भाव नष्ट हो सकता है। लक्ष्य भाषा में अनुवाद करते समय उस शब्द के शाब्दिक अर्थ के अतिरिक्त उसके भाव, प्रसंग, परंपरा और सांस्कृतिक संकेतों को भी सुरक्षित रखना आवश्यक होता है। इसलिए भाषा अनुवाद की नींव ही नहीं, बल्कि उसकी संपूर्ण प्रभावशीलता का केन्द्रीय आधार है।

महत्वपूर्ण बिंदु-

भाषा वह व्यवस्थित माध्यम है जिसके द्वारा मनुष्य अपने विचारों, भावनाओं और अनुभवों को व्यक्त करता है। यह संचार, ज्ञान-वितरण और सामाजिक संबंधों की स्थापना का प्रमुख साधन है। भाषा केवल शब्दों का समूह नहीं, बल्कि एक सांस्कृतिक और प्रतीकात्मक व्यवस्था है जो समाज को समझने और समझाने में मदद करती है।

2. **अर्थ का महत्व-** अनुवाद का वास्तविक उद्देश्य मूल रचना के विचारों और अर्थ को दूसरी भाषा में उस रूप में प्रस्तुत करना है, जहाँ पाठक को वही भावानुभूति प्राप्त हो जो स्रोत भाषा के पाठक को होती है। अर्थ केवल शब्दों के समूह से नहीं बनता, बल्कि इसमें लेखक की मंशा, भाव-स्थिति, सांस्कृतिक दृष्टि, सामाजिक संकेत और ऐतिहासिक संदर्भ का समग्र प्रतिरूप शामिल होता है।

अनुवादक के सामने सबसे बड़ी चुनौती यही होती है कि वह शब्दों से आगे बढ़कर 'अर्थ-संरक्षण' सुनिश्चित करे। उदाहरण के लिए, भारतीय संदर्भ में ''संस्कृति'' शब्द के भावात्मक स्तर उतने गहरे और बहुस्तरीय हैं कि इसे केवल ''culture'' कह देना पर्याप्त नहीं होता। अतः अनुवादक को अर्थ को उसी भाव-गहराई के साथ लक्ष्य भाषा में प्रस्तुत करना पड़ता है। इसी कारण प्रमुख विद्वानों ने कहा है कि अनुवाद में ''अर्थ की समानता'' (semantic equivalence) ही सर्वोच्च सिद्धांत है, शब्द समानता नहीं।

3. **संदर्भ का महत्व-** अनुवाद केवल भाषा और अर्थ का रूपांतरण नहीं है, बल्कि संदर्भ का पुनर्निर्माण भी है। किसी भी पाठ का सही आशय उसके काल, परिस्थितियों, सामाजिक स्थिति, सांस्कृतिक परंपराओं और पाठकवर्ग की अपेक्षाओं पर आधारित होता है। यदि किसी कथन का संदर्भ अनदेखा कर दिया जाए, तो उसका अनुवाद भ्रामक, अपूर्ण या अर्थहीन हो सकता है।

   संदर्भ विशेषकर मुहावरों, लोककथाओं, धार्मिक संकेतों, ऐतिहासिक घटनाओं और सांस्कृतिक प्रतीकों में अत्यंत महत्वपूर्ण हो जाता है। जैसे किसी भाषा में प्रयुक्त किसी विशेष लोककथा का संकेत दूसरी भाषा में तब तक सफल नहीं होता जब तक अनुवादक उसके सांस्कृतिक महत्व को समझकर उपयुक्त वैकल्पिक अभिव्यक्ति प्रस्तुत न करे। आधुनिक अनुवाद सिद्धांतकारों ने इस बात पर जोर दिया है कि संदर्भ की उपेक्षा अनुवाद को सतही बना देती है और पाठक को वास्तविक अर्थ से दूर कर देती है।

4. **भाषा, अर्थ और संदर्भ का त्रैतीय संतुलन**- अनुवाद की सफलता इसी त्रिकोणीय संतुलन पर निर्भर करती है- भाषा, अर्थ और संदर्भ। यदि इनमें से किसी एक को अधिक महत्व दिया जाए और बाकी की अनदेखी की जाए, तो अनुवाद में असंतुलन उत्पन्न हो जाता है। भाषा संप्रेषण का साधन है, अर्थ उसकी आत्मा है, और संदर्भ उसकी विश्वसनीयता और उपयुक्तता का आधार।एक कुशल अनुवादक इन तीनों में सामंजस्य स्थापित करता है, ताकि मूल रचना की वास्तविकता, भाव और उद्देश्य सुरक्षित रहें। विद्वानों ने कहा है कि अनुवाद न तो केवल शब्दानुगामी होना चाहिए और न केवल स्वतंत्र रचना जैसा; इसमें भावानुवाद और शब्दानुवाद दोनों के तत्व अपनी आवश्यकता के अनुपात में उपस्थित होने चाहिए। यही संतुलन अनुवाद को विश्वसनीय, पठनीय और प्रभावी बनाता है।

   इसलिए पारंपरिक भारतीय परंपरा में अनुवाद का स्वरूप मुख्यतः आदर, निष्ठा, परंपरा संरक्षण, व्याख्यात्मकता और शास्त्रीयता पर आधारित था। इसका उद्देश्य मूल ज्ञान की सातत्यता बनाए रखना था, न कि उसका पुनर्सृजन करना।

1.6 संप्रेषण प्रक्रिया के रूप में अनुवाद की अवधारणा

मानव सभ्यता का विकास मूलतः संप्रेषण और संवाद के निरंतर विस्तार पर आधारित है। संप्रेषण का अर्थ केवल सूचना का आदान-प्रदान नहीं, बल्कि भावों, विचारों, अनुभवों, संस्कृति और समाज के साझा बोध का प्रवाह भी है। ऐसे में अनुवाद एक ऐसा माध्यम है जिसके द्वारा एक भाषिक समुदाय के विचार दूसरी भाषा के समुदाय तक पहुँचते हैं। अनुवाद केवल भाषिक पुनर्निर्माण नहीं होता, बल्कि यह संप्रेषण की एक जटिल, बहु-स्तरीय और सांस्कृतिक प्रक्रिया भी है। अनुवाद को संप्रेषण प्रक्रिया के रूप में समझने पर यह स्पष्ट होता है कि अनुवादक स्रोत और लक्ष्यभाषी समुदायों के बीच सेतु की भूमिका निभाता है। इस संदर्भ में अनुवाद को एक व्यापक अंतःसांस्कृतिक संप्रेषण तंत्र के रूप में देखा जा सकता है।

1. संप्रेषण और अनुवाद का मूलभूत संबंध

संप्रेषण की परिभाषा में स्रोत, संदेश और प्राप्तकर्ता-ये तीन मूलभूत घटक माने जाते हैं। अनुवाद की प्रक्रिया में भी यही तीन घटक मौजूद रहते हैं, परंतु यहाँ स्रोतभाषा, स्रोतसंदेश और लक्ष्यभाषा के पाठक या दर्शक शामिल हो जाते हैं। इस

प्रकार अनुवाद संप्रेषण की सामान्य प्रक्रिया को एक नई दिशा प्रदान करता है जिसमें भाषा, संस्कृति, प्रसंग और संदेश के स्तरों के मध्य समन्वय स्थापित करना आवश्यक हो जाता है।

संप्रेषण का आधार स्पष्टता और उपयुक्तता है। अनुवाद में भी संदेश की स्पष्टता, संदर्भ की उपयुक्तता और भाषाई संवेदनशीलता अनिवार्य है। यदि स्रोतसंदेश का आशय लक्ष्यभाषा तक सही रूप में न पहुँचे, तो न संप्रेषण सफल होगा, न अनुवाद विश्वसनीय माना जाएगा। इसलिए अनुवाद एक द्वि-स्तरीय संप्रेषण प्रक्रिया है- पहला, अनुवादक का स्रोतपाठ से संवाद; दूसरा, अनुवादक द्वारा लक्ष्यभाषा पाठक से संवाद।

2. अनुवाद: अर्थ संवहन की प्रक्रिया

अनुवाद केवल शब्दों का स्थानांतरण नहीं है, बल्कि अर्थ का संवहन है। संप्रेषण प्रक्रिया में अर्थ की केंद्रीय भूमिका होती है। भाषा शब्दों का समूह मात्र नहीं, बल्कि समाज की सांस्कृतिक स्मृति, जीवनअनुभव और सामूहिक दृष्टि का संग्रह भी है। जब किसी भाषा के विचार दूसरी भाषा में रूपांतरित होते हैं, तो केवल भाषाई संरचना ही नहीं बदलती, बल्कि अर्थ-बोध के नए आयाम भी जुड़ते हैं।

इस प्रक्रिया में तीन स्तरों पर संप्रेषण होता है

बौद्धिक स्तर -लेखक द्वारा व्यक्त विचारों को अनुवादक समझता है।

भावात्मक स्तर -लेखक के भाव-अनुभव अनुवादक के भीतर संप्रेषित होते हैं।

सांस्कृतिक स्तर–स्रोतसमाज के सांस्कृतिक संकेतक अनुवादक तक पहुँचते हैं और वह उन्हें लक्षितसमाज तक पहुँचाता है।

अनुवाद का अर्थ यह नहीं कि शब्द प्रति शब्द स्थानांतरण कर दिया जाए; बल्कि यह है कि स्रोतभाषा के भावगत, सांस्कृतिक और संदर्भगत अर्थ को लक्ष्यभाषा में पुनः सजीव रूप में प्रस्तुत किया जाए।

3. अनुवाद में संदर्भ और प्रसंग का संप्रेषण-

संप्रेषण प्रक्रिया में संदर्भ का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है। कोई भी संदेश अपने प्रसंग से अलग होकर पूर्ण अर्थ नहीं दे सकता। अनुवाद में संदर्भात्मक संप्रेषण और भी जटिल हो जाता है, क्योंकि भाषा के साथ-साथ सांस्कृतिक और सामाजिक संरचनाएँ भी बदल जाती हैं। किसी भाषा में प्रयुक्त मुहावरे, कहावतें, प्रतीक, उदाहरण और रूपक दूसरी भाषा में वही प्रभाव नहीं उत्पन्न कर सकते।

उदाहरण के लिए- भारतीय भाषाओं में प्रकृति आधारित सांस्कृतिक प्रतीक अक्सर मिलते हैं, लेकिन पश्चिमी भाषाओं में उनके समकक्ष प्रतीक अलग हो सकते हैं। अनुवादक का दायित्व है कि वह संदर्भ के अनुसार उपयुक्त रूपांतरण करे, ताकि मूल भाव वही रहे, परंतु लक्ष्यभाषा की संवेदना के अनुकूल भी लगे। इस प्रकार अनुवाद संदर्भों के पुनर्निर्माण का कार्य करता है, जो संप्रेषण प्रक्रिया की मुख्य आवश्यकता है।

4. संप्रेषण के माध्यम के रूप में अनुवाद और संस्कृति

भाषा संस्कृति का वाहक है, इसलिए भाषा बदलने का अर्थ केवल शब्द बदलना नहीं, बल्कि सांस्कृतिक संकेतों को नए सामाजिक ढाँचे में प्रस्तुत करना भी है। अनुवाद एक भाषाई क्रिया के साथ-साथ एक सांस्कृतिक संप्रेषण क्रिया भी है। प्रत्येक संस्कृति का अपना ज्ञानकोश, मूल्यक्रम, प्रतीकजगत और व्यवहारसंहिता होती है। अनुवाद यही सांस्कृतिक जानकारी एक भाषा से दूसरी भाषा में स्थानांतरित करता है। अनुवाद के माध्यम से संस्कृतियों में संवाद स्थापित होता है। यह पारस्परिक समझ, सहअस्तित्व और वैश्विकता को बढ़ावा देता है। संप्रेषण प्रक्रिया के रूप में अनुवाद मानव समाज को आपस में जोड़ने का साधन बन जाता है। जहाँ प्रत्यक्ष भाषा-भाषी संवाद संभव नहीं होता, वहाँ अनुवाद ही विचारों का माध्यम बनता है।

5. अनुवाद में त्रिस्तरीय संप्रेषण प्रक्रिया

अनुवाद की संप्रेषण प्रक्रिया को तीन स्तरों से समझा जा सकता है-

(क) स्रोतपाठ और अनुवादक का संवाद

अनुवादक सबसे पहले स्रोतपाठ से संवाद करता है। वह पाठ को पढ़ता, समझता और उसकी गहन व्याख्या करता है। यह चरण संप्रेषण का आंतरिक स्तर है जहाँ अनुवादक के ज्ञान, संवेदना और अनुभव की परीक्षा होती है।

(ख) अनुवादक और लक्ष्यभाषा का संवाद

अनुवादक लक्ष्यभाषा की संरचना, शैली, व्याकरण और सांस्कृतिक भेदों को ध्यान में रखते हुए रूपांतरण करता है। यह चरण मूल संदेश को नए संदर्भ में ढालने का कार्य है।

(ग) लक्ष्यपाठ और पाठक का संवाद

जब अनुवादित पाठ पाठक तक पहुँचता है, तो वह अंतिम संप्रेषण चरण पूर्ण होता है। यहाँ संदेश को कितना समझा गया, वह मूल के कितना निकट है, और उसके प्रभाव की क्या तीव्रता है- ये सब संप्रेषण की सफलता को निर्धारित करते हैं।

इन तीनों स्तरों के समुचित सामंजस्य से ही अनुवाद एक सफल संप्रेषण प्रक्रिया बनता है।

6. अनुवाद में बहु-माध्यमीय संप्रेषण

आधुनिक समय में संप्रेषण केवल लिखित भाषा तक सीमित नहीं रहा। दृश्य-श्रव्य माध्यमों, डिजिटल तकनीकों और बहु-माध्यमीय संचार ने संवाद प्रक्रिया को अत्यंत विस्तृत और जटिल बना दिया है। ऐसे में अनुवाद की भूमिका भी विस्तृत हो गई है। आज अनुवाद केवल साहित्यिक ग्रंथों तक नहीं, बल्कि सिनेमा, समाचार, दृश्य-श्रव्य सामग्री, तकनीकी ज्ञान, वैज्ञानिक आविष्कार और सामाजिक-राजनीतिक विमर्श के प्रसार में भी आवश्यक है।

बहु-माध्यमीय संप्रेषण में अनुवाद को 'अनुकूलन', 'स्थानीकरण' और 'सांस्कृतिक रूपांतरण' की गहराई से समझना पड़ता है। एक दृश्य-अनुक्रम, एक ध्वनि, एक प्रतीक, अथवा एक भाव-चित्र का अनुवाद करना केवल 'भाषाई' कार्य नहीं, बल्कि यह संप्रेषण की बहु-स्तरीय प्रक्रिया का संचालन है।

1.7 अनुवाद का संदर्भ

अनुवाद के अब तक सम्पन्न अध्ययन से यह स्पष्ट हो जाता है कि सामान्यतः 'अनुवाद' को दो भाषाओं के मध्य घटित होने वाली अर्थ-संचरण की प्रक्रिया के रूप में समझा जाता है। किंतु यह प्रश्न गंभीर विचार की मांग करता है कि क्या अनुवाद का वास्तविक अथवा प्रामाणिक अर्थ केवल इतना ही है? क्या अनुवाद मात्र भाषा-परिवर्तन की यांत्रिक क्रिया तक सीमित है, जैसा कि समकालीन व्यवहार में प्रचलित है?

वास्तविकता यह है कि अनुवाद का अर्थक्षेत्र इससे कहीं अधिक व्यापक, गहन और बहुआयामी है। अर्थ-अवलोकन के स्तर पर देखें तो अनुवाद केवल भाषिक विनिमय नहीं, बल्कि विभिन्न सांस्कृतिक, संदर्भगत और प्रतीकात्मक आयामों का समेकित रूप है। इसी कारण इसे एक व्यापक संदर्भ वाला शब्द माना जाता है, जिसमें भाषा, भाव, संस्कृति, प्रसंग और विचार-सभी स्तर पर अंतर्लीन रहते हैं। यदि अनुवाद को केवल दो भाषाओं के बीच होने वाली गतिविधि तक सीमित कर दिया जाए, तो यह परिभाषा न केवल अधूरी रह जाती है, बल्कि अनुवाद की वास्तविक प्रकृति को भी संकुचित कर देती है। ऐसे में अनुवाद की अवधारणा भ्रामक प्रतीत हो सकती है। अतः अनुवाद के विविध संदर्भों- भाषिक, सांस्कृतिक, प्रतीकात्मक और संदर्भगत परिस्थितियोंका सम्यक् अवलोकन आवश्यक है ताकि इसके वास्तविक स्वरूप और दायरे को अधिक सुस्पष्टता के साथ समझा जा सके।

1.7.1 'अनुवाद' का व्यापक संदर्भ

परंपरागत रूप से अनुवाद का अभिप्राय किसी भाषा में व्यक्त कथ्य को दूसरी भाषा में स्पष्ट एवं सुबोध रूप में प्रस्तुत करने की प्रक्रिया से लगाया जाता रहा है। सामान्य समझ में यह दो भाषाओं के मध्य होने वाले अर्थ-सम्प्रेषण का कार्य-व्यापार प्रतीत होता है। किंतु अनुवाद को केवल भाषिक विनिमय तक सीमित रखना उसके वास्तविक दायरे को संकुचित कर देता है।

वास्तव में अनुवाद की प्रक्रिया भाषाओं के परस्पर रूपांतरण से कहीं अधिक विस्तृत है। किसी भाषा के भीतर अभिव्यक्ति- जैसे निबंध, कविता अथवा किसी अन्य साहित्यिक रूप- को भिन्न शैली, स्वरूप या संरचना में पुनः प्रस्तुत करने की क्रिया भी अनुवाद की व्यापक परिधि में आती है। इसीलिए भाषिक विविधता, शैली-परिवर्तन तथा बोलीगत विन्यास को भी अनुवाद का स्वरूप माना गया है। इस व्यापक संदर्भ में अनुवाद के न्यूनतम दो आधार माने जाते हैं:

(1) भाषिक स्तर पर रूपांतरण

(2) प्रतीकात्मक माध्यमों के बीच अंतरण

दो भिन्न प्रतीक-व्यवस्थाओं के मध्य अर्थ-परिवर्तन भी अनुवाद का एक महत्वपूर्ण आयाम है। भाषा स्वयं एक प्रतीक-व्यवस्था है, जबकि चित्रकला, संगीत, नाटक, नृत्य आदि भावात्मक और कलात्मक प्रतीक-व्यवस्थाएँ मानी जाती हैं। जब किसी भाषिक कथ्य को इन गैर-भाषिक माध्यमों में बिना उसके मूल अर्थ को परिवर्तित किए अभिव्यक्त किया जाता है, तब यह प्रक्रिया 'कथ्य के प्रतीकीकरण' का रूप धारण कर लेती है। साहित्यिक सिद्धांतों में इस रूपांतरण को 'प्रतीकांतरण' अथवा 'संकेतांतरण' के नाम से जाना जाता है।

इस दृष्टिकोण को स्पष्ट करने के लिए कलात्मक उदाहरण अत्यंत महत्त्वपूर्ण हैं। लियोनार्दो दा विंची (1452–1519) की प्रसिद्ध चित्रकृति मोनालिसा भावात्मक प्रतीकांतरण का उत्कृष्ट उदाहरण माना जाता है, जिसमें सौंदर्य, रहस्य और मानवीय भावों को चित्रात्मक प्रतीकों के माध्यम से संप्रेषित किया गया है। इसी प्रकार भारतीय चित्रकला परंपरा में राजा रवि वर्मा की कृतियाँ भी प्रतीकांतरण की सशक्त मिसाल प्रस्तुत करती हैं।

भारतीय लोक-संस्कृति में भी इस प्रकार के रूपांतरण के प्रमाण मिलते हैं। उदाहरणार्थ, नागार्जुन की कविता 'सिंदूर की नागिन' का लोकगीत रूपांतरण इस तथ्य की पुष्टि करता है कि भिन्न माध्यमों- भाषिक, संगीतात्मक या चित्रात्मकके बीच अर्थ का रूपांतरण भी अनुवाद की ही प्रक्रिया है। इस प्रकार अनुवाद का व्यापक संदर्भ भाषाओं से आगे बढ़कर विविध अभिव्यक्ति-माध्यमों के अंतःसंबंधों को समेटता है।

(उपर्युक्त विवेचन के आधार पर देखा जाए तो अनुवाद के तीन संदर्भ स्पष्ट होते हैं-

(क) एक ही भाषा में अनुवाद,

(ख) एक भाषा से दूसरी भाषा में अनुवाद,

(ग) दो भिन्न माध्यमों अथवा प्रतीक व्यवस्थाओं के बीच अनुवाद।

प्रसिद्ध भाषाविद रोमन याकोब्सन (Roman Jakobson) ने अपनी पुस्तक में इसी आधार पर तीन प्रकार बताए हैं-

- अंत:भाषिक अनुवाद
- अंतरभाषिक अनुवाद
- अंतरप्रतीकात्मक अनुवाद

तीनों की परिभाषाएँ

अंत:भाषिक अनुवाद वह प्रक्रिया है जिसमें एक ही भाषा के भीतर किसी कथ्य, विचार, संदेश या अभिव्यक्ति को नए रूप, नए विन्यास या नयी शैली में प्रस्तुत किया जाता है। इस रूपांतरण में भाषा बदलती नहीं, बल्कि वही भाषा अपना स्वरूप, स्तर, शैली या अभिव्यक्ति-पद्धति बदलती है। इसी कारण इसे 'अनुव्याख्या' या 'पैराफ्रेसिंग' भी कहा जाता है। इस प्रकार का अनुवाद यह सिद्ध करता है कि भाषा केवल शब्दों का समूह नहीं, बल्कि बहुविध अभिव्यक्ति-शैलियों,

स्तरों और रजिस्टरों का जीवंत माध्यम है, जिनके बीच सतत अर्थ-परिवर्तन और पुनर्निर्माण चलता रहता है। अंत:भाषिक अनुवाद का सबसे प्रमुख उद्देश्य यह है कि मूल कथ्य को उसके सार, अर्थ और भाव को सुरक्षित रखते हुए नए पाठकवर्ग के लिए अधिक सुगम, स्पष्ट और ग्रहणीय बनाया जाए। चूँकि किसी भाषा में विभिन्न कालों, समाजों, क्षेत्रों और विधाओं के अनुसार प्रयोग में निरंतर परिवर्तन होते रहते हैं, इसलिए कई बार पुरानी अभिव्यक्तियाँ आधुनिक पाठक के लिए अव्यक्त या कठिन हो जाती है। ऐसे में अंत:भाषिक अनुवाद उस अंतराल को भरने का कार्य करता है।

उदाहरण के रूप में हम देख सकते हैं कि मध्यकालीन या प्राचीन हिंदी में लिखी गई रचनाएँ आधुनिक पाठकों के लिए कठिन हो सकती हैं। यदि इन्हें आधुनिक हिंदी में सरल शब्दों, सीधी वाक्य-रचना और समकालीन उदाहरणों के साथ प्रस्तुत किया जाए, तो यह अंत:भाषिक अनुवाद कहलाएगा। इसी प्रकार किसी औपचारिक शैली में लिखे गए सरकारी दस्तावेज को सामान्य पाठकों के लिए बोलचाल की भाषा में प्रस्तुत करना भी इसी श्रेणी में आता है।

अंत:भाषिक अनुवाद केवल कठिन भाषा को सरल बनाने तक सीमित नहीं है। इसमें शैली-परिवर्तन, रजिस्टर-परिवर्तन, विधागत रूपांतरण और व्याख्यात्मक पुनर्निर्माण भी सम्मिलित है। उदाहरणार्थ-

- किसी दार्शनिक निबंध को विद्यार्थियों के लिए सरल भाषायी रूप में समझाना,
- किसी कविता को गद्य रूप में कहना,
- वैज्ञानिक या तकनीकी लेखन को आम जन के लिए आसान भाषा में बदलना,
- किसी भाषण या वक्तव्य को सारगर्भित रूप में संक्षेपित करना।

ये सभी अंत:भाषिक अनुवाद की स्थितियाँ हैं।

अनुवाद में अनुवादक का कार्य केवल शब्दों को बदलना नहीं होता, बल्कि वह मूल अभिप्राय को समझकर उसका पुनःनिर्माण करता है। यहाँ चुनौती यह है कि कथ्य को सरल बनाते समय उसका मूल अर्थ न खो जाए और संरचना को नए रूप में ढालते समय भी संदेश की संवेदनशीलता और गहनता सुरक्षित बनी रहे। इसलिए अंत:भाषिक अनुवाद के लिए भाषा का ज्ञान के साथ-साथ शैलीगत दक्षता, संदर्भ-बोध, साहित्यिक संवेदनशीलता और व्याख्यात्मक समझ भी आवश्यक है।

आज के समय में अंत:भाषिक अनुवाद की आवश्यकता और भी बढ़ गई है, क्योंकि पाठकवर्ग विविध है और उनकी भाषिक पहुँच भी भिन्न है। मीडिया, शिक्षा, साहित्य, प्रशासन, न्याय, विज्ञान-सभी क्षेत्रों में मूल सामग्री को अलग-अलग स्तरों पर पुनर्प्रस्तुत करने का कार्य इसी श्रेणी में आता है। यह न केवल भाषा की लोकतांत्रिकता को बढ़ाता है, बल्कि ज्ञान के प्रसार में समानता की भावना को भी सुदृढ़ करता है।

(ख) अंतरभाषिक अनुवाद

अंतरभाषिक अनुवाद वह प्रक्रिया है जिसमें किसी भाषा में व्यक्त विचार, कथ्य या संदेश को सीधे किसी अन्य भाषा में रूपांतरित किया जाता है। अनुवाद का यह रूप सबसे अधिक प्रचलित और व्यापक माना जाता है, इसलिए इसे "वास्तविक अनुवाद" या Translation Proper भी कहा जाता है। सामान्य समझ वाला कोई भी व्यक्ति जब "अनुवाद" शब्द का प्रयोग करता है, तो उसका तात्पर्य प्रायः इसी श्रेणी से होता है, जहाँ दो भिन्न भाषाओं के बीच अर्थ-संप्रेषण सुनिश्चित किया जाता है- जैसे हिन्दी से अंग्रेजी, संस्कृत से हिन्दी, मराठी से गुजराती आदि।

अंतरभाषिक अनुवाद की प्रक्रिया के मूल में यह धारणा निहित है कि दो भाषाओं की संरचनाएँ, ध्वन्यात्मक तंत्र, शब्दकोशीय बनावट, मुहावरे, वाक्य-विन्यास, शैलीगत विशेषताएँ तथा सांस्कृतिक संदर्भसभी एक-दूसरे से भिन्न होते हैं। इसलिए किसी भाषा के कथ्य को किसी अन्य भाषा में संप्रेषित करना केवल "शब्दान्तर" नहीं, बल्कि अर्थ के पुनर्निर्माण और अर्थपरक समानता (semantic equivalence) की खोज का कार्य है। इसी कारण अनुवादक के लिए यह आवश्यक है कि उसे केवल दोनों भाषाओं का व्याकरणिक ज्ञान ही न हो, बल्कि उनके सामाजिक-सांस्कृतिक संदर्भों, प्रयोग-स्तरों, रजिस्टरों तथा अभिव्यक्ति की परंपराओं का भी गहरा बोध हो।

अंतरभाषिक अनुवाद में अनुवादक को दो मुख्य स्तरों पर कार्य करना पड़ता है—

भाषिक स्तर (Linguistic Level): इसमें व्याकरण, शब्दार्थ, वाक्य-रचना, लय, क्रिया-रूप, लिंग-पुरुष के भेद आदि की समझ शामिल होती है। उदाहरण के लिए, अंग्रेज़ी वाक्य "They have finished their work." का सही हिन्दी अनुवाद "उन्होंने अपना काम पूरा कर लिया है।" तभी संभव है जब अनुवादक को अंग्रेजी के present perfect tense और हिन्दी के समाप्ति-सूचक क्रिया-रूप के बीच के संरचनात्मक अंतर की स्पष्ट समझ हो। यहाँ have finished का सीधा अनुवाद "पूरा किया है" नहीं, बल्कि "कर लिया है" अधिक स्वाभाविक और लक्ष्य भाषा की प्रणाली के अनुरूप है। सामाजिक-सांस्कृतिक स्तर (Socio-cultural Level): प्रत्येक भाषा अपनी संस्कृति से पोषित होती है। इसलिए अनुवादक को यह जानना आवश्यक है कि मूल भाषा में प्रयुक्त किसी शब्द या कथ्य का सांस्कृतिक अर्थ क्या है और लक्ष्य भाषा में उसे किस प्रकार प्रस्तुत किया जाए ताकि वही भाव, वही अर्थ-भार और वही प्रभाव उत्पन्न हो सके।
अंतरभाषिक अनुवाद में यह भी ध्यान रखना पड़ता है कि दो भाषाओं के बीच "पूर्ण समानता" संभव नहीं होती। इसलिए अनुवादक को अर्थ-संरक्षण (meaning preservation), शैली-संरक्षण (style retention) और प्रसंग-संरक्षण (contextual fidelity)- इन तीनों को संतुलित करते हुए अनुवाद करना होता है। यही अनुवादक की रचनात्मक योग्यता का प्रमाण है।
इस श्रेणी के अनुवाद में अनेक प्रकार की चुनौतियाँ आती हैं-

- शब्दों के बहुआयामी अर्थ
- लोक-प्रयोगों और मुहावरों का समतुल्य चयन
- सांस्कृतिक संकेतों का रूपांतरण
- भाव और लहजे की अदला-बदली
- व्याकरण और लय में भिन्नताओं का सामंजस्य

उदाहरण के लिए, हिंदी का बोलचाल वाला वाक्य "दिल पे मत ले यार" यदि शब्दशः अंग्रेजी में अनूदित किया जाए, तो उसका रूप "Don't take on your heart, friend" जैसा अव्यवस्थित और अर्थहीन प्रतीत होगा। इसके विपरीत, अंग्रेजी में इसका सांस्कृतिक और भावगत रूप से सटीक तथा प्रामाणिक अनुवाद "Don't take it to heart, buddy" अधिक उपयुक्त माना जाएगा।

यह उदाहरण स्पष्ट करता है कि अंतरभाषिक अनुवाद केवल शब्द-प्रतिस्थापन पर आधारित नहीं होता, बल्कि इसमें रचनात्मकता, सांस्कृतिक अनुकूलन, मुहावरों की समझ और प्रसंगानुकूल अर्थ-संप्रेषण की विशिष्ट क्षमता आवश्यक होती है। यहीं से यह सिद्ध होता है कि अनुवादक को दोनों भाषाओं की संरचना के साथ-साथ उनके सांस्कृतिक मुहावरों, सामाजिक व्यवहारों और संदर्भगत संवेदनशीलताओं का भी गहरा ज्ञान होना चाहिए। समकालीन युग में अंतरभाषिक अनुवाद ज्ञान-विस्तार, शिक्षा, प्रशासन, कूटनीति, मीडिया, वैश्विक संचार और साहित्यिक संवाद का अनिवार्य साधन बन चुका है। यह विभिन्न भाषाई समुदायों के बीच सेतु का कार्य करता है और विश्व को आपस में जोड़ता है। अतः अंतरभाषिक अनुवाद केवल भाषिक रूपांतरण न होकर सांस्कृतिक, बौद्धिक और भावनात्मक अंतरण का महत्त्वपूर्ण माध्यम है।

(ग) अंतरप्रतीकात्मक अनुवाद

भाषा एक प्रतीकात्मक व्यवस्था है। किसी भाषा के कथ्य को किसी अन्य प्रतीक व्यवस्था में प्रस्तुत करना ही अंतरप्रतीकात्मक अनुवाद कहलाता है।

उदाहरण-

अंतरप्रतीकात्मक अनुवाद का स्वरूप उस स्थिति में स्पष्ट रूप से उभरकर आता है जब किसी भाषिक कथ्य को गैर-भाषिक माध्यमों- जैसे दृश्य-कला, संगीत, नृत्य या चलचित्रके माध्यम से अभिव्यक्त किया जाता है।

उदाहरणस्वरूप-

- गीत को चित्रों में अभिव्यक्त करना- जब किसी गीत की भाव-गहनता, कथा-धारा या विचार को शब्दों के बजाय दृश्य-रूपों, रंगों और आकृतियों के माध्यम से चित्रकला में व्यक्त किया जाता है, तो यह प्रतीक-व्यवस्था का परिवर्तन है। यहाँ ध्वन्यात्मक और भाषिक संकेतों को दृश्य प्रतीकों में रूपांतरित किया जाता है।
- कविता को नृत्य-शैली में प्रस्तुत करना- किसी कविता में निहित भाव, लय, बिंब और प्रतीकों को शारीरिक मुद्राओं, ताल, लय और अभिनेय भंगिमाओं के माध्यम से नृत्य में पुनर्सृजित करना अंतरप्रतीकात्मक अनुवाद का उत्कृष्ट उदाहरण है। इसमें शब्दों की संवेदना को शारीरिक गतियों और भाव-भंगिमाओं के माध्यम से अर्थ दिया जाता है।
- कहानी का फिल्म-रूपांतरण- जब किसी कहानी, उपन्यास या लघुकथा को चलचित्र की भाषा-अभिनय, दृश्य-निर्माण, संवाद, संगीत और फोटोग्राफीके सहारे प्रस्तुत किया जाता है, तब यह प्रतीकव्यवस्था का व्यापक रूपांतरण होता है। यहाँ कथ्य का रूपांतरण केवल शब्दों से दृश्य-श्रव्य माध्यम में नहीं होता, बल्कि भाव, वातावरण और अनुभव को भी नए माध्यम में अनुकूलित किया जाता है।

अंतरप्रतीकात्मक अनुवाद में ध्यान रखने की बात यह है कि दो प्रतीक व्यवस्थाओं के बीच इस प्रकार के अनुवाद में एक भाषिक प्रतीति होता है और दूसरा भावोत्पादक। चित्रकला, संगीत, नृत्य सब इसी कारण से अभिव्यक्ति माने जाते हैं।
उदाहरण-

यदि किसी कहानी में "आँधी आती है तो मन में भय की लहर दौड़ जाती है" जैसा वाक्य प्रयुक्त हो, और उसके मंचीय रूपांतरण (नाटक) में इस कथ्य को तेज हवा की ध्वनि-प्रभाव, मद्धिम पड़ती रोशनी, तथा कलाकारों की आकस्मिक प्रतिक्रियाओं के माध्यम से अभिव्यक्त किया जाए, तो यह भी अंतरप्रतीकात्मक अनुवाद का उत्कृष्ट उदाहरण माना जाएगा। यहाँ भाषिक कथन को शब्दों में कहने के बजाय ध्वनि, प्रकाश कीगति और दृश्य संकेतों के द्वारा व्यक्त किया गया है, जो एक प्रतीक व्यवस्था से दूसरी प्रतीक व्यवस्था में अर्थ के रूपांतरण को दर्शाता है।

1.7.2 अनुवाद का सीमित संदर्भ

अनुवाद के व्यापक परिप्रेक्ष्य में जहाँ प्रतीकांतरण और संकेतांतरण जैसी विविध प्रक्रियाएँ शामिल होती हैं, वहीं सीमित संदर्भ में अनुवाद का आशय मुख्यतः दो भाषाओं के बीच होने वाले अर्थ-संप्रेषण से लगाया जाता है। रोमन याकोब्सन द्वारा प्रतिपादित वर्गीकरण में इसे अंतरभाषिक अनुवाद (Inter-lingual Translation) कहा गया है, जिसे वास्तविक अनुवाद (Translation Proper) की संज्ञा भी दी जाती है।

सीमित संदर्भ में अनुवादक का कार्य केवल किसी भाषा के शब्दों को किसी अन्य भाषा में प्रतिस्थापित करना नहीं होता, बल्कि वह मूल कथ्य का अर्थ, भाव, उद्देश्य और उसकी वैचारिक संवेदना को लक्ष्य भाषा में सुव्यवस्थित, स्पष्ट और प्रभावपूर्ण ढंग से पुनर्सृजित करता है। इस प्रक्रिया में अनुवादक को भाषिक संरचना, मुहावरे, वाक्य-विन्यास, सांस्कृतिक संकेतों तथा प्रसंगगत अर्थों का सावधानीपूर्वक विश्लेषण करना पड़ता है। उद्देश्य केवल अनूदित सामग्री का निर्माण नहीं, बल्कि लक्ष्य भाषा में वही भावनात्मक, बौद्धिक और सांस्कृतिक प्रभाव उत्पन्न करना है, जो मूल भाषा के पाठ में निहित था।

सीमित संदर्भ में अनुवादक को यह भी समझना होता है कि दो भाषाओं की संरचनाएँ- ध्वनि-तंत्र, व्याकरण, लय, सांस्कृतिक अभिव्यक्तियाँएक-दूसरे से भिन्न होती हैं। अतः किसी शब्द या वाक्य को "ज्यों का त्यों" दूसरी भाषा में उतारना संभव नहीं है। इसीलिए समतुल्यता (equivalence) एक केंद्रीय सिद्धांत बन जाता है, जिसके आधार पर अनुवादक लक्ष्य भाषा में वह रूप चुनता है जो अर्थ को सर्वाधिक सटीकता से प्रेषित कर सके।

कुछ स्थितियों में प्रत्यक्ष समतुल्य मिल जाना आसान होता है, जबकि अनेक बार भाषाओं की सांस्कृतिक संरचना भिन्न होने के कारण अनुवादक को व्याख्या (explanation), अर्थ-विस्तार (amplification) या सांस्कृतिक पुनर्प्रस्तुति (cultural substitution) का सहारा लेना पड़ता है। यह कार्य सरल नहीं, बल्कि विश्लेषणात्मक और रचनात्मक कौशल की माँग करता है।

सीमित संदर्भ के अंतर्गत पादभर्मी (literal) तथा प्रभावभर्मी (sense-for-sense) दोनों प्रकार के अनुवाद शामिल होते हैं।

पादभर्मी अनुवाद शब्द प्रति शब्द समानता पर आधारित होता है, परंतु साहित्यिक या सृजनात्मक पाठ में यह प्रायः असफल हो जाता है क्योंकि संरचना, छंद, लय और भावानुभूति का स्थानांतरण अक्षरशः संभव नहीं होता। इसके विपरीत, प्रभावभर्मी अनुवाद पाठक पर मूल रचना के समान प्रभाव उत्पन्न करने का प्रयास करता है। इसमें संरचना का अनुकूलन, शैलीगत परिवर्तन और व्यंजना का पुनर्सृजन महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। सीमित संदर्भ में अनुवाद मूलतः भाषिक अंतरण की सटीकता, अर्थ की संरक्षा, सांस्कृतिक संप्रेषण, तथा प्रभाव-निर्माण की प्रक्रिया है। यह अनुवाद का वह स्वरूप है जो व्यावहारिक, शिक्षणात्मक, प्रशासनिक, वैज्ञानिक तथा साहित्यिक सभी क्षेत्रों में सर्वाधिक प्रयुक्त होता है।
उदाहरण:

- Silent treatment ⟶ चुप्पी साध लेना / मौन दंड देना
- Bureaucratic hurdles ⟶ नौकरशाही की रुकावटें
- Illegal earnings ⟶ अवैध कमाई
- Harmless deception ⟶ निरापद छल / बिना नुकसान का झूठ
- Fierce competition ⟶ कड़ी प्रतिस्पर्धा / कटु प्रतिस्पर्धा
- False sympathy ⟶ झूठी सहानुभूति
- Face-saving excuse ⟶ खिसियानी प्रतिक्रिया / खुद को दिलासा देना
- Tit for tat ⟶ जैसे को तैसा
- Never lose heart ⟶ हिम्मत मत हारो / आशा मत छोड़ो
- To mislead someone ⟶ किसी को गुमराह करना

(ख) प्रभावभर्मी अनुवाद :

प्रभावभर्मी अनुवाद वास्तव में पाठक पर प्रभाव को केन्द्र में रखकर किया गया अनुवाद होता है। इसमें अनुवादक इस दृष्टि से अनुवाद करता है कि अनुवादित पाठ भी पाठक पर वही प्रभाव उत्पन्न करे जो मूल पाठ के पाठक पर पड़ता है। इसके लिए वह मूल भाषा पाठ की संरचना और अनुवादक के अपेक्षा मूल के उस प्रभाव को पकड़ने और उसे लक्ष्य भाषा में प्रस्तुत करने की कोशिश करता है जो लक्ष्य भाषा के पाठक पर पढ़ा हो। अनुवादक, स्रोत भाषा पाठ के प्रभाव को पकड़कर अनुवादित संरचना में कोई भी छेड़छाड़ करने का श्रम-साध्य प्रयास है। यह प्रकार अनुवाद के लिए अनुवादित पाठ के अर्थ-मूल्यांकन को कोडित होता है। इसमें अनुवादक की संरचना, वाक्य विन्यास, शब्दावली और प्रसंग की सूक्ष्मताओं और प्रयोगात्मक अर्थ (Pragmatics) की भी अनुवादित पाठ में व्यंजक होता है। इसमें यह ध्यान रखा जाता है कि अनुवादित पाठ 'समान प्रभाव' वाला हो। जैसे अनुवाद न लगे; मूल कथ्य की सम्पूर्णता और उसकी संरचना भी अनुवाद विशेष तौर पर व्यक्त हो।

यहाँ यह उल्लेख करना भी उचित न होगा कि प्रभावभर्मी आयाम वाले अनुवाद में अनुवादक अनुवादित रचना में मूल पाठ के सम्प्रेषण अर्थ को खुद अपने पाठ के बाहर किसी को छूट होती है। वह मूल में अपनी ओर से जोड़ने-घटाने

का कार्य कर पूरी रचना प्रस्तुत करता देती है। सृजनात्मक साहित्य स्वाभाविक स्थिति में प्रभावभर्मी अनुवाद का ही आश्रय लेता है। सूचनात्मक अनुवाद में ज्ञानात्मक एवं सूचना प्रदत्त साहित्य के अनुवाद में प्रभावभर्मी अनुवाद कारगर नहीं होता।

अपनी प्रगति जांचें

प्रश्न 6. प्रश्न: समकालीन अनुवादकों के विचारों के अनुसार अनुवाद को किस तरह देखा जाता है?

प्रश्न 7. 'अनुवाद' और 'रूपांतरण' में मुख्य व्यावहारिक अंतर क्या है?

प्रश्न 8. रोमन याकोब्सन के अनुसार अनुवाद के कौन-से तीन प्रकार हैं?

प्रश्न 9. यूजीन नाइडा की अनुवाद-दृष्टि की प्रमुख वृद्धि/विशेषता क्या है?

प्रश्न 10. अनुवाद की सफलता किन तीन तत्वों के संतुलन पर निर्भर करती है?

1.7 सारांश

अनुवाद मानवीय संप्रेषण का एक अनिवार्य और बहुआयामी रूप है, जो केवल भाषा-परिवर्तन नहीं, बल्कि अर्थ, भाव, संदर्भ और संस्कृति के व्यापक स्थानांतरण की सृजनात्मक प्रक्रिया है। 'अनुवाद' की व्युत्पत्ति संस्कृत की धातु "वद्" और उपसर्ग "अनु" से हुई है, जिसका अर्थ है- कहे हुए का अनुसरण करते हुए पुनः कथन करना, जबकि अंग्रेजी'Translation' लैटिन शब्द Transferre से विकसित हुआ है, जिसका आशय एक ओर से दूसरी ओर अर्थ का ले जाना है। भारतीय परंपरा में अनुवाद 'अनुवचन' और 'अनुवाक' के रूप में मौखिक पुनरुक्ति से जुड़ा रहा। आधुनिक अनुवाद अध्ययनों में इसे भाषा, अर्थ और संदर्भ के त्रिकोणीय संयोजन के रूप में समझा गया है। यूजीन नाइडा ने अनुवाद को "निकटतम प्राकृतिक समतुल्य" की प्रक्रिया बताते हुए अर्थ को प्राथमिक और शैली को द्वितीय स्थान दिया। कैटफर्ड ने इसे भाषिक प्रतिस्थापन माना, जबकि न्यूमार्क ने इसे शिल्प और अर्थ-संचरण का संतुलन बताया। भारतीय विद्वान- आचार्य शुक्ल, द्विवेदी, नामवर सिंह, नगेंद्र, भोलानाथ तिवारी तथा के.के. गोस्वामी- अनुवाद को भावानुवाद, सांस्कृतिक उपयुक्तता, संरचनात्मक पुनर्गठन और अर्थ-समतुल्यता पर आधारित रचनात्मक कार्य मानते हैं।अनुवाद का व्यापक अर्थ केवल भाषाई अंतरण तक सीमित नहीं है, बल्कि इसमें प्रतीकों और माध्यमों के बीच रूपांतरण भी शामिल है- जैसे कहानी का नाटक, कविता का नृत्य या गीत का चित्रात्मक प्रस्तुतीकरण, जिसे रोमन याकोब्सन ''अंतरप्रतीकात्मक अनुवाद'' कहते हैं। उनके अनुसार अनुवाद तीन प्रकार का होता है- अंत:भाषिक (एक ही भाषा में पुनर्प्रस्तुति), अंतरभाषिक (दो भाषाओं के बीच रूपांतरण) और अंतरप्रतीकात्मक (भाषा से अन्य माध्यमों में रूपांतरण)। अनुवाद का सीमित संदर्भ दो भाषाओं के मध्य अर्थ-संचरण तक केंद्रित है, जिसमें समतुल्यता,सांस्कृतिक अनुकूलन और प्रसंग-निष्ठता महत्वपूर्ण होते हैं। अनुवाद की प्रक्रिया में भाषा उसकी भौतिक संरचना प्रदान करती है, अर्थ उसकी आत्मा है, और संदर्भ उसकी सामाजिक-सांस्कृतिक विश्वसनीयता का आधार बनता है। सफल अनुवाद वही है जो मूल पाठ की संवेदना, उद्देश्य और प्रभाव को लक्ष्यभाषा में इस प्रकार प्रस्तुत कर सके कि पाठक को अनूदित पाठ में मूल रचना की अनुभूति मिले। इस प्रकार अनुवाद केवल भाषिक क्रिया नहीं, बल्कि दो भाषाओं, संस्कृतियों और विचार-परंपराओं के बीच सेतु का कार्य करते हुए ज्ञान, अनुभव और सांस्कृतिक संवाद को व्यापक बनाता है।

1.8 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)

प्रश्न 1 का उत्तर: अनुवाद शब्द संस्कृत धातु वद् तथा उपसर्ग अनु से मिलकर बना है, जिसका अर्थ है- कथन का अनुसरण करते हुए उसे नई भाषा में पुनः प्रस्तुत करना।

प्रश्न 2 का उत्तर: अनुवाद में 'स्थानांतरण' का अर्थ किसी भाषा के अर्थ, भाव और सांस्कृतिक संकेतों को दूसरी भाषा में उपयुक्त रूप में पहुँचाना है।

प्रश्न 3 का उत्तर: यूजीन नाइडा की दृष्टि की विशेषता "डायनेमिक इक्विवैलेंस" है, जहाँ अनुवाद का उद्देश्य मूल जैसा ही प्रभाव लक्षित पाठक पर उत्पन्न करना है।

प्रश्न 4 का उत्तर: भारतीय विद्वान अनुवाद को अर्थ-संप्रेषण, संरचनात्मक पुनर्गठन और सांस्कृतिक उपयुक्तता के संतुलित संयोजन के रूप में समझते हैं।

प्रश्न 5 का उत्तर: सिसरो अर्थकेलिएअर्थ अनुवाद का समर्थन करते हैं, जबकि होरेस मूल कृति की आत्मा और भाव को सुरक्षित रखने पर अधिक बल देते हैं।

प्रश्न 6 का उत्तर: अनुवाद को रचनात्मक सह-यात्रा, सांस्कृतिक सेतु और बहुभाषिक चिंतन के रूप में देखा जाता है जो मूल भाव को नए संदर्भ में जीवंत बनाता है।

प्रश्न 7 का उत्तर: अनुवाद मुख्यतः भाषा-स्तर का अंतरण है जबकि रूपांतरण में भाषा के साथ-साथ माध्यम, विधा और सांस्कृतिक ढाँचे का भी परिवर्तन शामिल होता है।

प्रश्न 8 का उत्तर: उन्होंने अंत:भाषिक (intra-lingual), अंतरभाषिक (inter-lingual) और अंतरप्रतीकात्मक (inter-semiotic) अनुवाद बताये हैं।

प्रश्न 9 का उत्तर: नाइडा ने "डायनेमिक इक्विवैलेंस" पर जोर दिया-यानी लक्षित भाषी पर वही प्रभाव उत्पन्न करना जो स्रोतभाषी पर होता है।

प्रश्न 10 का उत्तर: अनुवाद की सफलता भाषा (form), अर्थ (meaning) और संदर्भ (context) के त्रैतीय संतुलन पर निर्भर करती है।

1.9 अधिक जानकारी के लिए पढ़ें

- Nida, E. A. (1964). Toward a science of translating. Leiden: Brill.
- Catford, J. C. (1965). A linguistic theory of translation. Oxford: Oxford University Press.
- Newmark, P. (1988). A textbook of translation. New York: Prentice Hall.
- Jakobson, R. (1959). On linguistic aspects of translation. In R. Brower (Ed.), On translation (pp. 232–239). Harvard University Press.
- Venuti, L. (1995). The translator's invisibility: A history of translation. London: Routledge.
- शुक्ल, आनन्दकुमार. (2015). आचार्यरामचंद्रशुक्लकाअनुवाद-कर्म. वाराणसी: लोकभारतीप्रकाशन।
- गोपीनाथन, जी. (2011). अनुवाद: सिद्धांतऔरप्रयोग. नईदिल्ली: राजकमलप्रकाशन।
- गोस्वामी, के. के. (2010). अनुवाद: सिद्धांतऔरदृष्टिकोण. इलाहाबाद: लोकभारतीप्रकाशन।
- सेठी, हरीशकुमार. (2014). ई–अनुवादऔरहिंदी. नईदिल्ली: वाणीप्रकाशन।
- सेठी, हरीशकुमार. (2011). अनुवादसिद्धांतऔरव्यवहार. नईदिल्ली: ज्ञानप्रकाशन।
- नगेन्द्र. (2010). अनुवादविज्ञान: सिद्धांतऔरअनुप्रयोग. नईदिल्ली: किताबमहल।
- तिवारी, भोलानाथ. (2009). अनुवाद-विज्ञान. इलाहाबाद: किताबमहल।

1.10 अभ्यास प्रश्न

(क) संक्षिप्त प्रश्नों के उत्तर लिखिए-

1. अनुवाद' शब्द किस संस्कृत धातु से निर्मित है?
2. अंग्रेजी शब्द 'Translation' की व्युत्पत्ति किन लैटिन शब्दों से हुई है?
3. अनुवाद के संदर्भ में 'स्थानांतरण' का क्या मुख्य भाव निहित है?
4. यूजीन नाइडा किस प्रकार की समतुल्यता पर विशेष बल देते हैं?
5. जे.सी. कैटफर्ड अनुवाद को किस प्रकार की प्रक्रिया मानते हैं?

(ख) निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लिखिए:

1. भारतीय परंपरा में 'अनुवचन' शब्द का प्रयोग किस संदर्भ में होता था?
2. 'अनुवाद' शब्द की उत्पत्ति और उससे जुड़े विभिन्न पारंपरिक पर्यायों पर विस्तार से चर्चा कीजिए।
3. अनुवाद' और 'रूपांतरण' के बीच अंतर को उपयुक्त उदाहरणों सहित स्पष्ट कीजिए।
4. अनुवाद को संप्रेषण प्रक्रिया के रूप में समझते हुए इसकी बहुस्तरीय संरचना का वर्णन कीजिए।
5. अनुवाद के व्यापक और सीमित संदर्भों में अंतर को स्पष्ट कीजिए तथा उदाहरण सहित समझाइए।
6. अंतरभाषिक अनुवाद में आने वाली भाषिक और सांस्कृतिक चुनौतियों की विवेचना कीजिए।

शब्दकोश:

1. व्युत्पत्ति: निकालना, उत्पन्न करना; शब्द की उत्पत्ति की प्रक्रिया। 2. समतुल्यता: बराबरी, समानता, तुल्य अवस्था।3. प्रतीकांतरण: प्रतीक का स्थानांतरण; एक प्रतीक-व्यवस्था से दूसरी में बदलना। 4. अंत:भाषिक: भाषा के भीतर; एक ही भाषा के अंदर किया जाने वाला रूपांतरण। 5. अंतरभाषिक:भाषाओं के बीच; एक भाषा से दूसरी भाषा में परिवर्तन। 6. पुनर्गठन: दोबारा गढ़ना, पुनः बनाना, नई संरचना में ढालना। 7. उपयुक्तता: योग्य होना, फिट बैठना, उपयुक्त होना। 8. विनिमय:बदलना, अदला-बदली करना, परस्पर परिवर्तन। 9. संप्रेषणीयता: संप्रेषण करने योग्य होना; संदेश को पहुँचाने की क्षमता।

*** ***** ***

इकाई 2 - अनुवाद के प्रकार और विविध क्षेत्र

इकाई की रुपरेखा

2.1 उद्देश्य
2.2 प्रस्तावना
2.3 अनुवाद के प्रकार: विद्वानों के विविध विचार
  2.3.1 पाश्चात्य अनुवाद सिद्धांतकारों की विचारधरा
  2.3.2 भारतीय अनुवाद सिद्धांतकारों की विचारधारा
2.4 अनुवाद के प्रमुख प्रकार
  2.4.1 शाब्दिक अनुवाद
  2.4.2 भावानुवाद
  2.4.3 छायानुवाद
  2.4.4 रूपांतरण
  2.4.5 अनुसृजन
  2.4.6 पुनर्सृजन
  2.4.7 नवलेखन
  2.4.8 टीकानुवाद
  2.4.9 सारानुवाद
  2.4.10 आशु अनुवाद
  2.4.11 पुनःअनुवाद
  2.4.12 लिप्यंकन
  2.4.13 लिप्यंतरण
2.5 अनुवाद के विविध क्षेत्र
  2.5.1 प्रशासनिक साहित्य और अनुवाद
  2.5.2 बैंकिंग और अनुवाद
  2.5.3 विधि साहित्य और अनुवाद
  2.5.4 मीडिया और अनुवाद
  2.5.5 सृजनात्मक साहित्य और अनुवाद
  2.5.6 तुलनात्मक साहित्य और अनुवाद
  2.5.7 शिक्षा और अनुवाद
  2.5.8 पर्यटन और अनुवाद
2.6 सारांश
2.7 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)
2.8 अधिक जानने के लिए पढ़ें
2.9 अभ्यास प्रश्न

2.1 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन से आप-

- अनुवाद के प्रमुख प्रकारों—शाब्दिक, भावानुवाद, छायानुवाद, रूपांतरण आदि—की संकल्पना और स्वरूप का स्पष्ट ज्ञान प्राप्त होगा।
- पाश्चात्यतथाभारतीयअनुवादसिद्धांतकारोंद्वाराप्रस्तुतवर्गीकरणोंकीतुलनात्मकसमझविकसितहोगी।
- विभिन्नसंदर्भोंऔरप्रयोजनोंकेअनुसारउपयुक्तअनुवाद-प्रकारकेचयनकी क्षमता विकसित होगी।
- सृजनात्मकसाहित्यकेअंतर्गतकाव्यानुवाद, कथा-अनुवाद और नाट्यानुवाद से जुड़ी व्यावहारिक चुनौतियों की पहचान कर पाएँगे।
- प्रशासनिक, विधि, मीडिया, शिक्षा और पर्यटन जैसे क्षेत्रों में अनुवाद की भूमिका का सम्यक विश्लेषण कर सकेंगे।

2.2 प्रस्तावाना

अनुवाद मानव सभ्यता के सांस्कृतिक, भाषिक और बौद्धिक आदान-प्रदान का एक सशक्त माध्यम है। यह केवल भाषा-परिवर्तन की तकनीक नहीं, बल्कि अर्थ, भाव, संदर्भ, शैली और सांस्कृतिक संकेतों के पुनर्सृजन की जटिल प्रक्रिया भी है। मानव समाज में विविधता जितनी व्यापक है, उतनी ही विस्तृत अनुवाद की आवश्यकता भी रही है। विभिन्न भाषाओं, समाजों, प्रदेशों और ज्ञान-परंपराओं के बीच सेतु स्थापित करने का दायित्व अनुवाद ने सदैव निभाया है। इसीलिए अनुवाद को आज वैश्विक संवाद का आधार और सांस्कृतिक संवहन की रीढ़ कहा जाता है। आधुनिक परिवर्तनशील विश्व में अनुवाद की उपयोगिता और भी बढ़ गई है, क्योंकि ज्ञान के प्रत्येक क्षेत्र में तीव्र गति से विस्तार हो रहा है और उसकी पहुँच को सार्वभौमिक बनाना आवश्यक हो गया है।

अनुवाद के प्रकारों की चर्चा इन विविध आवश्यकताओं की पूर्ति के आधार पर होती है। भाषा की प्रकृति, साहित्यिक अभिव्यक्ति, तकनीकी ज्ञान, व्यावसायिक दस्तावेज, प्रशासनिक संचार, वैज्ञानिक अनुसंधान, मीडिया, विज्ञापन, फिल्म, शिक्षा और सूचना-प्रसारण जैसी अनेक दिशाओं में अनुवाद कार्य विस्तार पा चुका है। इन विविध क्षेत्रों ने अनुवाद को केवल साहित्यिक गतिविधि न रखकर एक स्वतंत्र, बहुआयामी और अत्यंत विशिष्ट अनुशासन के रूप में स्थापित किया है। फलस्वरूप, अनुवाद के प्रकारों में शब्दार्थ-अनुवाद, भावानुवाद, शाब्दिक अनुवाद, सांस्कृतिक अनुवाद, तकनीकी अनुवाद, वैधानिक अनुवाद, वैज्ञानिक अनुवाद, ऑडियो-विजुअल अनुवाद, मशीन अनुवाद और व्यावहारिक अनुवाद आदि अनेक रूप सम्मिलित हो गए हैं। प्रत्येक प्रकार की अपनी पद्धति, चुनौतियाँ और कौशलआवश्यकताएँ हैं, जिनका अध्ययन इस इकाई में महत्वपूर्ण है।

साहित्यिक क्षेत्र में अनुवाद कल्पना, संवेदना और भाव-लोक को नई भाषा में पुनः रचता है। इसमें सौंदर्यबोध, शैलीगत विशेषताओं और सांस्कृतिक प्रतीकों की सूक्ष्म समझ आवश्यक होती है। इसके विपरीत तकनीकी एवं वैज्ञानिक अनुवाद में वस्तुनिष्ठता, सटीकता, शब्द-प्रामाणिकता और अवधारणात्मक शुद्धता का विशेष महत्त्व है। वहीं प्रशासनिक और व्यावसायिक अनुवाद में स्पष्टता, संक्षिप्तता और कानूनी सुसंगतता अनिवार्य मानी जाती है। मीडिया और फिल्म क्षेत्र ने अनुवाद को उपशीर्षक, डबिंग, लोकलाइज़ेशन तथा बहुभाषीय प्रस्तुति के रूपों तक विस्तारित किया है, जिनमें समय-सीमा, श्रोताओं की रूचि तथा दृश्य-श्रव्य माध्यम की संवेदनशीलता का विशेष ध्यान रखना पड़ता है। इन सबके बीच सांस्कृतिक अनुवाद एक ऐसा क्षेत्र है जो भाषाओं के बीच संस्कृति, मान्यताओं और परंपराओं का सूक्ष्म रूपांतरण करता है, ताकि अर्थ और भाव की समानता बनी रहे। आज के डिजिटल युग में मशीनी अनुवाद, कृत्रिम बुद्धिमत्ता आधारित

अनुवाद तथा कॉर्पस आधारित भाषा प्रौद्योगिकी अनुवाद के नए क्षितिज खोल रहे हैं। यद्यपि ये उपकरण अनुवाद की गति बढ़ाते हैं, परंतु मानव-संवेदना और सांस्कृतिक जटिलताओं की समझ अभी भी मानवीय अनुवादक की विशिष्ट क्षमता है।

2.3 अनुवाद के प्रकार: विद्वानों के विविध विचार

अनुवाद के प्रकारों पर विचार करते समय यह स्पष्ट होता है कि विश्वभर के अनुवाद कार्य से जुड़े हुए विद्वानों ने अपनी-अपनी दृष्टियों और भाषाई अनुभवों के आधार पर इसे अलग-अलग रूपों में परिभाषित किया है। हर विद्वान ने अनुवाद को समझने का अपना विशिष्ट दृष्टिकोण विकसित किया, जिससे उसकी प्रकृति, विधियाँ तथा श्रेणियाँ अनेक आयामों में विस्तृत हुई। चूँकि अनुवादशास्त्र एक निरंतर विकसित होता अनुशासन है, इसलिए सभी विचारधाराओं का समग्र विश्लेषण यहाँ करना न तो आवश्यक है और न ही संभव। अतः इस इकाई में हम केवल उन प्रतिनिधि अनुवाद-चिंतकों की अवधारणाओं का संक्षेप परिचय दे रहे हैं, जिनके सिद्धांत अनुवाद अध्ययन के विकास में मील के पत्थर माने जाते हैं।

अंतरराष्ट्रीय स्तर पर अनुवाद-विमर्श को नई दिशा देने वाले प्रमुख नामों में यूजीन नाइडा, रोमन जैकब्सन, पीटर न्यूमार्क, जे. सी. कैटफ़र्ड, विनयडर्बलने, तथा आंद्रे लेफेवेर विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। इन विद्वानों ने अनुवाद को कभी भाषिक समतुल्यता के आधार पर, कभी सांस्कृतिक स्थानांतरण के दृष्टिकोण से, कभी संचार प्रक्रिया के रूप में और कभी शक्ति-संरचना तथा पाठ-उत्पादन के व्यापक परिप्रेक्ष्य में समझने का प्रयास किया। इनकी अवधारणाएँ यह स्पष्ट करती हैं कि अनुवाद केवल शब्दों का रूपांतरण नहीं, बल्कि अर्थ-व्यवस्था, सांस्कृतिक प्रणालियों और संप्रेषण की प्रभावशीलता से जुड़ी बहुआयामी प्रक्रिया है। इन्हीं के समानांतर भारतीय पृष्ठभूमि में भी कई महत्वपूर्ण विद्वानों ने अनुवाद के प्रकारों को लेकर महत्वपूर्ण मत प्रस्तुत किए हैं। विशेष रूप से डॉ. भोलानाथ तिवारी और डॉ. नगेंद्र द्वारा प्रतिपादित अभिमत भारतीय अनुवाद-परंपरा की सांस्कृतिक गहराई और भाषिक विविधता को रेखांकित करते हैं। इन दोनों विद्वानों ने भारतीय भाषाओं की संरचना, साहित्यिक परंपरा, अर्थ-संप्रेषण की सूक्ष्मताओं तथा सांस्कृतिक प्रतीकों के आधार पर अनुवाद के स्वरूपों और वर्गीकरण को स्पष्ट किया है।

महत्वपूर्ण बिंदु

अनुवाद-विमर्श भाषा, संस्कृति और विचारों के पारस्परिक संवाद का बौद्धिक क्षेत्र है। यह केवल एक भाषा से दूसरी भाषा में शब्दों के रूपांतरण तक सीमित नहीं रहता, बल्कि अर्थ, भाव, संदर्भ और सांस्कृतिक संकेतों के संतुलित संप्रेषण पर केंद्रित होता है। अनुवाद-विमर्श के अंतर्गत अनुवाद की प्रकृति, उद्देश्य, प्रक्रिया, सीमाएँ और संभावनाएँ विचार का विषय बनती हैं। इसमें यह भी देखा जाता है कि अनुवाद किस प्रकार ज्ञान के प्रसार, साहित्यिक आदान–प्रदान और वैश्विक संवाद को संभव बनाता है। आधुनिक संदर्भ में अनुवाद-विमर्श सत्ता, पहचान, सांस्कृतिक वर्चस्व और भाषिक विविधता जैसे प्रश्नों से भी जुड़ गया है, जिससे अनुवाद एक स्वतंत्र और बहुआयामी अध्ययनक्षेत्र के रूप में स्थापित होता है।

1. **पाश्चात्य अनुवाद सिद्धांतकारों की विचारधरा**

   अनुवादविज्ञान में महत्वपूर्ण स्थान रखने वाले विद्वान यूजीन ए. नाइडा ने अनुवाद को अर्थ-संचार की दृष्टि से वर्गीकृत किया है। उन्होंने यह स्पष्ट किया कि अनुवादक कभी शब्दों के निकट रहता है, कभी संदेश के भाव के निकट और कभी उन स्थितियों में उपयुक्त विकल्प खोजता है, जहाँ लक्ष्य भाषा में सीधे समकक्ष उपलब्ध नहीं होते। उनकी विचारधारा के अनुसार अनुवाद के तीन प्रमुख स्वरूप उभरते हैं-

(1) **शाब्दिक अनुवाद**, जिसमें मूल पाठ के शब्द और संरचना को यथासंभव सुरक्षित रखा जाता है;

(2) **भावानुवाद**, जिसमें शब्दों की बजाय अर्थ और संवेदना को प्राथमिकतादिया जाता है; तथा

(3) **पर्याय के आधार पर अनुवाद**, जिसमें अभिप्रेत अर्थ को लक्ष्यभाषा में उपयुक्त समानार्थक अभिव्यक्ति के माध्यम से प्रस्तुत किया जाता है।

प्रसिद्ध भाषावैज्ञानिक रोमन जैकोब्सन ने अनुवाद को भाषा और संकेतप्रणाली के व्यापक परिप्रेक्ष्य में परखा है। मैं यहाँ उनके वर्गीकरण का संक्षेप प्रस्तुत करता हूँ-

(1) अंतःभाषिक अनुवाद, जिसमें एक ही भाषा के भीतर अर्थ को अन्य रूप में व्यक्त किया जाता है;

(2) अंतरभाषिक अनुवाद, जिसमें किसी एक भाषा के संदेश को किसी दूसरी भाषा में रूपांतरित होता है; तथा

(3) अंतरप्रतीकात्मक अनुवाद, जिसमें भाषिक संदेश का परिवर्तन किसी अन्य कला-माध्यम या प्रतीक-प्रणाली में किया जाता है।

2. भारतीय अनुवाद सिद्धांतकारों की विचारधारा-

अनुवाद के प्रकारों के संबंध में भारतीय अनुवादचिंतन अत्यंत समृद्ध, सुव्यवस्थित और बहुस्तरीय रहा है। भारतीय भाषिक एवं साहित्यिक परंपरा में अनुवाद को किसी यांत्रिक शब्दस्थानांतरण की प्रक्रिया न मानकर एक सृजनात्मक, बौद्धिक और सांस्कृतिक कर्म के रूप में समझा गया है। प्राचीन काल से ही भारत में अनुवाद का उद्देश्य मूल ग्रंथ के केवल शब्दों को बचाना नहीं, बल्कि उसके अर्थ, भाव, संदर्भ और सांस्कृतिक चेतना को दूसरी भाषा में पुनःजीवित करना रहा है। इसी व्यापक दृष्टिकोण के कारण भारतीय अनुवाद चिंतकों ने अनुवाद के प्रकारों का वर्गीकरण कई स्तरों पर किया है। इस संदर्भ में डॉ. भोलानाथ तिवारी और डॉ. नगेंद्र द्वारा प्रस्तुत अनुवादवर्गीकरण विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण माने जाते हैं, क्योंकि इसके माध्यम से अनुवाद को केवल तकनीकी क्रिया न मानकर उसके स्वरूप, उद्देश्य, विषयवस्तु और प्रयोजन को समग्र दृष्टि से समझने का प्रयास किया गया है।

डॉ. भोलानाथ तिवारी ने अनुवाद के प्रकारों का विवेचन चार प्रमुख आधारों पर किया है। उनका पहला आधार गद्यत्व–पद्यत्व है, जिसके अंतर्गत गद्य का गद्य में, पद्य का पद्य में तथा पद्य का गद्य में अनुवाद जैसे भेद आते हैं। यह विभाजन भाषा की संरचना और उसकी अभिव्यक्तिपद्धति को केंद्र में रखता है। दूसरा आधार साहित्यिक विधा से संबंधित है, जिसमें कथा साहित्य, काव्य, नाटक, निबंध आदि के अनुवाद अलग-अलग श्रेणियों में रखे जाते हैं। डॉ. भोलानाथ तिवारी का मत है कि प्रत्येक विधा की अपनी रूपात्मक और सौंदर्यात्मक विशेषताएँ होती हैं, अतः उनके अनुवाद में समान रणनीति नहीं अपनाई जा सकती। तीसरा आधार विषय का है, जिसके अंतर्गत धार्मिक, दार्शनिक, वैज्ञानिक, ऐतिहासिक, तकनीकी आदि अनुवाद सम्मिलित होते हैं। विषय के अनुसार भाषा, शब्दावली और अभिव्यक्ति की जटिलताएँ परिवर्तित होती रहती हैं। चौथा और अत्यंत महत्त्वपूर्ण आधार अनुवाद की प्रकृति है, जिसमें शाब्दिक, भावात्मक, रूपात्मक, मुक्त तथा अनुकूलित अनुवाद जैसे प्रकार आते हैं। इस आधार पर डॉ. तिवारी अनुवाद को एक रचनात्मक पुनर्निर्माण प्रक्रिया के रूप में प्रतिष्ठित करते हैं, न कि शब्दों की प्रतिकृति के रूप में।

वहीं दूसरी ओर, डॉ. नगेंद्र अनुवाद के प्रकार को और भी अधिक विस्तृत तथा विश्लेषणात्मक रूप में प्रस्तुत करते हैं। उनके अनुसार अनुवाद का वर्गीकरण किसी एक आधार तक सीमित नहीं किया जा सकता, क्योंकि अनुवाद एक बहुआयामी प्रक्रिया है। वे सबसे पहले भाषिक क्षेत्र के अनुसार अनुवाद को अंतरभाषिक, अंत:भाषिक और अंतरसांकेतिक श्रेणियों में विभाजित करते हैं। दूसरा आधार विषय के अनुसार है, जिसमें साहित्यिक, वैज्ञानिक, तकनीकी, प्रशासनिक और शैक्षणिक अनुवाद सम्मिलित है। तीसरा आधार विधा के

अनुसार है, जिसके अंतर्गत कविता, कथा, नाटक, आलोचना आदि के अनुवादों को पृथक रूप में देखा जाता है। चौथा आधार पद्धति या प्रक्रिया के अनुसार है, जिसमें शाब्दिक अनुवाद, भावानुवाद, अर्थानुवाद और मुक्त अनुवाद जैसी विधियाँ आती हैं। इसके अतिरिक्त डॉ. नगेंद्र उद्देश्य अथवा प्रयोजन को भी अनुवादवर्गीकरण का एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण आधार मानते हैं, क्योंकि अनुवाद का उद्देश्य ही यह निर्धारित करता है कि अनुवाद किस सीमा तक शाब्दिक होगा और कहाँ वह सृजनात्मक स्वतंत्रता ग्रहण करेगा।

इन दोनों भारतीय अनुवाद चिंतकों के विचारों से यह स्पष्ट होता है कि अनुवाद केवल भाषाओं के बीच स्थानांतरण नहीं है, बल्कि वह अर्थ, संस्कृति, शैली, संदर्भ और प्रयोजन के बीच संतुलन स्थापित करने वाली जटिल प्रक्रिया है। भारतीय अनुवादचिंतन इस तथ्य को स्वीकार करता है कि अनुवाद का स्वरूप स्थिर नहीं होता, बल्कि वह मूल पाठ, लक्ष्य भाषा, पाठक वर्ग और सामाजिक-सांस्कृतिक परिस्थितियों के अनुरूप निरंतर परिवर्तित होता रहता है। अतः जब इन भारतीय तथा पाश्चात्य अनुवाद चिंतकों के विचारों को समग्रता में देखा जाता है, तब अनुवाद की अवधारणा के आलोक में अनुवाद के प्रमुख प्रकारों पर विचार करना अधिक व्यवस्थित, सार्थक और सैद्धांतिक रूप से सुदृढ़ हो जाता है। यही वैचारिक आधार आगे होने वाले अनुवाद-विश्लेषण को गंभीरता और अकादमिक प्रामाणिकता प्रदान करता है।

अपनी प्रगति जांचें

प्रश्न 1यूजीन ए. नाइडा ने अनुवाद को कितने प्रमुख रूपों में वर्गीकृत किया है?

प्रश्न 2.रोमन जैकोब्सन के अनुसार अंतरभाषिक अनुवाद का क्या अर्थ है?

प्रश्न 3.डॉ. भोलानाथ तिवारी के अनुसार अनुवाद के वर्गीकरण का मूल आधार क्या है?

2.4 अनुवाद के प्रमुख प्रकार

2.4.1 शाब्दिक अनुवाद

शाब्दिक अनुवाद, अनुवाद की सबसे मूल और परंपरागत विधि मानी जाती है। इस प्रकार के अनुवाद में स्रोत भाषा के शब्दों का लक्ष्य भाषा में शब्द प्रति शब्द रूपांतरण किया जाता है। इसमें वाक्य की संरचना, व्याकरणिक क्रम और शब्दचयन को यथासंभव मूल पाठ के निकट बनाए रखने का प्रयास किया जाता है। शाब्दिक अनुवाद विशेष रूप से उन क्षेत्रों में उपयोगी होता है, जहाँ तथ्यात्मक शुद्धता, अर्थ की स्पष्टता और सूचना की प्रामाणिकता अनिवार्य होती है, जैसे- धार्मिक ग्रंथ, कानून, तकनीकी दस्तावेज, वैज्ञानिक लेखन तथा शासकीय अभिलेख आदि। इस पद्धति में अनुवादक को सृजनात्मक स्वतंत्रता अपेक्षाकृत कम मिलती है, क्योंकि मुख्य उद्देश्य मूल पाठ की भाषिक संरचना को अक्षुण्ण बनाए रखना होता है।

शाब्दिक अनुवाद की एक प्रमुख विशेषता यह है कि यह मूल पाठ के शब्दगत अर्थ को सुरक्षित रखता है, परंतु कभी-कभी इससे भाषा स्वाभाविक नहीं रह जाती। जब स्रोत भाषा और लक्ष्य भाषा की संरचना भिन्न होती है, तब शाब्दिक अनुवाद बनावटी या बोझिल प्रतीत हो जाता है। उदाहरणस्वरूप-

He is a man of few words.

वह कुछ शब्दों का आदमी है।

यह अनुवाद शब्द प्रति शब्द के अनुसार सही है, पर अभिव्यक्ति के स्तर पर हिंदी में स्वाभाविक नहीं लगती। फिर भी यह उदाहरण शाब्दिक अनुवाद की प्रकृति को स्पष्ट करता है। इसी प्रकार-

Knowledge is power.

ज्ञान शक्ति है।

यहाँ शाब्दिक अनुवाद सफल माना जा सकता है, क्योंकि दोनों भाषाओं में वाक्य संरचना और अर्थ निकट हैं।

2.4.2 भावानुवाद

भावानुवाद अनुवाद की वह विधि है जिसमें शब्दों से अधिक भावों और आशयों को प्रधानता दी जाती है। इस प्रकार के अनुवाद में अनुवादक का उद्देश्य मूल पाठ के शब्द-क्रम या भाषिक संरचना को यथावत बनाए रखना नहीं होता, बल्कि उसके भाव, आशय, अनुभूति और प्रभाव को लक्ष्य भाषा में स्वाभाविक रूप से संप्रेषित करना होता है। भावानुवाद विशेष रूप से साहित्यिक रचनाओंजैसे- कविता, कहानी, उपन्यास, नाटक और निबंधके अनुवाद में उपयोगी माना जाता है, क्योंकि साहित्य की आत्मा शब्दों में नहीं, बल्कि उसके पीछे निहित संवेदना और अर्थ में होती है।भावानुवाद में अनुवादक को सृजनात्मक स्वतंत्रता प्राप्त होती है। वह मूल भाषा की अभिव्यक्ति को लक्ष्य भाषा की प्रकृति, संस्कृति और पाठकमन के अनुरूप ढाल सकता है। इस प्रक्रिया में कभी-कभी शब्द बदल जाते हैं, वाक्य-रचना परिवर्तित हो जाती है, पर मूल भाव सुरक्षित रहता है। उदाहरण के लिए-

He broke down after the failure.

असफलता के बाद वह पूरी तरह टूट गया।

यहाँ "broke down" का शब्द प्रति शब्द अनुवाद न करके उसके भाव को हिंदी में सहज रूप से व्यक्त किया गया है।

एक अन्य उदाहरण-

The child's eyes sparkled with joy.

बच्चे की आँखों में खुशी झलक उठी।

यह अनुवाद मूल वाक्य के भाव को प्रभावपूर्ण ढंग से प्रस्तुत करता है, भले ही शब्द समान न हों।

भावानुवाद की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इससे पाठ स्वाभाविक, प्रवाहपूर्ण और जीवंत बनता है। पाठक को यह अनुभव होता है कि रचना मूलतः उसी भाषा में लिखी गई है। हालांकि, भावानुवाद में यह सावधानी आवश्यक है कि अनुवादक मूल भाव से भटके नहीं और अपनी कल्पना को उस पर आरोपित न करे। संतुलन के साथ किया गया भावानुवाद ही सफल माना जाता है।

2.4.3 छायानुवाद

छायानुवाद अनुवाद की वह विधि है जिसमें मूल पाठ की भाषा, संरचना और अभिव्यक्ति की छाया को लक्ष्य भाषा में यथासंभव बनाए रखने का प्रयास किया जाता है। इस प्रकार के अनुवाद में मूल रचना का रूप, वाक्य-विन्यास और शब्द-संयोजन अनुवाद के साथ चलते हैं, मानो लक्ष्य भाषा का पाठ स्रोत भाषा की प्रतिछाया हो। यही कारण है कि इसे छायानुवाद कहा जाता है। इसमें शाब्दिकता और भावात्मकता-दोनों का सीमित संतुलन दिखाई पड़ता है, पर प्रधानता मूल पाठ की भाषिक संरचना के अनुकरण को दी जाती है।

छायानुवाद का प्रयोग मुख्यतः काव्यात्मक रचनाओं, धार्मिक ग्रंथों और शास्त्रीय साहित्य के अनुवाद में किया जाता है, जहाँ मूल पाठ की शैली, लय और भाषा-संरचना को सुरक्षित रखना आवश्यक माना जाता है। इस पद्धति में अनुवादक मूल भाषा के वाक्य-क्रम, बिंबों और अलंकारिक व्यवस्था को लक्ष्य भाषा में यथासंभव उसी क्रम में प्रस्तुत

करता है। परिणामस्वरूप अनुवाद कभी-कभी लक्ष्य भाषा में बनावटी या बोझिल लग सकता है, परंतु इससे मूल पाठ की भाषिक पहचान बनी रहती है।

उदाहरण के रूप में-

The sun rises in the east.

सूरज पूर्व में उदय होता है।

यहाँ वाक्य-संरचना और अर्थ दोनों लगभग समान हैं।

एक अन्य उदाहरण-

Tears rolled down her cheeks.

आँसू उसके गालों पर लुढ़क गए।

यह अनुवाद मूल वाक्य की छाया को सुरक्षित रखता है और साथ ही समझने योग्य भी है।

छायानुवाद की सीमा यह है कि इसमें भाषा की स्वाभाविकता कई बार प्रभावित हो जाती है, किंतु इसका महत्व इस बात में है कि इससे पाठक को मूल भाषा की अभिव्यक्ति-शैली का प्रत्यक्ष बोध होता है।

अतः कहा जा सकता है कि छायानुवाद मूल पाठ की भाषिक संरचना और शैली को सुरक्षित रखने वाली विधि है, जो अनुवादअध्ययन में शाब्दिक अनुवाद और भावानुवाद के मध्य एक सेतु का कार्य करती है।

2.4.4 रूपांतरण

रूपांतरण साहित्यिक सृजन की एक महत्त्वपूर्ण प्रक्रिया है, जिसमें किसी मूल रचना को लक्ष्यभाषा या नए माध्यम में प्रस्तुत करते समय उसके रूप, संरचना, शिल्प और अभिव्यक्तिशैली में आवश्यक परिवर्तन किए जाते हैं। यह प्रक्रिया केवल भाषा-परिवर्तन तक सीमित नहीं रहती,बल्कि कथानक, पात्र-योजना, संवाद और प्रस्तुतिपद्धति तक विस्तृत होती है। रूपांतरण का उद्देश्य मूल कृति की आत्मा और केंद्रीय भाव को सुरक्षित रखते हुए उसे नए सामाजिक, सांस्कृतिक या कलात्मक संदर्भ में इस प्रकार प्रस्तुत करना होता है कि वह समकालीन पाठक या दर्शक के लिए अधिक प्रभावी बन सके। इसी कारण रूपांतरण में अनुवाद की तुलना में रचनात्मक स्वतंत्रता अधिक होती है।रूपांतरण के उदाहरण विशेष रूप से नाटक, सिनेमा और साहित्य में देखने को मिलते हैं। विलियम शेक्सपीयर के नाटकोंजैसे- हैमलेट और मैकबेथपर आधारित फिल्में उनके कथ्य और मूल भाव को बनाए रखते हुए दृश्य माध्यम के अनुरूप रूपांतरित की गई हैं। हिंदी साहित्य में भी अनेक कहानियाँ फिल्मों में रूपांतरित हुई हैं; जैसे मुंशी प्रेमचंद की कहानी सद्गति का फिल्मांकन या भीष्म साहनी की कहानी तमस का दृश्य रूपांतरण। इसी प्रकार किसी कहानी का नाटक-रूप में मंचन या लोककथाओं का आधुनिक सामाजिक संदर्भ में पुनर्लेखन भी रूपांतरण के उदाहरण हैं। इन सभी स्थितियों में रूपांतरण करने वाला व्यक्ति केवल अनुवादक नहीं, बल्कि सहरचनाकार बन जाता है। इस प्रकार रूपांतरण मूल रचना और नवीन सृजन के बीच एक सृजनात्मक सेतु के रूप में कार्य करता है।

2.4.5 अनुसृजन

अनुसृजन साहित्यिक अनुवाद की एक सृजनात्मक प्रक्रिया है, जिसमें मूल रचना को केवल भाषा-परिवर्तन तक सीमित न रखकर उसे लक्ष्यभाषा की सांस्कृतिक और संवेदनात्मक पृष्ठभूमि में पुनः रचा जाता है। इसमें मूल कृति प्रेरणास्रोत के रूप में कार्य करती है, जबकि लक्ष्यभाषा में प्रस्तुत रचना एक स्वतंत्र साहित्यिक कृति का रूप ग्रहण कर लेती है। अनुसृजन का उद्देश्य शब्दों की समानता बनाए रखना नहीं, बल्कि मूल रचना के भाव, रस, लय और अनुभूति को समान

प्रभाव के साथ अभिव्यक्त करना होता है। विशेषतः काव्य और नाट्य साहित्य के अनुवाद में अनुसृजन की भूमिका अत्यंत महत्त्वपूर्ण मानी जाती है।

भारतीय साहित्य में अनुसृजन के अनेक उदाहरण उपलब्ध हैं। भक्ति और सूफी काव्य की रचनाएँ विभिन्न भाषाओं में भावानुकूल रूप में मिलती हैं, जो प्रायः अनुसृजन का परिणाम होती हैं। कबीर के पदों या मीरा के भजनों का आधुनिक भाषाओं में पुनर्लेखन, संस्कृत नाटकों के आधार पर आधुनिक काव्य-नाट्यों की रचना, अथवा किसी विदेशी कविता से प्रेरित होकर नई कविता का सृजन- ये सभी अनुसृजन के उदाहरण हैं। इन स्थितियों में रचनाकार मूल रचना का अनुकरण नहीं करता, बल्कि उसे आत्मसात कर नवीन सृजन करता है। इस प्रकार अनुसृजन अनुवाद और मौलिक लेखन के बीच एक सेतु के रूप में साहित्य को नवीनता और विस्तार प्रदान करता है।

2.4.6 पुनर्सृजन

पुनर्सृजन साहित्यिक अनुवाद की वह प्रक्रिया है, जिसमें मूल रचना को आधार बनाकर उसे नए संदर्भ, नए युग या नए सामाजिक-सांस्कृतिक परिवेश में पुनः रचा जाता है। इसमें मूल कृति का कथ्य, भाव या विचार तो सुरक्षित रहता है, किंतु उसकी प्रस्तुति, भाषा, शिल्प और दृष्टिकोण में व्यापक परिवर्तन किया जाता है। पुनर्सृजन का उद्देश्य मूल रचना की पुनरावृत्ति करना नहीं, बल्कि उसे समकालीन संदर्भों के अनुरूप नया रूप प्रदान करना होता है। इस प्रक्रिया में रचनाकार की सृजनात्मक भूमिका अत्यंत सक्रिय होती है और रचना एक स्वतंत्र कृति के रूप में सामने आती है।

पुनर्सृजन के उदाहरण साहित्य और रंगमंच में स्पष्ट रूप से देखे जा सकते हैं। किसी पौराणिक या ऐतिहासिक कथा को आधुनिक सामाजिक संदर्भ में पुनर्लिखित करनाजैसे- रामायण या महाभारत की कथाओं का समकालीन उपन्यास या नाटक के रूप में प्रस्तुतीकरण-पुनर्सृजन का उदाहरण है। इसी प्रकार किसी पुरानी कथा या नाटक को आधुनिक फिल्म के रूप में नए पात्रों और परिस्थितियों के साथ प्रस्तुत करना भी पुनर्सृजन के अंतर्गत आता है। इन सभी स्थितियों में मूल कथा प्रेरणास्रोत होती है, किंतु रचना का स्वरूप पूर्णतः नया होता है। इस प्रकार पुनर्सृजन परंपरा और आधुनिकता के बीच सृजनात्मक संवाद स्थापित करता है।

2.4.7 नवलेखन

नवलेखन साहित्यिक सृजन की वह प्रक्रिया है, जिसमें किसी पूर्ववर्ती रचना, मिथक, लोककथा, ऐतिहासिक घटना या विचारधारा से प्रेरणा लेकर एक पूर्णतः नई साहित्यिक कृति का निर्माण किया जाता है। इस प्रक्रिया में मूल रचना का प्रत्यक्ष अनुवाद, रूपांतरण या अनुसरण नहीं किया जाता, बल्कि उसके केंद्रीय विचार या भावभूमि को आत्मसात कर नए सामाजिक, सांस्कृतिक और वैचारिक संदर्भों में प्रस्तुत किया जाता है। नवलेखन का उद्देश्य साहित्य को नवीन दृष्टि, नवीन संवेदना और नवीन अभिव्यक्ति प्रदान करना होता है। इसमें रचनाकार को पूर्ण सृजनात्मक स्वतंत्रता प्राप्त होती है और रचना एक स्वतंत्र साहित्यिक इकाई के रूप में सामने आती है।

नवलेखन में कथानक, पात्र, भाषा और शिल्प सभी नए होते हैं, यद्यपि उसकी वैचारिक प्रेरणा किसी पूर्व स्रोत से ली जा सकती है। उदाहरणस्वरूप, महाभारत की कथा से प्रेरित होकर रचित नरेश मेहता का 'यशोधरा' या धर्मवीर भारती का 'अंधा युग' नवलेखन के महत्त्वपूर्ण उदाहरण हैं, जहाँ पौराणिक कथ्य को आधुनिक मानवीय संकट और नैतिक द्वंद्व के संदर्भ में प्रस्तुत किया गया है। इसी प्रकार रामकथा से प्रेरित मैथिलीशरण गुप्त की 'साकेत' भी नवलेखन का सशक्त उदाहरण है, जिसमें परंपरागत कथा को नए काव्यात्मक दृष्टिकोण से देखा गया है। लोककथाओं और मिथकों से प्रेरणा लेकर रचित गिरीश कर्नाड का नाटक 'ययाति' भी नवलेखन के अंतर्गत आता है, क्योंकि इसमें मूल कथा का अनुसरण न होकर आधुनिक मनोवैज्ञानिक संघर्षों की अभिव्यक्ति की गई है।

महत्वपूर्ण बिंदु

धर्मवीर भारती का नाटक 'अंधा युग' नवलेखन का सशक्त उदाहरण है। यह रचना महाभारत के युद्धोत्तर प्रसंग से प्रेरित है, किंतु इसका उद्देश्य मूल कथा का पुनर्कथन नहीं, बल्कि आधुनिक मानव की नैतिक, सामाजिक और मानसिक विडंबनाओं को अभिव्यक्त करना है। धर्मवीर भारती ने पौराणिक पात्रों- गांधारी, धृतराष्ट्र, युयुत्सु और अश्वत्थामाके माध्यम से युद्ध, हिंसा, सत्ता और नैतिक अंधत्व की समकालीन समस्याओं को प्रस्तुत किया है। मूल महाकाव्य से कथ्य लेकर लेखक ने उसे आधुनिक संवेदना, प्रतीकात्मकता और वैचारिक दृष्टि के साथ नया रूप दिया है। इसी कारण 'अंधा युग' को महाभारत से प्रेरित नवलेखन की विशिष्ट कृति माना जाता है।

2.4.8 टीकानुवाद

टीकानुवाद अनुवाद की वह विशिष्ट और परंपरागत प्रक्रिया है, जिसमें किसी मूल ग्रंथ का अनुवाद करते समय उसके साथ टीका, भाष्य या व्याख्या भी प्रस्तुत की जाती है। इसका उद्देश्य केवल मूल पाठ को दूसरी भाषा में रूपांतरित करना नहीं होता, बल्कि उसके दार्शनिक, सांस्कृतिक, भाषिक और संदर्भगत अर्थों को स्पष्ट करना भी होता है। टीकानुवाद में अनुवादक पाठ के कठिन शब्दों, प्रतीकों, सांस्कृतिक संकेतों, ऐतिहासिक संदर्भों और दार्शनिक अवधारणाओं की व्याख्या करता है, जिससे पाठक मूल ग्रंथ की गहराई तक पहुँच सके। इस प्रकार टीकानुवाद अनुवाद और आलोचना- दोनों का संयुक्त रूप माना जाता है।

भारतीय परंपरा में टीकानुवाद का इतिहास अत्यंत समृद्ध और प्राचीन रहा है। संस्कृत, पालि और प्राकृत साहित्य में अनेकऐसे ग्रंथहैं, जिसे टीकाओं के माध्यम से ही समझा गया है। उदाहरणस्वरूप, शंकराचार्य की 'भगवद्गीता-भाष्य', रामानुजाचार्य की 'गीता-भाष्य' तथा माध्वाचार्य की गीता पर लिखी टीका टीकानुवाद के उत्कृष्ट उदाहरण हैं, जहाँ मूल श्लोकों के साथ उनके गूढ़ दार्शनिक अर्थों की व्याख्या की गई है। इसी प्रकार पतंजलि के योगसूत्र पर व्यासभाष्य तथा भरतमुनि के नाट्यशास्त्र पर अभिनवगुप्त की 'अभिनवभारती' भी टीकानुवाद की परंपरा को सुदृढ़ करते हैं।

आधुनिक भारतीय भाषाओं में भी टीकानुवाद का महत्व बना हुआ है। तुलसीदास की 'रामचरितमानस' पर लिखी गई टीकाएँ, जैसे- गोस्वामी विश्वनाथ प्रसाद मिश्र या अन्य विद्वानों द्वारा की गई व्याख्याएँ, सामान्य पाठकों के लिए ग्रंथ को अधिक बोधगम्य बनाती हैं। इसी प्रकार कालिदास के नाटकों- 'अभिज्ञानशाकुंतलम्' आदि के हिंदी टीकानुवाद साहित्यिक अध्ययनों में विशेष स्थान रखते हैं। इस प्रकार टीकानुवाद न केवल ग्रंथ की समझ को सरल बनाता है, बल्कि पाठक और मूल पाठ के बीच एक बौद्धिक सेतु का कार्य करता है।

महत्वपूर्ण बिंदु

कालिदास का नाटक 'अभिज्ञानशाकुंतलम्' टीकानुवाद की परंपरा का उत्कृष्ट उदाहरण है। इस नाटक के संस्कृत मूल पाठ के साथ विद्वानों ने हिंदी और अन्य भाषाओं में अनुवाद करते हुए विस्तृत टीकाएँ प्रस्तुत की हैं, जिसमें कठिन शब्दों, संधियों, अलंकारों, रससिद्धांत और सांस्कृतिक संदर्भों की व्याख्या की गई है। टीकानुवाद के माध्यम से नाटक के श्लोकों का केवल अर्थ ही नहीं बताया गया, बल्कि पात्रों की मनःस्थिति, नाट्य-परंपरा और तत्कालीन सामाजिक मूल्यों को भी स्पष्ट किया गया। इस प्रकार टीकानुवाद ने 'अभिज्ञानशाकुंतलम्' को साधारण पाठकों और विद्यार्थियों के लिए बोधगम्य तथा अध्ययनयोग्य बनाया।

2.4.9 सारानुवाद

सारानुवाद अनुवाद की वह प्रक्रिया है, जिसमें किसी मूल ग्रंथ या पाठ का शब्दशः अथवा पूर्ण अनुवाद न करके उसके मुख्य विचार, केंद्रीय भाव और आवश्यक निष्कर्षों को संक्षेप में दूसरी भाषा में प्रस्तुत किया जाता है। इस प्रकार के अनुवाद में विस्तार, उदाहरण, अलंकरण और गौण विवरणों को छोड़ दिया जाता है तथा केवल पाठ का सार तत्व ही लक्ष्यभाषा में व्यक्त किया जाता है। सारानुवाद का प्रमुख उद्देश्य पाठक को कम समय में मूल रचना की विषयवस्तु, दिशा और निष्कर्ष से परिचित कराना होता है। इसलिए इसे व्यावहारिक और उपयोगितावादी अनुवाद माना जाता है।

सारानुवाद विशेष रूप से उन क्षेत्रों में उपयोगी सिद्ध हुआ है, जहाँ संक्षिप्तता और स्पष्टता की आवश्यकता होती है, जैसे- शोध, प्रशासन, पत्रकारिता, विधि साहित्य और शैक्षणिक लेखन। उदाहरणस्वरूप, किसी विस्तृत शोधप्रबंध या अकादमिक पुस्तक का हिंदी या अंग्रेजी में सार प्रस्तुत करना सारानुवाद कहलाता है। इसी प्रकार संविधान के किसी अध्याय, नीति आयोग या योजना आयोग की रिपोर्ट, अथवा संयुक्त राष्ट्र (UN) की लंबी रिपोर्टों का संक्षिप्त अनुवाद सारानुवाद का उदाहरण है। साहित्यिक क्षेत्र में भी किसी लंबे उपन्यास या महाकाव्य का संक्षेप में परिचयात्मक अनुवादजैसे- महाभारत या रामायण की कथा का संक्षिप्त हिंदी/अंग्रेजी रूप- सारानुवाद के अंतर्गत आता है। सारानुवाद में अनुवादक की भूमिका चयनकर्ता और विवेचक की होती है, क्योंकि उसे यह निर्णय लेना पड़ता है कि कौनसे तथ्य और विचार अनिवार्य हैं और किसे छोड़ा जा सकता है। इस प्रक्रिया में मूल पाठ की भावना को सुरक्षित रखना आवश्यक होता है, किंतु भाषाशैली सरल और संक्षिप्त रखी जाती है। इस प्रकार सारानुवाद मूल ग्रंथ और पाठक के बीच एक प्रभावी माध्यम बनकर ज्ञान के संप्रेषण को सरल और सुगम बनाता है।

2.4.10 आशु अनुवाद

आशु अनुवाद वह अनुवाद प्रक्रिया है, जिसमें वक्ता द्वारा कही गई बात को बहुत कम समय में, प्रायः तुरंत, दूसरी भाषा में प्रस्तुत किया जाता है। इसे तात्कालिक या मौखिक अनुवाद भी कहा जाता है। आशु अनुवाद में अनुवादक को बिना पूर्व तैयारी के भाषापरिवर्तन करना पड़ता है, इसलिए इसमें शीघ्र निर्णय क्षमता, दोनों भाषाओं पर समान अधिकार और विषय की सामान्य समझ अत्यंत आवश्यक होती है। इस प्रकार का अनुवाद मुख्यतः मौखिक होता है और इसमें शब्दशः अनुवाद के स्थान पर भाव और आशय की त्वरित अभिव्यक्ति पर अधिक बल दिया जाता है।

आशु अनुवाद का प्रयोग विशेष रूप से सार्वजनिक सभाओं, अंतरराष्ट्रीय सम्मेलनों, राजनीतिक भाषणों, न्यायालयों और मीडिया संवादों में किया जाता है। उदाहरणस्वरूप, संयुक्त राष्ट्र महासभा (UN General Assembly) में विभिन्न देशों के प्रतिनिधियों के भाषणों का तत्काल दूसरी भाषाओं में अनुवाद आशु अनुवाद का स्पष्ट उदाहरण है। इसी प्रकार भारत के संसद सत्रों में हिंदी और अंग्रेजी के बीच होने वाला तत्काल मौखिक अनुवाद, या किसी विदेशी अतिथि के भाषण का मंच पर तुरंत हिंदी अनुवाद प्रस्तुत करना भी आशु अनुवाद के अंतर्गत आता है। समाचार चैनलों पर किसी विदेशी नेता के वक्तव्य का तुरंत हिंदी रूपांतरण भी इसी प्रकार का अनुवाद है। आशु अनुवाद में अनुवादक को भाषा के साथ-साथ वक्ता की भाव-भंगिमा, संदर्भ और उद्देश्य को भी समझना होता है, क्योंकि समय की सीमा के कारण शब्दों की शुद्धता से अधिक संप्रेषण की स्पष्टता और प्रभावशीलता महत्त्वपूर्ण होती है। इस प्रकार आशु अनुवाद विभिन्न भाषाओं के बीच त्वरित संवाद स्थापित करने का एक सशक्त माध्यम है।

2.4.11 पुनःअनुवाद

पुनःअनुवाद वह प्रक्रिया है, जिसमें किसी रचना का पहले से अनूदित रूप उपलब्ध होने के बावजूद उसे दोबारा अनूदित किया जाता है। यह आवश्यकता तब उत्पन्न होती है, जब पूर्व अनुवाद भाषाशैली, वैचारिक दृष्टि या सांस्कृतिक

संदर्भ के कारण कालांतर में अप्रासंगिक हो जाए, या जब नई पीढ़ी के पाठकों के लिए अधिक सरल, स्पष्ट और प्रभावी भाषा में अनुवाद की आवश्यकता महसूस की जाए। पुनःअनुवाद का उद्देश्य मूल रचना को नए समय, नए पाठक वर्ग और नए भाषिक मानकों के अनुरूप पुनः प्रस्तुत करना होता है।

पुनःअनुवाद साहित्य, दर्शन, धर्म और विज्ञान- सभी क्षेत्रों में व्यापक रूप से देखा जा सकता है। उदाहरणस्वरूप, होमर की 'इलियड' और 'ओडिसी' के विभिन्न कालखंडों में किए गए अनेक अंग्रेजी अनुवाद पुनःअनुवाद के उदाहरण हैं। भारतीय संदर्भ में भगवद्गीता के समय-समय पर किए गए नए हिंदी और अंग्रेजी अनुवादजैसे- शंकराचार्य, लोकमान्य तिलक और सर्वपल्ली राधाकृष्णन द्वारा प्रस्तुत अनुवाद- पुनःअनुवाद की परंपरा को दर्शाते हैं। इसी प्रकार कालिदास के नाटकों, शेक्सपीयर के नाटकों तथा प्रेमचंद की कहानियों के आधुनिक हिंदी या अंग्रेजी पुनःअनुवाद भी इसी श्रेणी में आते हैं। पुनःअनुवाद में अनुवादक का दृष्टिकोण अत्यंत महत्त्वपूर्ण होता है, क्योंकि वह पूर्व अनुवादों से भिन्न भाषाशैली, शब्द चयन और व्याख्या प्रस्तुत करता है। इस प्रकार पुनःअनुवाद साहित्य को जीवंत बनाए रखता है और यह सुनिश्चित करता है कि महान रचनाएँ समय के साथ संवाद करती रहें।

2.4.12 लिप्यंकन

जैसा कि शब्द से ही स्पष्ट है, लिप्यंकन का तात्पर्य ध्वनियों अथवा उच्चारण को लिखित रूप में अंकित करना है। लिप्यंकन में शब्दों के अर्थ की अपेक्षा उसके उच्चारण को प्रमुख आधार माना जाता है। अंग्रेजी के Transcription शब्द का हिंदी पर्याय लिप्यंकन है, जिसमें किसी भाषा की ध्वनियों को निर्धारित लिपि-चिह्नों के माध्यम से लिखित रूप दिया जाता है। इस प्रक्रिया में वक्ता द्वारा बोले गए शब्दों, ध्वनियों और उच्चारण-भंगिमाओं को यथासंभव उसी रूप में लिपिबद्ध किया जाता है, जिससे मौखिक अभिव्यक्ति की प्रामाणिकता बनी रहे।

लिप्यंकन का प्रयोग भाषाविज्ञान, समाजशास्त्र, लोकसाहित्य, शोध कार्य तथा अभिलेखीकरण के क्षेत्र में व्यापक रूप से किया जाता है। साक्षात्कार, भाषण, वार्तालाप, लोकगीत और मौखिक कथाओं को लिखित रूप में सुरक्षित करने के लिए लिप्यंकन की विधि अपनाई जाती है। इसके लिए आई.पी.ए. (International Phonetic Alphabet) अथवा अन्य स्वीकृत लिप्यंकन प्रणालियों का उपयोग किया जाता है, जिसके माध्यम से ध्वनियों को सटीक रूप में दर्शाया जा सके। विशेष रूप से लुप्तप्राय भाषाओं और बोलियों के संरक्षण में लिप्यंकन की भूमिका अत्यंत महत्त्वपूर्ण मानी जाती है। इस प्रकार लिप्यंकन मौखिक भाषा और लिखित परंपरा के बीच सेतु का कार्य करता है तथा भाषा के संरक्षण और अध्ययन में सहायक सिद्ध होता है।

2.4.13 लिप्यंतरण

लिप्यंतरण अंग्रेजी के Transliterationशब्द का हिंदी पर्याय है। इसका तात्पर्य किसी भाषा के शब्दों या ध्वनियों को उसके उच्चारण के आधार पर दूसरी लिपि में लिखने की प्रक्रिया से है। लिप्यंतरण में भाषा नहीं बदली जाती, केवल लिपि परिवर्तित होती है। इसमें अर्थ या भाव की अपेक्षा ध्वनि-साम्य को प्रधानता दी जाती है, ताकि मूल शब्द का उच्चारण यथासंभव सुरक्षित रह सके। यही कारण है कि लिप्यंतरण को अनुवाद से भिन्न माना जाता है, क्योंकि अनुवाद में अर्थपरिवर्तन होता है, जबकि लिप्यंतरण में केवल लिपि का परिवर्तन होता है। लिप्यंतरण की प्रक्रिया सामान्यतः तीन चरणों में समझी जा सकती है। प्रथम चरण में स्रोत भाषा के शब्दों को उसकी ध्वन्यात्मक इकाइयों में विभाजित किया जाता है। द्वितीय चरण में इन ध्वन्यात्मक इकाइयों के समकक्ष लक्ष्य भाषा की ध्वनियाँ निर्धारित की जाती हैं। तृतीय चरण में इन ध्वनियों को लक्ष्य भाषा की लिपि में अंकित किया जाता है। इस प्रकार लिप्यंतरण में उच्चारण →ध्वनि→लिपिकाक्रमअपनायाजाताहै। लिप्यंतरणकाप्रयोगसाहित्य, भाषाविज्ञान, शब्दकोश निर्माण, तकनीकी लेखन

और वैश्विक संप्रेषण में व्यापक रूप से होता है। उदाहरणस्वरूप, हिंदी शब्द "भारत"कोरोमनलिपिमेंBharat लिखना, "संस्कृत"कोSanskritलिखना, अथवा अंग्रेजी शब्द Computer को हिंदी में "कंप्यूटर"लिखना-येसभीलिप्यंतरणकेउदाहरणहैं।इसीप्रकारअरबीयाफारसीमूलकेशब्दोंकादेवनागरी लिपि में लेखन भी लिप्यंतरण की प्रक्रिया के अंतर्गत आता है।

अपनी प्रगति जांचें

प्रश्न 4. शाब्दिक अनुवाद की प्रमुख विशेषता क्या है और इसे किन क्षेत्रों में अधिक उपयोगी माना जाता है?

प्रश्न 5. भावानुवाद और छायानुवाद में मुख्य अंतर स्पष्ट कीजिए।

प्रश्न 6. रूपांतरण और अनुसृजन को अनुवाद की अपेक्षा अधिक सृजनात्मक प्रक्रिया क्यों माना जाता है?

प्रश्न 7. लिप्यंकन और लिप्यंतरण में मूलभूत भेद क्या है?

2.5 अनुवाद के विविध क्षेत्र

2.5.1 प्रशासनिक साहित्य और अनुवाद

प्रशासनिक साहित्य से आशय उन लिखित दस्तावेजों से है, जिसके माध्यम से शासन, प्रशासन और सार्वजनिक संस्थाएँ अपने कार्यों, नीतियों और निर्णयों को लागू करती हैं। इसमें सरकारी आदेश, कार्यालयीन पत्राचार, नियमावली, परिपत्र, अधिसूचनाएँ, निविदाएँ, प्रतिवेदन, अनुबंध और जनसूचनाएँ सम्मिलित हैं। चूँकि प्रशासन का उद्देश्य जनता तक स्पष्ट, सटीक और प्रभावी संप्रेषण करना होता है, इसलिए प्रशासनिक साहित्य में अनुवाद की भूमिका अत्यंत महत्त्वपूर्ण हो जाती है। बहुभाषी समाज में अनुवाद के बिना प्रशासनिक संचार अधूरा और असमान हो सकता है।

प्रशासनिक अनुवाद का मुख्य उद्देश्य किसी एक भाषा में निर्मित प्रशासनिक पाठ को दूसरी भाषा में इस प्रकार प्रस्तुत करना होता है कि उसका आशय, कानूनी वैधता और औपचारिक स्वर यथावत बना रहे। इस प्रकार के अनुवाद में भाषा की शुद्धता, पारिभाषिक शब्दावली की एकरूपता और वाक्य-विन्यास की स्पष्टता अनिवार्य होती है। साहित्यिक अनुवाद की तुलना में प्रशासनिक अनुवाद में सृजनात्मक स्वतंत्रता सीमित होती है, क्योंकि यहाँ अर्थ में किंचित् भी परिवर्तन भ्रम, विवाद या कानूनी समस्या उत्पन्न कर सकता है।

प्रशासनिक साहित्य के अनुवाद के अनेक व्यावहारिक उदाहरण मिलते हैं। उदाहरणस्वरूप, किसी राज्य सरकार की रोजगार योजना से संबंधित दिशा-निर्देशों का हिंदी से अंग्रेजी अथवा अंग्रेजी से हिंदी में अनुवाद, नगर निगम द्वारा जारी भवन निर्माण नियमावली का द्विभाषी प्रकाशन, या चुनाव आयोग की मतदाता सूचनाओं का विभिन्न भाषाओं में अनुवाद प्रशासनिक अनुवाद के अंतर्गत आता है। इसी प्रकार आरटीआई अधिनियम से संबंधित प्रपत्रों, सरकारी वेबसाइटों की सामग्री, तथा जनहित घोषणाओं का अनुवाद भी प्रशासनिक साहित्य का महत्त्वपूर्ण भाग है।

प्रशासनिक साहित्य की भाषा

प्रशासनिक साहित्य की भाषा एक विशिष्ट और औपचारिक भाषारूप है, जिसका प्रयोग शासन, प्रशासन और सार्वजनिक संस्थाओं द्वारा किया जाता है। इस भाषा का प्रमुख उद्देश्य भावाभिव्यक्ति नहीं, बल्कि सूचना, आदेश और निर्णय को स्पष्ट, सटीक तथा निर्विवाद रूप में प्रस्तुत करना होता है। प्रशासनिक भाषा में व्यक्तिगत भावनाओं या कल्पनात्मकता के लिए स्थान नहीं होता, बल्कि वस्तुनिष्ठता, संक्षिप्तता और स्पष्टता को प्राथमिकता दी जाती है। इसी कारण यह भाषा सामान्य साहित्यिक भाषा से भिन्न स्वरूप ग्रहण करती है।

प्रशासनिक भाषा का एक महत्त्वपूर्ण गुण उसकी निर्देशात्मकता और औपचारिकता है। इसमें प्रयुक्त वाक्य प्रायः निरपेक्ष और संस्थागत होते हैं। प्रथम पुरुष का प्रयोग बहुत कम होता है और आदेश अथवा सूचना को अप्रत्यक्ष ढंग से व्यक्त किया जाता है। उदाहरणस्वरूप प्रशासनिक साहित्य में निम्नलिखित प्रकार के वाक्य प्रचलित हैं-English ⟶ Hindiउदाहरण

Submitted for approval-अनुमोदन हेतु प्रस्तुत

Matter is under examination-प्रकरण परीक्षणाधीन है

This may be treated as urgent-इसे तात्कालिक माना जाए

Please ensure compliance-कृपया अनुपालन सुनिश्चित करें

Decision will be communicated separately-निर्णय पृथक रूप से सूचित किया जाएगा

इस प्रकार के वाक्यों में भाषा संक्षिप्त, स्पष्ट और औपचारिक होती है।प्रशासनिक साहित्य की भाषा में पारिभाषिक शब्दावली का भी विशेष स्थान होता है। विधि, वित्त और प्रशासन से संबंधित शब्दों का प्रयोग निश्चित अर्थों में किया जाता है, जिससे भ्रम की कोई संभावना न रहे। साथ ही, वाक्यरचना सरल और सीधी होती है, ताकि पाठक तुरंत आशय ग्रहण कर सके। प्रशासनिक अनुवाद में इन विशेषताओं को बनाए रखना अनिवार्य होता है, क्योंकि अर्थ में किंचित् भी परिवर्तन प्रशासनिक या कानूनी जटिलता उत्पन्न कर सकता है।

2.5.2 बैंकिंग और अनुवाद

बैंकिंग व्यवस्था आधुनिक आर्थिक जीवन का एक अनिवार्य अंग है। भारत में बैंकिंग प्रणाली का विकास ऐतिहासिक रूप से पश्चिमी मॉडल के प्रभाव में हुआ है, जिसके परिणामस्वरूप बैंकिंग से संबंधित अधिकांश संकल्पनाएँ और शब्दावली अंग्रेजी भाषा में विकसित हुई है। स्वतंत्रता के पश्चात् जब हिंदी को राजभाषा के रूप में प्रशासनिक और सार्वजनिक कार्यों में स्थान मिला, तब बैंकिंग क्षेत्र में अनुवाद की आवश्यकता और भी अधिक स्पष्ट हो गई। बैंक आम जनता से प्रत्यक्ष रूप से जुड़े होते हैं, इसलिए बैंकिंग भाषा का सरल, स्पष्ट और बोधगम्य होना आवश्यक है। इसी आवश्यकता ने बैंकिंग अनुवाद को एक विशिष्ट और महत्त्वपूर्ण क्षेत्र के रूप में स्थापित किया।

बैंकिंग अनुवाद मुख्यतः दो स्तरों पर कार्य करता है- एक ओर उच्च स्तरीय प्रशासनिक और नीतिगत भाषा होती है, और दूसरी ओर ग्राहककेंद्रित जनभाषा। बैंकिंग से जुड़े नियम, परिपत्र, वार्षिक प्रतिवेदन, ऋण नीतियाँ और निर्देश प्रायः औपचारिक भाषा में अनूदित किए जाते हैं, जबकि पासबुक, आवेदनपत्र, सूचनापट्ट, एटीएम निर्देश और ग्राहक सेवाओं से संबंधित सामग्री अपेक्षाकृत सरल भाषा में प्रस्तुत की जाती है। ऐसे में अनुवादक को न केवल भाषा का, बल्कि बैंकिंग प्रणाली, प्रक्रियाओं और पारिभाषिक शब्दावली का भी समुचित ज्ञान होना आवश्यक होता है।

बैंकिंग अनुवाद में कई शब्द ऐसे होते हैं जिसके अर्थ अत्यंत सूक्ष्म होते हैं और इसलिए गलत अनुवाद भ्रम या आर्थिक हानि का कारण बन सकता है। उदाहरणस्वरूप निम्नलिखित अंग्रेजी–हिंदी उदाहरण देखे जा सकते हैं-

English ⟶ Hindiउदाहरण

Fixed Deposit-सावधि जमा

Overdraft Facility-अधिव्यय सुविधा

Rate of Interest is subject to change-ब्याज दर में परिवर्तन संभव है

Account is dormant- खाता निष्क्रिय है

Minimum balance must be maintained-न्यूनतम शेष राशि बनाए रखना अनिवार्य है

इसी प्रकार कुछ शब्दों के लिए एक से अधिक हिंदी विकल्प प्रचलन में मिलते हैं, जैसे Subsidy के लिए अनुदान, आर्थिक सहायता या सरकारी सहायता। ऐसी स्थिति में अनुवादक को संदर्भ के अनुसार उपयुक्त शब्द का चयन करना होता है।

बैंकिंग अनुवाद की एक अन्य विशेषता यह है कि इसमें अंग्रेजी के अनेक शब्द ज्योंकेत्यों स्वीकार कर लिए गए हैं, जैसे- चेक, ड्राफ्ट, लोन, एटीएम, क्रेडिटकार्ड आदि। वहीं कुछ शब्दों के हिंदी रूप भी प्रचलित हैं, जैसे- जमा, निकासी, शेष राशि, लेन-देन। अनुवादक की दक्षता इसी में निहित होती है कि वह संदर्भ, पाठक-वर्ग और प्रयोजन के अनुसार सही शब्द और अभिव्यक्ति का चयन करे।

2.5.3 विधि साहित्य और अनुवाद

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् भारत में शासन-प्रशासन और न्यायिक व्यवस्था को जनभाषा से जोड़ने की आवश्यकता को गंभीरता से अनुभव किया गया। इसी संदर्भ में विधि साहित्य में हिंदी के प्रयोग और उसके अनुवाद की आवश्यकता सामने आई। विधि साहित्य से तात्पर्य उन ग्रंथों,अधिनियमों, नियमों, निर्णयों और कानूनी दस्तावेजों से है, जिसके माध्यम से न्यायिक व्यवस्था संचालित होती है। चूँकि भारत की विधिक परंपरा मुख्यतः अंग्रेज़ी भाषा में विकसित हुई है, इसलिए हिंदी में विधि साहित्य के अनुवाद को एक चुनौतीपूर्ण किंतु आवश्यक कार्य माना जाता है।

विधि साहित्य और अनुवाद के क्षेत्र में मुख्यतः निम्नलिखित बिंदुओं पर विशेष ध्यान दिया जाता है—

(1) विधिक शब्दावली का निर्माण और मानकीकरण- विधि साहित्य के अनुवाद में सबसे महत्त्वपूर्ण कार्य विधिक शब्दावली का सटीक चयन और मानकीकरण है। किसी भी विधिक शब्द का अर्थ निश्चित और एकार्थक होना चाहिए, क्योंकि उसमें थोड़ी-सी अस्पष्टता भी न्यायिक भ्रम उत्पन्न कर सकती है। उदाहरणस्वरूप—

English ⟶ Hindiउदाहरण

Jurisdiction ⟶ अधिकारक्षेत्र

Liability⟶ दायित्व

Bail granted ⟶ जमानत प्रदान की गई

Case is dismissed ⟶वाद खारिज किया गया

इन शब्दों में अर्थ की स्पष्टता अनिवार्य होती है।

(2) विधिक भाषा की औपचारिकता और वस्तुनिष्ठता- विधि साहित्य की भाषा अत्यंत औपचारिक, तटस्थ और वस्तुनिष्ठ होती है। इसमें भावनात्मक या अलंकारिक भाषा का प्रयोग नहीं किया जाता। वाक्य-रचना प्रायः लंबी और संरचित होती है, जिससे आशय पूर्ण रूप से स्पष्ट हो सके। उदाहरणस्वरूप—

The petition is hereby rejected

याचिका एतद्द्वारा निरस्त की जाती है।

The accused shall be produced before the court

अभियुक्त को न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किया जाएगा।

(3) विधिक अनुवाद में अनुवादक की भूमिका-विधि साहित्य का अनुवाद करने वाला व्यक्ति केवल भाषांतर करने वाला नहीं होता, बल्कि उसे विधिक ज्ञान, प्रक्रिया और संदर्भ की भी गहरी समझ होनी चाहिए। अनुवादक को यह ज्ञात होना चाहिए कि किसी शब्द या वाक्य का कानूनी प्रभाव क्या है। उदाहरण के लिए charge, convictionऔर sentenceजैसे शब्दों का सामान्य अर्थ से भिन्न विधिक अर्थ होता है-

Charge framed ⟶आरोप निर्धारित किया गया

Conviction recorded ⟶दोषसिद्धि दर्ज की गई

(4) विधि साहित्य के अनुवाद से जुड़ी समस्याएँ-विधि साहित्य के अनुवाद में अनेक कठिनाइयाँ आती हैं। प्रमुख समस्या यह है कि कई अंग्रेजी विधिक शब्दों के लिए हिंदी में पूर्णतः समतुल्य शब्द उपलब्ध नहीं होते। ऐसी स्थिति में या तो पारिभाषिक शब्दों का सहारा लिया जाता है या व्याख्यात्मक अनुवाद किया जाता है। उदाहरणस्वरूप—

Contempt of Court ⟶न्यायालय की अवमानना

Stay order ⟶स्थगन आदेश

इन शब्दों का गलत प्रयोग न्यायिक प्रक्रिया को प्रभावित कर सकता है।

2.5.4 मीडिया और अनुवाद

(1) विभिन्न पत्रों की अपनी भाषा- मीडिया जगत में प्रत्येक समाचार पत्र, टीवी चैनल और डिजिटल मंच की अपनी विशिष्ट भाषिक पहचान होती है। यह पहचान उसके पाठक-वर्ग, वैचारिक दृष्टिकोण और प्रस्तुति शैली से निर्मित होती है। उदाहरणस्वरूप, राष्ट्रीय स्तर के प्रतिष्ठित समाचार पत्र गंभीर, संतुलित और औपचारिक भाषा का प्रयोग करते हैं, जबकि लोकप्रिय समाचार पत्रों की भाषा अधिक सरल, संवादात्मक और आम बोलचाल के निकट होती है। मीडिया अनुवादक के लिए यह आवश्यक हो जाता है कि वह उस माध्यम की भाषा-परंपरा को समझे, जिसके लिए अनुवाद किया जा रहा है। यदि किसी लोकप्रिय पत्र के लिए अत्यधिक क्लिष्ट और संस्कृतनिष्ठ भाषा का प्रयोग किया जाए, तो पाठक उससे जुड़ नहीं पाता। इसी प्रकार गंभीर पत्रों में अत्यधिक अनौपचारिक भाषा विश्वसनीयता को प्रभावित कर सकती है। इसलिए मीडिया अनुवाद में केवल अर्थ का स्थानांतरण नहीं, बल्कि माध्यम के अनुरूप भाषाशैली का चयन भी अनिवार्य होता है।

English ⟶ Hindiउदाहरण

The Prime Minister addressed the nation

प्रधानमंत्री ने राष्ट्र को संबोधित किया

Local residents expressed strong resentment

स्थानीय निवासियों ने तीव्र नाराज़गी व्यक्त की

(2) संक्षिप्तता पर बल- मीडिया भाषा की सबसे प्रमुख विशेषता उसकी संक्षिप्तता है। समाचारों में स्थान और समय दोनों सीमित होते हैं, इसलिए कम शब्दों में अधिक सूचना देना आवश्यक होता है। मीडिया अनुवादक को लंबे, जटिल और व्याख्यात्मक वाक्यों को संक्षिप्त, स्पष्ट और प्रभावी रूप में ढालना पड़ता है। विशेष रूप से समाचार शीर्षकों में संक्षेप का अत्यधिक महत्व होता है, क्योंकि वही पाठक का ध्यान आकर्षित करते हैं। किंतु इस प्रक्रिया में यह सावधानी आवश्यक है कि संक्षिप्तता के कारण समाचार का मूल अर्थ नष्ट न हो। कई बार शब्दों की अत्यधिक कटौती से समाचार भ्रमपूर्ण भी हो सकता है। अतः मीडिया अनुवाद में संक्षेप और अर्थ-सुरक्षा के बीच संतुलन बनाए रखना एक महत्वपूर्ण कौशल माना जाता है।

English ⟶ Hindiउदाहरण

Cabinet clears major reform bill

कैबिनेट ने बड़े सुधार विधेयक को मंजूरी दी

Fire breaks out in factory

कारखाने में आग लगी

(3) विभिन्न विषयों के अनुसार भाषा- मीडिया में प्रस्तुत विषय अत्यंत विविध होते हैं- राजनीति, अर्थव्यवस्था, खेल, अपराध, विज्ञान, शिक्षा और मनोरंजन। प्रत्येक विषय की भाषा-प्रकृति अलग होती है। राजनीतिक समाचारों में संतुलित और तथ्यात्मक भाषा आवश्यक होती है, ताकि निष्पक्षता बनी रहे। आर्थिक समाचारों में तकनीकी और पारिभाषिक शब्दावली का प्रयोग होता है, जबकि खेल समाचारों में उत्साह, गति और भावनात्मक शब्दों की प्रधानता रहती है। मनोरंजन समाचारों की भाषा अपेक्षाकृत हल्की, आकर्षक और संवादात्मक होती है। मीडिया अनुवादक को विषय की प्रकृति के अनुसार भाषाशैली में परिवर्तन करना पड़ता है। यदि खेल समाचार को अत्यधिक औपचारिक भाषा में प्रस्तुत किया जाए, तो उसका प्रभाव कम हो जाता है। इस प्रकार विषयानुसार भाषा का चयन मीडिया अनुवाद की सफलता का प्रमुख आधार है।

English ⟶ Hindiउदाहरण

Sensex records sharp decline

सेंसेक्स में तेज गिरावट दर्ज

Team clinches thrilling victory

टीम ने रोमांचक जीत हासिल की

(4) सोशल मीडिया की भाषा- सोशल मीडिया ने मीडिया अनुवाद को एक नया और जटिल आयाम प्रदान किया है। सोशल मीडिया की भाषा पारंपरिक मीडिया से भिन्न होती है- यह अधिक अनौपचारिक, संक्षिप्त और प्रभावपरक होती है। यहाँ पाठक का ध्यान कुछ ही सेकंड के लिए होता है, इसलिए संदेश तुरंत समझ में आने वाला और आकर्षक होना चाहिए। सोशल मीडिया अनुवाद में शब्दशः अनुवाद प्रायः प्रभावहीन हो जाता है,इसलिए भावानुकूल और संदर्भानुसार अनुवाद अधिक उपयुक्त माना जाता है। हैशटैग, संक्षिप्त वाक्य और लोकप्रिय शब्दों का प्रयोग सोशल मीडिया भाषा की विशेषता है। अनुवादक को यह भी ध्यान रखना पड़ता है कि संदेश सांस्कृतिक रूप से स्वीकार्य हो और गलत अर्थ न उत्पन्न करे।

English ⟶ Hindiउदाहरण

Breaking: Big announcement coming soon!

ब्रेकिंग: जल्द होगा बड़ा ऐलान!

Stay tuned for live updates

लाइव अपडेट के लिए जुड़े रहें

(5) विज्ञापन की भाषा- सोशल मीडिया के विस्तार के साथ विज्ञापन की भाषा ने एक नया और प्रभावशाली रूप ग्रहण किया है। आज फेसबुक, इंस्टाग्राम, यूट्यूब, एक्सऔर अन्य डिजिटल मंचों पर विज्ञापन केवल उत्पाद की (ट्विटर) जानकारी देने तक सीमित नहीं हैं, बल्कि वे उपभोक्ता की भावनाओं, रुचियों और आकांक्षाओं को सीधे संबोधित करते हैं। सोशल मीडिया विज्ञापन की भाषा अत्यंत संक्षिप्त, आकर्षक और प्रभावकेंद्रित होती है, क्योंकि यहाँ दर्शक का ध्यान बहुत कम समय के लिए उपलब्ध होता है। इसी कारण विज्ञापन में छोटे वाक्य, प्रभावशाली शब्द, प्रश्नात्मक शैली और प्रेरक अभिव्यक्तियों का प्रयोग अधिक होता है।

सोशल मीडिया विज्ञापनों के अनुवाद में शब्दशः अनुवाद प्रायः प्रभावहीन हो जाता है। अनुवादक को लक्ष्यभाषा और संस्कृति के अनुरूप संदेश को पुनः गढ़ना पड़ता है, ताकि विज्ञापन का आकर्षण बना रहे। कई बार मूल भाषा के मुहावरे, स्लोगन या शब्दखेल को लक्ष्यभाषा में समान प्रभाव के साथ प्रस्तुत करना एक चुनौतीपूर्ण कार्य होता है। इसके - अतिरिक्त, हैशटैग, कॉलएक्शन और ब्रांड पहचान को बनाए रखना भी आवश्यक होता है।-टू-

English ⟶ Hindi उदाहरण

Experience the future today!

आज ही भविष्य का अनुभव करें!
Limited time offer – Shop now!
सीमित समय के लिए ऑफ़र !अभी खरीदें –
Join millions who trust us
लाखों लोगों की पसंद पर भरोसा करें

2.5.5 सृजनात्मक साहित्य और अनुवाद

सृजनात्मक साहित्य वह क्षेत्र है जिसमें भाषा केवल सूचना का माध्यम नहीं होती, बल्कि वह अनुभूति, संवेदना, कल्पना और सौंदर्य-बोध की वाहक बन जाती है। इसमें कविता, कहानी, उपन्यास, नाटक, गीत, लोककथाएँ तथा मुहावरे–लोकोक्तियाँ सम्मिलित होती हैं। इस प्रकार के साहित्य का अनुवाद अन्य क्षेत्रों की तुलना में अधिक चुनौतीपूर्ण माना जाता है, क्योंकि यहाँ अनुवाद का लक्ष्य केवल अर्थांतरण नहीं, बल्कि भावांतरण होता है। सृजनात्मक साहित्य के अनुवाद में अनुवादक को लेखक की कल्पनाशीलता, भाव-प्रवणता, सांस्कृतिक संदर्भ और भाषिक सौंदर्य को लक्ष्यभाषा में नए रूप में जीवित करना होता है। नीचे इसके प्रमुख रूपों की विस्तार से चर्चा की जा रही है।

(क) काव्यानुवाद (Poetry Translation)

कविता का अनुवाद सृजनात्मक साहित्य में सबसे कठिन कार्य माना जाता है। कविता केवल शब्दों का समूह नहीं होता, बल्कि उसमें लय, छंद, प्रतीक, बिंब, भाव और सांस्कृतिक संकेत निहित होते हैं। जब कविता का अनुवाद किया जाता है, तो शब्दों के साथ-साथ इन सभी तत्त्वों को भी लक्ष्यभाषा में समायोजित करना पड़ता है। कई बार मूल कविता का शाब्दिक अनुवाद भाव को नष्ट कर देता है, इसलिए काव्यानुवाद में अनुवादक को रचनात्मक स्वतंत्रता लेनी पड़ती है। इस प्रक्रिया में अनुवादक लगभग सह-रचनाकार की भूमिका निभाता है। काव्यानुवाद में सबसे बड़ी चुनौती यह होती है कि स्रोतभाषा की काव्यात्मक लय और सौंदर्य लक्ष्यभाषा में किस सीमा तक सुरक्षित रखा जा सकता है। कई बार छंद का त्याग कर भाव को बचाना पड़ता है, तो कभी भाव की रक्षा हेतु शब्द-संरचना को परिवर्तित करना आवश्यक हो जाता है। श्रेष्ठ काव्यानुवाद वही माना जाता है जिसमें पाठक को यह अनुभूति हो कि कविता मूलतः उसी भाषा में रची गई हो।

काव्यानुवाद के क्षेत्र में हिंदी साहित्य में अनेक ऐसे विद्वान और रचनाकार हुए हैं जिन्होंने अन्य भाषाओं की कविताओं का भावानुकूल और सृजनात्मक अनुवाद किया है। इन अनुवादों में मूल कविता के भाव, बिंब और संवेदना को हिंदी में नए काव्यात्मक रूप में प्रस्तुत किया गया है। हिंदी काव्यानुवाद की परंपरा न केवल भारतीय भाषाओं से, बल्कि अंग्रेजी, रूसी, फ्रेंच, जर्मन आदि विदेशी भाषाओं से भी समृद्ध हुई है।

हिंदी में काव्यानुवाद के क्षेत्र में हरिवंश राय बच्चन का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। उन्होंने अंग्रेजी कवि एडवर्ड फ़िट्ज़जेराल्ड द्वारा अनूदित फारसी कवि उमर ख़य्याम की Rubaiyat का हिंदी रूपांतरण 'उमर ख़य्याम की रुबाइयाँ' शीर्षक से किया। यह अनुवाद शब्दानुवाद न होकर भावानुवाद है, जिसमें जीवन-दर्शन, नश्वरता और आनंद-बोध को हिंदी काव्य-परंपरा के अनुरूप ढाला गया है।

निराला (सूर्यकांत त्रिपाठी निराला) ने संस्कृत और बंगला काव्य परंपरा से प्रेरित होकर अनेक काव्यांशों का सृजनात्मक अनुवाद किया। उनका अनुवाद कर्म यह दर्शाता है कि काव्यानुवाद में कवि का होना एक अतिरिक्त योग्यता बन जाता है। अज्ञेय (सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन) ने अंग्रेजी और यूरोपीय आधुनिक कविता के अनेक उदाहरणों का हिंदी में अनुवाद किया। उनकी कृति 'अरी ओ करुणा प्रभामय' में अनूदित कविताएँ यह प्रमाणित करती हैं कि आधुनिक बिंब और प्रतीक हिंदी में भी उसी प्रभाव के साथ व्यक्त किए जा सकते हैं। विदेशी काव्य के हिंदी अनुवाद में रघुवीर सहाय द्वारा रूसी कवियों-विशेषतः मायाकोव्स्कीकी कविताओं के अनुवाद अत्यंत चर्चित हैं। इन अनुवादों में क्रांतिकारी चेतना और सामाजिक विद्रोह की भावना को हिंदी में प्रभावी ढंग से प्रस्तुत किया गया है। केदारनाथ सिंह और मुक्तिबोध ने भी विश्व

कविता से चयनित कविताओं का हिंदी में अनुवाद किया। मुक्तिबोध के अनुवादों में दार्शनिक गहराई और वैचारिक जटिलता का सफल संप्रेषण दिखाई देता है। भारतीय भाषाओं के संदर्भ में रवींद्रनाथ ठाकुर की बंगला कविताओं का हिंदी में काव्यानुवाद अत्यंत व्यापक है। उनकी कृति गीतांजलि का हिंदी अनुवाद अनेक कवियों द्वारा किया गया, जिनमें महादेवी वर्मा का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इन अनुवादों में अध्यात्म, मानवता और करुणा की भावना को हिंदी में सहज रूप में अभिव्यक्त किया गया है।

उदाहरण (अंग्रेजी⟶हिंदी):

The woods are lovely, dark and deep

⟶वन रमणीय हैं, घने और गहन

Hope is the thing with feathers

⟶आशा वह पंछी है, जिसके पंख होते हैं

My heart leaps up when I behold

⟶मेरा हृदय उल्लास से भर उठता है

Time holds me green and dying

⟶समय मुझे हरा-भरा भी रखता है और मुरझाता भी

I wandered lonely as a cloud

⟶मैं बादल-सा एकाकी भटकता रहा

The child is father of the man

⟶बालक ही मनुष्य का निर्माता होता है

इन उदाहरणों में शब्द नहीं, बल्कि भाव, बिंब और अनुभूति का रूपांतरण प्रमुख है।

(ख) कथा साहित्य का अनुवाद (Story & Novel Translation)

कथा साहित्य, जिसमें कहानी और उपन्यास सम्मिलित हैं-का अनुवाद अत्यंत जटिल कार्य है। इसमें केवल कथानक ही नहीं, बल्कि पात्र-निर्माण, संवाद, सामाजिक परिवेश, सांस्कृतिक पृष्ठभूमि और लेखक की दृष्टि भी अंतर्निहित होती है। अनुवादक को यह ध्यान रखना होता है कि कथा का प्रवाह, पात्रों की स्वाभाविकता और वातावरण की विश्वसनीयता लक्ष्यभाषा में बनी रहे। स्रोतभाषा में प्रयुक्त सामाजिक संकेत, सांस्कृतिक प्रतीक या लोकाचार कई बार लक्ष्यभाषा में सीधे उपलब्ध नहीं होते। ऐसी स्थिति में अनुवादक को भाव-साम्य के आधार पर समतुल्य अभिव्यक्तियों का प्रयोग करना पड़ता है। यही कारण है कि कथा साहित्य का अनुवाद केवल भाषिक नहीं, बल्कि सांस्कृतिक रूपांतरण की प्रक्रिया भी है।

कथा साहित्य का अनुवाद सृजनात्मक अनुवाद का एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण और जटिल क्षेत्र है। कथा साहित्य में केवल घटनाओं का क्रम ही नहीं होता, बल्कि उसमें पात्रों का मनोविज्ञान, सामाजिक परिवेश, सांस्कृतिक संदर्भ, भाषिक बनावट और लेखक की वैचारिक दृष्टि समाहित रहती है। कहानी और उपन्यास के अनुवाद में अनुवादक को केवल भाषा का रूपांतरण नहीं करना होता, बल्कि मूल रचना के संपूर्ण वातावरण और भावभूमि को लक्ष्यभाषा में पुनः स्थापित करना पड़ता है। इसी कारण कथा साहित्य का अनुवाद भावानुवाद, सांस्कृतिक रूपांतरण और सृजनात्मक विवेक की माँग करता है।

हिंदी साहित्य में कथाअनुवाद की परंपरा अत्यंत समृद्ध रही है। प्रेमचंद की अनेक कहानियों और उपन्यासों का अंग्रेजी तथा अन्य भारतीय भाषाओं में अनुवाद हुआ है। उनकी कृतियाँ 'गोदान', 'निर्मला', 'कफन' और 'पूस की रात' अंग्रेजी में Godaan, Nirmala और The Shroud जैसे शीर्षकों से अनूदित हुई है। इन अनुवादों में भारतीय ग्रामीण

जीवन, सामाजिक विषमता और मानवीय संवेदना को वैश्विक पाठकों तक पहुँचाया गया। अंग्रेजी से हिंदी कथा-अनुवाद के क्षेत्र में राधाकृष्ण प्रकाशन और नेशनल बुक ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित अनुवादों का विशेष योगदान रहा है। लियो टॉलस्टॉय की कहानियाँ और उपन्यास- War and Peace, Anna Kareninaका हिंदी अनुवाद 'युद्ध और शांति' तथा 'अन्ना कैरेनिना' के रूप में हुआ, जिसमें अनुवादकों में कमलेश्वर और अन्य विद्वानों के नाम उल्लेखनीय हैं। इन अनुवादों ने रूसी समाज, नैतिक द्वंद्व और मानवीय संघर्ष को हिंदी पाठकों के लिए सुलभ बनाया। रवींद्रनाथ ठाकुर की बांग्ला कहानियों और उपन्यासों का हिंदी अनुवाद कथा-अनुवाद की उत्कृष्ट परंपरा का उदाहरण है। उनकी कहानियाँ जैसे 'काबुलीवाला', 'पोस्टमास्टर' और उपन्यास 'गोरा' का हिंदी अनुवाद विभिन्न अनुवादकों द्वारा किया गया, जिसमें मानवीय करुणा और सांस्कृतिक आत्मीयता को सुरक्षित रखा गया। आधुनिक कथा साहित्य में अलबर्ट कामू के उपन्यास The Stranger का हिंदी अनुवाद 'अजनबी', तथा जॉर्ज ऑरवेल के उपन्यास Animal Farm का हिंदी रूपांतरण 'पशु-फार्म' विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इन अनुवादों में राजनीतिक व्यंग्य और दार्शनिक अर्थवत्ता को हिंदी में प्रभावी ढंग से प्रस्तुत किया गया है। भारतीय भाषाओं के बीच कथा-अनुवाद के क्षेत्र में उड़िया, मराठी, तमिल और मलयालम साहित्य से हिंदी में हुए अनुवाद भी महत्त्वपूर्ण हैं। उड़िया लेखक फणीश्वरनाथ रेणु की कथात्मक शैली से प्रेरित होकर कई क्षेत्रीय कथाओं का हिंदी अनुवाद हुआ, जिससे बहुभाषिक भारतीय जीवन का समग्र चित्र उभरता है।

उदाहरण (अंग्रेजी→हिंदी):

He felt like a fish out of water→वह स्वयं को बिल्कुल असहज महसूस कर रहा था

She broke down in tears→वह फूट-फूटकर रो पड़ी

Life had taught him hard lessons→जीवन ने उसे कड़े सबक सिखा दिए थे

The city never slept→वह शहर कभी सोता नहीं था

He carried the burden of memories→वह स्मृतियों का बोझ ढो रहा था

Her silence spoke volumes→उसकी चुप्पी बहुत कुछ कह गई

(ग) नाट्यानुवाद

नाटक का अनुवाद सृजनात्मक साहित्य का एक विशिष्ट क्षेत्र है, क्योंकि नाटक केवल पाठ्य नहीं, बल्कि मंचीय प्रस्तुति से जुड़ा होता है। अतः नाट्यानुवाद में संवादों की सहजता, बोलचाल की स्वाभाविकता और मंचीय प्रभाव को प्राथमिकता दी जाती है। यदि संवाद कृत्रिम या अत्यधिक साहित्यिक हो जाए, तो नाटक का प्रभाव समाप्त हो जाता है। नाट्यानुवाद में अनुवादक को यह सुनिश्चित करना होता है कि संवाद बोलने योग्य हो, दर्शकों को तुरंत समझ में आए और नाटकीय तनाव बनाए रखे। इसके लिए स्रोतभाषा और लक्ष्यभाषा की रंगमंचीय परंपराओं का ज्ञान आवश्यक है।

नाट्यानुवाद सृजनात्मक साहित्य के अनुवाद का एक विशिष्ट और जटिल क्षेत्र है, क्योंकि नाटक केवल पाठ्य साहित्य नहीं होता, बल्कि वह मंचीय प्रस्तुति से भी गहराई से जुड़ा होता है। नाटक का अनुवाद करते समय अनुवादक को केवल शब्दों और वाक्यों का रूपांतरण नहीं करना होता, बल्कि संवादों की नाटकीयता, पात्रों की बोलचाल, मंचीय प्रभाव और दर्शक की संवेदना को भी ध्यान में रखना पड़ता है। यदि अनुवादित संवाद मंच पर बोलने में बनावटी या अस्वाभाविक लगे, तो नाटक का प्रभाव नष्ट हो जाता है। इसलिए नाट्यानुवाद को प्रायः "पुनःरचना" केनिकटमानाजाताहै। नाट्यानुवादमेंसंवादोंकीसहजता औरसंप्रेषणीयतासर्वोपरिहोतीहै। स्रोतभाषाकेसांस्कृतिकसंकेत, सामाजिक व्यवहार और हास्य-बोध को लक्ष्यभाषा में समतुल्य प्रभाव के साथ प्रस्तुत करना अनुवादक की सबसे बड़ी चुनौती होती है। कई बार शब्दशः अनुवाद के स्थान पर भावानुकूल अनुवाद अधिक प्रभावी सिद्ध होता है। यही कारण है कि सफल नाट्यानुवाद वही माना जाता है, जिसमें दर्शक यह अनुभव न करे कि वह किसी अनूदित नाटक को देख या पढ़ रहा है। हिंदी में

नाट्यानुवाद की परंपरा अत्यंत समृद्ध रही है। विलियम शेक्सपीयर के नाटकों का हिंदी में व्यापक अनुवाद हुआ है। Hamlet का हिंदी रूप 'हैमलेट', Macbethका 'मैकबेथ', तथा King Learका 'किंग लियर' शीर्षक से अनुवाद विभिन्न विद्वानों द्वारा किया गया है। इन अनुवादों में शेक्सपीयर की त्रासदी, मानवीय द्वंद्व और दार्शनिक गहराई को हिंदी में प्रभावी ढंग से प्रस्तुत किया गया है। भारतीय संदर्भ में संस्कृत नाटकों का हिंदी नाट्यानुवाद भी विशेष रूप से उल्लेखनीय है। कालिदास के नाटक अभिज्ञानशाकुंतलम् और विक्रमोर्वशीयम् के हिंदी अनुवादों ने संस्कृत नाट्य-परंपरा को आधुनिक हिंदी पाठकों और दर्शकों तक पहुँचाया। इसी प्रकार भास और शूद्रक के नाटकों के हिंदी अनुवाद भी नाट्यानुवाद की समृद्ध परंपरा को दर्शाते हैं। आधुनिक हिंदी रंगमंच में गिरीश कर्नाड के नाटकों- तुगलक, हयवदनके अन्य भाषाओं में तथा अन्य भाषाओं के नाटकों के हिंदी में हुए अनुवाद उल्लेखनीय हैं। मोहन राकेश द्वारा किए गए कुछ नाट्य रूपांतरण और अनुवाद भी मंचीय दृष्टि से अत्यंत सफल माने जाते हैं।

उदाहरण (अंग्रेजी⟶हिंदी):

All the world's a stage⟶सारा संसार एक रंगमंच है

What's done cannot be undone⟶जो हो चुका, वह बदला नहीं जा सकता

To be or not to be⟶होना या न होना

Truth will prevail⟶अंततः सत्य की ही विजय होती है

Silence is more powerful than words⟶मौन शब्दों से अधिक प्रभावशाली होता है

Enough is enough!⟶बहुत हुआ, अब बस!

(घ) मुहावरे और लोकोक्तियों का अनुवाद

मुहावरे और लोकोक्तियाँ किसी भी भाषा की सांस्कृतिक और भाषिक पहचान का महत्वपूर्ण अंग होती हैं। ये केवल शब्द-समूह नहीं, बल्कि किसी समाज के अनुभव, जीवन-दृष्टि, ऐतिहासिक स्मृति और सांस्कृतिक चेतना की अभिव्यक्ति होती हैं। सृजनात्मक साहित्य में इसका विशेष महत्व होता है, क्योंकि इसके माध्यम से ही भाषा सजीव, प्रभावशाली और भावपूर्ण बनती है। इसी कारण मुहावरे और लोकोक्तियों का अनुवाद सृजनात्मक अनुवाद की सबसे चुनौतीपूर्ण प्रक्रियाओं में गिना जाता है।

मुहावरों और लोकोक्तियों का शाब्दिक अनुवाद प्रायः अर्थहीन या हास्यास्पद हो जाता है, क्योंकि वास्तविक अर्थ शब्दों में न होकर सांकेतिक भाव में निहित होता है। इसलिए अनुवादक को लक्ष्यभाषा में ऐसे मुहावरे या अभिव्यक्तियाँ खोजनी पड़ती हैं, जो मूल मुहावरे के समान भाव और प्रभाव उत्पन्न कर सके। यदि लक्ष्यभाषा में समतुल्य मुहावरा उपलब्ध न हो, तो भावार्थ के माध्यम से अर्थ स्पष्ट करना उचित माना जाता है। इस प्रक्रिया में अनुवादक की भाषिक दक्षता के साथ-साथ सांस्कृतिक समझ भी अत्यंत आवश्यक होती है।

मुहावरे और लोकोक्तियों के अनुवाद में यह भी ध्यान रखना पड़ता है कि वे संदर्भानुसार प्रयुक्त हों। एक ही मुहावरा अलग-अलग संदर्भों में भिन्न प्रभाव उत्पन्न कर सकता है। अतः अनुवादक को कथा, संवाद या काव्य की स्थिति के अनुसार उपयुक्त विकल्प चुनना पड़ता है। सफल अनुवाद वही माना जाता है, जिसमें पाठक यह अनुभव करे कि अभिव्यक्ति स्वाभाविक है और वह लक्ष्यभाषा की अपनी ही रचना प्रतीत होती है।

उदाहरण (हिंदी ⟷अंग्रेजी):

दाल में कुछ काला है⟶Something is fishy

नाक कट जाना⟶To lose one's honour

ऊँट के मुँह में जीरा⟶A drop in the ocean

हाथ पर हाथ धरे बैठना⟶To sit idle

आँखों में धूल झोंकना⟶To pull the wool over someone's eyes

नौ दो ग्यारह होना⟶To disappear suddenly

2.5.6 तुलनात्मक साहित्य और अनुवाद

तुलनात्मक साहित्य एक आधुनिक, बहुआयामी और अंतरराष्ट्रीय साहित्यिक अनुशासन है, जिसके अंतर्गत दो या दो से अधिक भाषाओं, संस्कृतियों, राष्ट्रों अथवा साहित्यिक परंपराओं में रचित कृतियों का तुलनात्मक अध्ययन किया जाता है। यह अध्ययन केवल विषय-वस्तु, कथानक या शैली की समानता–असमानता तक सीमित नहीं रहता, बल्कि इसके माध्यम से मानव सभ्यता के साझा अनुभव, सांस्कृतिक अंतर्संबंध, ऐतिहासिक प्रभाव और वैचारिक प्रवाह को समझने का प्रयास किया जाता है। तुलनात्मक साहित्य का उद्देश्य साहित्य को राष्ट्रीय सीमाओं से मुक्त कर उसे वैश्विक परिप्रेक्ष्य में देखना है।तुलनात्मक साहित्य का सबसे सशक्त आधार अनुवाद है। अनुवाद के बिना किसी भी भाषा का साहित्य दूसरी भाषा के पाठकों तक नहीं पहुँच सकता। यदि साहित्य केवल अपनी मूल भाषा तक सीमित रह जाए, तो उसका तुलनात्मक अध्ययन असंभव हो जाता है। इसी कारण कहा जाता है कि तुलनात्मक साहित्य अनुवाद के कंधों पर खड़ा होता है। अनुवाद ही वह सेतु है, जो विभिन्न भाषाओं और संस्कृतियों को जोड़ता है।

अंग्रेजी में तुलनात्मक साहित्य को Comparative Literatureकहा जाता है। Comparative शब्द लैटिन भाषा के comparareसे निकला है, जिसका अर्थ है- साथ रखकर देखना, तुलना करना या मूल्यांकन करना। इस प्रकार Comparative Literatureका अभिप्राय हुआ- विभिन्न भाषाओं और संस्कृतियों में रचित साहित्य का परस्पर तुलनात्मक अध्ययन। पश्चिमी साहित्यिक परंपरा में यह अनुशासन उन्नीसवीं शताब्दी में फ्रांस, जर्मनी और इंग्लैंड में विकसित हुआ। प्रारंभ में इसका उद्देश्य यूरोपीय साहित्यिक परंपराओं- जैसे फ्रेंच, जर्मन और अंग्रेजी साहित्यके बीच प्रभाव और अंतर्संबंधों का अध्ययन करना था, किंतु बाद में इसका विस्तार एशियाई, अफ्रीकी और लैटिन अमेरिकी साहित्य तक हुआ।

भारतीय संदर्भ में तुलनात्मक साहित्य का विकास अनुवाद के माध्यम से ही संभव हुआ। रामायण और महाभारत के संस्कृत से प्राकृत, अपभ्रंश, हिंदी, बांग्ला, तमिल, तेलुगु, मलयालम तथा विदेशी भाषाओं में हुए अनुवाद तुलनात्मक साहित्य के श्रेष्ठ उदाहरण हैं। तुलसीदास की रामचरितमानस, कंबन की कंब रामायण और वाल्मीकि की रामायण के तुलनात्मक अध्ययन से भाषा, संस्कृति और दृष्टिकोण के अंतर को समझा गया। इसी प्रकार महाभारत के विभिन्न भाषाई रूपों की तुलना से भारतीय समाज की विविध मानसिकता सामने आती है। कालिदास के नाटक अभिज्ञानशाकुंतलम् का अंग्रेजी, जर्मन और फ्रेंच भाषाओं में अनुवाद होने से भारतीय काव्य-सौंदर्य और रससिद्धांत का तुलनात्मक अध्ययन संभव हुआ। गोएथे जैसे पाश्चात्य कवियों ने कालिदास की प्रशंसा की, जो भारतीय और यूरोपीय साहित्यिक संवाद का प्रमाण है। आधुनिक युग में प्रेमचंद की कहानियों और उपन्यासों के अंग्रेजी, रूसी और अन्य भाषाओं में हुए अनुवादों के माध्यम से भारतीय यथार्थवाद की तुलना टॉलस्टॉय और दोस्तोएव्स्की के यथार्थवाद से की गई। रवींद्रनाथ ठाकुर की गीतांजलि के अंग्रेजी अनुवाद ने उन्हें वैश्विक साहित्य में प्रतिष्ठित किया और भारतीय आध्यात्मिक चेतना को पश्चिम से जोड़ा। उसी प्रकार निराला और महादेवी वर्मा की कविता के अनुवादों से भारतीय छायावाद की तुलना पाश्चात्य रोमांटिसिज़्म से की गई।

दूसरी ओर, शेक्सपीयर के नाटकों के हिंदी अनुवादजैसे- हैमलेट, मैकबेथ और ओथेलोने भारतीय रंगमंच और कथा परंपरा को समृद्ध किया। टॉलस्टॉय, जेम्स जॉयस और गेब्रियल गार्सिया मार्केज़ के हिंदी अनुवादों ने भारतीय पाठकों को आधुनिकतावाद और जादुई यथार्थवाद से परिचित कराया।

2.5.7 शिक्षा और अनुवाद

शिक्षा और अनुवाद का संबंध अत्यंत घनिष्ठ है। ज्ञान का अधिकांश भंडार विश्व की विभिन्न भाषाओं में उपलब्ध है, जबकि शिक्षार्थी प्रायः अपनी मातृभाषा या सीमित भाषिक दायरे में ही अध्ययन करते हैं। ऐसी स्थिति में अनुवाद वह सेतु बनता है, जिसके माध्यम से वैश्विक ज्ञान को स्थानीय भाषाओं में सुलभ कराया जाता है। शिक्षा के क्षेत्र में अनुवाद का उद्देश्य केवल शब्दों का रूपांतरण नहीं होता, बल्कि जटिल अवधारणाओं, सिद्धांतों औरज्ञान-संरचनाओं को इस प्रकार प्रस्तुत करना होता है कि वे शिक्षार्थियों के लिए बोधगम्य बन सके।

प्राचीन काल से ही शिक्षा में अनुवाद की भूमिका रही है। भारत में वेद, उपनिषद, बौद्ध और जैन ग्रंथों का विभिन्न प्रादेशिक भाषाओं में अनुवाद किया गया, जिससे ज्ञान सीमित वर्ग तक न रहकर व्यापक समाज तक पहुँचा। आधुनिक काल में विज्ञान, गणित, चिकित्सा, समाजशास्त्र, मनोविज्ञान और प्रौद्योगिकी जैसे विषयों की पुस्तकें मुख्यतः अंग्रेजी में उपलब्ध हैं। इनका हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं में अनुवाद होने से उच्च शिक्षा का लोकतंत्रीकरण संभव हुआ है।

शिक्षा में अनुवाद का एक महत्वपूर्ण क्षेत्र पाठ्यपुस्तक अनुवाद है। राष्ट्रीय और राज्य स्तरीय संस्थाएँ विद्यालयी एवं विश्वविद्यालयी पाठ्यक्रमों के लिए अनूदित सामग्री उपलब्ध कराती हैं। इसके अतिरिक्त, ई-लर्निंग, ऑनलाइन कोर्स, शोध-पत्र, और डिजिटल शैक्षिक सामग्री का अनुवाद आज के समय में अत्यंत आवश्यक हो गया है। इससे बहुभाषी समाज में समान शैक्षिक अवसर सुनिश्चित होते हैं।

उदाहरण:

Theory of Relativity⟶सापेक्षता का सिद्धांत

Child Psychology⟶बाल मनोविज्ञान

Environmental Studies⟶पर्यावरण अध्ययन

Indian Constitution⟶भारतीय संविधान

Introduction to Sociology⟶समाजशास्त्र का परिचय

इन उदाहरणों से स्पष्ट है कि शिक्षा में अनुवाद ज्ञान-विस्तार, समावेशन और बौद्धिक समानता का सशक्त माध्यम है।

2.5.8 पर्यटन और अनुवाद

वैश्वीकरण के वर्तमान युग में पर्यटन एक प्रमुख उद्योग के रूप में उभरा है, और इस क्षेत्र में अनुवाद की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण हो गई है। पर्यटन मूलतः विभिन्न भाषाओं, संस्कृतियों और देशों के लोगों को जोड़ने का माध्यम है। जब पर्यटक किसी नए देश या क्षेत्र में जाते हैं, तो भाषा उनके अनुभव को सहज या जटिल-दोनों में से कोई भी हो सकती है। ऐसे में अनुवाद पर्यटन को सुगम, सुरक्षित और आकर्षक बनाने का कार्य करता है।

पर्यटन क्षेत्र में अनुवाद का प्रयोग अनेक स्तरों पर होता है- पर्यटन पुस्तिकाओं, यात्रा मार्गदर्शिकाओं, होटल विवरणों, ऐतिहासिक स्थलों की जानकारी, संग्रहालयों के विवरण, वेबसाइटों, मोबाइल ऐप्स और संकेत-पट्टों में। यदि ये सभी सूचनाएँ केवल स्थानीय भाषा में हों, तो विदेशी पर्यटकों के लिए उनका उपयोग सीमित रह जाता है। अनुवाद के माध्यम से इन्हें बहुभाषी रूप में प्रस्तुत किया जाता है, जिससे पर्यटन का विस्तार होता है।

इसके अतिरिक्त, मौखिक अनुवाद (व्याख्या) भी पर्यटन का महत्वपूर्ण अंग है। टूर गाइड, होटल कर्मचारी, एयरपोर्ट स्टाफ और सांस्कृतिक कार्यक्रमों के आयोजक पर्यटकों से संवाद स्थापित करने के लिए अनुवाद और व्याख्या का सहारा लेते हैं। सांस्कृतिक पर्यटन, धार्मिक पर्यटन और ऐतिहासिक पर्यटन में सही और संवेदनशील अनुवाद विशेष महत्व रखता है, क्योंकि इससे किसी देश की संस्कृति और विरासत की सही छवि प्रस्तुत होती है।

उदाहरण:

Welcome to Incredible India⟶अतुल्य भारत में आपका स्वागत है

World Heritage Site⟶विश्व धरोहर स्थल

Tourist Information Centre ⟶पर्यटक सूचना केंद्र

Entry Ticket ⟶प्रवेश टिकट

Guided Tour Available⟶मार्गदर्शित भ्रमण उपलब्ध है

इन उदाहरणों से स्पष्ट है कि पर्यटन में अनुवाद केवल सुविधा नहीं, बल्कि सांस्कृतिक संवाद और आर्थिक विकास का भी सशक्त माध्यम है।

2.6 सारांश

प्रस्तुत इकाई में अनुवाद को एक व्यापक, बहुआयामी और सृजनात्मक प्रक्रिया के रूप में समझाया गया है। अनुवाद केवल एक भाषा से दूसरी भाषा में शब्दों का रूपांतरण नहीं है, बल्कि यह अर्थ, भाव, संदर्भ, संस्कृति और शैली के समन्वय की जटिल प्रक्रिया है। मानव सभ्यता के विकास में अनुवाद ने विभिन्न भाषाओं, समाजों और ज्ञान-परंपराओं के बीच संवाद स्थापित करने का महत्त्वपूर्ण कार्य किया है। आधुनिक वैश्विक परिदृश्य में ज्ञान, सूचना और साहित्य के तीव्र विस्तार ने अनुवाद को एक अनिवार्य आवश्यकता बना दिया है। इस इकाई में पाश्चात्य और भारतीय अनुवादचिंतकों के विचारों के आधार पर अनुवाद के विविध प्रकारों का सैद्धांतिक विवेचन किया गया है। यूजीन नाइडा और रोमन जैकोब्सन जैसे पाश्चात्य विद्वानों ने अनुवाद को भाषिक, अर्थात्मक और सांकेतिक स्तरों पर समझाया, जबकि डॉ. भोलानाथ तिवारी और डॉ. नगेंद्र जैसे भारतीय विद्वानों ने अनुवाद को सांस्कृतिक, विधागत और प्रयोजनात्मक दृष्टि से वर्गीकृत किया। इन विचारों से यह स्पष्ट होता है कि अनुवाद का स्वरूप स्थिर नहीं, बल्कि संदर्भ, उद्देश्य और पाठकवर्ग के अनुसार परिवर्तित होता रहता है। इकाई में शाब्दिक अनुवाद, भावानुवाद, छायानुवाद, रूपांतरण, अनुसृजन, पुनर्सृजन, नवलेखन, टीकानुवाद, सारानुवाद, आशु अनुवाद, पुनःअनुवाद, लिप्यंकन और लिप्यंतरण जैसे प्रमुख प्रकारों की विस्तृत चर्चा की गई है। साथ ही प्रशासन, बैंकिंग, विधि, मीडिया, सृजनात्मक साहित्य, तुलनात्मक साहित्य, शिक्षा और पर्यटन जैसे विविध क्षेत्रों में अनुवाद की भूमिका को स्पष्ट किया गया है। विशेष रूप से सृजनात्मक साहित्य में काव्यानुवाद, कथा-अनुवाद, नाट्यानुवाद तथा मुहावरों के अनुवाद को अत्यंत चुनौतीपूर्ण किंतु महत्त्वपूर्ण माना गया है।

समग्रतः यह इकाई यह प्रतिपादित करती है कि अनुवाद आधुनिक समाज में केवल साहित्यिक गतिविधि नहीं, बल्कि शैक्षिक, सांस्कृतिक, प्रशासनिक और वैश्विक संवाद का एक सशक्त माध्यम बन चुका है।

2.7 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)

प्रश्न 1 का उत्तर: यूजीन ए. नाइडा ने अनुवाद को तीन प्रमुख रूपों- शाब्दिक अनुवाद, भावानुवाद और पर्यायआधारित अनुवादमें वर्गीकृत किया है।विषय से संबंधित विस्तृत जानकारी हेतु पूर्ववर्ती खंड का अवलोकन करें।

प्रश्न 2 का उत्तर: रोमन जैकोब्सन के अनुसार अंतरभाषिक अनुवाद का अर्थ एक भाषा के संदेश को दूसरी भाषा में अर्थ-संप्रेषण के साथ रूपांतरित करना है।

प्रश्न 3 का उत्तर: डॉ. भोलानाथ तिवारी के अनुसार अनुवाद के वर्गीकरण का एक प्रमुख आधार गद्य और पद्य का भेद माना गया है।इस संदर्भ की अधिक स्पष्टता के लिए ऊपर प्रस्तुत सामग्री पर ध्यान दें।

प्रश्न 4 का उत्तर: शाब्दिक अनुवाद की प्रमुख विशेषता शब्द प्रति शब्द रूपांतरण है और यह विधि, तकनीकी तथा प्रशासनिक क्षेत्रों में अधिक उपयोगी मानी जाती है।अतिरिक्त विवरण समझने के लिए पूर्व वर्णित अंश को देखना उपयोगी रहेगा।

प्रश्न 5 का उत्तर: भावानुवाद भाव और प्रभाव को प्राथमिकता देता है, जबकि छायानुवाद मूल पाठ की भाषिक संरचना और शैली को अधिक सुरक्षित रखता है।इस विषय की गहन जानकारी के लिए पहले दिए गए विवेचन को पढ़ें।

प्रश्न 6 का उत्तर: रूपांतरण और अनुसृजन को अधिक सृजनात्मक इसलिए माना जाता है क्योंकि इसमें मूल रचना के आधार पर नई संरचना और अभिव्यक्ति का निर्माण किया जाता है।संबंधित जानकारी प्राप्त करने के लिए ऊपर उल्लिखित भाग सहायक सिद्ध होगा।

प्रश्न 7 का उत्तर: लिप्यंकन में ध्वनियों को लिखित रूप दिया जाता है, जबकि लिप्यंतरण में शब्दों को एक लिपि से दूसरी लिपि में परिवर्तित किया जाता है।इस विषय को विस्तार से समझने हेतु ऊपर दिए गए अंश पर दृष्टि डालें।

🔍 2.8 अधिक जानने के लिए पढ़ें

- Nida, Eugene A. (1964). Toward a science of translating: With special reference to principles and procedures involved in Bible translating. Leiden: E. J. Brill.
- Newmark, Peter. (1981). Approaches to translation. Oxford: Pergamon Press.
- Catford, J. C. (1965). A linguistic theory of translation. London: Oxford University Press.
- Jakobson, Roman. (1959). Linguistic aspects of translation. In R. A. Brower (Ed.), On translation (pp. 232–239). Cambridge, MA: Harvard University Press.
- Bassnett, Susan. (2002). Translation studies (Revised ed.). London: Routledge.
- Venuti, Lawrence. (1998). The scandals of translation: Towards an ethics of difference. London: Routledge.
- तिवारी, भोलानाथ. (2004). अनुवादविज्ञान: सिद्धांत और प्रयोग. इलाहाबाद: किताब महल।
- नगेन्द्र. (2006). अनुवादऔरसृजन. नईदिल्ली: वाणीप्रकाशन।
- गोपीनाथन, जी. (2012). अनुवाद अध्ययन: स्वरूप और क्षेत्र. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन।
- सेठी, हरीश कुमार. (2015). तकनीकी, प्रशासनिक एवं मीडिया अनुवाद. नई दिल्ली: ज्ञान प्रकाशन।

⑦ 2.9 अभ्यास

(क) संक्षिप्त प्रश्नों के उत्तर लिखिए-

1. यूजीन ए. नाइडा ने अनुवाद को कितने प्रमुख रूपों में वर्गीकृत किया है?
2. रोमन जैकोब्सन के अनुसार अंतरप्रतीकात्मक अनुवाद का क्या आशय है?
3. शाब्दिक अनुवाद किन क्षेत्रों में अधिक उपयोगी माना जाता है?
4. भावानुवाद में अनुवादक को किस तत्व को प्राथमिकता देनी होती है?
5. छायानुवाद को शाब्दिक और भावानुवाद के बीच सेतु क्यों माना जाता है?

(ख) निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लिखिए-

1. पाश्चात्य अनुवाद सिद्धांतकारों की दृष्टि से अनुवाद के प्रमुख प्रकारों का विवेचन कीजिए।
2. डॉ. भोलानाथ तिवारी द्वारा प्रस्तुत अनुवादवर्गीकरण के आधारों को स्पष्ट कीजिए।
3. रूपांतरण, अनुसृजन और पुनर्सृजन की अवधारणा को उदाहरण सहित समझाइए।
4. सृजनात्मक साहित्य के क्षेत्र में काव्यानुवाद और कथा-अनुवाद की प्रमुख चुनौतियों का विश्लेषण कीजिए।
5. प्रशासनिक और विधि साहित्य के अनुवाद में भाषा-शुद्धता और समतुल्यता का महत्व स्पष्ट कीजिए।
6. मीडिया, शिक्षा और पर्यटन के क्षेत्र में अनुवाद की भूमिका और व्यावहारिक आवश्यकताओं की विवेचना कीजिए।

शब्दकोश

1.शाब्दिकअनुवाद: शब्द प्रति शब्दरूपांतरण; मूलभाषाकीसंरचनाकापालन। 2. भावानुवाद: भावकास्थानांतरण; आशयकीप्रधानता। 3. छायानुवाद: संरचनात्मकप्रतिछाया; मूलशैलीकाअनुकरण।4. रूपांतरण: रूपकापरिवर्तन; नएमाध्यममेंप्रस्तुति। 5. अनुसृजन: सृजनात्मकपुनर्लेखन; भावानुकूलनईरचना। 6. पुनर्सृजन: नवसंदर्भमेंरचना; समकालीनपुनर्रचना। 7. नवलेखन: नवीनसर्जना; स्वतंत्रसाहित्यिक अभिव्यक्ति। 8. टीकानुवाद: व्याख्यासहितअनुवाद; अर्थकास्पष्टीकरण। 9. सारानुवाद: संक्षिप्तप्रस्तुति; मुख्यविचारोंकाचयन। 10.आशुअनुवाद: तात्कालिकअनुवाद; मौखिकरूपांतरण।

*** ***** ***

इकाई 3 - अनुवाद की चुनौतियाँ: भाषाई और सांस्कृतिक

इकाई की रुपरेखा

3.0 उद्देश्य
3.1 प्रस्तावाना
3.2 अनुवाद की चुनौतियाँ:अर्थ और स्वरुप
3.3 भाषा संरचनावादी औरउत्तर-संरचनावादी अवधारणा
3.4 अनुवाद की समस्याएँ: बहुस्तरीय परिप्रेक्ष्य
  3.4.1 विषय–वस्तु और ज्ञान–क्षेत्र के स्तर पर
  3.4.2 सामाजिक–सांस्कृतिक संदर्भों के स्तर पर
  3.4.3 मूलपाठ की निष्ठा बनाम संप्रेषणीय अनुवाद
  3.4.4 भाव एवं अभिव्यक्ति के स्तर पर
  3.4.5 शैली, भाषास्तर और शिल्प के स्तर पर
3.5 भाषिक संरचना से संबंधित चुनौतियाँ
3.6 सांस्कृतिक अंतर और अनुवाद की समस्या
3.7 सारांश
3.8 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)
3.9 अधिक जानने के लिए पढ़ें
3.10 अभ्यास प्रश्न

3.0 उद्देश्य

- अनुवाद में आने वाली भाषाई और सांस्कृतिक चुनौतियों को समझ सकेंगे।
- अर्थ, संदर्भ और संस्कृति के अंतर्संबंध को पहचान सकेंगे।
- विभिन्न स्तरों पर अनुवाद की समस्याओं का विश्लेषण कर सकेंगे।
- एक सजग और जिम्मेदार अनुवादक की भूमिका को समझ सकेंगे।
- विभिन्न अनुवाद–रणनीतियों और समाधान–विधियों का समुचित प्रयोग करने की क्षमता विकसित कर सकेंगे।

3.1 प्रस्तावाना

अनुवाद मानव सभ्यता में ज्ञान, विचार और संस्कृति के आदान–प्रदान का एक सशक्त माध्यम रहा है। विभिन्न भाषाओं और समाजों के बीच संवाद स्थापित करने में अनुवाद की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है। अनुवाद के माध्यम से न केवल साहित्य, दर्शन, विज्ञान और सामाजिक विचारों का प्रसार होता है, बल्कि विभिन्न संस्कृतियों की समझ भी विकसित होती है। किंतु यह प्रक्रिया सरल नहीं है, क्योंकि प्रत्येक भाषा की अपनी संरचना, शब्दावली, अभिव्यक्ति की शैली और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि होती है। जब किसी एक भाषा के पाठ को दूसरी भाषा में रूपांतरित किया जाता है, तो अनुवादक को अनेक भाषाई और सांस्कृतिक चुनौतियों का सामना करना पड़ता है।

अनुवाद की प्रमुख चुनौती अर्थ के संरक्षण से जुड़ी होती है। कई बार शब्दों के समानार्थी उपलब्ध होने के बावजूद भाव, संदर्भ और सांस्कृतिक निहितार्थ लक्ष्य भाषा में उसी प्रभाव के साथ व्यक्त नहीं हो पाते। इसके अतिरिक्त, सामाजिक परिवेश, परंपराएँ, मूल्य और जीवन-दृष्टि भी भाषा में अंतर्निहित होती हैं, जो अनुवाद की प्रक्रिया को और अधिक जटिल बना देती हैं। अनुवादक को मूल पाठ के प्रति निष्ठा और लक्ष्य भाषा के पाठक के लिए संप्रेषणीयता के बीच संतुलन स्थापित करना पड़ता है। अतः अनुवाद एक यांत्रिक कार्य न होकर एक सृजनात्मक और विवेकपूर्ण प्रक्रिया है। इस इकाई में अनुवाद की इन्हीं भाषाई और सांस्कृतिक चुनौतियों का विभिन्न स्तरों पर विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है, जिससे अनुवाद प्रक्रिया की जटिलताओं को गहराई से समझा जा सके।

3.2 अनुवाद की चुनौतियाँ:अर्थ और स्वरुप

अनुवाद की प्रक्रिया में अर्थ और स्वरूप से संबंधित चुनौतियाँ अत्यंत महत्वपूर्ण मानी जाती हैं। किसी भी पाठ का अनुवाद करते समय सबसे पहली और प्रमुख समस्या उसके अर्थ को यथासंभव सुरक्षित रखना होती है। अर्थ केवल शब्दों के शाब्दिक अर्थ तक सीमित नहीं होता, बल्कि उसमें भाव, संदर्भ, संकेत और सांस्कृतिक निहितार्थ भी शामिल होते हैं। उदाहरण के लिए अंग्रेजी वाक्य "He gave up" का शाब्दिक अनुवाद "उसनेछोड़दिया"कियाजासकताहै, किंतु संदर्भ के अनुसार इसका अर्थ "उसनेहारमानली"या"उसनेप्रयासबंदकरदिया"भीहोसकता है। इससे स्पष्ट होता है कि एक भाषा में प्रयुक्त शब्द या वाक्य संरचना दूसरी भाषा में उसी अर्थ और प्रभाव के साथ उपलब्ध हो, यह आवश्यक नहीं। ऐसी स्थिति में अनुवादक को शब्दों के स्थान पर भाव और आशय को प्राथमिकता देनी पड़ती है, जिससे मूल पाठ का मूल संदेश बना रहे।

अर्थ के साथ–साथ स्वरूप की समस्या भी अनुवाद में महत्वपूर्ण चुनौती प्रस्तुत करती है। स्वरूप से आशय पाठ की संरचना, शैली, वाक्य-विन्यास और अभिव्यक्ति के ढंग से है। मूल भाषा की संरचनात्मक विशेषताएँ लक्ष्य भाषा से भिन्न होती हैं, जिसके कारण शब्द प्रति शब्द अनुवाद प्रायः अस्वाभाविक या कृत्रिम प्रतीत होता है। उदाहरणस्वरूप अंग्रेज़ी मुहावरा "It is raining cats and dogs" यदि शब्दशः हिंदी में अनूदित किया जाए तो वह अर्थहीन हो जाएगा, जबकि इसका उपयुक्त हिंदी रूप "मूसलधारवर्षाहोरहीहै" होगा। साहित्यिकरचना ओंमेंयहसमस्या और भी जटिल हो जाती है, क्योंकि वहाँ लेखक की शैली, लय, प्रतीक और बिंब पाठ की आत्मा होते हैं। जैसे अंग्रेजी कथन "Silence spoke louder than words"का प्रभाव बनाए रखने के लिए हिंदी में "मौनशब्दोंसेअधिकमुखरथा" जैसासृजनात्मक अनुवादकरनापड़ताहै। इन तत्वों को लक्ष्य भाषा में उसी प्रभाव के साथ प्रस्तुत करना अनुवादक के लिए एक कठिन कार्य है।

इसके अतिरिक्त, अर्थ और स्वरूप के बीच संतुलन बनाए रखना भी एक चुनौती है। यदि अनुवादक केवल अर्थ पर ध्यान देता है, तो मूल पाठ का स्वरूप और सौंदर्य नष्ट हो सकता है; वहीं यदि केवल स्वरूप को बनाए रखने का प्रयास किया जाए, तो अर्थ के विकृत होने की संभावना बनी रहती है। उदाहरण के लिए अंग्रेजी वाक्य "She has a heart of stone"का शब्द प्रति शब्द अनुवाद अर्थ को भ्रमित कर सकता है, जबकि भावानुवाद "वहअत्यंतकठोरहृदयकीहै"अधिकउपयुक्तहोगा। इसलिए सफल अनुवाद वही माना जाता है, जिसमें अर्थ की स्पष्टता और स्वरूप की स्वाभाविकता दोनों का समन्वय हो। इस प्रकार अर्थ और स्वरूप से जुड़ी चुनौतियाँ अनुवाद को एक रचनात्मक, संवेदनशील और विवेकपूर्ण प्रक्रिया बनाती है।

3.3 भषा संरचनावादी औरउत्तर-संरचनावादी अवधारणा

भाषा की संरचनावादी तथा उत्तर-संरचनावादी अवधारणाएँ अनुवाद अध्ययन के लिए आधारभूत मानी जाती हैं। संरचनावादी विचारधारा के अनुसार भाषा एक सुव्यवस्थित और नियमबद्ध संरचना है, जिसमें अर्थ संकेतों के आपसी संबंधों से निर्मित होता है। फर्डिनेंड द सोस्यूर ने भाषा को संकेतों की एक प्रणाली के रूप में परिभाषित करते हुए संकेतक (signifier) और संकेतित (signified) के संबंध पर बल दिया। इसी संदर्भ में भाषाविद् लियोनार्ड ब्लूमफील्ड ने भाषा को परिभाषित करते हुए कहा-

"Language is the system of speech sounds by means of which human beings communicate."

यह परिभाषा भाषा को एक संरचनात्मक व्यवस्था के रूप में देखती है, जहाँ अर्थ अपेक्षाकृत स्थिर और नियंत्रित माना जाता है। अनुवाद में इस दृष्टिकोण का प्रभाव यह होता है कि स्रोत भाषा की संरचना और अर्थ-प्रणाली को समझकर लक्ष्य भाषा में समतुल्य रूप प्रस्तुत करने का प्रयास किया जाता है।

इसके विपरीत, उत्तर-संरचनावादी दृष्टिकोण भाषा और अर्थ की स्थिरता को स्वीकार नहीं करता। इस मत के अनुसार अर्थ किसी शब्द या पाठ में स्थायी रूप से निहित नहीं होता, बल्कि वह संदर्भ, संस्कृति और पाठक के अनुसार बदलता रहता है। ब्रिटिश भाषाविद् माइकल हॉलिडे ने भाषा को सामाजिक संदर्भ से जोड़ते हुए कहा-

"Language is a resource for making meaning, and meaning is shaped by the social context."

यह परिभाषा स्पष्ट करती है कि अर्थ केवल संरचना से नहीं, बल्कि सामाजिक और सांस्कृतिक परिस्थितियों से भी निर्मित होता है। अनुवाद में इसका अर्थ यह है कि शब्दों का यांत्रिक रूपांतरण पर्याप्त नहीं, बल्कि संदर्भगत अर्थ को समझना आवश्यक है। उत्तर-संरचनावादी चिंतन में यह भी माना जाता है कि एक ही पाठ के अनेक अर्थ संभव हैं। उदाहरण के लिए अंग्रेज़ी शब्द "justice" का हिंदी अनुवाद "न्याय"किया जाता है, किंतु इसका अर्थ कानूनी, नैतिक या सामाजिक संदर्भों में अलग-अलग हो सकता है। इस बहुअर्थकता के कारण अनुवादक को अर्थ के चयन में विवेक और संवेदनशीलता का परिचय देना पड़ता है।

संरचनावादी अवधारणा जहाँ भाषा को एक स्थिर प्रणाली मानती है, वहीं उत्तर-संरचनावादी दृष्टि भाषा को अर्थ-निर्माण की गतिशील प्रक्रिया के रूप में देखती है। अनुवादक के लिए इन दोनों दृष्टियों का संतुलन आवश्यक है, ताकि न तो अर्थ की स्पष्टता नष्ट हो और न ही संदर्भगत बहुलता की उपेक्षा हो। इसी संतुलन में सफल और प्रभावी अनुवाद की संभावना निहित है।

"Discourse is not simply that which translates struggles or systems of domination, but is the thing for which and by which there is struggle."

(Michel Foucault, The Archaeology of Knowledge)

फूको के इस कथन से यह स्पष्ट होता है कि भाषा या विमर्श केवल विचारों की अभिव्यक्ति का माध्यम नहीं है, बल्कि वह स्वयं सत्ता, ज्ञान और सामाजिक संरचना का निर्माण करता है। भाषा के माध्यम से ही किसी समाज में अर्थ, सत्य और वैचारिक प्रभुत्व स्थापित होता है। उत्तर-संरचनावादी दृष्टिकोण में भाषा को एक निष्पक्ष या तटस्थ साधन नहीं माना जाता, बल्कि उसे सामाजिक और ऐतिहासिक शक्तियों से गहराई से जुड़ा हुआ समझा जाता है।

अनुवाद की प्रक्रिया में यह दृष्टि अनुवादक के लिए नई चुनौती प्रस्तुत करती है, क्योंकि उसे केवल शब्दों का स्थानांतरण नहीं करना होता, बल्कि यह भी समझना पड़ता है कि स्रोत भाषा का विमर्श किस प्रकार सत्ता, विचारधारा और सामाजिक संदर्भों से निर्मित हुआ है। यदि इन तत्वों की अनदेखी की जाए, तो अनुवाद अर्थहीन या एकांगी हो सकता है।

इस प्रकार फूको की विमर्श-अवधारणा अनुवाद को एक वैचारिक और आलोचनात्मक प्रक्रिया के रूप में स्थापित करती है, जिसमें अर्थ स्थिर न होकर संदर्भ-निर्भर और बहुआयामी होता है।

3.4 अनुवाद की समस्याएँ: बहुस्तरीय परिप्रेक्ष्य

किसी भी रचना का अनुवाद केवल भाषिक प्रक्रिया नहीं है, बल्कि वह रचनाकार के अनुभव, सामाजिक परिवेश, सांस्कृतिक चेतना और वैचारिक दृष्टि से गहराई से जुड़ा होता है। रचनाकार जब किसी कृति की रचना करता है, तब उसके जीवन-अनुभव, सामाजिक स्थितियाँ, सांस्कृतिक मूल्य और मानसिक संरचना अनायास ही उस रचना में समाहित हो जाती है। ऐसे में अनुवादक के लिए केवल शब्दों का रूपांतरण पर्याप्त नहीं होता, बल्कि उसे लेखक की संवेदना और वैचारिक पृष्ठभूमि तक पहुँचने का प्रयास करना पड़ता है। यही कारण है कि अनुवाद की समस्याएँ एक ही स्तर तक सीमित न रहकर विभिन्न स्तरों पर उभरती है।

उत्तर–संरचनावादी दृष्टिकोण के अनुसार पाठ का अर्थ एकरैखिक या स्थिर नहीं होता, बल्कि वह अनेक दिशाओं में फैलता है। इस संदर्भ में रोलां बार्थ का यह कथन उल्लेखनीय है-

"A text is not a line of words releasing a single meaning, but a multidimensional space in which a variety of writings blend and clash."

(Roland Barthes, Image–Music–Text)

बार्थ के इस कथन से स्पष्ट होता है कि कोई भी पाठ केवल एक अर्थ को प्रकट नहीं करता, बल्कि उसमें अनेक अर्थ-स्तर विद्यमान होते हैं। पाठ विभिन्न वैचारिक, सांस्कृतिक और भाषिक स्रोतों से निर्मित होता है, जिसके कारण उसका अर्थ बहुआयामी हो जाता है। अनुवाद की प्रक्रिया में यही बहुआयामिता अनुवादक के सामने गंभीर समस्या के रूप में उपस्थित होती है। अनुवादक को यह तय करना पड़ता है कि वह पाठ के किस अर्थ-स्तर को प्राथमिकता दे और किसे गौण माने। यदि वह केवल एक अर्थ को स्थिर मानकर अनुवाद करता है, तो पाठ की बहुलता नष्ट हो जाती है।

इसी कारण अनुवाद की समस्याएँ विषय-वस्तु, सामाजिक-सांस्कृतिक संदर्भ, अभिव्यक्ति, शैली और पाठकीय अपेक्षाओं जैसे विभिन्न स्तरों पर सामने आती है। प्रत्येक स्तर पर अलग प्रकार की चुनौती उपस्थित होती है, जिन्हें समझे बिना अनुवाद की प्रक्रिया अधूरी रह जाती है। अतः अनुवाद की समस्याओं को बहुस्तरीय परिप्रेक्ष्य में समझना आवश्यक है, क्योंकि यही दृष्टि अनुवाद को एक सृजनात्मक, विवेकपूर्ण और समग्र प्रक्रिया के रूप में स्थापित करती है।

3.4.1 विषय–वस्तु और ज्ञान–क्षेत्र के स्तर पर

अनुवाद की प्रक्रिया में विषय–वस्तु और ज्ञान–क्षेत्र का स्तर अत्यंत निर्णायक भूमिका निभाता है। प्रत्येक विषय अपनी अलग भाषिक परंपरा, संकल्पनात्मक ढाँचे और अभिव्यक्ति–प्रणाली के साथ उपस्थित होता है। साहित्यिक, सामाजिक, दार्शनिक, वैज्ञानिक या तकनीकी- हर क्षेत्र की भाषा का उद्देश्य और स्वरूप भिन्न होता है। इसलिए किसी एक प्रकार की अनुवाद-रणनीति को सभी ज्ञान–क्षेत्रों पर समान रूप से लागू नहीं किया जा सकता।

साहित्यिक अनुवाद में विषय–वस्तु केवल सूचना प्रदान नहीं करती, बल्कि वह भाव, संवेदना और सौंदर्यबोध को भी अभिव्यक्त करती है। उदाहरणस्वरूप अंग्रेज़ी वाक्य "He was walking through the dark night of his life"का शाब्दिक अनुवाद अर्थ को स्पष्ट तो करता है, किंतु साहित्यिक संदर्भ में इसका भावार्थ "वहजीवनकेगहनसंकटसेगुजररहाथा" अधिकउपयुक्तप्रतीतहोताहै। यहाँविषय–वस्तुसाहित्यिकहोनेके कारण अनुवाद ककोप्रतीकात्मकअर्थको प्राथमिकता देनीपड़तीहै।

इसके विपरीत, वैज्ञानिक या तकनीकी ज्ञान–क्षेत्र में विषय–वस्तु की प्रकृति वस्तुनिष्ठ और सटीक होती है। उदाहरण के लिए अंग्रेज़ी वाक्य "Water boils at 100 degrees Celsius"का अनुवाद करते समय किसी प्रकार की भावात्मक या शैलीगत स्वतंत्रता की गुंजाइश नहीं रहती। यहाँ अर्थ की स्पष्टता और तथ्यात्मक शुद्धता ही अनुवाद का मुख्य उद्देश्य होता है। यदि अनुवादक इसमें भाषिक अलंकरण जोड़ता है, तो विषय–वस्तु की विश्वसनीयता प्रभावित हो सकती है।ज्ञान–क्षेत्र के स्तर पर समस्या तब और जटिल हो जाती है, जब किसी विषय से जुड़ी अवधारणाएँ लक्ष्य भाषा में प्रत्यक्ष रूप से उपलब्ध नहीं होतीं। उदाहरणस्वरूप सामाजिक अध्ययन में प्रयुक्त अंग्रेजी शब्द "marginalization"का हिंदी अनुवाद केवल "हाशियाकरण"करनापर्याप्तनहींहोता, क्योंकि इसके पीछे सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक संदर्भ भी जुड़े होते हैं। ऐसे में अनुवादक को विषय–वस्तु की वैचारिक पृष्ठभूमि को समझते हुए व्याख्यात्मक अनुवाद का सहारा लेना पड़ता है।

3.4.2 सामाजिक–सांस्कृतिक संदर्भों के स्तर पर

अनुवाद की प्रक्रिया में सामाजिक–सांस्कृतिक संदर्भों की भूमिका अत्यंत निर्णायक होती है। भाषा केवल संप्रेषण का साधन नहीं है, बल्कि वह समाज की जीवन–पद्धति, विश्वास–प्रणाली, परंपराओं और सांस्कृतिक अनुभवों को भी अपने भीतर समाहित किए रहती है। इसलिए किसी भी पाठ का अनुवाद करते समय केवल भाषिक समानता पर ध्यान देना पर्याप्त नहीं होता, बल्कि उस समाज और संस्कृति को समझना भी आवश्यक हो जाता है, जहाँ से वह पाठ उत्पन्न हुआ है। सामाजिक–सांस्कृतिक संदर्भों की अनदेखी अनुवाद को अर्थहीन या भ्रामक बना सकती है।

इस संदर्भ में साहित्यिक अनुवाद एक उपयुक्त उदाहरण प्रस्तुत करता है। उदाहरणस्वरूप, किसी अंग्रेजी उपन्यास में यदि Thanksgiving dinner, pumpkin pieया high school promजैसे सांस्कृतिक संकेत आते हैं, तो उनका हिंदी अनुवाद केवल शब्दों के स्तर पर करने से पाठक तक सही सामाजिक–सांस्कृतिक अर्थ नहीं पहुँच पाता। Thanksgiving dinnerको केवल "धन्यवाददिवसकाभोजन"कहदेनाउससांस्कृतिकउत्सवकीसामाजिकभावना, पारिवारिक एकता और ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को व्यक्त नहीं कर पाता। ऐसी स्थिति में अनुवादक को यह निर्णय लेना पड़ता है कि वह सांस्कृतिक संदर्भ को यथावत रखे, उसका संक्षिप्त संकेत दे या व्याख्यात्मक अनुवाद का सहारा ले। यही सामाजिक–सांस्कृतिक स्तर की सबसे बड़ी चुनौती है।

सामाजिक–सांस्कृतिक संदर्भों की समस्या तब और गहरी हो जाती है, जब अनुवाद दो भिन्न सांस्कृतिक संरचनाओं के बीच किया जा रहा हो। उदाहरण के लिए अंग्रेजी वाक्य "She moved out of her parents' house at eighteen"पश्चिमी समाज में सामान्य सामाजिक व्यवहार को दर्शाता है, किंतु भारतीय सामाजिक संदर्भ में यह स्थिति असामान्य मानी जा सकती है। यदि अनुवादक इस वाक्य को बिना सांस्कृतिक संदर्भ के हिंदी में प्रस्तुत करता है, तो पाठक के लिए उसका सामाजिक अर्थ अस्पष्ट या भ्रामक हो सकता है। अतः अनुवादक को यह समझना पड़ता है कि यह कथन केवल व्यक्तिगत निर्णय नहीं, बल्कि एक विशिष्ट सामाजिक संरचना का संकेत है। सामाजिक संबंधों और संबोधनों का अनुवाद भी सांस्कृतिक स्तर पर चुनौती उत्पन्न करता है। अंग्रेजी भाषा में uncleया auntजैसे शब्द सामान्य पारिवारिक संबोधन हो सकते हैं, जबकि हिंदी में इनके लिए विशिष्ट रिश्तों के अलग–अलग शब्द प्रयुक्त होते हैं। यदि अनुवादक इन भिन्नताओं को अनदेखा करता है, तो सामाजिक संबंधों की बारीकियाँ नष्ट हो जाती हैं।

3.4.3 मूलपाठ की निष्ठा बनाम संप्रेषणीय अनुवाद

अनुवादअध्ययन में मूलपाठ की निष्ठा (fidelity to the source text)और संप्रेषणीय अनुवाद (communicative translation)के बीच का प्रश्न लंबे समय से बहस का विषय रहा है। परंपरागत दृष्टि में यह माना जाता था कि आदर्श अनुवाद वही है जो मूलपाठ के अधिकतम निकट हो, ताकि लेखक की भाषा, शैली और संरचना अक्षुण्ण

बनी रहे। किंतु आधुनिक अनुवाद–चिंतन में यह दृष्टि बदलती दिखाई देती है, जहाँ अनुवाद को पाठककेन्द्रित प्रक्रिया के रूप में देखा जाने लगा है।

इस संदर्भ में यूजीन नाइडा का यह कथन उल्लेखनीय है-

"Translation consists in reproducing in the receptor language the closest natural equivalent of the sourcelanguage message, first in terms of meaning and secondly in terms of style."

(Eugene A. Nida, Toward a Science of Translating)

नाइडा के अनुसार अनुवाद का उद्देश्य शब्दों की यांत्रिक नकल नहीं, बल्कि लक्ष्य भाषा में अर्थ और प्रभाव की पुनर्रचना है। यहाँ 'closest natural equivalent'पर बल दिया गया है, जो यह स्पष्ट करता है कि यदि मूलपाठ की संरचना लक्ष्य भाषा में अस्वाभाविक लगती है, तो उसमें परिवर्तन करना न केवल उचित बल्कि आवश्यक हो जाता है। इस दृष्टि में संप्रेषणीयता मूलपाठ की कठोर निष्ठा से अधिक महत्वपूर्ण हो जाती है।

मूलपाठ की निष्ठा और संप्रेषणीयता के द्वंद्व को लॉरेंस वेन्यूटी ने एक भिन्न दृष्टिकोण से देखा है-

"A translation is never a transparent reproduction of an original text but a rewriting of it that reflects a particular ideology and a set of cultural values."

(Lawrence Venuti, The Scandals of Translation)

वेन्यूटी यह स्पष्ट करते हैं कि अनुवाद एक वैचारिक प्रक्रिया है, जिसमें अनुवादक की सांस्कृतिक स्थिति और दृष्टिकोण अनिवार्य रूप से हस्तक्षेप करते हैं। यदि अनुवाद अत्यधिक प्रवाहपूर्ण और सहज हो, तो वह अनुवादक की उपस्थिति को अदृश्य बना देता है और पाठ को ऐसा प्रस्तुत करता है मानो वह मूल रूप से ही लक्ष्य भाषा में लिखा गया हो। यह स्थिति मूलपाठ की सांस्कृतिक भिन्नता को छिपा सकती है। अतः वेन्यूटी के अनुसार कभी–कभी मूलपाठ की 'अजनबियत' को बनाए रखना भी एक प्रकार की ईमानदार अनुवाद–रणनीति हो सकती है।

इस द्वंद्व को व्यावहारिक उदाहरण से समझा जा सकता है। अंग्रेजी वाक्य-

"Bread is the basic food of the poor."

का शाब्दिक अनुवाद अर्थ को स्पष्ट करता है, किंतु भारतीय सामाजिक–सांस्कृतिक संदर्भ में 'bread'के स्थान पर 'रोटी' शब्द अधिक संप्रेषणीय प्रतीत होता है। यदि अनुवादक 'bread'को यथावत रखता है, तो वह मूलपाठ की निष्ठा निभाता है, किंतु पाठक से दूरी बना लेता है; वहीं 'रोटी' का प्रयोग पाठक के अनुभव से जुड़कर संप्रेषणीयता बढ़ाता है, भले ही वह शब्दशः निष्ठा से थोड़ा हट जाए।

3.4.4 भाव एवं अभिव्यक्ति के स्तर पर

अनुवाद की प्रक्रिया में भाव (emotion/sense) और अभिव्यक्ति (expression/formulation)का स्तर अत्यंत सूक्ष्म और संवेदनशील माना जाता है। किसी भी रचना में भाव केवल कथ्य तक सीमित नहीं होता, बल्कि वह शब्द–चयन, वाक्य–संरचना, लय, विराम और शैली के माध्यम से अभिव्यक्त होता है। इसलिए अनुवादक के सामने चुनौती केवल यह नहीं होती कि वह मूलपाठ का अर्थ समझ ले, बल्कि यह भी होती है कि उस अर्थ से जुड़े भाव को लक्ष्य भाषा में किस प्रकार व्यक्त किया जाए। कई बार भाव और अभिव्यक्ति के बीच का यह अंतर अनुवाद को अत्यंत जटिल बना देता है। इस स्तर की चुनौती को एक साहित्यिक उदाहरण से समझा जा सकता है। अंग्रेजी गद्य में प्रयुक्त निम्नलिखित वाक्य देखें-

"She sat by the window for hours, watching the rainfall, not because she loved the rain, but because it gave her something to do while waiting for a life that never seemed to arrive."

इस वाक्य का शाब्दिक अनुवाद भाव की गहराई को व्यक्त नहीं कर पाता, क्योंकि यहाँ 'waiting for a life'केवल प्रतीक्षा का नहीं, बल्कि अस्तित्वगत रिक्तता और निराशा का संकेत है। हिंदी में इस भाव को संप्रेषित करने के लिए अनुवादक को अभिव्यक्ति में परिवर्तन करना पड़ता है, जैसे-

"वहघंटोंखिड़कीकेपासबैठीरहती, बारिश को गिरते देखती-बारिश से प्रेम के कारण नहीं, बल्कि इसलिए कि वह उसे उस जीवन की प्रतीक्षा में कुछ करने का बहाना दे देती थी, जो कभी आता ही नहीं था।"

यहाँ भाव का स्तर केवल दृश्यवर्णन तक सीमित नहीं है, बल्कि वह मानसिक स्थिति और जीवन-बोध को प्रकट करता है। यदि अनुवादक केवल शब्दों की संरचना को बनाए रखने का प्रयास करता, तो भाव की तीव्रता और उदासी लक्ष्य भाषा में खो सकती थी। अतः भाव की रक्षा के लिए अभिव्यक्ति में आवश्यक लचीलापन अपनाना पड़ा।

भाव एवं अभिव्यक्ति की समस्या कविता के अनुवाद में और अधिक स्पष्ट हो जाती है। उदाहरण के लिए अंग्रेजी कविता की यह पंक्ति देखें-

"Because I could not stop for Death –

He kindly stopped for me."

(Emily Dickinson)

इस पंक्ति में मृत्यु को एक विनम्र अतिथि के रूप में प्रस्तुत किया गया है। इसका सीधा अनुवाद भाव को आंशिक रूप से ही व्यक्त कर पाएगा। हिंदी में इस भाव को व्यक्त करने के लिए अनुवादक को प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति अपनानी पड़ती है, जैसे-

"क्योंकिमैंमृत्युकेलिएठहरनसकी,

मृत्यु स्वयं मेरे लिए ठहर गई।"

यहाँ 'kindly'शब्द केवल शिष्टता का संकेत नहीं देता, बल्कि मृत्यु के प्रति कवयित्री की दार्शनिक स्वीकृति को दर्शाता है। यदि अनुवादक इस शब्द को केवल 'दयालु' के रूप में प्रस्तुत करे, तो भाव का संतुलन बिगड़ सकता है। इसलिए भाव के अनुरूप अभिव्यक्ति का चयन अनिवार्य हो जाता है।

गैर–साहित्यिक पाठों में भी भाव एवं अभिव्यक्ति की समस्या भिन्न रूप में सामने आती है। उदाहरणस्वरूप, अंग्रेजी वाक्य- "The policy has failed to address the human cost of economic reform."

इस वाक्य में 'human cost'केवल आर्थिक शब्दावली नहीं है, बल्कि सामाजिक पीड़ा और मानवीय नुकसान का भाव निहित है। हिंदी अनुवाद में यदि इसे केवल "मानवलागत"कहाजाए, तो भाव क्षीण हो जाता है। अतः अनुवादक को अभिव्यक्ति में विस्तार करते हुए भाव को स्पष्ट करना पड़ता है।

इस संदर्भ में यह भी स्पष्ट होता है कि अनुवादक के सामने केवल शब्दों या वाक्य–संरचनाओं को रूपांतरित करने की चुनौती नहीं होती, बल्कि उसे स्रोत पाठ की भावनात्मक तीव्रता, सौंदर्यात्मक विन्यास और सांस्कृतिक संकेतों को लक्ष्य भाषा में पुनः सृजित करने का दायित्व निभाना पड़ता है। विशेषतः काव्यात्मक और साहित्यिक पाठों में भाव और अभिव्यक्ति एक–दूसरे से इस प्रकार जुड़े होते हैं कि किसी एक की उपेक्षा दूसरे को भी कमजोर कर देती है। यदि अनुवादक केवल भाव को सुरक्षित रखने का प्रयास करता है और अभिव्यक्ति के रूपात्मक पक्ष की अनदेखी करता है, तो अनुवाद प्रभावहीन हो सकता है; वहीं यदि वह केवल लय, छंद या संरचना को बचाने में लगा रहता है, तो भाव की सघनता और अर्थ-गहराई क्षीण हो जाती है।

इसी कारण भाव एवं अभिव्यक्ति के स्तर पर अनुवाद को एक रचनात्मक संतुलन की प्रक्रिया के रूप में देखा जाता है, जहाँ अनुवादक को स्रोत भाषा की सीमाओं और लक्ष्य भाषा की संभावनाओं- दोनों का सजग मूल्यांकन करना पड़ता है। यह संतुलन तभी संभव है जब अनुवादक पाठ की भावात्मक संरचना को समझते हुए यह निर्णय ले कि कहाँ अभिव्यक्ति में परिवर्तन आवश्यक है और कहाँ उसे यथासंभव सुरक्षित रखा जाना चाहिए। इस प्रक्रिया में अनुवादक की संवेदनशीलता,

साहित्यिक समझ और सांस्कृतिक बोध निर्णायक भूमिका निभाते हैं, जिसके बिना भाव और अभिव्यक्ति का सफल समन्वय संभव नहीं हो पाता।

अपनी प्रगति जांचें

प्रश्न 1. अनुवाद में अर्थ और स्वरूप के बीच संतुलन की समस्या को उदाहरण सहित स्पष्ट कीजिए।

प्रश्न 2. संरचनावादी और उत्तर–संरचनावादी भाषा–दृष्टि अनुवाद की प्रक्रिया को किस प्रकार प्रभावित करती है? संक्षेप में विवेचना कीजिए।

प्रश्न 3. अनुवाद की समस्याओं को बहुस्तरीय परिप्रेक्ष्य में देखने की आवश्यकता क्यों है? स्पष्ट कीजिए।

3.4.5 शैली, भाषास्तर और शिल्प के स्तर पर

अनुवाद की प्रक्रिया में शैली, भाषास्तर और शिल्प का स्तर अत्यंत महत्त्वपूर्ण माना जाता है, क्योंकि यही तत्व किसी रचना की विशिष्ट पहचान निर्मित करते हैं। शैली लेखक की वैयक्तिक दृष्टि, उसकी वैचारिक प्रवृत्ति और भाषिक प्रयोगों का समुच्चय होती है, जबकि भाषास्तर से आशय यह है कि लेखक किस प्रकार की भाषा- औपचारिक, अनौपचारिक, बोलचाल की या साहित्यिक- का प्रयोग कर रहा है। शिल्प इन दोनों को एक संरचनात्मक रूप प्रदान करता है, जिसके माध्यम से कथ्य पाठक तक पहुँचता है। अनुवादक के लिए इन तीनों स्तरों को लक्ष्य भाषा में पुनः स्थापित करना एक जटिल चुनौती बन जाता है।

इस स्तर की समस्या को एक गद्यात्मक उदाहरण से समझा जा सकता है। अंग्रेजी उपन्यासों में प्रयुक्त निम्नलिखित अनुच्छेद देखें-

"He spoke in short, clipped sentences, as if every extra word was a burden he refused to carry. His language mirrored his life—controlled, restrained, and stripped of unnecessary ornamentation."

इस अनुच्छेद की शैली संक्षिप्त, नियंत्रित और भावनात्मक संयम से युक्त है। यदि हिंदी अनुवाद में अनुवादक विस्तृत वाक्य–संरचना या अलंकारिक भाषा का प्रयोग कर देता है, तो मूल शैली नष्ट हो जाती है। यहाँ अनुवादक को भाषास्तर और शिल्प दोनों पर ध्यान देते हुए संक्षिप्त और संयत अभिव्यक्ति अपनानी पड़ती है।

इस उदाहरण में कथ्य से अधिक महत्त्व शैली का है। लेखक का जीवन–दृष्टिकोण उसकी भाषा–शैली में परिलक्षित हो रहा है। अनुवादक के लिए चुनौती यह है कि वह शब्दस्तर से आगे बढ़कर उस भाषिक संयम और शिल्पगत सादगी को लक्ष्य भाषा में कैसे रूपांतरित करे। यदि शैली का यह पक्ष सुरक्षित नहीं रहता, तो पाठ का प्रभाव बदल जाता है।

कविता में शैली और शिल्प की समस्या और भी जटिल हो जाती है। उदाहरणस्वरूप अंग्रेजी कविता की यह पंक्तियाँ देखें-

"The silence between their words
said more than their voices ever could."

इस कविता की शैली न्यूनतम शब्दों में गहन भाव प्रकट करने की है। हिंदी में इसका अनुवाद करते समय यदि अनुवादक भाव स्पष्ट करने के लिए अतिरिक्त शब्द जोड़ देता है, तो कविता की सूक्ष्मता और शिल्पगत सादगी नष्ट हो सकती है। यहाँ भाषास्तर को सरल रखते हुए अर्थ–संकेत को सुरक्षित रखना अनुवादक की प्रमुख चुनौती बन जाती है।

शैली और भाषास्तर की समस्या सामाजिक यथार्थ से जुड़े साहित्य में भी सामने आती है। उदाहरण के लिए अंग्रेजी कथाओं में प्रयुक्त बोलचाल की भाषा-

"Ain't nobody gonna listen to people like us."

इस वाक्य की शैली अनौपचारिक और सामाजिक वर्ग–विशेष से जुड़ी हुई है। हिंदी अनुवाद में यदि इसे अत्यधिक शुद्ध या संस्कृतनिष्ठ भाषा में प्रस्तुत किया जाए, तो पात्र का सामाजिक संदर्भ बदल सकता है। अतः अनुवादक को लक्ष्य भाषा में भी समान स्तर की बोलचाल या लोकभाषा का चयन करना पड़ता है।

भाषास्तर और शिल्प के स्तर पर अनुवाद केवल भाषिक कौशल का नहीं, बल्कि साहित्यिक विवेक और सांस्कृतिक समझ का भी परीक्षण करता है। अनुवादक को यह निर्णय करना पड़ता है कि वह किस हद तक लक्ष्य भाषा की स्वाभाविकता अपनाए और किस हद तक मूल शैली की विशेषताओं को बनाए रखे। यही संतुलन अनुवाद को प्रभावी बनाता है और मूल रचना की विशिष्टता को लक्ष्य भाषा में जीवित रखता है।

3.5 भाषिक संरचना से संबंधित चुनौतियाँ

अनुवाद में भाषिक संरचना से संबंधित चुनौतियाँ सबसे मूलभूत और तकनीकी मानी जाती हैं। प्रत्येक भाषा की अपनी व्याकरणिक व्यवस्था, वाक्यरचना, शब्दक्रम और अभिव्यक्तिपद्धति होती है, जो उसे अन्य भाषाओं से भिन्न बनाती है। जब एक भाषा के पाठ को दूसरी भाषा में स्थानांतरित किया जाता है, तब केवल शब्दों का रूपांतरण पर्याप्त नहीं होता, बल्कि पूरे भाषिक ढाँचे को लक्ष्य भाषा की प्रकृति के अनुरूप ढालना पड़ता है। इसी स्तर पर अनुवादक को सर्वाधिक निर्णय लेने पड़ते हैं।

1. **वाक्य-विन्यास से संबंधित चुनौती-**अंग्रेजी और हिंदी की वाक्य-संरचना मूल रूप से भिन्न है। अंग्रेजी में सामान्यतः कर्ता–क्रिया–कर्म (Subject–Verb–Object)क्रम होता है, जबकि हिंदी में कर्ता–कर्म–क्रिया (Subject–Object–Verb)क्रम स्वाभाविक माना जाता है। यदि अंग्रेजी की संरचना को बिना बदले हिंदी में रखा जाए, तो वाक्य कृत्रिम और अस्वाभाविक प्रतीत होता है।

उदाहरण :

The researcher analyzed the data carefully.

हिंदी:

शोधकर्ता ने विश्लेषण किया आँकड़ों का सावधानी से।

संप्रेषणीय हिंदी:

शोधकर्ता ने आँकड़ों का सावधानीपूर्वक विश्लेषण किया।

यहाँ शब्दों से अधिक महत्वपूर्ण वाक्य–क्रम है। हिंदी की स्वाभाविक संरचना को अपनाए बिना अनुवाद प्रभावी नहीं बन सकता।

2. **काल और क्रिया–संरचना की चुनौती**

अंग्रेजी भाषा में कालों की संख्या और उनके सूक्ष्म भेद अत्यधिक हैं, जबकि हिंदी में काल–बोध अधिकतर संदर्भ और सहायक शब्दों के माध्यम से होता है। कई बार अंग्रेजी के अलग–अलग काल हिंदी में एक ही क्रिया–रूप में समाहित हो जाते हैं।

उदाहरण:

She had been waiting for hours before the train arrived.

हिंदी अनुवाद:

ट्रेन आने से पहले वह कई घंटों से प्रतीक्षा कर रही थी।

अंग्रेजी का past perfect continuous tenseहिंदी में एक सरल क्रिया–रूप द्वारा व्यक्त किया गया है। यहाँ संरचनात्मक समानता संभव नहीं, केवल अर्थ–समानता ही लक्ष्य है।

3. वाच्य परिवर्तन की समस्या

अंग्रेजी में कर्मवाच्य (Passive Voice)का प्रयोग बहुत सामान्य है, विशेषकर अकादमिक और प्रशासनिक लेखन में। हिंदी में, इसके विपरीत, कर्तृवाच्य अधिक सहज और प्रभावी माना जाता है।

उदाहरण : The proposal was rejected by the committee.

हिंदी (कर्मवाच्य):

प्रस्ताव समिति द्वारा अस्वीकृत किया गया।

हिंदी (कर्तृवाच्य):

समिति ने प्रस्ताव अस्वीकार कर दिया।

दूसरा अनुवाद हिंदी की प्रवृत्ति के अधिक अनुकूल है। इसलिए अनुवादक को वाच्यपरिवर्तन का निर्णय लेना पड़ता है।

4. लिग और वचन आधारित संरचनात्मक समस्या

हिंदी में लिंग और वचन का प्रभाव केवल संज्ञा पर ही नहीं, बल्कि क्रिया और विशेषण पर भी पड़ता है, जबकि अंग्रेजी में यह प्रभाव बहुत सीमित होता है।

उदाहरण : The child was tired.

हिंदी में चुनौती:

बच्चा थका था / बच्ची थकी थी

अंग्रेजी वाक्य में लिंग स्पष्ट नहीं है, किंतु हिंदी में अनुवाद करते समय अनुवादक को संदर्भ के आधार पर निर्णय लेना पड़ता है। यह संरचनात्मक विवशता अनुवादक के लिए चुनौती बन जाती है।

5. पूर्वसर्ग–उत्तरसर्ग की चुनौती

अंग्रेजी में in, on, at, of, forजैसे पूर्वसर्ग अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, जबकि हिंदी में इनके लिए उत्तरसर्ग या पूरी संरचना बदलनी पड़ती है।

उदाहरण :

He is interested in politics.

हिंदी अनुवाद:

उसे राजनीति में रुचि है।

यहाँ interested inका शब्द प्रति शब्द अनुवाद संभव नहीं है। पूरी अभिव्यक्ति को हिंदी की संरचना के अनुसार ढालना पड़ता है।

6. संयुक्त और जटिल वाक्यों की समस्या

अंग्रेजी में लंबे और जटिल वाक्य सामान्य हैं, जबकि हिंदी में अत्यधिक लंबाई पाठ को बोझिल बना देती है।

उदाहरण :

When the policy was implemented, many problems emerged that had not been anticipated earlier.

हिंदी अनुवाद:

नीति लागू होने पर कई ऐसी समस्याएँ सामने आईं, जिनकी पहले कल्पना नहीं की गई थी।

यहाँ अंग्रेजी की जटिल संरचना को सरल, प्रवाहपूर्ण हिंदी में रूपांतरित किया गया है।

3.6 सांस्कृतिक अंतर और अनुवाद की समस्या

अनुवाद की प्रक्रिया में सांस्कृतिक अंतर एक अत्यंत महत्वपूर्ण और जटिल चुनौती के रूप में सामने आता है। भाषा किसी समाज की संस्कृति, जीवन–शैली, विश्वास, मूल्य और ऐतिहासिक अनुभवों की वाहक होती है। जब किसी पाठ का अनुवाद एक सांस्कृतिक संदर्भ से दूसरी सांस्कृतिक व्यवस्था में किया जाता है, तो केवल शब्दों का रूपांतरण पर्याप्त नहीं होता। सांस्कृतिक प्रतीकों, सामाजिक व्यवहारों और मूल्य–व्यवस्थाओं की भिन्नता के कारण अर्थ–विकृति की संभावना उत्पन्न हो जाती है। अनुवादक को इन अंतरों को समझते हुए लक्ष्य भाषा में समुचित अर्थ–संप्रेषण करना पड़ता है।

1. संस्कृति–विशेष शब्दों की समस्या

कुछ शब्द केवल किसी विशेष संस्कृति, ऐतिहासिक अनुभव या सामाजिक परंपरा से जुड़े होते हैं और उनका प्रत्यक्ष भाषिक समकक्ष दूसरी भाषा में उपलब्ध नहीं होता। ऐसे शब्दों का अर्थ केवल शब्दकोशीय नहीं होता, बल्कि उनके साथ एक पूरा सांस्कृतिक संदर्भ जुड़ा होता है।

उदाहरण:

Thanksgiving is celebrated with family gatherings.

इस वाक्य में Thanksgiving केवल एक पर्व का नाम नहीं है, बल्कि यह अमेरिकी इतिहास, पारिवारिक मूल्य और सामूहिक स्मृति से जुड़ा हुआ है। हिंदी में इसका कोई सीधा सांस्कृतिक समकक्ष नहीं है। यदि अनुवादक इसे केवल "धन्यवाददिवस"कहदे, तो इसका सामाजिक–सांस्कृतिक अर्थ नष्ट हो जाता है। अतः अनुवादक को या तो शब्द को यथावत रखना पड़ता है या संक्षिप्त सांस्कृतिक व्याख्या जोड़नी पड़ती है, जिससे पाठक उसके महत्व को समझ सके।

2. सामाजिक परंपराओं और रीति–रिवाजों का अंतर

प्रत्येक समाज की अपनी सामाजिक परंपराएँ और व्यवहारिक मान्यताएँ होती हैं, जो भाषा में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्रतिबिंबित होती हैं।

उदाहरण:

She moved out of her parents' house after turning eighteen.

पश्चिमी समाज में यह कथन स्वतंत्रता और आत्मनिर्भरता का सामान्य संकेत है, जबकि भारतीय सामाजिक संदर्भ में यह व्यवहार असामान्य या अस्वीकार्य माना जा सकता है। यदि अनुवादक इस वाक्य को बिना सामाजिक संदर्भ समझे अनूदित करता है, तो पाठक के लिए इसका निहितार्थ स्पष्ट नहीं होगा। इसलिए अनुवादक को यह समझना आवश्यक होता है कि यह कथन केवल व्यक्तिगत निर्णय नहीं, बल्कि एक विशेष सामाजिक संरचना का प्रतिनिधित्व करता है।

3. पारिवारिक संबंधों की भिन्नता

भिन्न संस्कृतियों में पारिवारिक संबंधों की संरचना और उसके लिए प्रयुक्त शब्दावली में पर्याप्त अंतर पाया जाता है।

उदाहरण:

My uncle lives with us.

अंग्रेजी में uncle एक सामान्य शब्द है, जबकि हिंदी में चाचा, मामा, फूफा, मौसा आदि के लिए अलग–अलग शब्द हैं। यदि संदर्भ स्पष्ट न हो, तो सटीक हिंदी अनुवाद करना कठिन हो जाता है। यहाँ अनुवादक को पाठ के संदर्भ, सांस्कृतिक परिवेश और पारिवारिक संरचना को ध्यान में रखते हुए निर्णय लेना पड़ता है। इस प्रकार पारिवारिक संबंधों की भिन्नता अनुवाद में अर्थ–अस्पष्टता की समस्या उत्पन्न कर सकती है।

4. धार्मिक और आध्यात्मिक अवधारणाएँ

धार्मिक और आध्यात्मिक शब्द अत्यंत गहन सांस्कृतिक और दार्शनिक अर्थ लिए होते हैं, जिन्हें शब्द प्रति शब्द अनुवाद द्वारा व्यक्त नहीं किया जा सकता।

उदाहरण:

Karma determines one's destiny.

यहाँ Karma का अर्थ केवल "action" नहीं है, बल्कि इसके साथ भारतीय दर्शन में कर्म–फल सिद्धांत, पुनर्जन्म और नैतिक उत्तरदायित्व की अवधारणा जुड़ी है। यदि अनुवादक इस शब्द को केवल "कार्य"केरूपमेंअनूदितकरताहै, तो उसका दार्शनिक अर्थ नष्ट हो जाता है। इसलिए ऐसे शब्दों का अनुवाद करते समय सांस्कृतिक और वैचारिक पृष्ठभूमि को समझना अनिवार्य होता है।

5. मुहावरे और लोकोक्तियाँ

मुहावरे और लोकोक्तियाँ किसी समाज के सांस्कृतिक अनुभवों और जीवन–दृष्टि से निर्मित होती हैं।

उदाहरण:

Don't spill the beans.

इस मुहावरे का शाब्दिक अनुवाद अर्थहीन होगा। इसका वास्तविक अर्थ "गुप्तबातप्रकटनकरना" है । हिंदीमेंइसकाभावानुवाद "राज़मतखोलो" अधिकउपयुक्तहै। यहउदाहरण दर्शाताहै किमुहावरोंका अनुवादशब्दोंकेआधारपरनहीं, बल्कि भाव और संदर्भ के आधार पर किया जाना चाहिए। अन्यथा अनुवाद हास्यास्पद या भ्रमपूर्ण बन सकता है।

6. खान–पान और वस्त्रों से जुड़े शब्द

भोजन और वस्त्र किसी भी संस्कृति की विशिष्ट पहचान होते हैं और उनसे जुड़े शब्द अक्सर अनुवाद में कठिनाई उत्पन्न करते हैं।

उदाहरण:

She wore a kimono during the ceremony.

Kimono जापानी संस्कृति का विशिष्ट परिधान है और इसका कोई सटीक हिंदी पर्याय उपलब्ध नहीं है। यदि अनुवादक इसे किसी सामान्य वस्त्र के रूप में प्रस्तुत करता है, तो सांस्कृतिक विशिष्टता समाप्त हो जाती है। अतः ऐसे शब्दों को प्रायः यथावत रखा जाता है या संक्षिप्त व्याख्या के साथ प्रस्तुत किया जाता है, जिससे पाठक उस सांस्कृतिक संदर्भ को समझ सके।

7. सामाजिक मूल्य और नैतिक दृष्टि

प्रत्येक समाज की अपनी मूल्यव्यवस्था और नैतिक दृष्टि होती है, जो भाषा में परिलक्षित होती है।

उदाहरण:

Individual freedom is above all else.

यह कथन व्यक्तिवादी समाज की मानसिकता को दर्शाता है, जहाँ व्यक्तिगत स्वतंत्रता सर्वोपरि मानी जाती है। सामूहिक संस्कृति वाले समाजों में इस कथन का अर्थ अलग ढंग से ग्रहण किया जा सकता है। यदि अनुवादक इन सांस्कृतिक मूल्यों को समझे बिना अनुवाद करता है, तो पाठ का आशय विकृत हो सकता है। इसलिए सामाजिक मूल्यों की समझ अनुवाद में अत्यंत आवश्यक होती है।

8. हास्य और व्यंग्य की समस्या

हास्य और व्यंग्य अत्यंत संस्कृति–निर्भर होते हैं और एक समाज में जो हास्यास्पद है, वह दूसरे समाज में प्रभावहीन हो सकता है।

उदाहरण:

British humour is often dry and ironic.

ब्रिटिश व्यंग्य सूक्ष्म और संकेतात्मक होता है, जिसे शब्द प्रति शब्द अनुवाद द्वारा हिंदी में प्रभावी ढंग से प्रस्तुत करना कठिन है। अनुवादक को यहाँ सांस्कृतिक अनुकूलन करना पड़ता है, ताकि व्यंग्य का भाव लक्ष्य भाषा के पाठक तक पहुँच सके। अन्यथा हास्य का प्रभाव समाप्त हो जाता है।

9. प्रतीकों और सांस्कृतिक संकेतों की समस्या

प्रतीकों के अर्थ विभिन्न संस्कृतियों में भिन्न–भिन्न होते हैं।

उदाहरण:

The white dress symbolized purity.

पश्चिमी संस्कृति में सफेद रंग पवित्रता और विवाह का प्रतीक है, जबकि भारतीय संस्कृति में सफेद रंग शोक और वैराग्य से भी जुड़ा है। यदि अनुवादक इस सांस्कृतिक अंतर को न समझे, तो प्रतीक का अर्थ गलत रूप में ग्रहण किया जा सकता है। इसलिए प्रतीकों का अनुवाद सांस्कृतिक संदर्भ को ध्यान में रखकर करना आवश्यक होता है।

10. इतिहास और सामूहिक स्मृति से जुड़ी समस्या

इतिहास से जुड़े संदर्भ किसी समाज की सामूहिक स्मृति और पहचान का निर्माण करते हैं।

उदाहरण:

The Civil War changed the course of the nation.

यह कथन केवल एक ऐतिहासिक घटना का उल्लेख नहीं करता, बल्कि उससे जुड़े राजनीतिक, सामाजिक और भावनात्मक प्रभावों को भी संकेतित करता है। यदि पाठक उस इतिहास से परिचित न हो, तो अनुवाद अस्पष्ट हो सकता है। अतः ऐसे संदर्भों के अनुवाद में ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का संक्षिप्त संकेत या व्याख्या आवश्यक हो जाती है।

अपनी प्रगति जांचें

प्रश्न 4. विषय–वस्तु और ज्ञान–क्षेत्र के स्तर पर अनुवाद में आने वाली प्रमुख चुनौतियों का वर्णन कीजिए।

प्रश्न 5. सामाजिक–सांस्कृतिक संदर्भ अनुवाद को किस प्रकार जटिल बनाते हैं? उदाहरण सहित स्पष्ट कीजिए।

प्रश्न 6. भाषिक संरचना और सांस्कृतिक अंतर अनुवादक के लिए किन–किन समस्याओं को जन्म देते हैं? संक्षेप में लिखिए।

3.7 सारांश

इस इकाई में अनुवाद से जुड़ी भाषाई और सांस्कृतिक चुनौतियों का बहुस्तरीय विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है। इसमें स्पष्ट किया गया है कि अनुवाद केवल शब्दों का रूपांतरण नहीं, बल्कि अर्थ, संदर्भ, भाव, शैली और संस्कृति के समन्वय की जटिल प्रक्रिया है। संरचनावादी और उत्तर–संरचनावादी दृष्टियों के माध्यम से भाषा और अर्थ की गतिशीलता को समझाया गया है। साथ हीविषय–वस्तु, सामाजिक–सांस्कृतिकसंदर्भ, मूलपाठ की निष्ठा बनाम संप्रेषणीयता, भाव–अभिव्यक्ति, शैली, भाषिक संरचना और सांस्कृतिक अंतर जैसे स्तरों पर आने वाली समस्याओं को उदाहरणों सहित स्पष्ट किया गया है। यह इकाई अनुवाद को एक विवेकपूर्ण, सृजनात्मक और उत्तरदायी कार्य के रूप में स्थापित करती है ।

✓ 3.8 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)

प्रश्न 1 का उत्तर: अर्थ और स्वरूप के बीच संतुलन अनुवाद की एक प्रमुख चुनौती है। अनुवादक को यह निर्णय लेना पड़ता है कि कहाँ भाव और आशय को प्राथमिकता दी जाए तथा कहाँ मूल भाषा की संरचना और शैली को सुरक्षित रखा जाए। इस विषय की विस्तृत चर्चा के लिए इकाई 3.2 का अवलोकन करें।

प्रश्न 2 का उत्तर: संरचनावादी और उत्तर–संरचनावादी भाषा–दृष्टि अनुवाद को अलग–अलग रूप में प्रभावित करती है। संरचनावाद अर्थ की स्थिरता पर बल देता है, जबकि उत्तर–संरचनावाद संदर्भगत और बहुअर्थक व्याख्या को महत्व देता है। संबंधित विवेचन के लिए इकाई 3.3 देखें।

प्रश्न 3 का उत्तर: अनुवाद की समस्याएँ केवल एक स्तर तक सीमित नहीं होतीं, बल्कि विषय–वस्तु, संस्कृति, शैली और पाठकीय अपेक्षाओं जैसे अनेक स्तरों पर उत्पन्न होती हैं। इसलिए अनुवाद को बहुस्तरीय परिप्रेक्ष्य में समझना आवश्यक है। इस संदर्भ में इकाई 3.4 उपयोगी है।

प्रश्न 4 का उत्तर: विषय–वस्तु और ज्ञान–क्षेत्र के अनुसार अनुवाद की प्रकृति बदल जाती है। साहित्यिक और तकनीकी पाठों की अनुवाद–रणनीतियाँ भिन्न होती हैं। इस विषय की स्पष्ट समझ के लिए इकाई 3.4.1 का अध्ययन करें।

प्रश्न 5 का उत्तर: सामाजिक–सांस्कृतिक संदर्भ भाषा में अंतर्निहित होते हैं और उनका सीधा अनुवाद प्रायः संभव नहीं होता। सांस्कृतिक संकेतों की अनदेखी से अर्थ–विकृति हो सकती है। इस विषय पर विस्तृत चर्चा इकाई 3.4.2 में प्रस्तुत है।

प्रश्न 6 का उत्तर: भाषिक संरचना और सांस्कृतिक अंतर अनुवादक के लिए वाक्य–विन्यास, अर्थ–निर्णय और अभिव्यक्ति से जुड़ी समस्याएँ उत्पन्न करते हैं। इन समस्याओं की व्याख्या के लिए इकाई 3.5 और 3.6 का अवलोकन करना उपयोगी होगा।

⑦ 3.9 अधिक जानने के लिए पढ़ें

- Newmark, Peter. (1988). A textbook of translation. London: Prentice Hall.
- Toury, Gideon. (1995). Descriptive translation studies and beyond. Amsterdam: John Benjamins.
- Hatim, Basil, & Mason, Ian. (1997). The translator as communicator. London: Routledge.
- Lefevere, André. (1992). Translation, rewriting, and the manipulation of literary fame. London: Routledge.
- Halliday, M. A. K. (1978). Language as social semiotic: The social interpretation of language and meaning. London: Edward Arnold.
- Koller, Werner. (1989). Equivalence in translation theory. In A. Chesterman (Ed.), Readings in translation theory. Helsinki: Finn Lectura.
- शर्मा, रामकुमार. (2010). अनुवाद: भाषा, संस्कृति और समाज. नई दिल्ली: प्रभात प्रकाशन।
- गोपीनाथन, जी. (2012). अनुवाद अध्ययन: स्वरूप और क्षेत्र. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन।
- सेठी, हरीश कुमार. (2015). तकनीकी, प्रशासनिक एवं मीडिया अनुवाद. नई दिल्ली: ज्ञान प्रकाशन।
- सिंह, अंजना. (2019). संस्कृति और अनुवाद. इलाहाबाद: लोकभारती प्रकाशन।

⑦ 3.10 अभ्यास प्रश्न

(क) संक्षिप्त प्रश्नों के उत्तर लिखिए—

1. अनुवाद में अर्थ और स्वरूप के बीच संतुलन बनाए रखना क्यों आवश्यक माना जाता है?
2. संरचनावादी दृष्टिकोण भाषा और अर्थ को किस प्रकार परिभाषित करता है?
3. उत्तर–संरचनावादी विचारधारा अनुवाद में अर्थ की स्थिरता को क्यों अस्वीकार करती है?
4. सामाजिक–सांस्कृतिक संदर्भ अनुवाद की प्रक्रिया को किस प्रकार प्रभावित करते हैं?
5. मूलपाठ की निष्ठा और संप्रेषणीय अनुवाद के बीच द्वंद्व क्यों उत्पन्न होता है?

(ख) निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लिखिए—

1. अर्थ और स्वरूप से संबंधित अनुवादचुनौतियों को उपयुक्त उदाहरणों सहित समझाइए।
2. संरचनावादी एवं उत्तर–संरचनावादी भाषा–अवधारणाओं के संदर्भ में अनुवाद की प्रक्रिया का विश्लेषण प्रस्तुत कीजिए।
3. अनुवाद की समस्याओं को बहुस्तरीय परिप्रेक्ष्य में देखने की आवश्यकता पर विचार प्रस्तुत करें।
4. विषय–वस्तु और ज्ञान–क्षेत्र के स्तर पर अनुवाद में उत्पन्न होने वाली प्रमुख कठिनाइयों का विस्तृत चित्रण दें।
5. सामाजिक–सांस्कृतिक अंतर अनुवाद को किस प्रकार जटिल बनाते हैं, इसे उदाहरणों के माध्यम से स्पष्ट रूप में समझाइए।
6. भाषिक संरचना से जुड़ी चुनौतियाँ- जैसे वाक्य–विन्यास, काल, वाच्य और लिंग- अनुवाद की प्रक्रिया को किस प्रकार प्रभावित करती हैं, इसका समग्र मूल्यांकन करें।

शब्दकोश

स्वरूप : संरचना, संप्रेषणीयता : बोधगम्यता, बहुअर्थकता : अर्थ–विविधता, संकेतक : शब्द–रूप, संकेतित : आशय, विमर्श : वैचारिक भाषा, निष्ठा : प्रतिबद्धता, अभिव्यक्ति : प्रस्तुति, संरचनावाद : भाषासिद्धांत, उत्तर–संरचनावाद : बहुअर्थदृष्टि, समतुल्यता : समानता, परिप्रेक्ष्य : दृष्टिकोण, संदर्भगत : प्रसंग–आधारित, संवेदनशीलता : भावबोध, शिल्प : रूपविन्यासइत्यादि ।

*** ***** ***

इकाई 4 - भारतीय अनुवाद- चिंतनधारा

इकाई की रुपरेखा

4.0 उद्देश्य
4.1 प्रस्तावाना
4.2 भारतीय अनुवाद की प्रारंभिक चिंतनधारा
4.3 प्राचीन भारत का राजकाज और अनुवाद चिंतन
4.4 मुगलकालीन अनुवाद चिन्तक
4.5 देशीयअनुवादचिन्तक की कुछ आतंरिक धाराएं
4.6 सारांश
4.7 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)
4.8 अधिक जानने के लिए पढ़ें
4.9 अभ्यास प्रश्न

4.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन से आप –

- भारतीयपरंपरामेंअनुवादकीअवधारणाऔरविकासकोसमझसकेंगे।
- भारतीयअनुवाद-चिंतनमेंनिहितभाषिक, सांस्कृतिक और दार्शनिक दृष्टियों को पहचान सकेंगे।
- पाश्चात्यऔरभारतीयअनुवाद-दृष्टियोंकेबीचकेमौलिकअंतरकोस्पष्टकरसकेंगे।
- भारतीयसंदर्भमेंअनुवाद को सृजनात्मक और पुनर्रचनात्मक प्रक्रिया के रूप में समझ सकेंगे।
- भारतीयअनुवादपरंपरामेंअर्थ, भाव और संदर्भ की भूमिका का विश्लेषण कर सकेंगे।

4.1 प्रस्तावाना

भारतीय बौद्धिक परंपरा में अनुवाद का इतिहास अत्यंत प्राचीन और समृद्ध रहा है। भारत में अनुवाद को केवल भाषाओं के बीच शब्दों के स्थानांतरण के रूप में नहीं देखा गया, बल्कि उसे ज्ञान, संस्कृति और परंपरा के निरंतर प्रवाह का माध्यम माना गया है। वैदिक काल से लेकर मध्यकाल और आधुनिक युग तक भारतीय चिंतनधारा में अनुवाद के विविध रूप देखने को मिलते हैं- जैसे भाष्य, टीका, अनुकरण, रूपांतरण और पुनर्सृजन। इन सभी रूपों में मूल उद्देश्य अर्थ और भाव को सुरक्षित रखते हुए उसे नए भाषिक और सांस्कृतिक संदर्भ में जीवंत बनाए रखना रहा है।

भारतीय अनुवाद-चिंतन में 'मूल' और 'अनुवाद' के बीच कठोर विभाजन नहीं मिलता। यहाँ अनुवाद को एक सृजनात्मक प्रक्रिया के रूप में स्वीकार किया गया है, जिसमें अनुवादक को पाठ के भाव, आशय और सांस्कृतिक संदर्भ के अनुसार स्वतंत्रता प्राप्त होती है। इसी कारण भारतीय परंपरा में रामायण, महाभारत और पुराणों के अनेक भाषिक रूपांतर देखने को मिलते हैं, जिन्हें स्वतंत्र साहित्यिक कृतियों के रूप में मान्यता प्राप्त है।

इस इकाई में भारतीय अनुवाद-चिंतन की इसी विशिष्ट दृष्टि का अध्ययन किया जाएगा, ताकि यह स्पष्ट हो सके कि भारतीय संदर्भ में अनुवाद न तो यांत्रिक प्रक्रिया है और न ही केवल भाषिक अभ्यास, बल्कि वह सांस्कृतिक, दार्शनिक और सृजनात्मक संवाद का एक सशक्त माध्यम है।

4.2 भारतीय अनुवाद की प्रारंभिक चिंतनधारा

भारतीय अनुवाद की प्रारंभिक चिंतनधारा का विकास किसी एक काल, ग्रंथ या सिद्धांत तक सीमित नहीं रहा, बल्कि यह भारतीय ज्ञान–परंपरा के दीर्घ ऐतिहासिक क्रम में क्रमशः निर्मित हुई। प्राचीन भारत में अनुवाद को आधुनिक अर्थों में केवल "भाषांतरण"नहींमानागया, बल्कि उसे अर्थ–व्याख्या, भाव–विस्तार और ज्ञान–संप्रेषण की प्रक्रिया के रूप में देखा गया। इसी कारण भारतीय परंपरा में अनुवाद और भाष्य, टीका, व्याख्या तथा विवेचन के बीच स्पष्ट विभाजन नहीं मिलता।

वैदिक साहित्य के संदर्भ में यह चिंतन विशेष रूप से दृष्टिगोचर होता है। ऋग्वेद, यजुर्वेद और सामवेद जैसे ग्रंथों के मंत्र सामान्य जन के लिए सहज नहीं थे, इसलिए उसके अर्थ को स्पष्ट करने हेतु ब्राह्मण, आरण्यक और उपनिषदों की रचना हुई। यह प्रक्रिया शब्द प्रति शब्द अनुवाद न होकर तात्पर्य और दार्शनिक आशय की व्याख्या थी। उदाहरणस्वरूप, शतपथ ब्राह्मण में यज्ञ–विधियों और मंत्रों के अर्थ का जो विस्तार मिलता है, वह मूल वैदिक वाक्यों का भाषिक अनुवाद नहीं, बल्कि उनके सांस्कृतिक और दार्शनिक अर्थ का पुनर्पाठ है। यही प्रवृत्ति भारतीय अनुवाद–चिंतन की आधारशिला मानी जा सकती है। भाष्य–परंपरा इस चिंतन को और अधिक सुदृढ़ करती है। आचार्य सायण द्वारा वेदों पर रचित भाष्य इस दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। सायण का कार्य केवल वैदिक शब्दों का पर्याय प्रस्तुत करना नहीं था, बल्कि उन्होंने मंत्रों के अर्थ को तत्कालीन बौद्धिक, धार्मिक और सामाजिक संदर्भ में समझाने का प्रयास किया। इसी प्रकार पतंजलि के महाभाष्य में व्याकरणिक सूत्रों की जो व्याख्या मिलती है, वह भाषा–संरचना के साथ–साथ अर्थ–निर्माण की प्रक्रिया को भी स्पष्ट करती है। यहाँ अनुवाद और व्याख्या एक दूसरे से अलग नहीं दिखाई देते। दर्शन–ग्रंथों में भी यही प्रवृत्ति देखने को मिलती है। शंकराचार्य, वाचस्पति मिश्र और कुमारिल भट्ट जैसे आचार्यों ने उपनिषदों, ब्रह्मसूत्रों और अन्य दार्शनिक ग्रंथों पर जो भाष्य लिखे, वे मूल ग्रंथ के शब्दों को ज्यों का त्यों रखने की अपेक्षा उनके तात्त्विक आशय को स्पष्ट करने पर केंद्रित थे। उदाहरण के लिए ब्रह्मसूत्र पर शंकराचार्य का भाष्य केवल सूत्रों का अनुवाद नहीं है, बल्कि अद्वैत वेदांत की दार्शनिक स्थापना का माध्यम भी है। इस प्रकार अनुवाद यहाँ वैचारिक परंपरा के विस्तार का साधन बन जाता है।महाकाव्य–परंपरा में भारतीय अनुवादचिंतन का एक भिन्न रूप सामने आता है। रामायण और महाभारत जैसी कृतियाँ केवल संस्कृत तक सीमित नहीं रहीं, बल्कि विभिन्न भाषाओं और क्षेत्रों में पुनः रची गईं। इन पुनर्रचनाओं में कथा–संरचना को सुरक्षित रखते हुए भाषा, भाव और सांस्कृतिक परिवेश को स्थानीय संदर्भों के अनुसार ढाला गया। यह प्रक्रिया दर्शाती है कि भारतीय परंपरा में अनुवाद को सृजनात्मक स्वतंत्रता के साथ स्वीकार किया गया। यहाँ मूल पाठ की निष्ठा का अर्थ शब्दानुकरण नहीं, बल्कि कथा और मूल्य-संरचना की निरंतरता था।बौद्ध और जैन साहित्य में भी प्रारंभिक अनुवाद–चिंतन स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। पालि और प्राकृत भाषाओं में रचित ग्रंथों का संस्कृत तथा अन्य भाषाओं में रूपांतरण इस उद्देश्य से किया गया कि धार्मिक और नैतिक सिद्धांत अधिक व्यापक समाज तक पहुँच सकें। बौद्ध आगमों के विभिन्न भाषिक संस्करण इस बात का प्रमाण हैं कि अर्थ–संप्रेषण को शब्द–संरचना से अधिक महत्व दिया गया। यहाँ अनुवाद का उद्देश्य दार्शनिक बोध और आचार–संहिता को जनसामान्य के लिए ग्राह्य बनाना था।

4.3 प्राचीन भारत का शासन-प्रणालीऔर अनुवाद चिंतन

प्राचीन भारत की शासन–प्रणाली का स्वरूप केवल राजनीतिक सत्ता के संचालन तक सीमित नहीं था, बल्कि वह ज्ञान, धर्म और सामाजिक व्यवस्था के संरक्षण तथा प्रसार से गहराई से जुड़ी हुई थी। इस बहुआयामी शासन–व्यवस्था में अनुवाद एक ऐसी बौद्धिक प्रक्रिया के रूप में उभरता है, जिसके माध्यम से राज्य की नीतियाँ, धार्मिक सिद्धांत और नैतिक अवधारणाएँ विविध भाषायी समुदायों तक पहुँचाई जाती थीं। बहुभाषिक समाज में शासन के प्रभावी संचालन के लिए यह आवश्यक था कि ज्ञान और आदेश केवल एक अभिजात भाषा तक सीमित न रहें, बल्कि जनभाषाओं में भी संप्रेषित हों।

मौर्यकालीन शासन में यह प्रवृत्ति विशेष रूप से दिखाई देती है। सम्राट अशोक के शिलालेख, जो ब्राह्मी, खरोष्ठी और अन्य लिपियों में उत्कीर्ण किए गए, इस तथ्य का प्रमाण हैं कि शासन ने भाषा और लिपि के माध्यम से व्यापक जनसमुदाय से संवाद स्थापित किया। धम्मलेख केवल राजनीतिक घोषणाएँ नहीं थे, बल्कि नैतिक उपदेशों का ऐसा रूपांतरण थे, जिसमें मूल बौद्ध अवधारणाओं को सरल, जनसुलभ भाषा में प्रस्तुत किया गया। यहाँ अनुवाद शब्दानुवाद न होकर भाव और नीति के स्तर पर किया गया संप्रेषण था।

गुप्तकाल में शासन और अनुवादचिंतन का संबंध विद्वत् परंपरा के माध्यम से और अधिक सुदृढ़ हुआ। इस काल में मनुस्मृति, याज्ञवल्क्य स्मृति और नारद स्मृति जैसे धर्मशास्त्रीय ग्रंथों की टीकाएँ और व्याख्याएँ तैयार की गईं। मेधातिथि की मनुस्मृति-टीका इसका प्रमुख उदाहरण है, जहाँ मूल श्लोकों के अर्थ को समकालीन सामाजिक और प्रशासनिक संदर्भों के अनुरूप स्पष्ट किया गया। यह प्रक्रिया शासन की न्यायिक और नैतिक आवश्यकताओं से जुड़ी हुई थी और इसे व्याख्यात्मक अनुवाद के रूप में देखा जा सकता है।

राजदरबारों में अनुवाद-चिंतन की भूमिका केवल धर्मशास्त्रों तक सीमित नहीं रही। अर्थशास्त्र जैसे ग्रंथ, जिन्हें कौटिल्य से जोड़ा जाता है, शासन, कूटनीति और प्रशासनिक नीति का आधार बने। इस ग्रंथ की विभिन्न टीकाएँ और व्याख्याएँ यह दर्शाती हैं कि प्रशासनिक ज्ञान को विभिन्न संदर्भों में पुनः प्रस्तुत किया गया। शासन की व्यावहारिक आवश्यकताओं के अनुसार अर्थ और नीति को स्पष्ट करना अनुवादचिंतन का ही एक रूप था।

प्राचीन भारत में अंतरराज्यीय और अंतरसांस्कृतिक संपर्क भी अनुवादचिंतन को प्रोत्साहित करने वाले तत्व रहे। विदेशी दूतों, यात्रियों और विद्वानों के आगमन से शासन को बाहरी संस्कृतियों के साथ संवाद स्थापित करना पड़ा। चीनी यात्रियों फाह्यान और ह्वेनसांग के यात्रा-वृत्तांत इस बात के उदाहरण हैं कि कैसे भारतीय ज्ञान, प्रशासनिक व्यवस्था और धार्मिक विचारों को अन्य भाषाओं में समझाया और रूपांतरित किया गया। इन विवरणों में अनुवाद केवल भाषिक नहीं, बल्कि सांस्कृतिक व्याख्या का माध्यम बन गया।

बौद्ध शासन–संरक्षण के अंतर्गत अनुवाद की परंपरा को विशेष प्रोत्साहन मिला। त्रिपिटक साहित्य का पालि और संस्कृत से चीनी तथा तिब्बती भाषाओं में अनुवाद इस प्रक्रिया का महत्वपूर्ण उदाहरण है। कुमारजीव द्वारा किए गए अनुवादों में यह स्पष्ट दिखाई देता है कि मूल बौद्ध अवधारणाओं को लक्ष्य संस्कृति की बौद्धिक संरचना के अनुरूप ढाला गया। यह कार्य शासन के संरक्षण और समर्थन के बिना संभव नहीं था, जिससे यह स्पष्ट होता है कि राज्य और अनुवादचिंतन परस्पर संबद्ध थे।

जैन परंपरा में भी शासन और अनुवादचिंतन का घनिष्ठ संबंध दिखाई देता है। आगम साहित्य की प्राकृत भाषा से संस्कृत और आगे चलकर अपभ्रंश तथा आधुनिक भाषाओं में व्याख्या की गई। तत्त्वार्थसूत्र और उसकी टीकाएँ- जैसे उमास्वाति की परंपरा- इस बात का उदाहरण हैं कि धार्मिक-दार्शनिक ज्ञान को व्यापक समाज तक पहुँचाने के लिए अनुवाद और व्याख्या को अनिवार्य माना गया। यह प्रक्रिया शासन द्वारा संरक्षित धार्मिक संस्थानों के माध्यम से संचालित होती रही।

महत्वपूर्ण बिंदु

भारतीय परंपरा में अनुवाद को केवल भाषाओं के बीच शब्दों के स्थानांतरण के रूप में नहीं देखा गया, बल्कि उसे ज्ञान, संस्कृति और भाव के सतत प्रवाह का माध्यम माना गया है। यहाँ अनुवाद भाष्य, टीका, व्याख्या, रूपांतरण और पुनर्सृजन जैसी विविध प्रक्रियाओं के माध्यम से विकसित हुआ, जिनका उद्देश्य मूल ग्रंथ के तात्त्विक आशय और सांस्कृतिक संदर्भ को नए भाषिक परिवेश में जीवंत बनाए रखना रहा है।

4.4 मुगलकालीन अनुवाद चिन्तक

भारतीय अनुवाद परंपरा के इतिहास में मुगलकाल एक ऐसे निर्णायक मोड़ के रूप में उभरता है, जहाँ अनुवाद केवल भाषाओं के बीच शब्दों के स्थानांतरण की प्रक्रिया न रहकर शासन, संस्कृति, धर्म, दर्शन, ज्ञान-विज्ञान और सामाजिक संरचना के बीच सक्रिय संवाद का सशक्त माध्यम बन गया। इस काल में अनुवाद को न तो केवल साहित्यिक अभ्यास के रूप में देखा गया और न ही उसे सीमित रूप से भाषायी कौशल तक बाँधा गया, बल्कि उसे वैचारिक समन्वय, सांस्कृतिक आत्मसातीकरण और सभ्यताओं के पारस्परिक संवाद के उपकरण के रूप में स्वीकार किया गया। मुगल शासकों की बहुभाषिक दृष्टि, विद्वानों के प्रति संरक्षण की नीति और भारत की प्राचीन ज्ञान-परंपरा के प्रति जिज्ञासा ने अनुवाद को संस्थागत और वैचारिक आधार प्रदान किया। संस्कृत, फारसी, अरबी, तुर्की, हिंदी और अनेक क्षेत्रीय भाषाओं के बीच हुए अनुवादों ने भारतीय ज्ञान को न केवल देश के भीतर व्यापक बनाया, बल्कि उसे ईरान, मध्य एशिया और अरब जगत तक पहुँचाकर वैश्विक बौद्धिक संवाद का हिस्सा बनाया।

मुगल शासन की स्थापना के साथ ही फारसी भाषा भारत में प्रशासन, इतिहास और साहित्य की प्रमुख भाषा के रूप में प्रतिष्ठित हुई। फारसी के राजभाषा बनने से यह अनिवार्य हो गया कि भारतीय प्रशासन, सामाजिक संरचना, धार्मिक परंपराओं और स्थानीय ज्ञान को फारसी भाषा में रूपांतरित किया जाए। यह अनुवाद केवल प्रशासनिक सुविधा के लिए नहीं था, बल्कि शासन की वैधता, सांस्कृतिक समझ और जनता से संवाद के लिए भी आवश्यक था। दूसरी ओर, भारत आने वाले सूफी संतों, यात्रियों और विद्वानों के लिए भारतीय दार्शनिक ग्रंथ, महाकाव्य और लोककथाएँ अत्यंत आकर्षण का विषय बनीं। उन्होंने इन ग्रंथों को समझने और अपनी सांस्कृतिक परंपरा के संदर्भ में प्रस्तुत करने का प्रयास किया। इसी प्रक्रिया में अनुवाद एक द्विपक्षीय संवाद के रूप में विकसित हुआ, जहाँ एक ओर भारतीय ज्ञान फारसी और अरबी में गया, तो दूसरी ओर इस्लामी, ईरानी और तुर्की ज्ञान परंपराएँ संस्कृत, हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं में पहुँचीं।

सम्राट अकबर (1542–1605) का शासनकाल मुगलकालीन अनुवाद परंपरा का स्वर्णयुग माना जाता है। अकबर ने अनुवाद को केवल विद्वानों की बौद्धिक रुचि का विषय नहीं रहने दिया, बल्कि उसे राज्य-नीति का हिस्सा बनाया। उन्होंने सांस्कृतिक समन्वय और धार्मिक सहिष्णुता को अपने शासन का आधार बनाया और इसी उद्देश्य से 'मकतबख़ाना' नामक अनुवाद विभाग की स्थापना की। यह विभाग भारतीय इतिहास में संगठित और राज्य-प्रायोजित अनुवाद गतिविधियों का पहला सुव्यवस्थित उदाहरण माना जाता है। मकतबख़ाना में संस्कृत, हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं के विद्वान फारसी जानने वाले विद्वानों के साथ मिलकर कार्य करते थे, जिससे अनुवाद एक सामूहिक और संवादात्मक प्रक्रिया बन गया।

अकबर के आदेश पर जिन ग्रंथों का अनुवाद कराया गया, उनमें महाभारत, रामायण, अथर्ववेद, गीता, पंचतंत्र और योगवाशिष्ठ प्रमुख हैं। महाभारत का फारसी अनुवाद 'रज़्मनामा' शीर्षक से हुआ, जो मुगलकालीन अनुवाद चिंतन का श्रेष्ठ उदाहरण है। इस अनुवाद में केवल कथा का रूपांतरण नहीं किया गया, बल्कि युद्ध, धर्म, नीति और सामाजिक मूल्यों की भारतीय अवधारणाओं को फारसी सांस्कृतिक संदर्भ में प्रस्तुत किया गया। इसी प्रकार रामायण के अनुवाद में मर्यादा, आदर्श शासन और नैतिक मूल्यों को इस्लामी और फारसी नैतिक दृष्टि के अनुरूप ढालने का प्रयास किया गया।

अकबरकालीन अनुवादों की एक प्रमुख विशेषता यह है कि वे शब्दानुवाद पर आधारित नहीं थे। अनुवादकों ने भावानुवाद, अनुकूलन और सांस्कृतिक आत्मसातीकरण को प्राथमिकता दी। भारतीय मिथकों, प्रतीकों और दार्शनिक अवधारणाओं को यथावत रखने के बजाय उन्हें लक्ष्य भाषा और संस्कृति के अनुरूप प्रस्तुत किया गया। इससे अनुवाद एक प्रकार का पुनर्सृजन बन गया। यह प्रवृत्ति दर्शाती है कि मुगलकालीन अनुवाद चिंतन आधुनिक अर्थों में 'अनुवाद बनाम रूपांतरण' की बहस से कहीं अधिक व्यापक था, जहाँ अनुवाद को सृजनात्मक और वैचारिक प्रक्रिया के रूप में देखा गया।अकबर के दरबार में अनेक विद्वान अनुवाद कार्य से जुड़े हुए थे, जिनमें अबुल फ़ज़ल, अब्दुल क़ादिर बदायूँनी, फैज़ी और मुल्ला अब्दुल क़ादिर प्रमुख हैं।

अबुल फ़ज़ल अकबर के सबसे विश्वसनीय दरबारी विद्वान थे। उनकी रचनाएँ अकबरनामा और आइन-ए-अकबरी प्रत्यक्ष अनुवाद न होते हुए भी भारतीय प्रशासन, समाज, धर्म और संस्कृति का फारसी भाषा में सृजनात्मक रूपांतरण प्रस्तुत करती है। इसमें भारतीय सामाजिक संरचना, जाति-व्यवस्था, धार्मिक विविधता और प्रशासनिक व्यवस्था का विस्तृत विवरण मिलता है, जो फारसी पाठकों के लिए भारत को समझने का माध्यम बना। अब्दुल क़ादिर बदायूँनी ने रामायण और अथर्ववेद का फारसी अनुवाद किया। यद्यपि उनका दृष्टिकोण कई बार आलोचनात्मक रहा, फिर भी उनके अनुवाद भारतीय धार्मिक ग्रंथों की संरचना और विषयवस्तु को फारसी पाठकों के सामने लाने में सफल रहे। फैज़ी अकबरकालीन अनुवाद परंपरा के सबसे सृजनशील विद्वानों में गिने जाते हैं। उन्होंने योगवाशिष्ठ और महाभारत के अनुवाद में दार्शनिक गहराई और काव्यात्मक संवेदना का सुंदर समन्वय किया, जिससे अनुवाद एक साहित्यिक कृति के रूप में उभरा।

जहाँगीर और शाहजहाँ के शासनकाल में अनुवाद गतिविधियाँ जारी रहीं, हालाँकि उनका स्वरूप अकबरकाल की तुलना में कुछ अधिक व्यावहारिक हो गया। इस काल में ऐतिहासिक, वैज्ञानिक, चिकित्सा और ज्योतिषीय ग्रंथों के अनुवाद पर विशेष ध्यान दिया गया। बृहत्संहिता जैसे ग्रंथों का फारसी अनुवाद इस बात का प्रमाण है कि भारतीय खगोल और ज्योतिष ज्ञान को मध्य एशिया और ईरान तक पहुँचाने में अनुवाद की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही। इस दौर में अनुवाद चिंतन सत्ता और ज्ञान के संबंध को स्पष्ट करता है, जहाँ ज्ञान को शासन की प्रभावशीलता से जोड़ा गया।

मुगलकालीन अनुवाद परंपरा में दारा शिकोह का योगदान अत्यंत विशिष्ट और वैचारिक रूप से महत्त्वपूर्ण है। उन्होंने उपनिषदों का फारसी अनुवाद 'सिर्र-ए-अकबर' शीर्षक से कराया। इस ग्रंथ में दाराशिकोह ने वेदांत दर्शन और सूफी चिंतन के बीच साम्य स्थापित करने का प्रयास किया। उन्होंने उपनिषदों को इस्लामी रहस्यवाद की भाषा में प्रस्तुत करते हुए यह दिखाने का प्रयास किया कि विभिन्न धार्मिक परंपराओं का मूल उद्देश्य एक ही सत्य की खोज है। यह अनुवाद धार्मिक सहिष्णुता और दार्शनिक संवाद का एक दुर्लभ उदाहरण है, जो मुगलकालीन अनुवाद चिंतन की गहराई को दर्शाता है। औरंगजेब के शासनकाल में धार्मिक नीति अपेक्षाकृत कठोर हो गई, जिसके कारण अनुवाद गतिविधियों में कुछ कमी अवश्य आई, किंतु यह परंपरा पूरी तरह समाप्त नहीं हुई। इस काल में इस्लामी विधि, कुरान, हदीस और फ़िक़्ह से संबंधित ग्रंथों के अनुवाद को प्राथमिकता दी गई। इसके साथ-साथ कुछ भारतीय ग्रंथों के अनुवाद भी होते रहे, जिससे यह स्पष्ट होता है कि अनुवाद मुगल शासन की बौद्धिक संरचना का अभिन्न अंग बना रहा।

मुगलकालीन अनुवाद चिंतन की प्रमुख विशेषता उसकी बहुभाषिकता है। संस्कृत, फारसी, अरबी, तुर्की और हिंदी के बीच हुए अनुवादों ने भाषाई सीमाओं को तोड़ा। दूसरी महत्त्वपूर्ण विशेषता अनुकूलन और आत्मसातीकरण है, जिसमें मूल ग्रंथों को लक्ष्य भाषा और संस्कृति के अनुरूप ढाला गया। इस काल के अनुवादकों ने भाषा को केवल संप्रेषण का साधन नहीं माना, बल्कि उसे सांस्कृतिक सेतु के रूप में देखा। अनुवाद के माध्यम से भारतीय दर्शन, मिथक, विज्ञान और सामाजिक संरचना को एक नए बौद्धिक परिवेश में प्रस्तुत किया गया।

अपनी प्रगति जांचें

प्रश्न 1. भारतीय परंपरा में अनुवाद को केवल भाषांतरण न मानकर किस व्यापक दृष्टि से देखा गया है? संक्षेप में स्पष्ट कीजिए।

प्रश्न 2. भाष्य, टीका और व्याख्या को भारतीय अनुवादचिन्तन का अभिन्न अंग क्यों माना जाता है?

प्रश्न 3. प्राचीन भारत की शासन–प्रणाली में अनुवाद की क्या भूमिका रही है? उदाहरण सहित स्पष्ट कीजिए।

4.5 देशीयअनुवादचिन्तक की कुछ आतंरिक धाराएं

भारतीय अनुवाद-परंपरा का विकास केवल विदेशी भाषाओं या बाह्य सांस्कृतिक संपर्कों की देन नहीं है, बल्कि उसकी जड़ें भारतीय समाज, संस्कृति, लोकजीवन और बौद्धिक परंपरा के भीतर अत्यंत गहराई तक फैली हुई है। भारत जैसे बहुभाषिक, बहुसांस्कृतिक और बहुधार्मिक समाज में विचारों, ज्ञान और अनुभूतियों का संप्रेषण सदैव किसी न किसी रूप में भाषिक रूपांतरण से जुड़ा रहा है। यही कारण है कि देशीय अनुवादचिन्तन का स्वरूप मूलतः आंतरिक आवश्यकताओं, सामाजिक संरचनाओं और सांस्कृतिक निरंतरता से प्रेरित रहा। यहाँ अनुवाद को केवल एक तकनीकी या भाषिक प्रक्रिया नहीं, बल्कि सामाजिक संवाद, सांस्कृतिक आत्मसातीकरण और ज्ञान के लोकतंत्रीकरण का माध्यम माना गया।

"देशीयअनुवाद-चिन्तक"सेआशयउनविद्वानों, कवियों, संतों और विचारकों से है जिन्होंने विदेशी प्रभाव से स्वतंत्र रहते हुए, या उसके समानांतर, भारतीय भाषाओं के बीच अर्थ, भाव और सांस्कृतिक मूल्यों के संप्रेषण की सुदीर्घ परंपरा को विकसित किया। इन चिन्तकों की अनुवाद-दृष्टि शास्त्रीय कठोरता और शब्दानुकरणात्मक निष्ठा से अधिक लोकस्वीकृति, भावात्मक संप्रेषण और सामाजिक उपयोगिता पर आधारित रही। परिणामस्वरूप भारतीय अनुवादपरंपरा में अनुवाद, टीका, भाष्य, व्याख्या, पुनर्कथन, रूपांतरण और पुनर्सृजन के बीच कठोर सीमाएँ नहीं खींची गईं; बल्कि उन्हें एक ही वैचारिक प्रवाह की विविध अभिव्यक्तियों के रूप में स्वीकार किया गया।

महत्वपूर्ण बिंदु

भारतीय अनुवादचिन्तन की विशेषता इसकी सृजनात्मक और आत्मसाती दृष्टि है, जिसमें अनुवादक को भाव, संदर्भ और लोकबोध के अनुसार स्वतंत्रता प्राप्त होती है। इस परंपरा में शब्दानुकरण की अपेक्षा अर्थ, अनुभूति और सांस्कृतिक साम्य को अधिक महत्व दिया गया, जिसके परिणामस्वरूप रामायण, महाभारत और अन्य ग्रंथों के अनेक भाषिक रूपांतर स्वतंत्र साहित्यिक कृतियों के रूप में प्रतिष्ठित हुए।

भारतीय अनुवादचिन्तन की सबसे प्राचीन और सुदृढ़ आंतरिक धारा भाष्य-परंपरा से जुड़ी हुई है। भारतीय दार्शनिक और धार्मिक ग्रंथों की संरचना सूत्रात्मक, सांकेतिक और अत्यंत संक्षिप्त होने के कारण उनकी सम्यक् समझ के लिए भाष्य को अनिवार्य माना गया। शंकराचार्य, रामानुजाचार्य और माध्वाचार्य द्वारा रचित उपनिषद्-भाष्य, गीता-भाष्य और ब्रह्मसूत्र-भाष्य वस्तुतः अनुवादात्मक विवेचन के उत्कृष्ट उदाहरण हैं। यद्यपि ये भाष्य उसी संस्कृतभाषामें लिखे गए, फिर भी वे मूल ग्रंथ के गूढ़ और संक्षिप्त कथनों को समकालीन बौद्धिक संदर्भ में अर्थानुवाद के रूप में प्रस्तुत करते हैं।

यहाँ अनुवाद का उद्देश्य शब्द-रूपांतरण नहीं, बल्कि अर्थ-विस्तार और बोध-स्पष्टता है। उदाहरणस्वरूप, शंकराचार्य द्वारा "तत्त्वमसि"जैसेमहावाक्योंकीव्याख्याकेवलभाषिकअनुवादनहीं, बल्कि अद्वैत वेदांत के दार्शनिक ढाँचे के भीतर उसका पुनः अर्थनिर्धारण है। इस परंपरा में अनुवाद को ज्ञान-संप्रेषण का साधन माना गया, न कि केवल भाषिक स्थानांतरण की प्रक्रिया। भाष्य-परंपरा के समानांतर देशीय अनुवादचिन्तन की दूसरी सशक्त धारा लोकभाषाओं में किए गए अनुवादों से जुड़ी हुई है। जब संस्कृत जैसी शास्त्रीय भाषा जनसामान्य की पहुँच से दूर होती गई, तब संत-कवियों और लोककवियों ने ज्ञान, धर्म और दर्शन को लोकभाषाओं में रूपांतरित किया। यह प्रक्रिया अनुवाद और रूपांतरण के बीच स्थित दिखाई देती है, जहाँ मूल ग्रंथ की कथा और भाव संरक्षित रहते हैं, किंतु भाषा, शैली और सांस्कृतिक संकेत लोकानुकूल बना दिए जाते हैं। तुलसीदास कृत रामचरितमानस इस प्रवृत्ति का श्रेष्ठ उदाहरण है। वाल्मीकि रामायण का यह अवधी रूपांतरण न तो शाब्दिक अनुवाद है और न ही पूर्णतः स्वतंत्र मौलिक रचना, बल्कि यह भावानुवाद और सांस्कृतिक आत्मसातीकरण का अद्वितीय नमूना है। तुलसीदास ने रामकथा को भारतीय लोकमानस, नैतिक मूल्यों और सामाजिक आदर्शों के अनुरूप ढालते हुए प्रस्तुत किया। इसी प्रकार सूरदास द्वारा भागवत पुराण की कथाओं का ब्रजभाषा

में काव्यात्मक रूपांतरण भी देशीय अनुवादचिन्तन की इसी धारा का प्रतिनिधित्व करता है। इन उदाहरणों से स्पष्ट होता है कि लोकभाषाआधारित अनुवाद में लक्ष्य भाषा के पाठकों की संवेदना और सांस्कृतिक अपेक्षाओं को सर्वोपरि रखा गया। भक्ति आंदोलन ने देशीय अनुवादचिन्तन को और अधिक व्यापक तथा जनोन्मुख बनाया। इस आंदोलन के संतों ने धार्मिक ग्रंथों और दार्शनिक अवधारणाओं को जनसामान्य तक पहुँचाने के लिए अनुवाद, रूपांतरण और पुनर्सृजन को माध्यम बनाया। कबीर, नामदेव, रैदास और मीराबाई की वाणी में शास्त्रीय ग्रंथों की अवधारणाएँ प्रत्यक्ष अनुवाद के रूप में नहीं, बल्कि लोकबोध में ढली हुई अनुभूतियों के रूप में उपस्थित हैं। कबीर के दोहों में उपनिषदों और योग-दर्शन की गूढ़ अवधारणाएँ भावात्मक पुनर्सृजन के रूप में सामने आती हैं। यहाँ अनुवाद का उद्देश्य पाठ की शुद्धता या संरचनात्मक समानता नहीं, बल्कि अनुभूति की संप्रेषणीयता है। इस प्रकार भक्तिकालीन अनुवादचिन्तन ज्ञान के लोकतंत्रीकरण की सशक्त प्रक्रिया बन जाता है। देशीय अनुवादचिन्तन की एक महत्त्वपूर्ण आंतरिक धारा कथात्मक साहित्य से भी जुड़ी है। पंचतंत्र, हितोपदेश और कथासरित्सागर जैसे ग्रंथों का विभिन्न भारतीय भाषाओं में पुनर्कथन और रूपांतरण इस तथ्य को प्रमाणित करता है कि भारतीय परंपरा में कथा को स्थिर पाठ नहीं, बल्कि चलायमान सांस्कृतिक इकाई माना गया। पंचतंत्र की कथाएँ संस्कृत से प्राकृत, अपभ्रंश, हिंदी और अन्य क्षेत्रीय भाषाओं में पहुँचते-पहुँचते परिवेश, पात्रों और कथानक के स्तर पर परिवर्तित होती रहीं। यह प्रक्रिया दर्शाती है कि देशीय अनुवादचिन्तन में अनुवाद को एक जीवित परंपरा माना गया, जो समय और समाज के साथ स्वयं को रूपांतरित करती रहती है।

भारतीय नाट्य और काव्य परंपरा में भी अनुवादचिन्तन की आंतरिक धाराएँ स्पष्ट रूप से दिखाई देती हैं। संस्कृत नाटकों के प्राकृत और लोकभाषा रूपांतरण, तथा बाद में आधुनिक भारतीय भाषाओं में उनके अनुवाद, इस परंपरा की निरंतरता को दर्शाते हैं। कालिदास के अभिज्ञानशाकुंतलम् के विभिन्न भाषाई रूपांतरण इस संदर्भ में विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। इन अनुवादों में मूल काव्यात्मक सौंदर्य को सुरक्षित रखते हुए भाषा और संस्कृति के अनुरूप परिवर्तन किए गए। इससे यह स्पष्ट होता है कि देशीय अनुवादचिन्तन में काव्यात्मक समतुल्यता को शब्दगत समानता से अधिक महत्व दिया गया।

आधुनिक काल में देशीय अनुवादचिन्तन ने नए सामाजिक और वैचारिक संदर्भ ग्रहण किए। भारतेंदु हरिश्चंद्र, महावीर प्रसाद द्विवेदी, आचार्य रामचंद्र शुक्ल और प्रेमचंद जैसे साहित्यकारों ने अनुवाद को सामाजिक सुधार, राष्ट्रीय चेतना और साहित्यिक विकास के उपकरण के रूप में देखा। भारतेंदु के नाट्य और गद्य अनुवाद समकालीन सामाजिक समस्याओं और सांस्कृतिक पुनर्जागरण से जुड़े हुए हैं। प्रेमचंद के अनुवाद-कर्म में यह दृष्टि स्पष्ट है कि वे अनुवाद को यथार्थबोध और मानवीय संवेदना के प्रसार का माध्यम मानते थे। देशीय अनुवादचिन्तन की एक अन्य महत्त्वपूर्ण धारा आत्मसातीकरण की है। इसमें अनुवादक मूल पाठ को लक्ष्य संस्कृति में इस प्रकार समाहित करता है कि वह विदेशी या बाह्य प्रतीत न हो। रामकथा के विभिन्न क्षेत्रीय संस्करण- कंबन रामायण (तमिल), कृतिवास रामायण (बंगाली) और अन्य लोक रूपांतरण- इस आत्मसातीकरण की प्रक्रिया को स्पष्ट करते हैं। देशीय अनुवादपरंपरा केवल साहित्य तक सीमित नहीं रही। आयुर्वेद, गणित, ज्योतिष और खगोल विज्ञान जैसे क्षेत्रों में भी भारतीय भाषाओं के बीच ज्ञान का अनुवाद हुआ। चरक संहिता और सुश्रुत संहिता की विभिन्न भाषाई व्याख्याएँ इस तथ्य को प्रमाणित करती हैं कि अनुवाद को व्यावहारिक ज्ञान के प्रसार का साधन माना गया।

उन्नीसवीं और बीसवीं शताब्दी में भारतीय भाषाओं के बीच परस्पर अनुवाद की प्रवृत्ति और अधिक सशक्त हुई। बंगला, हिंदी, मराठी, तमिल और उर्दू साहित्य का पारस्परिक अनुवाद देशीय अनुवादचिन्तन की आधुनिक धारा को रेखांकित करता है। रवींद्रनाथ ठाकुर की रचनाओं के विभिन्न भारतीय भाषाओं में हुए अनुवाद इस सांस्कृतिक संवाद के महत्त्वपूर्ण उदाहरण हैं। समकालीन समय में देशीय अनुवादचिन्तन डिजिटल माध्यमों, शिक्षा व्यवस्था और बहुभाषिक समाज की आवश्यकताओं के अनुरूप निरंतर विकसित हो रहा है। आज अनुवाद केवल साहित्यिक गतिविधि नहीं, बल्कि सामाजिक समावेशन, सांस्कृतिक संवाद और ज्ञान के लोकतंत्रीकरण का सशक्त माध्यम बन चुका है।

अपनी प्रगति जांचें

प्रश्न 4. मुगलकालीन अनुवाद परंपरा की दो प्रमुख विशेषताएँ लिखिए।

प्रश्न 5. देशीय अनुवादचिन्तन में लोकभाषा और आत्मसातीकरण को विशेष महत्त्व क्यों दिया गया है?

4.6 सारांश

इस इकाई में भारतीय अनुवादपरंपरा की ऐतिहासिक, सांस्कृतिक और वैचारिक पृष्ठभूमि का समग्र अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। इसमें यह स्पष्ट किया गया है कि भारत में अनुवाद की अवधारणा केवल भाषाओं के बीच शब्दों के स्थानांतरण तक सीमित नहीं रही, बल्कि वह ज्ञान, संस्कृति, धर्म और सामाजिक मूल्यों के निरंतर प्रवाह का एक सृजनात्मक माध्यम रही है। वैदिक काल से प्रारंभ होकर भाष्य, टीका और व्याख्या की परंपरा के माध्यम से अनुवादचिन्तन विकसित हुआ, जिसमें अर्थ और भाव को शब्दानुकरण से अधिक महत्त्व दिया गया।प्राचीन भारत की शासन–प्रणाली में अनुवाद का उपयोग जनसंचार, नैतिक उपदेश और प्रशासनिक व्यवस्था के प्रसार के लिए किया गया, जिसका उदाहरण अशोक के शिलालेखों और धर्मशास्त्रीय ग्रंथों की टीकाओं में मिलता है। मुगलकाल में अनुवाद को संस्थागत स्वरूप प्राप्त हुआ, जहाँ अकबर, दाराशिकोह जैसे शासकों और विद्वानों ने संस्कृत, फारसी और अन्य भाषाओं के बीच ज्ञान–संवाद को प्रोत्साहित किया।इकाई में देशीय अनुवादचिन्तकों की आंतरिक धाराओं- भाष्य परंपरा, लोकभाषा आधारित रूपांतरण, भक्ति आंदोलन, कथात्मक साहित्य और आत्मसातीकरणका भी विश्लेषण किया गया है। समग्र रूप से यह अध्ययन दर्शाता है कि भारतीय अनुवादपरंपरा एक जीवंत, बहुभाषिक और सांस्कृतिक संवाद पर आधारित सृजनात्मक प्रक्रिया रही है।

4.7 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)

प्रश्न 1 का उत्तर: भारतीय परंपरा में अनुवाद को केवल भाषाओं के बीच शब्दों के स्थानांतरण के रूप में नहीं, बल्कि ज्ञान, संस्कृति और भाव के संप्रेषण की सृजनात्मक प्रक्रिया के रूप में समझा गया है। इस विषय की विस्तृत चर्चा हेतु इकाई 4 का प्रस्तावना एवं प्रारंभिक चिंतनधारा वाला खंड देखें।

प्रश्न 2 का उत्तर: भारतीय अनुवादचिन्तन में भाष्य, टीका और व्याख्या को अनुवाद का अभिन्न रूप माना गया है, क्योंकि इनके माध्यम से मूल ग्रंथ के अर्थ, आशय और दार्शनिक निहितार्थ को स्पष्ट किया जाता है। संबंधित विवेचन के लिए भाष्य–परंपरा से जुड़ा अंश अवलोकनीय है।

प्रश्न 3 का उत्तर: प्राचीन भारत की शासन–प्रणाली में अनुवाद का उपयोग प्रशासनिक आदेशों, नैतिक उपदेशों और धार्मिक सिद्धांतों को जनसामान्य तक पहुँचाने के लिए किया गया। अशोक के शिलालेख इसका प्रमुख उदाहरण हैं। इस संदर्भ की विस्तारपूर्वक जानकारी इकाई 4.3 में उपलब्ध है।

प्रश्न 4 का उत्तर: मुगलकालीन अनुवाद परंपरा की प्रमुख विशेषताएँ बहुभाषिकता और सांस्कृतिक आत्मसातीकरण हैं, जिनके माध्यम से भारतीय और इस्लामी बौद्धिक परंपराओं के बीच संवाद स्थापित हुआ। विस्तृत विवेचन हेतु मुगलकालीन अनुवाद चिन्तक वाला खंड देखें।

प्रश्न 5 का उत्तर: देशीय अनुवादचिन्तन में लोकभाषा और आत्मसातीकरण को इसलिए विशेष महत्त्व दिया गया, क्योंकि इससे ज्ञान जनसामान्य तक सहज रूप में पहुँच सका और अनुवाद सामाजिक रूप से स्वीकार्य बना। इस विषय पर स्पष्टता के लिए देशीय अनुवादचिन्तन की आंतरिक धाराओं वाला भाग सहायक होगा।

✓ 4.8 अधिक जानने के लिए पढ़ें

- शुक्ल, आनन्द कुमार. (2015). आचार्य रामचंद्र शुक्ल का अनुवाद-कर्म. वाराणसी: लोकभारती प्रकाशन।
- गोपीनाथन, जी. (2011). अनुवाद: सिद्धांत और प्रयोग. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन।
- गोस्वामी, के. के. (2010). अनुवाद: सिद्धांत और दृष्टिकोण. इलाहाबाद: लोकभारती प्रकाशन।
- सेठी, हरीश कुमार. (2014). ई–अनुवाद और हिंदी. नई दिल्ली: वाणी प्रकाशन।
- सेठी, हरीश कुमार. (2011). अनुवाद सिद्धांत और व्यवहार. नई दिल्ली: ज्ञान प्रकाशन।
- नगेन्द्र. (2010). अनुवाद विज्ञान: सिद्धांत और अनुप्रयोग. नई दिल्ली: किताब महल।
- तिवारी, भोलानाथ. (2009). अनुवाद-विज्ञान. इलाहाबाद: किताब महल।
- मिश्र, शिवकुमार. (2012). भारतीय परंपरा में अनुवाद और भाष्य. वाराणसी: भारती प्रकाशन।
- शास्त्री, रमेशचंद्र. (2013). संस्कृत साहित्य और भारतीय अनुवादपरंपरा. नई दिल्ली: संस्कृत भारती।
- वर्मा, कृष्णदत्त. (2016). भक्ति आंदोलन और लोकभाषा का अनुवाद-बोध. इलाहाबाद: साहित्य भवन।

⍰ 4.9 अभ्यास प्रश्न

अभ्यास प्रश्न

(क) संक्षिप्त प्रश्नों के उत्तर लिखिए—

1. भारतीय परंपरा में अनुवाद को किन वैकल्पिक रूपोंजैसे- भाष्य, टीका या व्याख्यासे जोड़ा गया है?
2. वैदिक काल में अनुवाद का मुख्य उद्देश्य क्या माना जाता था?
3. भारतीय अनुवादचिन्तन में शब्दानुवाद की अपेक्षा किस तत्व को अधिक महत्व दिया गया है?
4. लोकभाषाओं में किए गए अनुवादों की प्रमुख विशेषता क्या है?
5. भक्ति आंदोलन ने भारतीय अनुवाद-बोध को किस प्रकार प्रभावित किया?

(ख) निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लिखिए—

1. भारतीय परंपरा में भाष्य और अनुवाद के अंतर्संबंध की अवधारणा को स्पष्ट रूप में प्रस्तुत करें।
2. रामायण और महाभारत के विभिन्न भाषिक रूपांतरणों के आधार पर भारतीय अनुवादचिंतन की प्रमुख विशेषताओं का समग्र विवेचन दीजिये।
3. प्राचीन भारत की शासन-प्रणाली में अनुवाद की भूमिका और उसके प्रयोजनात्मक महत्व का आलोचनात्मक विवरण प्रस्तुत करें।
4. मुगलकालीन अनुवाद परंपरा को सांस्कृतिक संवाद के व्यापक संदर्भ में समझने का प्रयास कीजिए।
5. दाराशिकोह के अनुवाद-कर्म को भारतीय अनुवाद-चिंतन की दृष्टि से मूल्यांकनात्मक विश्लेषण के रूप में प्रस्तुत करें।
6. देशीय अनुवादचिंतन की प्रमुख आंतरिक धाराओं की प्रकृति और दिशा का विश्लेषणात्मक परिचय दें।

शब्दकोश:

धर्मशास्त्र : धार्मिक-नैतिक विधान, नैतिक उपदेश : आचार संबंधी शिक्षा, संस्थागत अनुवाद : संगठित अनुवाद प्रक्रिया, मकतबख़ाना : मुगलकालीन अनुवाद विभाग, बहुधार्मिकता : अनेक धर्मों का सहअस्तित्व, सभ्यतागत संवाद : सभ्यताओं के बीच वैचारिक संपर्क, ज्ञान-लोकतंत्रीकरण : ज्ञान को जनसुलभ बनाना इत्यादि |

*** ***** ***

इकाई 5 - पाश्चात्य अनुवादचिंतनधारा

इकाई की रूपरेखा

5.0 उद्देश्य
5.1 प्रस्तावना
5.2 पाश्चात्य अनुवाद चिंतकों की परंपरा (1950-वर्तमान तक(
5.3 पाश्चात्य अनुवाद चिंतकदृष्टि एवं अनुवाद संबंधी दृष्टिकोण :
5.3.1 यूजीन नाइडा
5.3.2 जे कैटफर्ड .सी .
5.3.3 पीटर न्यूमार्क
5.3.4 गिडियन टौरी
5.4 पाश्चात्य अनुवाद चिंतकों की अवधारणाप्रासंगिकता / उपयोगिता :
5.4.1 यूजीन नाइडा
5.4.2 जेकैटफर्ड .सी .
5.4.3 पीटर न्यूमार्क
5.4.4 गिडियन टौरी
5.5 अनुवाद का स्वरूपअनुवाद चिंतकों की अवधारणाओं के संदर्भ में :
5.5.1 यूजीन नाइडा
5.5.2 जेकैटफर्ड .सी .
5.5.3 पीटर न्यूमार्क
5.5.4 गिडियन टौरी
5.5 सारांश
5.6 प्रगति विवरण
5.7 अधिक जानने के लिए पढ़ें
5.8 अभ्यास प्रश्न

5.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन से आप -

- पाश्चात्य अनुवादचिंतनधारा के ऐतिहासिक विकास और उसके प्रमुख चरणों का सम्यक बोध प्राप्त करेंगे।-
- बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध से वर्तमान काल तक विकसित पाश्चात्य अनुवाद सिद्धांतों की पृष्ठभूमि और प्रवृत्तियों को पहचानने में सक्षम होंगे।
- यूजीन नाइडा, जेकैटफर्ड .सी ., पीटर न्यूमार्क और गिडियन टौरी जैसे प्रमुख पाश्चात्य अनुवादचिंतकों की - दृष्टि का तुलनात्मक अध्ययन कर पाएँगे।-अनुवाद

- पाश्चात्य अनुवादचिंतन में समतुल्यता-, संप्रेषण, संरचनात्मक विश्लेषण और व्यवहारिकता जैसी अवधारणाओं की उपयोगिता एवं प्रासंगिकता का विवेचन कर सकेंगे।
- अनुवाद को केवल भाषिक प्रक्रिया न मानकर उसे सामाजिक, सांस्कृतिक और संप्रेषणात्मक परिप्रेक्ष्य में समझने की क्षमता विकसित करेंगे।
- विभिन्न पाश्चात्य अनुवादसिद्धांतों के आलोक में अनुवाद के स्वरूप, उद्देश्य और सीमाओं का आलोचनात्मक मूल्यांकन करने में समर्थ होंगे।

5.1 प्रस्तावना

पाश्चात्य अनुवादचिंतनधारा का विकास आधुनिक भाषाविज्ञान-, संरचनावाद, संप्रेषण सिद्धांत तथा सांस्कृतिक अध्ययन की पृष्ठभूमि में हुआ है। बीसवीं शताब्दी के मध्य से अनुवाद को केवल शब्दों के स्थानांतरण की प्रक्रिया न मानकर एक सुव्यवस्थित सैद्धांतिक अनुशासन के रूप में देखा जाने लगा। इस काल में अनुवादअध्ययन ने भाषिक संरचना, अर्थसंतुलन-, पाठकप्रतिक्रिया और सांस्कृतिक संदर्भ जैसे आयामों को अपने अध्ययन-क्षेत्र में सम्मिलित किया। परिणामस्वरूप पाश्चात्य चिंतकों ने अनुवाद की ऐसी अवधारणाएँ विकसित कीं, जिनमें व्यवहारिकता और संप्रेषणीयता को विशेष महत्त्व दिया गया।

यूजीन नाइडा ने अनुवाद को प्रभाव और अर्थ की समानता से जोड़ा, जिससे अनुवाद पाठककेंद्रित दृष्टि से समझा जाने लगा। जेकैटफर्ड ने अनुवाद को भाषिक प्रतिस्थापन की प्रक्रिया के रूप में परिभाषित कर संरचनात्मक विश्लेषण .सी . पर बल दिया। पीटर न्यूमार्क ने अर्थ और रूप के संतुलन को अनुवाद की केन्द्रीय समस्या माना, जबकि गिडियन टौरी ने अनुवाद को सामाजिक सांस्कृतिक-व्यवहार के रूप में स्थापित किया।

5.2 पाश्चात्य अनुवाद चिंतकों की परंपरा)1950-वर्तमान तक

पाश्चात्य अनुवादचिंतन की परंपरा का आधुनिक चरण बीसवीं शताब्दी के मध्य से विशेष रूप से विकसित हुआ। - यद्यपि अनुवाद की परंपरा पश्चिम में प्राचीन यूनानी और रोमन काल से विद्यमान रही है, किंतु एक स्वतंत्र शास्त्र के रूप में अनुवादअध्ययन का व्यवस्थित विकास 1950 के बाद ही संभव हो सका। इस काल में अनुवाद को केवल साहित्यिक या भाषिक क्रिया न मानकर एक बहुआयामी बौद्धिक प्रक्रिया के रूप में देखा गया, जिसमें भाषाविज्ञान, समाजविज्ञान, मनोविज्ञान, संस्कृतिअध्ययन और संप्रेषण सिद्धांतों की महत्वपूर्ण भूमिका रही।

इस अवधि में पाश्चात्य अनुवादचिंतकों ने अनुवाद की प्रकृति, प्रक्रिया, उद्देश्य और प्रभाव को वैज्ञानिक एवं सैद्धांतिक आधार पर समझने का प्रयास किया। परिणामस्वरूप अनुवादअध्ययन एक स्वतंत्र अकादमिक अनुशासन के रूप में स्थापित हुआ ।

5.2.1 वर्गीकरण

पाश्चात्य अनुवादचिंतन की परंपरा को सुविधा की दृष्टि से विभिन्न कालखंडों में विभाजित किया जा सकता है। यह - दृष्टियों-वर्गीकरण मुख्यतः अनुवाद, पद्धतियों और सैद्धांतिक प्रवृत्तियों के आधार पर किया जाता है। बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में अनुवादचिंतन की जिन प्रमुख धाराओं का विकास हुआ-, उनमें भाषावैज्ञानिक, व्यवहारआधारित-, संरचनावादी, सांस्कृतिक और कार्यात्मक दृष्टियाँ प्रमुख हैं।

इन विभिन्न धाराओं के अंतर्गत अनुवाद को निम्नलिखित रूपों में समझा गया-

- शाब्दिक अनुवाद (Literal Translation) तथा भावानुवाद (Free Translation)
- वाक्यविन्यासात्मक अनुवाद (Syntactic Translation) तथा अर्थप्रधान अनुवाद (Semantic Translation)
- निष्ठावान अनुवाद (Faithful Translation) तथा स्वतंत्र अनुवाद)Free Translation)
- लेखक-केंद्रित अनुवाद (Author-Oriented Translation) तथा पाठक केंद्रित अनुवाद- (Reader-Oriented Translation)
- स्रोतभाषा केंद्रित अनुवाद (Source Language Oriented Translation) तथा लक्ष्यभाषा केंद्रित अनुवाद (Target Language Oriented Translation)
- दृष्टिकोणआधारित अनुवाद -वैचारिक या वैज्ञानिक दृष्टि पर आधारित
- संस्कृतिआधारित अनुवाद (Culture Based Translation) तथा भाषाविज्ञानआधारित अनुवाद (Linguistics Based Translation)
- सटीक समतुल्यता (Exact Equivalence) तथा सन्निकट समतुल्यता (Approximate Equivalence)
- स्थिर समतुल्यता (Static Equivalence) तथा गतिशील समतुल्यता (Dynamic Equivalence)
- सैद्धांतिक प्रभावात्मकता (Theoretical Equivalence) तथा कार्यात्मक प्रभावात्मकता (Functional Equivalence)

यह वर्गीकरण इस तथ्य को स्पष्ट करता है कि पाश्चात्य अनुवादचिंतन में अनुवाद को- एक ही रूप में नहीं, बल्कि विभिन्न उद्देश्यों और संदर्भों के अनुसार बहुविध प्रक्रियाओं के रूप में समझा गया।

5.2.2 बीसवीं शताब्दी (1950–1960)

1950 से 1960 के दशक को पाश्चात्य अनुवादचिंतन के आधुनिक चरण का प्रारंभिक काल माना जाता है। इस - अवधि में भाषाविज्ञान के विकास ने अनुवादअध्ययन को नई दिशाप्रदान की। संरचनात्मक भाषाविज्ञान, संकेतविज्ञान और अर्थविज्ञान के सिद्धांतों के आधार पर अनुवाद को एक व्यवस्थित भाषिक प्रक्रिया के रूप में देखा गया।

इस काल में अनुवादकों और विद्वानों का ध्यान मुख्यतः भाषासंरचना, शब्दार्थ, वाक्यविन्यास और व्याकरणिक समानताओं पर केंद्रित रहा। इसी दौर में मशीनअनुवाद)Machine Translation) की अवधारणा का प्रारंभ हुआ। तकनीकी और वैज्ञानिक पाठों के अनुवाद में कंप्यूटर की सहायता लेने के प्रयास किए गए, जिससे अनुवाद को यांत्रिक और वैज्ञानिक दृष्टि से समझने की प्रवृत्ति विकसित हुई।

5.2.3 बीसवीं शताब्दी (1960–1965)

1960 से 1965 के कालखंड में व्यवहारआधारित अनुवादचिंतन को विशेष महत्व मिला। इस अवधि में यह - मान्यता प्रबल हुई कि अनुवाद केवल भाषासंरचना का रूपांतरण नहीं है, बल्कि वह संप्रेषण और प्रभाव से भी जुड़ा हुआ है।

इस दृष्टि के अनुसार अनुवाद का मूल्यांकन इस आधार पर किया जाने लगा कि लक्ष्यभाषा का पाठ पाठक पर वही प्रभाव उत्पन्न करता है या नहीं, जो मूल पाठ का स्रोतभाषा के पाठक पर होता है। इस दौर में अर्थ, संदर्भ, प्रयोग और प्रभाव को शब्दों की अपेक्षा अधिक महत्व दिया गया। परिणामस्वरूप अनुवाद में लचीलापन और व्यावहारिकता का समावेश हुआ।

5.2.4 बीसवीं शताब्दी (1965–1975)

1965 से 1975 का काल पाश्चात्य अनुवादचिंतन में अत्यंत महत्वपूर्ण माना जाता है। इस अवधि में यूजीन नाइडा-, जेकैटफर्ड औ .सी .र अन्य विद्वानों ने अनुवाद को सैद्धांतिक आधार प्रदान किया।

नाइडा की गतिशील समतुल्यता की अवधारणा ने अनुवादचिंतन को नई दिशा दी-, जिसमें पाठक की प्रतिक्रिया को केंद्रीय स्थान दिया गया। वहीं कैटफर्ड ने अनुवाद को भाषिक प्रतिस्थापन की प्रक्रिया के रूप में परिभाषित करते हुए समतुल्यता को भाषावैज्ञानिक स्तर पर समझने का प्रयास किया।इस काल में अनुवाद को भाषाविज्ञान, समाज और संस्कृति के अंतर्संबंधों के संदर्भ में देखा जाने लगा।

महत्वपूर्ण बिंदु

पाश्चात्य अनुवाद-चिंतन का मूल योगदान यह है कि उसने अनुवाद को स्थिर भाषिक क्रिया के रूप में नहीं, बल्कि समय, समाज, पाठक और संस्कृति से निरंतर प्रभावित होने वाली बहुआयामी संप्रेषणात्मक प्रक्रिया के रूप में स्थापित किया। 1950 के बाद विकसित विभिन्न धाराओं- भाषावैज्ञानिक, व्यवहारआधारित, संरचनावादी और सांस्कृतिकने यह स्पष्ट किया कि अनुवाद का स्वरूप उद्देश्य, संदर्भ और सामाजिक अपेक्षाओं के अनुसार बदलता रहता है। परिणामस्वरूप अनुवादअध्ययन एक स्वतंत्र, अंतर्विषयी और गतिशील अकादमिक अनुशासन के रूप में विकसित हुआ।

5.2.5 बीसवीं शताब्दी (1975 से –वर्तमान तक)

1975 के बाद पाश्चात्य अनुवादचिंतन में बहुविध दृष्टियों का विकास हुआ। इस दौर में अनुवाद-अध्ययन केवल भाषिक अनुशासन न रहकर सांस्कृतिक अध्ययन, साहित्यिक सिद्धांत और समाजशास्त्र से भी जुड़ गया।

गिडियन टौरी जैसे विद्वानों ने अनुवाद को सामाजिकसांस्कृतिक मानदंडों के अंतर्गत- समझने पर बल दिया। इस काल में यह स्वीकार किया गया कि अनुवाद कोई एकरूपी संरचना नहीं है, बल्कि वह दो भाषिक और सांस्कृतिक संरचनाओं की व्याख्यात्मक संगति है।

इसी संदर्भ में यह विचार सामने आया कि-

"अनुवाद एक एकात्मक संरचना नहीं, बल्कि दो संरचनाओं की व्याख्यात्मक संयुक्त प्रक्रिया है।"

समकालीन पाश्चात्य अनुवादचिंतन में अनुवाद को शक्ति-, संस्कृति, विचारधारा और पहचान से जुड़े प्रश्नों के संदर्भ में भी देखा जा रहा है। डिजिटल तकनीक, वैश्वीकरण और बहुभाषिक समाज ने अनुवाद की भूमिका को और अधिक व्यापक बना दिया है।

अपनी प्रगति जांचें

प्रश्न 1. पाश्चात्य अनुवादचिंतनधारा के विकास में 1950 के बाद कौन-कौन से प्रमुख बौद्धिक और अकादमिक परिवर्तन दृष्टिगोचर होते हैं? संक्षेप में स्पष्ट कीजिए।

प्रश्न 2. यूजीन नाइडा की गतिशील / कार्यात्मक समतुल्यता की अवधारणा अनुवाद को किस प्रकार पाठककेन्द्रित बनाती है? उदाहरण सहित समझाइए।

प्रश्न 3. जे. सी. कैटफर्ड द्वारा प्रतिपादित भाषिक असंप्रेषणीयता और सांस्कृतिक असंप्रेषणीयता की अवधारणाओं का अनुवादप्रक्रिया में क्या महत्व है?

5.3 पाश्चात्य अनुवाद चिंतक :दृष्टि एवं अनुवाद संबंधी दृष्टिकोण

5.3.1 यूजीन नाइडा

यूजीन नाइडा बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में पाश्चात्य अनुवादचिंतन को नई दिशा देने वाले सर्वाधिक प्रभावशाली - विद्वानों में माने जाते हैं। उनका योगदान इस दृष्टि से अत्यंत महत्त्वपूर्ण है कि उन्होंनेअनुवाद को केवल भाषिक संरचनाओं के स्थानांतरण तक सीमित न रखकर उसे संप्रेषण, संस्कृति और पाठकप्रतिक्रिया से जोड़कर देखा। नाइडा का अनुवाद-चिंतन भाषाविज्ञान, मानवविज्ञान और संचारसिद्धांत के अंतर्संबंधों पर आधारित है।

नाइडा के अनुसार अनुवाद का मूल उद्देश्य यह नहीं है कि स्रोतभाषा के शब्दों और वाक्यों को लक्ष्यभाषा में यथावत स्थानांतरित कर दिया जाए, बल्कि यह है कि स्रोतपाठ में निहित संदेश, आशय और प्रभाव लक्ष्यभाषा के पाठक तक उसी प्रकार पहुँचे, जिस प्रकार वह मूल भाषा के पाठक तक पहुँचता है। इसी विचार के आधार पर उन्होंने गतिशील समतुल्यता)Dynamic Equivalence) की अवधारणा प्रस्तुत की। उनके अनुसार सफल अनुवाद वही है जिसमें लक्ष्यभाषा का पाठक अनूदित पाठ को पढ़ते समय लगभग वही अनुभव करता है जो स्रोतभाषा का पाठक मूल पाठ को पढ़ते समय करता है।नाइडा का यह मत पारंपरिक शाब्दिक अनुवाद की अवधारणा से भिन्न है। वे मानते हैं कि शब्द प्रति शब्द अनुवाद कई बार अर्थ को विकृत कर देता है और संप्रेषण में बाधा उत्पन्न करता है। अतः अनुवादक को शब्दगत समानता के स्थान पर अर्थगत, भावगत और प्रभावगत समानता को प्राथमिकता देनी चाहिए। इसी कारण नाइडा अनुवाद में सांस्कृतिक अनुकूलन को अनिवार्य मानते हैं।

अनुवादप्रक्रिया को नाइडा ने डिकोडिंग और रिकोडिंग के रूप में समझाया है। पहले चरण में स्रोतभाषा के संदेश का गहन विश्लेषण कर उसके अर्थतत्वों को स्पष्ट किया जाता है और दूसरे चरण में उन अर्थतत्वों को लक्ष्यभाषा की भाषिक और सांस्कृतिक संरचना के अनुरूप पुनः अभिव्यक्त किया जाता है। इस प्रकार नाइडा का अनुवादचिंतन अनुवाद को एक - सृजनात्मक, उद्देश्यपरक और संप्रेषणकेन्द्रित प्रक्रिया के रूप में स्थापित करता है।

5.3.2 जे कैटफर्ड .सी .

जेकैटफर्ड का अन .सी .ुवादचिंतन संरचनात्मक भाषाविज्ञान पर आधारित है और वे अनुवाद को एक - भाषावैज्ञानिक प्रक्रिया के रूप में परिभाषित करते हैं। उनकी दृष्टि में अनुवाद दो भाषाओं के बीच घटित होने वाली एक व्यवस्थित भाषिक क्रिया है, जिसमें स्रोतभाषा की पाठ्यसामग्री को लक्ष्यभाषा की समतुल्य भाषिक इकाइयों द्वारा प्रतिस्थापित किया जाता है।कैटफर्ड के अनुसार अनुवाद का केंद्रीय सिद्धांत समतुल्यता)Equivalence) है, किंतु यह समतुल्यता पूर्ण समानता नहीं होती। वे स्पष्ट करते हैं कि भाषाएँ अपनी संरचना, व्याकरण, शब्दार्थ और प्रयोगपरंपरा में- भिन्न होती हैं, इसलिए अनुवाद में पूर्ण समानता संभव नहीं है। इसी संदर्भ में उन्होंने भाषिक असंप्रेषणीयता और सांस्कृतिक असंप्रेषणीयता की अवधारणाएँ प्रस्तुत कीं।भाषिक असंप्रेषणीयता तब उत्पन्न होती है जब किसी भाषा की संरचनात्मक विशेषता दूसरी भाषा में उपलब्ध नहीं होती। वहीं सांस्कृतिक असंप्रेषणीयता तब सामने आती है जब किसी सांस्कृतिक संदर्भ, प्रतीक या सामाजिक व्यवहार का लक्ष्यभाषा में समकक्ष रूप उपलब्ध नहीं होता। कैटफर्ड के अनुसार ऐसी स्थितियों में अनुवादक को भाषिक प्रतिस्थापन के साथसाथ सांस्कृतिक व्याख्या का- सहारा लेना पड़ता है।

कैटफर्ड अनुवाद को मुख्यतः स्रोतभाषा से लक्ष्यभाषा की एकदिशीय प्रक्रिया मानते हैं। उनका योगदान अनुवादअध्ययन को वैज्ञानिक और विश्लेषणात्मक आधार प्रदान करता है, यद्यपि उनकी दृष्टि को कभीकभी अत्यधिक - संरचनात्मक और सीमित भी माना गया है।

5.3.3 पीटर न्यूमार्क

पीटर न्यूमार्क आधुनिक पाश्चात्य अनुवादचिंतकों में एक संतुलित और व्यवहारप्रधान दृष्टिकोण के लिए जाने जाते - हैं। वे अनुवाद को न तो केवल भाषावैज्ञानिक क्रिया मानते हैं और न ही पूर्णतः सृजनात्मक लेखन, बल्कि दोनों के मध्य स्थित एक व्यावहारिक गतिविधि के रूप में देखते हैं।न्यूमार्क ने अनुवाद की दो प्रमुख विधियों -अर्थानुवाद)Semantic Translation) और संप्रेषणात्मक अनुवाद)Communicative Translation) -को स्पष्ट रूप से परिभाषित किया। अर्थानुवाद में स्रोतपाठ की भाषा, शैली और संरचना के प्रति अधिक निष्ठा होती है, जबकि संप्रेषणात्मक अनुवाद में लक्ष्यभाषा के पाठक की समझ, अपेक्षा और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि को प्राथमिकता दी जाती है।

न्यूमार्क का मत है कि किसी एक विधि को सर्वश्रेष्ठ नहीं कहा जा सकता। पाठ का प्रकार, उद्देश्य और पाठकवर्ग यह निर्धारित करता है कि किस विधि का प्रयोग किया जाए। वे यह भी स्वीकार करते हैं कि अनुवाद में कुछ हद तक अर्थहानि - अपरिहार्य है, किंतु कुशल अनुवादक संतुलन बनाकर इस हानि को न्यूनतम कर सकता है।न्यूमार्क अनुवादक को स्वतंत्र निर्णयकर्ता मानते हैं और उसे संदर्भ, शैली तथा प्रयोजन के अनुसार रणनीति अपनाने की अनुमति देते हैं। इसी कारण उनका अनुवाद,चिंतन- अनुवादशिक्षण और व्यावहारिक प्रशिक्षण में अत्यंत उपयोगी सिद्ध हुआ है।

5.3.4 गिडियन टौरी

गिडियन टौरी आधुनिक अनुवादअध्ययन में वर्णनात्मक अनुवादअध्ययन (Descriptive Translation Studies) के प्रमुख प्रवर्तक हैं। वे अनुवाद को एक सामाजिक और सांस्कृतिक व्यवहार के रूप में देखते हैं, न कि केवल भाषिक प्रक्रिया के रूप में।

टौरी का मानना है कि अनुवाद का अध्ययन इस प्रश्न पर आधारित नहीं होना चाहिए कि अनुवाद कैसा होना चाहिए, बल्कि इस पर आधारित होना चाहिए कि अनुवाद वास्तव में कैसा किया जाता है। इसी दृष्टि से उन्होंने अनुवाद में मानदंडों (Norms) की अवधारणा प्रस्तुत की। ये मानदंड किसी विशेष समाज, साहित्यिक परंपरा और कालखंड में अनुवादक के चयन और रणनीतियों को नियंत्रित करते हैं।टौरी के अनुसार अनुवादक का कार्य पूरी तरह व्यक्तिगत नहीं होता, बल्कि वह सामाजिक अपेक्षाओं और सांस्कृतिक स्वीकृतियों से प्रभावित होता है। इस कारण एक ही स्रोतपाठ के विभिन्न समाजों में अलगअलग अनुवाद संभव होते हैं। टौरी की यह दृष्टि अनुवाद को साहित्य-, संस्कृति और समाजशास्त्र से जोड़ती है।

उनका योगदान अनुवादअध्ययन को एक स्वतंत्र अकादमिक अनुशासन के रूप में स्थापित करने में अत्यंत महत्वपूर्ण माना जाता है।

5.4 पाश्चात्य अनुवाद चिंतकों की अवधारणाप्रासंगिकता / उपयोगिता :

5.4.1 यूजीन नाइडा

यूजीन नाइडा की अनुवादसंबंधी अवधारणा की उपयोगिता इस तथ्य में निहित है कि वह अनुवाद को केवल भाषिक रूपांतरण न मानकर अर्थ, प्रभाव और संप्रेषण की समग्र प्रक्रिया के रूप में देखती है। नाइडा का मत है कि अनुवादक के लिए केवल दो भाषाओं का ज्ञान पर्याप्त नहीं होता, बल्कि उसे स्रोतपाठ के भाव, संदर्भ और संरचना को गहराई से समझना आवश्यक है। इस दृष्टि से उनकी अवधारणा अनुवादक की बौद्धिक और सृजनात्मक भूमिका को रेखांकित करती है।

नाइडा की अनुवाददृष्टि आधुनिक अनुवाद मान्यताओं के अनुरूप इसलिए भी मानी जाती है क्योंकि वह अनुवादक की व्यक्तिगत संवेदनशीलता, जीवनदृष्टि तथा सांस्कृतिक समझ को अनुवाद-प्रक्रिया का अनिवार्य अंग मानती है। उनके अनुसार मूल रचना का सम्यक् अनुवाद तभी संभव है जब अनुवादक मूल लेखक की मानसिक संरचना और भावात्मक संसार को समझ सके। यह दृष्टिकोण चॉम्स्की की भाषावैज्ञानिक संरचनाओं से प्रभावित होने के कारण भाषिक विश्लेषण को भी पर्याप्त महत्व देता है।

नाइडा की अवधारणा की एक महत्त्वपूर्ण प्रासंगिकता यह है कि वह अनुवाद को रहस्योद्घाटन)revelation) की प्रक्रिया मानती है, जिसमें मूल संदेश को लक्ष्य भाषा में इस प्रकार प्रस्तुत किया जाता है कि उसका प्रभाव पाठक तक सहज रूप से पहुँच सके। इस कारण उनकी अवधारणा धार्मिक, साहित्यिक तथा सांस्कृतिक ग्रंथों के अनुवाद में विशेष रूप से उपयोगी सिद्ध होती है। आधुनिक बहुभाषिक समाज में नाइडा की अनुवाददृष्टि आज भी व्यापक स्वीकृति प्राप्त करती है।

5.4.2 जे .सी .कैटफर्ड

जेकैटफर्ड की अनुवाद .सी .अवधारणा की उपयोगिता मुख्यतः उसके भाषावैज्ञानिक और संरचनात्मक आधार में निहित है। उन्होंने अनुवाद को स्रोत भाषा)Source Language) और लक्ष्य भाषा)Target Language) के बीच अर्थप्रतिस्थापन)substitution of meanings) की प्रक्रिया के रूप में परिभाषित किया। उनके अनुसार अनुवाद में लक्ष्य भाषा के अर्थ, स्रोत भाषा के अर्थों का स्थान लेते हैं, न कि उनका प्रत्यक्ष स्थानांतरण होता है।

"In 'Translation, there is substitution ofTL (Target Language) Meanings for SL (Source Language) meanings: Not Transfereuce ofTL meanings in to the SL. In 'Transference' there is an implantation of SL meanings in to the TL text. These two processes must be clearly differentiated in any theory of Translation.'"

J. C. Catford (1965) A Linguistic Theory of Translation, Landon : Oxford University Press.

कैटफर्ड की अवधारणा की विशेष प्रासंगिकता यह है कि उन्होंने भाषिक असंप्रेषणीयता)linguistic untranslatability) और सांस्कृतिक असंप्रेषणीयता)cultural untranslatability) जैसे महत्त्वपूर्ण सिद्धांतों को स्पष्ट रूप से प्रतिपादित किया। इससे यह समझ विकसित होती है कि प्रत्येक भाषा की अपनी संरचनात्मक सीमाएँ होती हैं और सभी भाषिक इकाइयों का पूर्ण अनुवाद संभव नहीं होता। यह विचार अनुवादक को यथार्थवादी दृष्टि अपनाने के लिए प्रेरित करता है।

महत्वपूर्ण बिंदु

कैटफर्ड की अनुवादअवधारणा की एक विशेष महत्ता यह भी है कि उसने अनुवाद को नियमबद्ध और जाँच योग्य प्रक्रिया के रूप में स्थापित किया। उनके सिद्धांत के माध्यम से अनुवाद का मूल्यांकन व्यक्तिपरक रुचि या सौंदर्यबोध पर आधारित न होकर, भाषिक स्तरोंजैसे- ध्वन्यात्मक, व्याकरणिक और अर्थगत संरचनाके आधार पर किया जा सकता है। इससे अनुवादअध्ययन में वस्तुनिष्ठता (objectivity) का विकास हुआ और अनुवाद को अकादमिक अनुशासन के रूप में मान्यता मिली। यद्यपि उनकी दृष्टि साहित्यिक अनुवाद में सीमित प्रतीत होती है, फिर भी तकनीकी, वैज्ञानिक और प्रशासनिक अनुवादों के क्षेत्र में कैटफर्ड की अवधारणा आज भी एक ठोस सैद्धांतिक आधार प्रदान करती है।

कैटफर्ड की अवधारणा अनुवादअध्ययन को एक वैज्ञानिक अनुशासन के रूप में स्थापित करने में सहायक सिद्ध हुई। यद्यपि उनकी दृष्टि साहित्यिक अनुवाद की अपेक्षा तकनीकी और औपचारिक अनुवादों में अधिक उपयोगी मानी

जाती है, फिर भी अनुवाद सिद्धांत के क्षेत्र में उनके द्वारा प्रस्तुत भाषावैज्ञानिक ढाँचा आज भी अकादमिक दृष्टि से अत्यंत महत्त्वपूर्ण और प्रासंगिक है।

5.4.3 पीटर न्यूमार्क

पीटर न्यूमार्क की अनुवादअवधारणा की प्रमुख उपयोगिता उसका व्यावहारिक और संतुलित स्वरूप है। उन्होंने संरचनात्मक भाषाविज्ञान, संप्रेषण सिद्धांत और अर्थप्रधान दृष्टिकोण के बीच सामंजस्य स्थापित करने का प्रयास किया। न्यूमार्क के अनुसार अनुवादक को पाठ के प्रकार, उद्देश्य और पाठक वर्ग को ध्यान में रखते हुए अनुवादपद्धति का चयन करना चाहिए।

न्यूमार्क द्वारा प्रतिपादित अर्थ प्रधान अनुवाद (Semantic Translation) औरसंप्रेषणात्मक अनुवाद (Communicative Translation) का भेद उनकी अवधारणा को विशेष रूप से उपयोगी बनाता है। उनके अनुसार साहित्यिक और दार्शनिक ग्रंथों में अर्थानुवाद अधिक उपयुक्त होता है, जबकि व्यावहारिक, प्रशासनिक और जनसंचार से जुड़े पाठों में संप्रेषणात्मक अनुवाद अधिक प्रभावी सिद्ध होता है। इस प्रकार उनकी अवधारणा अनुवादक को लचीला दृष्टिकोण अपनाने की स्वतंत्रता प्रदान करती है।

न्यूमार्क का यह कथन-

“The inspiration for an artistic translation can only come from an artistic translator”-

उनकी अवधारणा की सृजनात्मक प्रासंगिकता को स्पष्ट करता है। आधुनिक अनुवादप्रशिक्षण, कार्यशालाओं और व्यावसायिक अनुवादक्षेत्र में न्यूमार्क की अवधारणा आज भी अत्यंत उपयोगी और व्यावहारिक मानी जाती है।

5.4.4 गिडियन टौरी

गिडियनटौरीकी अनुवादअवधारणा की उपयोगिता उसके वर्णनात्मक)Descriptive) और सामाजिकसांस्कृतिक - दृष्टिकोण में निहित है। उन्होंने अनुवाद को किसी आदर्श या नियामक सिद्धांत के आधार पर न देखकर, वास्तविक अनुवादप्रथाओं के अध्ययन के माध्यम से समझने का प्रयास किया। इस कारण उनकी अवधारणा अनुवाद को एक सामाजिक क्रिया के रूप में स्थापित करती है।

formalist and structuralist predecessors, and as such carries certain absolute notions which limitthe coneceptual framework"

Edwin Gentzler contemporary Translation Theories, Viva Books pase 130.

टौरीकी मानदंड (Norms) संबंधी अवधारणा यह स्पष्ट करती है कि अनुवादक का निर्णय व्यक्तिगत न होकर सामाजिक, साहित्यिक और सांस्कृतिक अपेक्षाओं से प्रभावित होता है। विभिन्न कालखंडों में एक ही कृति के भिन्न अनुवाद इस तथ्य को प्रमाणित करते हैं कि अनुवाद अपने समय और समाज के मानदंडों से बँधा होता है। इस दृष्टि से टौरी की अवधारणा अनुवादइतिहास और तुलनात्मक साहित्य के अध्ययन में अत्यंत सहायक है।

5.5 अनुवाद का स्वरूपअनुवाद चिंतकों की अवधारणाओं के संदर्भ में :

पाश्चात्य अनुवादचिंतन में अनुवाद का स्वरूप केवल भाषिक क्रिया नहीं माना गया है-, बल्कि इसे एक ऐसी बौद्धिक, सांस्कृतिक और सामाजिक प्रक्रिया के रूप में समझा गया है जिसमें अर्थ, संरचना, प्रभाव और पाठकीय ग्रहणशीलता सभी सम्मिलित रहते हैं। विभिन्न अनुवादचिंतकों ने अपनेअपने सैद्धांतिक दृष्टिकोण के आधार पर अनुवाद -

अलग रूपों में परिभाषित किया है। इन दृष्टिकोणों क-के स्वरूप को अलगे अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि अनुवाद न तो पूर्णतः यांत्रिक क्रिया है और न ही पूर्णतः स्वतंत्र रचनात्मक प्रक्रिया, बल्कि यह दोनों के बीच स्थित एक संतुलित कार्य है।

5.5.1 यूजीन नाइडा

यूजीन नाइडा के अनुसार अनुवाद का स्वरूप मूलतः संदेश के प्रभाव के पुनर्सृजन से जुड़ा हुआ है। वे अनुवाद को स्रोत भाषा और लक्ष्य भाषा के शब्दों अथवा संरचनाओं के बीच समानता खोजने की प्रक्रिया नहीं मानते, बल्कि उसे पाठकप्रतिक्रिया के स्तर पर घटित होने वाली प्रक्रिया के रूप में देखते हैं। नाइडा का मानना है कि यदि अनूदित पाठ लक्ष्य भाषा के पाठक में वही प्रतिक्रिया उत्पन्न नहीं कर पाता जो मूल पाठ स्रोत भाषा के पाठक में करता है, तो ऐसा अनुवाद सफल नहीं कहा जा सकता।

नाइडा की दृष्टि में अनुवाद का स्वरूप औपचारिक समानता)Formal Equivalence) से अधिक गतिशील अथवा कार्यात्मक समतुल्यता)Dynamic / Functional Equivalence) पर आधारित होना चाहिए। इसका अर्थ यह है कि अनुवाद में शब्द प्रति शब्द अर्थ की अपेक्षा भाव, आशय और संप्रेषणीयता को प्राथमिकता दी जानी चाहिए। वे यह स्वीकार करते हैं कि दो भिन्न भाषाओं और संस्कृतियों के बीच पूर्ण संरचनात्मक समानता संभव नहीं है, इसलिए अनुवादक को आवश्यकतानुसार रूपांतरण की स्वतंत्रता मिलनी चाहिए।

नाइडा के अनुसार अनुवाद का स्वरूप इस बात पर निर्भर करता है कि अनुवाद किस सांस्कृतिक परिवेश में किया जा रहा है और लक्ष्य पाठक की सामाजिक सांस्कृतिक पृष्ठभूमि क्या है। इसी-कारण वे धार्मिक, बाइबिलीय और जनसंचार - से जुड़े अनुवादों में अपने सिद्धांत को विशेष रूप से उपयोगी मानते हैं।

नाइडा के शब्दों में-

"Translation consists in reproducing in the receptor language the closest natural equivalent of the source language message, first in meaning and secondly in style."

इस परिभाषा के आलोक में यह कहा जा सकता है कि नाइडा के लिए अनुवाद का स्वरूप एक पाठककेन्द्रित, प्रभावप्रधान और सांस्कृतिक रूप से अनुकूल प्रक्रिया है, जिसमें अनुवादक को केवल भाषाविद् नहीं, बल्कि संप्रेषक की भूमिका भी निभानी पड़ती है।

5.5.2 जेकैटफर्ड .सी .

जेकैटफर्ड ने अनुवाद के स्वरूप को भाषा .सी .वैज्ञानिक दृष्टिकोण से परिभाषित किया है। उनके अनुसार अनुवाद एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें स्रोत भाषा की पाठसामग्री को लक्ष्य भाषा की समतुल्य पाठसामग्री से प्रतिस्थापित किया जाता है। यह प्रतिस्थापन अर्थ के स्तर पर होता है, न कि केवल शब्दों के स्तर पर।

कैटफर्ड का मत है कि अनुवाद में"स्थानांतरण" (Transference) नहीं, बल्कि"प्रतिस्थापन" (Substitution) होता है। वे इस बात पर विशेष बल देते हैं कि स्रोत भाषा के अर्थ लक्ष्य भाषा में स्थानांतरित नहीं होते, बल्कि लक्ष्य भाषा के अर्थ स्रोत भाषा के अर्थों का स्थान लेते हैं। इसी आधार पर उन्होंने भाषिक और सांस्कृतिक असंप्रेषणीयता (Linguistic and Cultural Untranslatability) की अवधारणा प्रस्तुत की।

कैटफर्ड के अनुसार-

"In translation, there is substitution of TL meanings for SL meanings; not transference of SL meanings into the TL."

अनुवाद के स्वरूप को स्पष्ट करते हुए कैटफर्ड ने पूर्ण अनुवाद)Total Translation) और सीमित अनुवाद (Restricted Translation) की अवधारणाएँ प्रस्तुत कीं। उनके अनुसार यदि स्रोत भाषा की संरचना के सभी स्तरों का लक्ष्य भाषा में प्रतिस्थापन संभव हो, तो वह पूर्ण अनुवाद कहलाता है; जबकि यदि केवल किसी एक स्तर पर प्रतिस्थापन संभव हो, तो वह सीमित अनुवाद होता है।इस प्रकार कैटफर्ड के लिए अनुवाद का स्वरूप संरचनात्मक, विश्लेषणात्मक और नियमआधारित है, जिसमें भाषाविज्ञान की केंद्रीय भूमिका है और सांस्कृतिकभावात्मक पक्ष अपेक्षाकृत गौण रहता - है।

5.5.3 पीटर न्यूमार्क

पीटर न्यूमार्क ने अनुवाद के स्वरूप को एक व्यावहारिक और संतुलित प्रक्रिया के रूप में प्रस्तुत किया है। वे यह मानते हैं कि अनुवाद का स्वरूप किसी एक निश्चित सिद्धांत से नियंत्रित नहीं किया जा सकता, बल्कि वह पाठ की प्रकृति, उद्देश्य और पाठक पर निर्भर करता है।

न्यूमार्क ने अर्थप्रधान अनुवाद)Semantic Translation) और संप्रेषणात्मक अनुवाद)Communicative Translation) के बीच स्पष्ट भेद स्थापित किया। उनके अनुसार अर्थप्रधान अनुवाद में मूल पाठ के अर्थ, संरचना और शैली को अधिक सुरक्षित रखा जाता है, जबकि संप्रेषणात्मक अनुवाद में लक्ष्य भाषा के पाठक की बोधगम्यता और सहजता को प्राथमिकता दी जाती है।

न्यूमार्क का मानना है कि साहित्यिक कृतियों के अनुवाद में अर्थप्रधान अनुवाद अधिक उपयुक्त होता है, क्योंकि वहाँ भाषा और शैली का विशेष महत्व होता है। इसके विपरीत, सूचनाप्रधान, प्रशासनिक या जनसंचार से जुड़े पाठों में - संप्रेषणात्मक अनुवाद अधिक प्रभावी सिद्ध होता है।

न्यूमार्क के अनुसार-

"Generally, a communicative translation is likely to be smoother, simpler, clearer and more direct."

इस दृष्टि से न्यूमार्क के लिए अनुवाद का स्वरूप उद्देश्यआधारित, पाठविशेष के अनुरूप और व्यावहारिक निर्णयों - से संचालित प्रक्रिया है, जिसमें अनुवादक की भूमिका अत्यंत सक्रिय और विवेकपूर्ण होती है।

5.5.4 गिडियन टौरी

गिडियन टौरी ने अनुवाद के स्वरूप को सामाजिकसांस्कृतिक संदर्भ में समझने का प्रयास किया। उनके अनुसार - अनुवाद कोई आदर्श या सार्वभौमिक प्रक्रिया नहीं है, बल्कि वह लक्ष्य समाज की साहित्यिक परंपराओं, सांस्कृतिक मानदंडों और ऐतिहासिक परिस्थितियों से निर्धारित होता है।

टौरी का मानना है कि अनुवाद का अध्ययन इस आधार पर नहीं किया जाना चाहिए कि अनुवाद कैसा होना चाहिए, बल्कि इस आधार पर किया जाना चाहिए कि वास्तविक रूप में अनुवाद कैसे किए गए हैं। इसी दृष्टि से उन्होंने मानदंडों (Norms) की अवधारणा प्रस्तुत की, जो यह स्पष्ट करती है कि अनुवादक के निर्णय सामाजिक अपेक्षाओं से प्रभावित होते हैं।

टौरी के अनुसार-

"A translation is not an isolated act but a function of the target culture."

उनके लिए अनुवाद का स्वरूप स्थिर नहीं, बल्कि परिवर्तनशील है। समय, समाज और सांस्कृतिक परिवेश के साथ अनुवाद के स्वरूप में भी परिवर्तन आता रहता है। इस प्रकार टौरी अनुवाद को एक सांस्कृतिक व्यवहार के रूप में देखते हैं, न कि केवल भाषिक क्रिया के रूप में।

अपनी प्रगति जांचें

प्रश्न 4. पीटर न्यूमार्क के अनुसार अर्थप्रधान अनुवाद और संप्रेषणात्मक अनुवाद में क्या अंतर है? विभिन्न पाठप्रकारों के संदर्भ में स्पष्ट कीजिए।

प्रश्न 5. गिडियन टौरी की मानदंड (Norms) की अवधारणा अनुवाद को सामाजिक-सांस्कृतिक व्यवहार के रूप में कैसे स्थापित करती है?

प्रश्न 6. पाश्चात्य अनुवादचिंतकों की अवधारणाओं के आधार पर अनुवाद के स्वरूप का समग्र मूल्यांकन कीजिए तथा बताइए कि अनुवाद को केवल भाषिक प्रक्रिया क्यों नहीं माना जा सकता।

5.5 सारांश

प्रस्तुत इकाई में पाश्चात्य अनुवादचिंतनधारा के विकास-, प्रमुख प्रवृत्तियों तथा प्रतिनिधि अनुवादचिंतकों की - अवधारणाओं का समग्र अध्ययन किया गया है। इस अध्ययन से स्पष्ट होता है कि बीसवीं शताब्दी के मध्य के बाद अनुवाद को केवल भाषिक रूपांतरण की प्रक्रिया न मानकर एक सुव्यवस्थित, सैद्धांतिक और बहुआयामी अकादमिक अनुशासन के रूप में विकसित किया गया। चिंतन में भाषा-के बाद पाश्चात्य अनुवाद 1950विज्ञान, संप्रेषण सिद्धांत, संरचनावाद, सांस्कृतिक अध्ययन और समाजशास्त्र का प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई देता है।

इकाई के आरंभिक भाग में पाश्चात्य अनुवाद से 1950-चिंतन की ऐतिहासिक परंपरा को विभिन्न कालखंडों- 1960, 1965 से 1960, से वर्तमान तक 1975 तथा 1975 से 1965के संदर्भ में प्रस्तुत किया गया है। इन कालखंडों के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि प्रारंभिक चरण में अनुवाद मुख्यतः भाषिक संरचना और व्याकरणिक समतुल्यता पर आधारित था, जबकि आगे चलकर उसमें व्यवहारिकता, संप्रेषणीयता और सांस्कृतिक संदर्भों का समावेश हुआ। समकालीन काल में अनुवाद को सामाजिकसांस्कृतिक व्यवहार के रूप में समझने की प्रवृत्ति सशक्त रूप में उभरी है।-

यूजीन नाइडा के अनुवादचिंतन में गतिशील समतुल्यता की अवधारणा के माध्यम से अनुवाद को पाठक-केंद्रित और प्रभावप्रधान प्रक्रिया के रूप में स्थापित किया गया है। नाइडा के अनुसार अनुवाद का उद्देश्य मूल संदेश के अर्थ और प्रभाव को लक्ष्यभाषा के पाठक तक सहज रूप में पहुँचाना है। उनकी दृष्टि में अनुवादक की भूमिका केवल भाषिक नहीं, बल्कि संप्रेषणात्मक और सांस्कृतिक भी है। इसके विपरीत जेकैटफर्ड ने अनुवाद को भाषा .सी .वैज्ञानिक प्रतिस्थापन की प्रक्रिया के रूप में परिभाषित करते हुए समतुल्यता, भाषिक असंप्रेषणीयता और सांस्कृतिक असंप्रेषणीयता जैसी अवधारणाओं को स्पष्ट किया। कैटफर्ड का योगदान अनुवादअध्ययन को वैज्ञानिक और संरचनात्मक आधार प्रदान करता है।पीटर न्यूमार्क ने अनुवाद के स्वरूप को व्यावहारिक और संतुलित दृष्टि से समझाते हुए अर्थानुवाद और संप्रेषणात्मक अनुवाद का भेद प्रस्तुत किया। उनका मत है कि अनुवादपद्धति का चयन पाठ के प्रकार, उद्देश्य और पाठकवर्ग के अनुसार होना चाहिए। वहीं गिडियन टौरी ने अनुवाद को सामाजिकसांस्कृतिक मानदंडों से जुड़ी प्रक्रिया के रूप में व्याख्यायित - किया और वर्णनात्मक अनुवादअध्ययन को एक स्वतंत्र अध्ययनपद्धति के रूप में स्थापित किया।

✓ 5.6 प्रगति विवरण

प्रश्न के बाद पाश्चात्य 1950**:का उत्तर 1**अनुवादचिंतन में अनुवाद को केवल भाषिक क्रिया न मानकर एक स्वतंत्र - अकादमिक अनुशासन के रूप में विकसित किया गया। इस काल में भाषाविज्ञान, संप्रेषण सिद्धांत और सांस्कृतिक अध्ययन के प्रभाव से अनुवादअध्ययन का विस्तार हुआ। इस विषय का विस्तृत विवेचन इकाई में प 5.2ुरस्तुत है।

प्रश्न :का उत्तर 2यूजीन नाइडा की गतिशीलकार्यात्मक समतुल्यता की अवधारणा अनुवाद को पाठक/केन्द्रित बनाती है, क्योंकि इसमें लक्ष्य भाषा के पाठक पर पड़ने वाले प्रभाव को प्राथमिकता दी जाती है। संबंधित विवरण के लिए इकाई देखें। 5.5.1 एवं 5.3.1

प्रश्न:का उत्तर 3 जेकैटफर्ड ने भाषिक और सांस्कृतिक असंप्रेषणीयता की अवधारणाओं के माध्यम से यह स्पष्ट .सी . तथा 5.3.2 किया कि सभी भाषिक इकाइयों का पूर्ण अनुवाद संभव नहीं होता। इसका विस्तृत विवेचन इकाई में उपलब्ध है। 5.4.2

प्रश्न :का उत्तर 4पीटर न्यूमार्क के अनुसार अर्थप्रधान अनुवाद में मूल पाठ की भाषा और शैली को प्राथमिकता दी जाती है, जबकि संप्रेषणात्मक अनुवाद में लक्ष्य भाषा के पाठक की समझ को महत्व दिया जाता है। इस अंतर की स्पष्ट व्याख्या इकाई में दी गई है। 5.5.3 एवं 5.3.3

प्रश्न :का उत्तर 5गिडियन टौरी की मानदंड)Norms) की अवधारणा अनुवाद को सामाजिकसांस्कृतिक व्यवहार के रूप - में स्थापित करती है, क्योंकि अनुवादक के निर्णय समाज और परंपराओं से प्रभावित होते हैं। इस विषय की चर्चा इकाई में की गई है। 5.4.4 और 5.3.4

प्रश्न :का उत्तर 6पाश्चात्य अनुवादचिंतकों के अन-ुसार अनुवाद केवल भाषिक प्रक्रिया नहीं, बल्कि अर्थ, प्रभाव, संस्कृति और समाज से जुड़ी बहुस्तरीय प्रक्रिया है। इसका समग्र मूल्यांकन इकाई में प्रस्तुत किया गया है। 5.5

🔍 5.7 अधिक जान्ने के लिए पढ़ें

- नाइडा, यूजीन ए .(1964) .Toward a Science of Translating. लीडेन: ईब्रिल। .जे .
- नाइडा, यूजीन एएवं टेबर ., चार्ल्स आर .(1969) .The Theory and Practice of Translation. लीडेन .ई : ब्रिल। .जे
- कैटफर्ड, जे .(1965) .सी .A Linguistic Theory of Translation. लंदनऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस। :
- न्यूमार्क, पीटर .(1981) .Approaches to Translation. ऑक्सफोर्डपर्गेमन प्रेस। :
- न्यूमार्क, पीटर .(1988) .A Textbook of Translation. न्यूयॉर्कप्रेंटिस हॉल। :
- टौरी, गिडियन .(1995) .Descriptive Translation Studies and Beyond. एम्स्टर्डमजॉन बेंजामिन्स। :
- जेन्ट्ज़लर, एडविन .(2001) .Contemporary Translation Theories. नई दिल्लीविवा बुक्स। :
- बैसनेट, सुसैन .(2002) .Translation Studies. लंदनरूटलेज। :
- वर्मीर, हांस जे .(2000) .Skopos and Commission in Translational Action. हाइडेलबर्गयूनिवर्सिटी : प्रेस।
- मोण्डी, जेरेमी .(2016) .Introducing Translation Studies. लंदनरूटलेज। :

⑦ 5.8 अभ्यास प्रश्न

—संक्षिप्त प्रश्नों के उत्तर लिखिए (क)

- पाश्चात्य अनुवादचिंतन का आधुनिक चरण किस काल से प्रारंभ माना जाता है-?
- यूजीन नाइडा की "गतिशीलसमतुल्यता"सेक्याआशयहै?
- जे" कैटफर्ड के अनुसार अनुवाद में .सी .प्रतिस्थापन"काक्याअर्थहै?
- पीटर न्यूमार्क द्वारा प्रतिपादित अनुवाद की दो प्रमुख विधियाँ कौनसी हैं-?
- गिडियन टौरी ने अनुवाद" अध्ययन में-मानदंड) "Norms) की अवधारणा क्यों प्रस्तुत की?
- पाश्चात्य अनुवाद चिंतन में अनुवाद-को सामाजिक प्रक्रिया क्यों माना जाता है?

—निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लिखिए (ख)

1. चिंतन की प्रमुख प्रवृत्तियों का समग्र विवेचन प्रस्तुत कीजिए।-के बाद विकसित पाश्चात्य अनुवाद 1950
2. यूजीन नाइडा की अनुवाददृष्टि का संक्षिप्त आलोचनात्मक मूल्यांकन दीजिए।
3. जेकैटफर्ड की भाषा .सी .वैज्ञानिक अनुवादअवधारणा की उपयोगिता तथा सीमाओं का तर्कसंगत विश्लेषण दें।
4. पीटर न्यूमार्क के अर्थप्रधान और संप्रेषणात्मक अनुवाद सिद्धांत को उपयुक्त उदाहरणों सहित स्पष्ट कीजिए।
5. गिडियन टौरी द्वारा प्रतिपादित वर्णनात्मक अनुवाद अध्ययन-के महत्व का व्याख्यात्मक विवरण प्रस्तुत करें।
6. विभिन्न पाश्चात्य अनुवादचिंतकों की अवधारणाओं के आलोक में अनुवाद के स्वरूप पर विचार करें।

शब्दकोश

पाश्चात्य अनुवादपश्चिमी विद्वानों की अनुवाद संबंधी विचारधारा। : चिंतन–, समतुल्यता अर्थ या प्रभाव की : समानता, गतिशील समतुल्यता पाठकीय प्रभाव की समानता। :, औपचारिक समतुल्यता भाषिक संरचना की : समानता।, संप्रेषणात्मक अनुवाद केन्द्रित अनुवाद।-पाठक :, अर्थनिष्ठ अनुवाद।-अर्थ : प्रधान अनुवाद-, प्रतिस्थापन : अर्थ का स्थान लेना।, स्थानांतरण अर्थ का सीधे स्थान परिवर्तन। :, भाषिक असंप्रेषणीयता भाषागत सीमाओं से : उत्पन्न कठिनाई।, सांस्कृतिक असंप्रेषणीयता सांस्कृतिक संदर्भ की बाधा। :, पाठकपाठक की अनुभूति : प्रतिक्रिया-या प्रभाव। इत्यादि।

*** ***** ***

इकाई 6 - अनुवादअनुसृजन :, पुनर्लेखन एवं नवलेखन

इकाई की रूपरेखा

6.1 उद्देश्य
6.2 प्रस्तावाना
6.3 अनुवाद और सर्जनात्मक साहित्य
6.4 अनुवाद और अनुसृजन
6.4.1 अनुसृजन से तात्पर्य
6.4.2 अनुसृजन की आवश्यकता एवं उपयोगिता
6.5 अनुवाद और पुनर्लेखन
6.5.1 पुनर्लेखन की प्रक्रिया के रूप में अनुवादपाठीय हस्तक्षेप का साधन :
6.6 अनुवाद और नवलेखन
6.7 सारांश
6.8 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)
6.9 अधिक जानने के लिए पढ़ें
6.10 अभ्यास प्रश्न

6.1 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन से आप-

- अनुवाद औरसर्जनात्मकसाहित्यकेपारस्परिकसंबंधकोस्पष्टरूपसेसमझसकेंगे।
- यहजानसकेंगेकिसर्जनात्मकसाहित्यकेअनुवादमेंकेवलभाषिकरूपांतरणनहीं, बल्कि सृजनात्मक चेतना की भी महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है।
- अनुवाद और अनुसृजन के अंतर एवं साम्य को पहचानने में सक्षम होंगे तथा अनुसृजन की संकल्पना को सैद्धांतिक और व्यावहारिक स्तर पर समझ सकेंगे।
- अनुसृजनकीप्रक्रिया, उसकी सीमाएँ तथा उसकी साहित्यिक उपयोगिता का विवेचन कर सकेंगे।
- नवलेखनकीअवधारणाकोअनुवादकेसंदर्भ में समझते हुए यह विश्लेषण कर सकेंगे कि किस स्थिति में अनुवाद स्वतंत्र सर्जनात्मक लेखन का रूप ग्रहण कर लेता है।
- अनुवाद, अनुसृजन, पुनर्लेखन और नवलेखनइन चारों प्रक्रियाओं के बीच सूक्ष्म भेदों—औरअंतर्संबंधों को पहचानने की क्षमता विकसित कर सकेंगे।

6.2 प्रस्तावाना

अनुवाद केवल एक भाषा के शब्दों को दूसरी भाषा में रूपांतरित करने की प्रक्रिया नहीं है, बल्कि वह एक जटिल सृजनात्मक, बौद्धिक और सांस्कृतिक कार्य है। विशेष रूप से सर्जनात्मक साहित्य के क्षेत्र में अनुवाद की भूमिका और भी अधिक संवेदनशील तथा चुनौतीपूर्ण हो जाती है। कविता, कहानी, उपन्यास और नाटक जैसी साहित्यिक विधाओं में भाव,

कल्पना, प्रतीक, शैली और सांस्कृतिक संदर्भों की उपस्थिति अनुवाद को एक विशिष्ट रचनात्मक प्रक्रिया बना देती है। इसी कारण अनुवाद और सर्जनात्मक साहित्य के संबंध को केवल भाषिक समानता के स्तर पर नहीं, बल्कि सृजनात्मक चेतना के स्तर पर समझना आवश्यक हो जाता है।

आधुनिक साहित्यिक चिंतन में अनुवाद को अनुसृजन, पुनर्लेखन और नवलेखन जैसी प्रक्रियाओं से जोड़कर देखा जाने लगा है। अनुसृजन में मूल रचना से प्रेरणा लेकर नई भाषा और सांस्कृतिक परिवेश में रचना का पुनः सृजन किया जाता है, जबकि पुनर्लेखन में अनुवादक पाठ के साथ सीमित या विस्तृत रचनात्मक हस्तक्षेप करता है। वहीं नवलेखन की स्थिति में अनुवाद स्वतंत्र सर्जनात्मक अभिव्यक्ति का रूप ग्रहण कर लेता है।इस इकाई में अनुवाद की इन्हीं बहुआयामी भूमिकाओं का अध्ययन किया गया है, जिससे यह स्पष्ट हो सके कि साहित्यिक अनुवाद एक यांत्रिक क्रिया नहीं, बल्कि सृजनात्मक साहित्य का अभिन्न अंग है।

6.3 अनुवाद और सर्जनात्मक साहित्य

अनुवाद और सर्जनात्मक साहित्य का संबंध अत्यंत घनिष्ठ और बहुआयामी है। सर्जनात्मक साहित्य केवल कल्पना की उपज नहीं होता, बल्कि वह लेखक की संवेदना, अनुभव, सांस्कृतिक चेतना और भाषिक कौशल का सजीव रूप होता है। जब ऐसे साहित्य का अनुवाद किया जाता है, तो अनुवादक के सामने केवल शब्दों को दूसरी भाषा में बदलने की चुनौती नहीं होती, बल्कि मूल रचना की भावात्मक गहराई, सौंदर्यबोध और कलात्मक संरचना को लक्ष्यभाषा में पुनः सृजित करने का दायित्व भी होता है। इस दृष्टि से सर्जनात्मक साहित्य का अनुवाद एक रचनात्मक कर्म के रूप में सामने आता है। सर्जनात्मक साहित्य के अनुवाद में अनुवादक स्वयं एक सहरचनाकार की भूमिका निभाता है। उसे मूल लेखक की शैली, प्रतीकविधान-, बिंबयोजना और सांस्कृतिक संदर्भों को आत्मसात कर लक्ष्य-भाषा में उसी प्रभाव के साथ प्रस्तुत करना होता है। कविता, कहानी, उपन्यास और नाटक जैसे साहित्यिक रूपों में यह प्रक्रिया और भी जटिल हो जाती है, क्योंकि इनमें भाषा का सौंदर्य और भावसंवेदना प्रधान होती है।-

इसी संदर्भ में जॉर्ज स्टाइनर का यह कथन उल्लेखनीय है—

"Translation is an art of interpretation, where the translator must creatively negotiate between fidelity to the original and vitality in the new language."

यह कथन स्पष्ट करता है कि सर्जनात्मक साहित्य का अनुवाद एक कलात्मक व्याख्या है, जिसमें निष्ठा और नवीनता के बीच संतुलन स्थापित करना अनुवादक की सबसे बड़ी उपलब्धि होती है।

महत्वपूर्ण बिंदु

सर्जनात्मक साहित्य का अनुवाद एक सहरचनात्मक प्रक्रिया है, जिसमें अनुवादक मूल रचना की आत्मा, भाव और सौंदर्यबोध को नए भाषिक-सांस्कृतिक संदर्भ में पुनः सृजित करता है, न कि केवल शब्दों का रूपांतरण करता है।

6.4 अनुवाद और अनुसृजन

सर्जनात्मक साहित्य मनुष्य की संवेदनाओं, कल्पनाशक्ति और जीवनानुभवों की कलात्मक अभिव्यक्ति है। कविता, कहानी, उपन्यास, नाटक आदि विधाओं में रचित साहित्य केवल भाषिक संरचना नहीं होता, बल्कि उसमें भाव, प्रतीक, सांस्कृतिक संकेत और सौंदर्यबोध समाहित रहता है। जब ऐसे साहित्य का अनुवाद किया जाता है, तब अनुवादक का कार्य केवल शब्दों का स्थानांतरण न होकर सृजनात्मक पुनर्रचना का रूप ले लेता है। यही कारण है कि सर्जनात्मक साहित्य का

अनुवाद सामान्य गद्य या तकनीकी पाठों की अपेक्षा अधिक जटिल माना जाता है। सर्जनात्मक साहित्य के अनुवाद में अनुवादक को मूल रचना की आत्मा, भावधारा और कलात्मक प्रभाव को लक्ष्यभाषा में पुनर्संयोजित करना पड़ता है। इसमें भाषा के साथसाथ संस्कृति-, परंपरा और पाठकीय अपेक्षाओं का भी ध्यान आवश्यक होता है। यदि अनुवाद केवल शाब्दिक स्तर तक सीमित रह जाए, तो मूल रचना की सर्जनात्मक शक्ति क्षीण हो जाती है। अतः सफल साहित्यिक अनुवाद वही है जिसमें मूल भाव सुरक्षित रहते हुए भी लक्ष्यभाषा में एक स्वतंत्र और प्रभावशाली कृति का निर्माण हो।

इस संदर्भ में साहित्यिक अनुवाद को एक रचनात्मक प्रक्रिया मानते हुए अनेक पाश्चात्य विद्वानों ने इसे 'पुनःसृजन' के निकट माना है। उदाहरणस्वरूप, जॉर्ज स्टाइनर)George Steiner) साहित्यिक अनुवाद को केवल भाषिक हस्तांतरण नहीं, बल्कि एक सक्रिय व्याख्यात्मक कर्म मानते हैं। उनके अनुसार-

"Translation is not a mechanical transfer of words from one language to another, but an act of creative interpretation in which meaning is continuously reshaped."

इस दृष्टि से स्पष्ट होता है कि सर्जनात्मक साहित्य का अनुवाद मूल कृति के प्रति निष्ठा और अनुवादक की सृजनात्मक स्वतंत्रता -दोनों के संतुलन पर आधारित होता है। यही संतुलन साहित्यिक अनुवाद को एक स्वतंत्र और मूल्यवान साहित्यिक कर्म के रूप में प्रतिष्ठित करता है।

6.4.1 अनुसृजन से तात्पर्य

'अनुसृजन' का आशय उस साहित्यिक प्रक्रिया से है, जिसमें किसी मूल रचना को आधार बनाकर उसके भाव, संवेदना और सर्जनात्मक ऊर्जा को लक्ष्यभाषा अथवा नए सांस्कृतिक संदर्भ में पुनः रचा जाता है। यह प्रक्रिया न तो शुद्ध शाब्दिक अनुवाद तक सीमित होती है और न ही पूर्णतः स्वतंत्र मौलिक लेखन कही जा सकती है, बल्कि यह दोनों के मध्य स्थित एक सृजनात्मक और पुनर्रचनात्मक साहित्यिक उपक्रम है। अनुसृजन में मूल कृति की भावात्मक संरचना, कथ्य या केंद्रीय अनुभूति सुरक्षित रहती है, किंतु भाषा, शैली, प्रतीक-विधान और अभिव्यक्ति के स्तर पर आवश्यक परिवर्तन किए जाते हैं, जिससे रचना नए पाठक वर्ग के लिए अधिक संप्रेषणीय और प्रभावी बन सके।

अनुसृजन की प्रक्रिया में लेखक अथवा अनुवादक को मूल पाठ के प्रति संवेदनशील रहते हुए पर्याप्त सर्जनात्मक स्वतंत्रता प्राप्त होती है। यहाँ उद्देश्य मूल रचना की हूबहू प्रतिकृति तैयार करना नहीं होता, बल्कि उसकी 'आत्मा' को नए भाषिक और सांस्कृतिक परिवेश में जीवंत रूप प्रदान करना होता है। इसी कारण अनुसृजन को साहित्यिक पुनर्संरचना (literary re-creation) का एक महत्त्वपूर्ण रूप माना जाता है।

भारतीय साहित्यिक परंपरा में अनुसृजन की अवधारणा अत्यंत प्राचीन और सुदृढ़ रही है। भारतीय काव्यशास्त्र में भाव, रस और ध्वनि को साहित्य का प्राण माना गया है। आचार्य आनंदवर्धन के अनुसार काव्य की आत्मा ध्वनि में निहित होती है; इस दृष्टि से अनुसृजन का मूल लक्ष्य शब्दों के स्थानांतरण की अपेक्षा भाव और रस की पुनःस्थापना होता है। यही कारण है कि भारतीय परंपरा में रामायण, महाभारत और पुराणों के विविध भाषिक और सांस्कृतिक रूपांतरणों को स्वतंत्र साहित्यिक कृतियों के रूप में मान्यता प्राप्त है। तुलसीदास, कंबन और कृत्तिवास द्वारा रचित रामकथाएँ अनुसृजन के श्रेष्ठ उदाहरण हैं, जिनमें मूल कथा की आत्मा सुरक्षित रहते हुए स्थानीय समाज की संवेदनाएँ समाहित हो गई हैं।

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के विचारों के आलोक में भी अनुसृजन को समझा जा सकता है। उनके अनुसार साहित्य परंपरा और नवीनता के संतुलन से विकसित होता है। अनुसृजन इसी संतुलन का माध्यम है, क्योंकि यह परंपरा को बनाए रखते हुए नवीन संदर्भों में पुनः स्थापित करता है। इस प्रकार अनुसृजन साहित्य को न तो अतीत से पूर्णतः अलग करता है और न ही केवल उसकी पुनरावृत्ति करता है।

पाश्चात्य चिंतन में भी अनुसृजन अथवा 'Adaptation' को सर्जनात्मक प्रक्रिया के रूप में देखा गया है। इस संदर्भ में लिंडा हचियन (Linda Hutcheon) का कथन उल्लेखनीय है-

"Adaptation is not merely a repetition of an earlier work, but a creative reinterpretation that gives the original a new life in a new context."

यह परिभाषा स्पष्ट करती है कि अनुसृजन मूल रचना के प्रति निष्ठा बनाए रखते हुए भी उसे नए संदर्भों में नए अर्थ प्रदान करता है। इसी क्रम में जॉर्ज स्टाइनर (George Steiner) का यह कथन भी महत्त्वपूर्ण है-

"To understand is to interpret, and to interpret is already to translate."

स्टाइनर का यह विचार इस तथ्य को रेखांकित करता है कि प्रत्येक समझ एक प्रकार का पुनर्सृजन है, और इसी प्रक्रिया में अनुसृजन साहित्य को नए अर्थ-क्षितिज प्रदान करता है।

6.4.2 अनुसृजन की आवश्यकता एवं उपयोगिता

साहित्यिक परंपरा में अनुसृजन का विशेष महत्व है, क्योंकि यह विभिन्न भाषाओं, संस्कृतियों और कालखंडों के बीच सार्थक संवाद स्थापित करता है। इसके माध्यम से एक समाज का साहित्य दूसरे समाज तक पहुँचता है और वहाँ की संवेदनाओं, जीवन-दृष्टि तथा सांस्कृतिक अपेक्षाओं के अनुरूप नया रूप ग्रहण करता है। इस प्रक्रिया में साहित्य केवल स्थानांतरित नहीं होता, बल्कि उसका विस्तार और विकास भी होता है। भारतीय साहित्य की प्रकृति मूलतः बहुभाषी, बहुसांस्कृतिक और कालगत निरंतरता से युक्त रही है, इसी कारण यहाँ अनुसृजन को केवल अनुवाद का रूप न मानकर सर्जनात्मक पुनर्रचना की प्रक्रिया के रूप में स्वीकार किया गया है।

अनुसृजन की उपयोगिता विशेष रूप से सर्जनात्मक साहित्य में अधिक स्पष्ट रूप से दिखाई देती है, जहाँ भाव, रस और सौंदर्यबोध शब्दों की अपेक्षा अधिक महत्त्व रखते हैं। कविता, महाकाव्य, नाटक और कथासाहित्य के अनेक रूपांतरण इसीलिए सफल माने जाते हैं कि वे मूल रचना की भावनात्मक शक्ति और कलात्मक आत्मा को सुरक्षित रखते हुए नए पाठकों से जुड़ पाते हैं। अनुसृजन के माध्यम से साहित्य एक भाषा या काल की सीमा को पार कर नए सामाजिक और सांस्कृतिक संदर्भों में प्रवेश करता है तथा वहाँ अपनी प्रासंगिकता बनाए रखता है।

आचार्य रामचंद्र शुक्ल के अनुसार साहित्य समाज की चेतना का सजीव रूप होता है। इस दृष्टि से देखा जाए तो अनुसृजन साहित्य को समाज की बदलती चेतना से जोड़ने का एक प्रभावी माध्यम बन जाता है। जब कोई रचना नए समाज में प्रवेश करती है, तो अनुसृजन के द्वारा उसमें उस समाज की संवेदनाएँ, मूल्यबोध और जीवन-अनुभव समाहित हो जाते हैं। इस प्रकार अनुसृजन साहित्य को स्थिर न रखकर उसे गतिशील और परिवर्तनशील बनाए रखता है।

भारतीय काव्यशास्त्रीय परंपरा में भाव और रस को साहित्य का प्राण माना गया है। आचार्य आनंदवर्धन के अनुसार काव्य की आत्मा ध्वनि में निहित होती है। अनुसृजन की उपयोगिता इसी तथ्य में निहित है कि यह शब्दों के यांत्रिक स्थानांतरण की अपेक्षा भाव, रस और ध्वनि के संरक्षण पर अधिक बल देता है। यही कारण है कि सर्जनात्मक साहित्य- विशेषतः कविता, महाकाव्य और नाटक- में अनुसृजन अधिक सफल और प्रभावी सिद्ध होता है।

भारतीय साहित्य में रामायण और महाभारत की परंपरा अनुसृजन के महत्त्व का सर्वश्रेष्ठ उदाहरण प्रस्तुत करती है। वाल्मीकि की रामकथा से लेकर तुलसीदास, कंबन, कृत्तिवास और आधुनिक लेखकों तक रामकथा के अनेक रूप मिलते हैं। प्रत्येक अनुसृजन अपने समय, समाज और भाषा की संवेदनाओं को अभिव्यक्त करता है, फिर भी मूल कथा की आत्मा अक्षुण्ण रहती है। यह तथ्य अनुसृजन की सृजनात्मक शक्ति और सांस्कृतिक उपयोगिता को स्पष्ट करता है।

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के अनुसार साहित्य परंपरा और नवीनता के संतुलन से विकसित होता है। अनुसृजन इसी संतुलन का सशक्त माध्यम है, क्योंकि यह परंपरा को बनाए रखते हुए उसे नवीन संदर्भों में पुनर्स्थापित करता है। इस प्रकार अनुसृजन न तो अतीत से पूर्णतः विच्छिन्न होता है और न ही केवल उसकी पुनरावृत्ति करता है।

आधुनिक संदर्भ में अनुसृजन साहित्य को समकालीन विचारधाराओं, सामाजिक परिवर्तनों और पाठकीय अपेक्षाओं से जोड़ने का प्रभावी माध्यम बन गया है। विदेशी साहित्य के भारतीय भाषाओं में किए गए अनुसृजन ने न केवल साहित्यिक क्षितिज को व्यापक बनाया, बल्कि भारतीय लेखकों को नई शैलियों, विषयों और अभिव्यक्ति-पद्धतियों से भी परिचित कराया। इस प्रकार अनुवाद और अनुसृजन ने आधुनिक भारतीय साहित्य के निर्माण में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है।इस विचार को सुदृढ़ करते हुए जॉर्ज स्टाइनर (George Steiner) का कथन उल्लेखनीय है-

"To understand is to interpret, and to interpret is already to translate."

यह कथन अनुसृजन की उस बौद्धिक और सर्जनात्मक भूमिका को स्पष्ट करता है, जिसके माध्यम से साहित्य निरंतर नए अर्थ ग्रहण करता है और समय के साथ संवाद करता रहता है।

अतः कहा जा सकता है कि अनुसृजन साहित्य को केवल संरक्षित ही नहीं करता, बल्कि उसे समय, समाज और संस्कृति के साथ सक्रिय संवाद में बनाए रखता है। यही कारण है कि भारतीय साहित्यिक परंपरा में अनुसृजन को सर्जनात्मक साहित्य की जीवन-रेखा के रूप में स्वीकार किया गया है।

6.5 अनुवाद और पुनर्लेखन

आधुनिक अनुवादअध्ययन में ('पुनर्लेखन'Rewriting) की अवधारणा अनुवाद को एक निष्क्रिय भाषिक प्रक्रिया के बजाय एक सक्रिय साहित्यिकसांस्कृतिक हस्तक्षेप के रूप में समझने का अवसर प्रदान करती है। पुनर्लेखन के रूप में - अनुवाद का आशय यह है कि अनुवाद केवल मूल पाठ के अर्थ को दूसरी भाषा में स्थानांतरित नहीं करता, बल्कि उसे नए सामाजिक, वैचारिक और साहित्यिक संदर्भों में पुनः संरचित करता है। इस प्रक्रिया में पाठ का रूप, स्वर, प्रतीकात्मकता और कभीकभी उसका उद्देश्य भी परिवर्तित हो जाता है।-

भारतीय साहित्यिक परंपरा में पुनर्लेखन की प्रवृत्ति प्राचीन काल से विद्यमान रही है। रामायण, महाभारत, पुराणों और बौद्ध जैन साहित्य के विविध भाषाई एवं-सांस्कृतिक रूपांतर इस तथ्य को प्रमाणित करते हैं कि भारतीय संदर्भ में अनुवाद को कभी भी शब्दानुवाद तक सीमित नहीं माना गया। यहाँ अनुवाद प्रायः पुनर्कथन, पुनर्रचना और नवसंदर्भी प्रस्तुति के रूप में सामने आता है। इस दृष्टि से अनुवाद और पुनर्लेखन के बीच की सीमा धुंधली हो जाती है।

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के अनुसार साहित्य की विकासप्रक्रिया परंपरा और परिवर्तन के सतत द्वंद्व से निर्मित होती है। यदि इस मत को अनुवाद पर लागू किया जाए, तो स्पष्ट होता है कि पुनर्लेखन के रूप में अनुवाद परंपरा को संरक्षित करते हुए उसे नवीन सामाजिकसांस्कृतिक परिस्थितियों के अनुरूप ढालता है। इस प्रकार अनुवाद साहित्यिक विकास की - प्रक्रिया में एक सर्जनात्मक शक्ति के रूप में कार्य करता है।

पाश्चात्य अनुवादचिंतन में भी पुनर्लेखन को केंद्रीय अवधारणा के रूप में स्वीकार किया गया है। इस संदर्भ में आंद्रे लेफेवेर (André Lefevere) का कथन उल्लेखनीय है-

"Translation is a form of rewriting, shaped by ideological and poetological forces that operate within a given culture."

यह कथन स्पष्ट करता है कि अनुवाद किसी मूल्यनिरपेक्ष गतिविधि का नाम नहीं है, बल्कि वह उस समाज की विचारधारा, साहित्यिक मानदंडों और सत्तासंरचनाओं से प्रभावित होता है जिसमें वह घटित होता है।-

इस प्रकार अनुवाद और पुनर्लेखन का संबंध केवल भाषिक नहीं, बल्कि गहरे साहित्यिक और सांस्कृतिक स्तर पर स्थापित होता है। अनुवाद, पुनर्लेखन के माध्यम से साहित्य को नए पाठकसमूह, नई वैचारिक दृष्टि और नए साहित्यिक रूप प्रदान करता है।

महत्वपूर्ण बिंदु

अनुवाद, अनुसृजन, पुनर्लेखन और नवलेखन- इन चारों प्रक्रियाओं के अध्ययन से यह बोध विकसित होता है कि साहित्यिक अनुवाद परंपरा और नवीनता के संतुलन से साहित्य को निरंतर गतिशील, प्रासंगिक और सांस्कृतिक संवाद का माध्यम बनाए रखता है।

6.5.1 पुनर्लेखन की प्रक्रिया के रूप में अनुवादपाठीय हस्तक्षेप का साधन :

जब अनुवाद को पुनर्लेखन के रूप में देखा जाता है, तब यह स्पष्ट हो जाता है कि अनुवादक पाठ के साथ एक सीमा तक 'छेड़छाड़' करता है। यहाँ 'छेड़छाड़' का अर्थ नकारात्मक हस्तक्षेप नहीं, बल्कि वह सर्जनात्मक परिवर्तन है जिसके बिना कोई भी रचना नए सांस्कृतिक संदर्भ में जीवंत नहीं हो सकती। अनुवादक पाठ का चयन करता है, कुछ तत्त्वों को उभारता है, कुछ को गौण करता है और कभी-कभी मौन को भी अर्थपूर्ण बना देता है।

भारतीय परंपरा में इस प्रकार की पाठगत छूट को स्वाभाविक माना गया है। तुलसीदास की रामचरितमानस वाल्मीकि की रामायण का शब्दानुवाद नहीं है, बल्कि एक सांस्कृतिक-धार्मिक पुनर्लेखन है, जिसमें भक्ति-भाव, लोकसंवेदना और समकालीन सामाजिक मूल्य प्रधान हो जाते हैं। इसी प्रकार कंबन रामायण, कृत्तिवास रामायण और आधुनिक हिंदी रामकथाएँ मूल आख्यान को नए अर्थस्तरों में प्रतिष्ठित करती हैं।

आचार्य रामचंद्र शुक्ल के अनुसार साहित्य समाज की जीवन-दृष्टि का प्रतिफल होता है। इस दृष्टि से अनुवादक जब किसी पाठ का पुनर्लेखन करता है, तो वह उस समाज की जीवन-दृष्टि के अनुरूप पाठ को पुनर्गठित करता है। यह प्रक्रिया पाठ के साथ रचनात्मक छेड़छाड़ को अनिवार्य बना देती है।

पाश्चात्य संदर्भ में लॉरेंस वेनूटी (Lawrence Venuti) अनुवादक की इस भूमिका को विशेष रूप से रेखांकित करते हैं-

"Translation inevitably involves interpretation, and interpretation always implies transformation."

यह कथन इस तथ्य को रेखांकित करता है कि अनुवाद में पूर्ण तटस्थता संभव नहीं है। अनुवादक का चयन, उसकी भाषादृष्टि और सांस्कृतिक स्थिति पाठ को किसी न किसी रूप में परिवर्तित करती ही है।अंग्रेजी साहित्य से हिंदी में किए गए अनेक अनुवाद इस तथ्य के उदाहरण हैं। शेक्सपीयर के नाटकों के हिंदी रूपांतरों में संवाद-संरचना, पात्रों का भाषिक व्यवहार और सांस्कृतिक संकेत भारतीय दर्शक-पाठक के अनुरूप ढाले गए हैं। ये रूपांतरण मूल नाटकों का यांत्रिक अनुवाद न होकर पुनर्लेखन हैं, जिनमें पाठ को नए रंग-ढंग से प्रस्तुत किया गया है।इस प्रकार पुनर्लेखन के रूप में अनुवाद को पाठ के साथ रचनात्मक छेड़छाड़ का माध्यम कहा जा सकता है। यह छेड़छाड़ साहित्य को सीमित नहीं करती, बल्कि उसे नए अर्थ, नई ऊर्जा और नई प्रासंगिकता प्रदान करती है। अनुवाद जब पुनर्लेखन बन जाता है, तब वह केवल भाषांतरण नहीं रह जाता, बल्कि साहित्यिक नवाचार और सांस्कृतिक संवाद का सशक्त उपकरण बन जाता है।

6.6 अनुवाद और नवलेखन

आधुनिक अनुवादअध्ययन में) 'पुनर्लेखन'Rewriting) की अवधारणा अनुवाद को एक निष्क्रिय भाषिक प्रक्रिया के बजाय एक सक्रिय साहित्यिकसांस्कृतिक हस्तक्षेप के रूप में समझने का अवसर प्रदान करती है। पुनर्लेखन के रूप में - अनुवाद का आशय यह है कि अनुवाद केवल मूल पाठ के अर्थ को दूसरी भाषा में स्थानांतरित नहीं करता, बल्कि उसे नए

सामाजिक, वैचारिक और साहित्यिक संदर्भों में पुनः संरचित करता है। इस प्रक्रिया में पाठ का रूप, स्वर, प्रतीकात्मकता और कभीकभी उसका उद्देश्य भी परिवर्तित हो जाता है।-

भारतीय साहित्यिक परंपरा में पुनर्लेखन की प्रवृत्ति प्राचीन काल से विद्यमान रही है। रामायण, महाभारत, पुराणों और बौद्धजैन साहित्य के विविध भाषाई एवं सांस्कृतिक रूपांतर इस तथ्य को प्रमाणित करते हैं कि भारतीय संदर्भ में - अनुवाद को कभी भी शब्दानुवाद तक सीमित नहीं माना गयाा। यहाँ अनुवाद प्रायः पुनर्कथन, पुनर्रचना और नवसंदर्भी प्रस्तुति के रूप में सामने आता है। इस दृष्टि से अनुवाद और पुनर्लेखन के बीच की सीमा धुंधली हो जाती है।

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के अनुसार साहित्य की विकासप्रक्रिया परंपरा और परिवर्तन के सतत द्वंद्व से निर्मित होती है। यदि इस मत को अनुवाद पर लागू किया जाए, तो स्पष्ट होता है कि पुनर्लेखन के रूप में अनुवाद परंपरा को संरक्षित करते हुए उसे नवीन सामाजिकसांस्कृतिक परिस्थितियों के अनुरूप ढालता है। इस प्रकार अनुवाद साहित्यिक विकास की - प्रक्रिया में एक सर्जनात्मक शक्ति के रूप में कार्य करता है।

पाश्चात्य अनुवादचिंतन में भी पुनर्लेखन को केंद्रीय अवधारणा के रूप में स्वीकार किया गया है। इस संदर्भ में आंद्रे - (लेफेवेरAndré Lefevere) का कथन उल्लेखनीय है-

"Translation is a form of rewriting, shaped by ideological and poetological forces that operate within a given culture."

यह कथन स्पष्ट करता है कि अनुवाद किसी मूल्यनिरपेक्ष गतिविधि का नाम नहीं है-, बल्कि वह उस समाज की विचारधारा, साहित्यिक मानदंडों और सत्तास-ंरचनाओं से प्रभावित होता है जिसमें वह घटित होता है।

पुनर्लेखन की प्रक्रिया के रूप में अनुवाद पाठीय हस्तक्षेप का साधन :

अनुवाद के सर्जनात्मक आयामों की चर्चा में एक महत्त्वपूर्ण अवधारणा के रूप में उभरता है। नवलेखन 'नवलेखन' से आशय उस प्रक्रिया से है, जिसमें किसी मूल कृति को आधार बनाकर अनुवादक लक्ष्यभाषा में उसे नए साहित्यिक रूप, नई संरचना और नई अभिव्यक्ति के साथ प्रस्तुत करता है। यह प्रक्रिया केवल भाषापरिवर्तन तक सीमित नहीं रहती, बल्कि रचना को नए सांस्कृतिक, सामाजिक और साहित्यिक संदर्भों में पुनर्स्थापित करती है। इस प्रकार नवलेखन को अनुवाद की वह अवस्था कहा जा सकता है जहाँ अनुवादक रचनात्मक लेखक की भूमिका ग्रहण कर लेता है।

भारतीय साहित्यिक परंपरा में नवलेखन की अवधारणा नई नहीं है। यहाँ प्राचीन काल से ही अनुवाद को स्वतंत्र सर्जनात्मक कर्म के रूप में स्वीकार किया गया। संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश और आधुनिक भारतीय भाषाओं में उपलब्ध रामायण, महाभारत तथा पुराण की कथाएँ इस बात का प्रमाण हैं कि अनुवाद को मौलिक लेखन के समकक्ष प्रतिष्ठा प्राप्त थी। इन रचनाओं में मूल कथासूत्र तो समान रहता है-, किंतु भाषा, शिल्प, प्रतीक और भावप्रस्तुति में पर्याप्त नवीनता - दिखाई देती है। यही नवीनता नवलेखन का मूल आधार है।

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के अनुसार साहित्य परंपरा का विकास तभी संभव है, जब वह प्रत्येक युग में नए अर्थ और नए रूप ग्रहण करे। इस दृष्टि से नवलेखन साहित्यिक परंपरा को गतिशील बनाए रखने की प्रक्रिया है। अनुवादक जब किसी विदेशी या प्राचीन कृति को अपने समय और समाज की संवेदनाओं के अनुरूप ढालता है, तब वह केवल अनुवाद नहीं करता, बल्कि नवलेखन की सर्जना करता है।

पाश्चात्य अनुवाद चिंतन में भी नवलेखन को अनुवाद का अनिवार्य अंग माना गया-है। आंद्रे लेफेवर (Andre Lefevere) अनुवाद को ('पुनर्लेखन'rewriting) की संज्ञा देते हुए कहते हैं कि अनुवाद मूल रचना का ऐसा पुनर्संस्करण है, जो नई विचारधाराओं और साहित्यिक मानदंडों के अनुसार उसे रूपांतरित करता है। उनके शब्दों में-

"Translation is the most obvious form of rewriting and it is potentially the most influential."

यह कथन स्पष्ट करता है कि अनुवाद के माध्यम से होने वाला नवलेखन किसी साहित्य और समाज को गहराई से प्रभावित करने की क्षमता रखता है।

इसी क्रम में सुजीत मुखर्जी भारतीय संदर्भ में अनुवाद को मानते हैं। उनका मत है कि भारत में लंबे 'नया लेखन' -समय तक अनुवाद को मौलिक रचना से कमतर नहीं आँका गया। वे लिखते हैं

"Until the advent of western culture in India, we had always regarded translation as new writing."

यह विचार भारतीय साहित्यिक परंपरा में नवलेखन की स्वीकृति और उसकी सर्जनात्मक भूमिका को स्पष्ट करता है।

नवलेखन की प्रक्रिया में अनुवादक को पर्याप्त रचनात्मक स्वतंत्रता प्राप्त होती है, किंतु यह स्वतंत्रता मनमानी नहीं होती। मूल रचना की आत्मा, उसका भाव संसार और उसकी वैचारिक दिशा नवलेखन की आधारभूमि बने-रहते हैं। अंतर केवल इतना होता है कि अभिव्यक्ति लक्ष्यभाषा और नए पाठकवर्ग की अपेक्षाओं के अनुरूप ढल जाती है। इसी कारण नवलेखन न तो शुद्ध अनुवाद होता है और न ही पूर्णतः स्वतंत्र मौलिक लेखन, बल्कि दोनों के मध्य स्थित एक सर्जनात्मक कर्म है।

अनुवादित नवलेखन का उदाहरण

इस संदर्भ में अंग्रेज़ी साहित्य से हिंदी में किए गए नवलेखन का एक उपयुक्त उदाहरण देखा जा सकता है। शेक्सपीयर के नाटकों के हिंदी रूपांतरणजैसे- मैकबेथ का मकबूल या ओथेलो का ओमकारा -केवल शाब्दिक अनुवाद नहीं हैं, बल्कि भारतीय सामाजिक सांस्कृतिक संदर्भों-में किए गए नवलेखन हैं। मूल कथानक और संघर्ष यथावत रहते हुए भी भाषा, परिवेश और चरित्रचित्रण पूरी तरह नए रूप में सामने आते हैं। इसी प्रकार प्रेमचंद द्वारा विदेशी कथाओं के -आधार पर रचित कहानियाँ भी नवलेखन के उत्कृष्ट उदाहरण हैं, जहाँ मूल कथा को भारतीय ग्रामीण जीवन की संवेदनाओं से जोड़ दिया गया है।

अपनी प्रगति जांचें

प्रश्न 1: अनुवाद और सर्जनात्मक साहित्य के पारस्परिक संबंध को स्पष्ट कीजिए।

प्रश्न 2: सर्जनात्मक साहित्य के अनुवाद में अनुवादक की भूमिका को सह-रचनाकार क्यों माना जाता है?

प्रश्न 3: अनुसृजन से आप क्या समझते हैं? इसके प्रमुख लक्षणों का विवेचन कीजिए।

प्रश्न 4: अनुसृजन की साहित्यिक आवश्यकता और उपयोगिता पर प्रकाश डालिए।

प्रश्न 5: पुनर्लेखन के रूप में अनुवाद से क्या अभिप्राय है? इसे उदाहरण सहित स्पष्ट कीजिए।

प्रश्न 6: नवलेखन की अवधारणा को अनुवाद के संदर्भ में समझाइए तथा यह बताइए कि किस स्थिति में अनुवाद नवलेखन का रूप ग्रहण कर लेता है।

6.7 सारांश

प्रस्तुत इकाई में अनुवाद को एक यांत्रिक भाषिक प्रक्रिया के बजाय सर्जनात्मक, बौद्धिक और सांस्कृतिक कर्म के रूप में विवेचित किया गया है। इसमें स्पष्ट किया गया है कि विशेषतः सर्जनात्मक साहित्यजैसे- कविता, कहानी, उपन्यास और नाटकका अनुवाद केवल शब्दों का रूपांतरण नहीं, बल्कि भाव, रस, प्रतीक, शैली और सांस्कृतिक संदर्भों की पुनर्संरचना की प्रक्रिया है। इसी कारण साहित्यिक अनुवाद में अनुवादक एक सहरचनाकार की भूमिक-ा निभाता है।

इकाई में अनुवाद और अनुसृजन के संबंध को रेखांकित करते हुए बताया गया है कि अनुसृजन मूल रचना की आत्मा को सुरक्षित रखते हुए उसे नए भाषिक और सांस्कृतिक परिवेश में पुनः सृजित करता है। भारतीय साहित्यिक परंपरा - विशेषतः रामायण और महाभारत के विविध रूप -अनुसृजन की सशक्त परंपरा को प्रमाणित करते हैं। इसके साथ ही पुनर्लेखन की अवधारणा के माध्यम से यह स्पष्ट किया गया है कि अनुवाद पाठ के साथ रचनात्मक हस्तक्षेप करता है और उसे नई वैचारिक तथा सामाजिक परिस्थितियों के अनुरूप ढालता है।अंततः नवलेखन की संकल्पना पर विचार करते हुए यह प्रतिपादित किया गया है कि कुछ स्थितियों में अनुवाद स्वतंत्र सर्जनात्मक लेखन का रूप ग्रहण कर लेता है। इस प्रकार अनुवाद, अनुसृजन, पुनर्लेखन और नवलेखन -चारों प्रक्रियाएँ साहित्य को जीवंत, गतिशील और सांस्कृतिक संवाद का सशक्त माध्यम बनाती हैं।

✍ 6.8 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)

प्रश्न -:का उत्तर 1अनुवाद और सर्जनात्मक साहित्य का संबंध इस तथ्य में निहित है कि सर्जनात्मक साहित्य का अनुवाद केवल भाषिक रूपांतरण न होकर भाव, कल्पना और सौंदर्यबोध की पुनर्संरचना है। इस संबंध का विस्तृत विवेचन इकाई में किया 6.2गया है।

प्रश्न -:का उत्तर 2सर्जनात्मक साहित्य के अनुवाद में अनुवादक की भूमिका सहरचनाकार इसलिए मानी जाती है क्योंकि - उसे मूल रचना की शैली, प्रतीक और भावसंवेदना को लक्ष्य-भाषा में सृजनात्मक रूप से पुनः स्थापित करना होता है। संबंधित चर्चा इकाई के अंतर्ग 6.2त उपलब्ध है।

प्रश्न -:का उत्तर 3अनुसृजन वह प्रक्रिया है जिसमें मूल कृति के भाव और सर्जनात्मक ऊर्जा को नए भाषिकसांस्कृतिक - में की गई है। 6.3.1 संदर्भ में पुनः रचा जाता है। इसके प्रमुख लक्षणों की व्याख्या इकाई

प्रश्न -:का उत्तर 4अनुसृजन की साहित्यिक आवश्यकता इस कारण है कि यह साहित्य को समय, समाज और संस्कृति के साथ जीवंत बनाए रखता है। इसकी उपयोगिता का विस्तृत विवेचन इकाई में प्रस्तुत है। 6.3.2

प्रश्न पुनर्लेखन के रूप में अनुवाद से आशय उस प्रक्रिया से है जिसमें अनुवादक पाठ में वैचारिक और -:का उत्तर 5 सांस्कृतिक हस्तक्षेप करता है। इसे उदाहरण सहित इकाई में स्पष्ट किया गया है। 6.4.1 एवं 6.4

प्रश्न -:का उत्तर 6नवलेखन अनुवाद की वह अवस्था है जिसमें अनुवाद स्वतंत्र सर्जनात्मक लेखन का रूप ग्रहण कर लेता है। इस अवधारणा और उसकी स्थितियों का विवेचन इकाई में किया गया 6.5है।

🔍 6.9 अधिक जानने के लिए पढ़ें

- शुक्ल, रामचंद्र) .2011). हिंदी साहित्य का इतिहासनागरी प्रचारिणी सभा। :वाराणसी .
- द्विवेदी, हजारीप्रसाद) .2008). साहित्य की भूमिकाराजकमल प्रकाशन। :नई दिल्ली .
- मुखर्जी, सुजीत. (1994). Translation as Discovery and Other Essays. नई दिल्ली: Allied Publishers.
- तिवारी, भोलानाथ) .2009). अनुवादकिताब महल। :इलाहाबाद .विज्ञान-
- नगेन्द्र) .2010). अनुवाद सिद्धांत और व्यवहारकिताब महल :नई दिल्ली .।
- Steiner, George. (1998). After Babel: Aspects of Language and Translation. Oxford: Oxford University Press.
- Hutcheon, Linda. (2006). A Theory of Adaptation. New York: Routledge.

- Lefevere, André. (1992). Translation, Rewriting, and the Manipulation of Literary Fame. London: Routledge.
- Venuti, Lawrence. (1995). The Translator's Invisibility: A History of Translation. London: Routledge.
- Bassnett, Susan. (2014). Translation Studies. London: Routledge.

⑦ 6.10 अभ्यास

—संक्षिप्त प्रश्नों के उत्तर लिखिए (क)

1. सर्जनात्मक साहित्य से आप क्या समझते हैं?
2. अनुवाद और सर्जनात्मक साहित्य के संबंध में मुख्य अंतर क्या है?
3. शब्द का सामान्य साहित्यिक अर्थ क्या है 'अनुसृजन'?
4. पुनर्लेखन के रूप में अनुवाद से क्या तात्पर्य है?
5. नवलेखन की प्रक्रिया में अनुवादक की भूमिका कैसी होती है?
6. सर्जनात्मक साहित्य के अनुवाद में शब्दानुवाद क्यों अपर्याप्त माना जाता है?

निम्नलिखित प्रश्नों के (ख) उत्तर लिखिए—

1. अनुवाद और सर्जनात्मक साहित्य के पारस्परिक संबंध की प्रकृति को स्पष्ट कीजिए।
2. सर्जनात्मक साहित्य के अनुवाद में अनुवादक को सह-रचनाकार कहे जाने के कारणों को समझाइए।
3. अनुसृजन की अवधारणा को केंद्र में रखते हुए उसके प्रमुख लक्षणों का सुसंगत विवेचन प्रस्तुत कीजिए।
4. अनुसृजन की साहित्यिक आवश्यकता तथा उसकी उपयोगिता पर विस्तृत प्रकाश डालिए।
5. पुनर्लेखन के रूप में अनुवाद की प्रक्रिया को उपयुक्त उदाहरणों के माध्यम से व्याख्यात्मक प्रस्तुति दीजिए।
6. नवलेखन की अवधारणा को अनुवाद के संदर्भ में रखते हुए यह स्पष्ट करें कि किन परिस्थितियों में अनुवाद नवलेखन का रूप ग्रहण करता है।

शब्दकोश -

सर्जनात्मक रचनात्मक :, अनुसृजन पुनर्सृजन :, पुनर्लेखन पुनर्रचना :, नवलेखन नवीन लेखन :, सह : रचनाकार-लेखक-सह, संवेदना अनुभूति :, सौंदर्यबोध सौंदर्यानुभूति :, पाठीय हस्तक्षेप रचनात्मक :परिवर्तन, सांस्कृतिक रूपांतरण सांस्कृतिक अनुकूलन :, सर्जनात्मक स्वतंत्रता रचनात्मक स्वायत्तता : इत्यादि।

*** ***** ***

इकाई 7 - भारतीय अनुवाद परंपराप्राचीन :, मध्यकालीन और आधुनिक

इकाई की रूपरेखा

7.1 उद्देश्य
7.2 प्रस्तावाना
7.3 भारतीय अनुवाद परंपरा की प्राचीनता एवं उसके विविध ऐतिहासिक सोपान
7.4 मध्यकालीन अनुवाद परंपरा
7.5 हिंदुस्तानी पाठ के अरबी और फ़ारसी अनुवाद की परंपरा
7.6 अरबी ग्रंथों के भारतीय भाषाओं में अनुवाद
7.7 फारसी भाषा के दस्तावेजों का भारतीय भाषा में अनुवाद
7.8 उपनिवेशकालीन भारतीय अनुवाद की परंपरा
7.9 आधुनिक काल में संस्कृत, अरबी फारसी के हिंदी एवं अन्य भाषाओँ में अनुवाद
7.10 स्वतंत्रोत्तर भारत में अनुवाद की स्थिति
7.11 आधुनिक काल में अनुवाद का विस्तार
7.12 सारांश
7.13 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)
7.14 अधिक जानने के लिए पढ़ें
7.15 अभ्यास प्रश्न

7.1 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन से आप-

- भारतीय अनुवाद परंपरा की प्राचीनता और उसके ऐतिहासिक विकासक्रम को क्रमबद्ध रूप में समझ सकेंगे।
- भारतीय अनुवाद परंपरा के प्राचीन, मध्यकालीन, औपनिवेशिक और आधुनिक चरणों की प्रमुख विशेषताओं को पहचान सकेंगे।
- मध्यकालीन भारत में अरबी और फारसी भाषाओं में हुए अनुवादों की भूमिका और उसके सांस्कृतिक महत्व का विश्लेषण कर सकेंगे।
- अरबी ग्रंथों तथा फारसी दस्तावेजों के भारतीय भाषाओं में हुए अनुवादों की प्रकृति और उद्देश्य को स्पष्ट रूप से समझ सकेंगे।
- उपनिवेशकालीन भारत में अनुवाद की भूमिका को ज्ञानविस्तार-, प्रशासन और सांस्कृतिक परिवर्तन के संदर्भ में विवेचित कर सकेंगे।
- आधुनिक काल में संस्कृत, अरबी और फारसी से हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषाओं में हुए अनुवादों के महत्व को समझ सकेंगे।
- स्वतंत्रोत्तर भारत में अनुवाद की स्थिति, उसकी चुनौतियों और संभावनाओं का आलोचनात्मक मूल्यांकन कर सकेंगे।

- आधुनिक काल में अनुवाद के विस्तार को शिक्षा, साहित्य, प्रशासन और सांस्कृतिक संवाद के व्यापक संदर्भ में देखने की क्षमता विकसित कर सकेंगे।

7.2 प्रस्तावाना

भारतीय अनुवाद परंपरा विश्व की प्राचीनतम और समृद्ध बौद्धिक परंपराओं में से एक मानी जाती है। भारत की बहुभाषिक, बहुसांस्कृतिक और बहुधार्मिक संरचना ने अनुवाद को केवल भाषाओं के बीच संवाद का माध्यम ही नहीं बनाया, बल्कि उसे ज्ञान, संस्कृति और विचारों के निरंतर प्रवाह का सशक्त उपकरण भी बनाया है। भारतीय संदर्भ में अनुवाद को कभी भी मात्र शब्दानुवाद के रूप में नहीं देखा गया, बल्कि उसे भाष्य, टीका, व्याख्या, रूपांतरण, पुनर्कथन और अनुसृजन जैसी विविध प्रक्रियाओं से जोड़ा गया है।वैदिक काल से लेकर आधुनिक युग तक भारतीय समाज में ज्ञान का प्रसार अनुवाद के माध्यम से ही संभव हुआ। संस्कृत, पालि, प्राकृत, अपभ्रंश, अरबी, फारसी और बाद में अंग्रेज़ी जैसी भाषाओं के बीच हुए अनुवादों ने भारतीय बौद्धिक जीवन को व्यापक और समृद्ध बनाया। मध्यकाल में अरबीफारसी – परंपराओं के बीच सेतु का-अनुवादों ने भारतीय और इस्लामी ज्ञान कार्य किया, जबकि औपनिवेशिक काल में अनुवाद ने आधुनिक शिक्षा, प्रशासन और नवजागरण की भूमिका निभाई।

स्वतंत्रोत्तर भारत में अनुवाद साहित्यिक, शैक्षणिक और सांस्कृतिक पुनर्निर्माण का महत्त्वपूर्ण साधन बनकर उभरा। इस इकाई में भारतीय अनुवाद परंपरा के इसी दीर्घ ऐतिहासिक विकास और उसके विविध चरणों का समग्र अध्ययन प्रस्तुत किया गया है।

7.3 भारतीय अनुवाद परंपरा की प्राचीनता एवं उसके विविध ऐतिहासिक सोपान

भारतीय बौद्धिक परंपरा में अनुवादचिंतन की जड़ें अत्यंत प्राचीन काल तक जाती हैं। यद्यपि भारत में पश्चिमी देशों - की भाँति अनुवाद को एक पृथक सैद्धांतिक अनुशासन के रूप में प्रारंभिक काल में विकसित नहीं किया गया, फिर भी ज्ञान-विज्ञान, दर्शन और साहित्य के क्षेत्र में भारत की समृद्ध परंपरा इस तथ्य की साक्षी है कि यहाँ ज्ञान के आदानप्रदान के – विविध रूप विद्यमान थे। भारत प्राचीन काल में ज्ञान का एक प्रमुख केंद्र था और अन्य सभ्यताएँ यहाँ से ज्ञान ग्रहण करती थीं। इसी कारण भारतीय चिंतकों ने बाह्य ज्ञान का शब्दशः अनुवाद करने के बजाय उसे आत्मसात कर अपनी सांस्कृतिक और दार्शनिक परंपरा के अनुरूप प्रस्तुत करना अधिक उपयुक्त समझा।

प्राचीन भारतीय समाज में जीवनपरंपरा पश्चिमी ढाँचे से भिन्न थी। यहाँ वैचारिक अभिव्यक्ति को -पद्धति और ज्ञान-कठोर सिद्धांतों में बाँधने के स्थान पर अनुभव और परंपरा के माध्यम से आगे बढ़ाया गया। वेदों की रचना के तत्काल बाद से ही ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषद, निरुक्त और टीकापर-ंपरा के माध्यम से अर्थविस्तार और व्याख्या की प्रक्रिया - आरंभ हो गई थी। इसे भारतीय संदर्भ में अनुवाद का प्रारंभिक रूप माना जा सकता है, जहाँ भावानुवाद, व्याख्यान और पुनर्पाठ की परंपरा विकसित हुई। यह उल्लेखनीय है कि जिस प्रकार भारतीय ग्रंथों का अनुवाद अरब, चीन तथा अन्य देशों में किया गया, उसी प्रकार भारत में प्रारंभिक काल में विदेशी ग्रंथों के अनुवाद की प्रवृत्ति अपेक्षाकृत कम रही। इसका प्रमुख कारण यह था कि भारतीय भाषाएँ और ज्ञानपरंपराएँ इतनी समृद्ध थीं कि अपने ही ग्रंथों की व्याख्या और पुनर्रचना की - आवश्यकताअधिक महसूस की गई। कालांतर में जब लोक संस्कृति का विस्तार हुआ और गुरुशिष्य परंपरा के माध्यम से – शिक्षा का प्रसार हुआ, तब टीका, भाष्य और व्याख्या को अनुवाद के समान महत्व प्राप्त हुआ। संस्कृत नाटकों में संवाद संस्कृत में होते थे, जबकि स्त्री पात्रों और सामान्य जन के संवाद प्राकृत में रखे जाते थे। यह भाषिक अंतरण भी अनुवाद की एक व्यावहारिक प्रक्रिया थी, जिससे श्रोताओं और दर्शकों को अर्थग्रहण में सुविधा होती थी। इसी क्रम में भाष्य, टीका और व्याख्या की परंपरा निरंतर विकसित होती गई।

आगे चलकर हम देखते हैं कि गुणाढ्य की प्रसिद्ध कृति बृहत्कथा के संस्कृत में अनेक रूपांतर हुए। इसके पश्चात सारानुवाद, भावानुवाद, छायानुवाद, टीका और व्याख्या जैसी विधाएँ प्रचलित हुईं। यद्यपि यह कहा जाता है कि धर्म, दर्शन और साहित्य को समझने के लिए अनुवाद आवश्यक था, फिर भी यह आवश्यकता प्रारंभिक काल में अनिवार्य नहीं मानी गई। उत्तरवैदिक काल के आरंभ में जब विभिन्न जनपदों का स्वरूप स्थिर होने लगा, तब आर्थिक, सामाजिक और व्यापारिक गतिविधियों का विस्तार हुआ। कृषि से वाणिज्य की ओर बढ़ते समाज में यात्राओं और संपर्कों के कारण भाषाई आदानप्रदान बढ़ा। व्–यापारी एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में जाते समय स्थानीय भाषा और व्यवहार से परिचित होते गए, जिससे भाषिक संपर्क और अंतरण की प्रक्रिया को गति मिली। भारत में अनुवाद की परंपरा उतनी ही प्राचीन मानी जा सकती है जितनी वैदिक, लोक और संवाद परंपरा। वेदों को श्रुति कहा गया और लोककथाओं, लोकगीतों तथा लोकनाट्यों के माध्यम से ज्ञान का प्रसार हुआ। इन मौखिक परंपराओं में अर्थस्पष्टीकरण के लिए टीका और व्याख्या आवश्यक थी-, जो अनुवाद का ही एक रूप था। भारत को समझने के लिए वेद, उपनिषद, रामायण और महाभारत जैसे ग्रंथों का अन्य भाषाओं में अनुवाद किया गया। रामायण के अनेक भाषिक रूपांतर भारतीय भाषाओं में उपलब्ध हैं और प्रत्येक भाषा ने उसे अपनी सांस्कृतिक चेतना के अनुरूप अपनाया। पुराणों के आधार पर भी विभिन्न भाषाओं में स्वतंत्र रचनाएँ की गईं।

भारतीय अनुवाद का इतिहास अत्यंत व्यापक रहा है। प्रारंभिक काल में संस्कृत, प्राकृत, पाली और अपभ्रंश से अन्य भारतीय भाषाओं में अनुवाद हुए। आगे चलकर अरबी और फारसी के साथ भी अनुवादसंपर्क स्थापित हुआ। - आठवीं से नौवीं शताब्दी के बीच पंचतंत्र, हितोपदेश, रामायण, महाभारत और भगवद्गीता जैसे ग्रंथों का अरबी में अनुवाद हुआ। मध्यकाल में भारतीय और फारसी साहित्य के बीच गहन आदानप्रदान हुआ। भक्ति आंदोलन के दौरान भगवद्गीता – और उपनिषदों के प्रभाव से विभिन्न भाषाओं में महत्वपूर्ण रचनाएँ हुईं। मराठी संत ज्ञानेश्वर द्वारा गीता का ज्ञानेश्वरी रूपांतरण इसका उत्कृष्ट उदाहरण है। इसी प्रकार विभिन्न संत कवियों ने रामायण और महाभारत के अनुवाद और रूपांतरण प्रस्तुत किए। पंपा, कंबन, मोल्ला, तुलसीदास, प्रेमानंद, एकनाथ, बलरामदास, माधव कंदली और कृतिवास जैसे कवियों द्वारा किए गए रामायण के रूपांतर भारतीय अनुवाद परंपरा की समृद्धि को प्रमाणित करते हैं। इस प्रकार भारतीय अनुवाद परंपरा केवल भाषापरिवर्तन नहीं-, बल्कि सांस्कृतिक पुनर्सृजन और भावात्मक रूपांतरण की एक सुदीर्घ और जीवंत परंपरा रही है।

7.4 मध्यकालीन अनुवाद परंपरा

भारतीय अनुवाद परंपरा के इतिहास में मध्यकाल एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण और निर्णायक चरण माना जाता है। यह काल केवल राजनीतिक परिवर्तन का युग नहीं था, बल्कि भाषायी, सांस्कृतिक और बौद्धिक आदानप्रदान का भी सशक्त – माध्यम बना। मध्यकाल में अनुवाद केवल भाषाओं के बीच शब्दांतरण तक सीमित नहीं रहा, बल्कि वह विचारों, दर्शन, धार्मिक मान्यताओं, ऐतिहासिक दृष्टियों और सांस्कृतिक मूल्यों के संप्रेषण का प्रमुख साधन बना। इस युग में संस्कृत, फ़ारसी, अरबी, तुर्की, अवधी, ब्रज, उर्दू और हिंदी जैसी भाषाओं के बीच व्यापक अनुवाद कार्य हुआ, जिसने भारतीय साहित्य और बौद्धिक परंपरा को नई दिशा प्रदान की।

मध्यकालीन भारत में अनुवाद की आवश्यकता मुख्यतः राजनीतिक, प्रशासनिक, धार्मिक और शैक्षिक कारणों से उत्पन्न हुई। मुस्लिम शासन की स्थापना के साथ फ़ारसी को राजकीय भाषा का दर्जा प्राप्त हुआ। परिणामस्वरूप, प्रशासनिक कार्य, इतिहास लेखन, काव्य, दर्शन और धार्मिक ग्रंथों का अधिकांश सृजन फ़ारसी में होने लगा। किंतु भारत की बहुभाषिक और बहुसांस्कृतिक संरचना के कारण केवल फ़ारसी तक सीमित रहना संभव नहीं था। इस स्थिति में अनुवाद एक सेतु के रूप में उभरा, जिसके माध्यम से भारतीय परंपरागत ज्ञान और इस्लामीफ़ारसी ज्ञान परंपरा के बीच संवाद – स्थापित हुआ।

मुग़ल शासन से पूर्व भी भारत में अनुवाद की परंपरा विद्यमान थी, किंतु मध्यकाल में इसे संस्थागत स्वरूप प्राप्त हुआ। विशेष रूप से मुग़ल काल में अनुवाद को शासकीय संरक्षण मिला। बाबर और हुमायूँ के समय से ही विद्वानों, इतिहासकारों और कवियों को प्रोत्साहित किया गया, किंतु अकबर के शासनकाल में अनुवाद कार्य को अभूतपूर्व विस्तार प्राप्त हुआ। अकबर का शासनकाल मध्यकालीन अनुवाद परंपरा का स्वर्णयुग कहा जा सकता है।

अकबर को विद्या, दर्शन और विभिन्न धार्मिक परंपराओं में गहरी रुचि थी। उन्होंने फतेहपुर सीकरी में एक विशाल पुस्तकालय की स्थापना की और उसमें दुर्लभ ग्रंथों का संग्रह कराया। अकबर ने एक पृथक अनुवाद विभाग की स्थापना की, जिसमें विभिन्न भाषाओं के विद्वान एक साथ कार्य करते थे। संस्कृत, हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं के ग्रंथों का फ़ारसी में अनुवाद इसी विभाग के माध्यम से कराया गया। इस अनुवाद आंदोलन का उद्देश्य केवल ज्ञान का प्रसार नहीं था, बल्कि विभिन्न धार्मिक और दार्शनिक परंपराओं के बीच समन्वय स्थापित करना भी था।

अकबर के समय महाभारत का फ़ारसी अनुवाद 'रज़्मनामा' के नाम से कराया गया। इस कार्य में अबुल फ़ज़ल, बदायूँनी, नकीब ख़ाँ और अन्य विद्वानों ने योगदान दिया। रामायण, हरिवंश, अथर्ववेद, उपनिषद और योगवाशिष्ठ जैसे ग्रंथों का भी फ़ारसी में अनुवाद कराया गया। इन अनुवादों के माध्यम से भारतीय दर्शन और महाकाव्य परंपरा फ़ारसी जगत तक पहुँची। यह अनुवाद शाब्दिक न होकर भावानुवाद और व्याख्यात्मक शैली में किए गए थे, जिससे मूल ग्रंथों का आशय सुरक्षित रह सके। अकबर के दरबार में दाराशिकोह जैसे विद्वान भी थे, जिन्होंने अनुवाद परंपरा को एक दार्शनिक ऊँचाई प्रदान की। दाराशिकोह ने उपनिषदों का फ़ारसी अनुवाद 'सिर्रअकबर-ए-' नाम से कराया। उनका उद्देश्य हिंदू और इस्लामी दर्शन के बीच समान तत्त्वों को उजागर करना था। उन्होंने यह प्रतिपादित किया कि उपनिषद और क़ुरान दोनों ही एक ही परम सत्य की ओर संकेत करते हैं। दाराशिकोह का यह प्रयास मध्यकालीन अनुवाद परंपरा को धार्मिक सहिष्णुता और बौद्धिक समन्वय का प्रतीक बनाता है। फ़ारसी में अनूदित ग्रंथों के साथसाथ फ़ारसी साहित्य का भी भारतीय भाषाओं में - अनुवाद हुआ। ऐतिहासिक ग्रंथों, काव्य रचनाओं और सूफ़ी साहित्य का हिंदी और उर्दू में रूपांतरण किया गया। 'बाबरनामा', 'हुमायूँनामा' और 'अकबरनामा' जैसे ग्रंथों ने इतिहास लेखन की एक सुदृढ़ परंपरा विकसित की। इन ग्रंथों में राजनीतिक घटनाओं के साथसाथ सामाजिक-, सांस्कृतिक और आर्थिक जीवन का भी विस्तृत चित्रण मिलता है।

मध्यकालीन अनुवाद परंपरा में सूफ़ी संतों की भूमिका भी अत्यंत महत्त्वपूर्ण रही। सूफ़ी साहित्य का अनुवाद और रूपांतरण फ़ारसी से हिंदीउर्दू में हुआ–, जिससे यह साहित्य जनसाधारण तक पहुँचा। अमीर ख़ुसरो इस परंपरा के प्रमुख स्तंभ माने जाते हैं। उन्होंने फ़ारसी और हिंदी दोनों भाषाओं में रचनाएँ कीं और भाषायी समन्वय को प्रोत्साहित किया। उनकी रचनाओं में भारतीय लोक तत्वों और फ़ारसी काव्य परंपरा का सुंदर समन्वय दिखाई देता है। भक्ति आंदोलन ने भी अनुवाद परंपरा को नई दिशा दी। संत कवियों ने संस्कृत ग्रंथों के जटिल दर्शन को लोकभाषाओं में प्रस्तुत किया। रामानंद, कबीर, तुलसीदास और सूरदास जैसे कवियों ने धार्मिक ग्रंथों और दार्शनिक विचारों को सरल भाषा में रूपांतरित किया। तुलसीदास की 'रामचरितमानस' को संस्कृत रामायण का भावानुवाद कहा जा सकता है, जिसने हिंदी क्षेत्र में अभूतपूर्व प्रभाव डाला। यह अनुवाद न होकर भी रूपांतरण और पुनर्सृजन का उत्कृष्ट उदाहरण है। मध्यकाल में अनुवाद केवल धार्मिक या दार्शनिक ग्रंथों तक सीमित नहीं रहा। विज्ञान, चिकित्सा, गणित और ज्योतिष से संबंधित ग्रंथों का भी अनुवाद हुआ। अरबी और फ़ारसी विज्ञान ग्रंथों का संस्कृत और हिंदी में तथा भारतीय विज्ञान ग्रंथों का फ़ारसी में अनुवाद किया गया। इससे ज्ञान का द्विपक्षीय प्रवाह संभव हुआ और भारतीय ज्ञान परंपरा को अंतरराष्ट्रीय स्तर पर पहचान मिली। अनुवाद की यह परंपरा केवल दरबारों तक सीमित नहीं थी। मदरसों, पाठशालाओं और निजी विद्वानों द्वारा भी अनुवाद कार्य किया गया। गुजरात, आगरा, दिल्ली, लाहौर, जौनपुर और फतेहपुर सीकरी जैसे नगर अनुवाद और विद्या के प्रमुख केंद्र बने। इन स्थानों पर विद्वानों का आदानप्रदान होता था–, जिससे बहुभाषिक वातावरण विकसित हुआ। मध्यकालीन अनुवाद परंपरा की एक महत्त्वपूर्ण विशेषता यह थी कि अनुवादक स्वयं रचनाकार भी थे। वे मूल ग्रंथ के आशय को समझकर उसे अपने सांस्कृतिक संदर्भ में प्रस्तुत करते थे। इस कारण कई बार अनुवाद मूल से भिन्न प्रतीत होते हैं, किंतु उनका उद्देश्य मूल भाव

को नए समाज के अनुकूल बनाना था। यह परंपरा भारतीय अनुवाद चिंतन की लचीलापन और सृजनात्मकता को दर्शाती है।

हालाँकि इस काल में अनुवाद को पूर्णतः स्वतंत्र साहित्यिक विधा का दर्जा नहीं मिला था, फिर भी यह साहित्य, इतिहास और दर्शन के विकास में केंद्रीय भूमिका निभाता रहा। अनुवाद के माध्यम से भाषाएँ समृद्ध हुईं और नई साहित्यिक शैलियों का जन्म हुआ। फ़ारसी और हिंदी के बीच हुए अनुवादों ने उर्दू भाषा के विकास में भी योगदान दिया।समग्र रूप से देखा जाए तो मध्यकालीन अनुवाद परंपरा भारतीय सांस्कृतिक इतिहास की एक सशक्त धारा है। इसने विभिन्न धार्मिक, भाषायी और दार्शनिक परंपराओं के बीच संवाद स्थापित किया और ज्ञान को सीमित वर्गों से निकालकर व्यापक समाज तक पहुँचाया। अनुवाद इस युग में केवल भाषिक प्रक्रिया नहीं, बल्कि सांस्कृतिक समन्वय और बौद्धिक उदारता का माध्यम बना। इसी कारण मध्यकालीन अनुवाद परंपरा भारतीय साहित्य और ज्ञान परंपरा के विकास में एक स्थायी और प्रेरणास्पद अध्याय के रूप में प्रतिष्ठित है।

महत्वपूर्ण बिंदु

भारतीय अनुवाद परंपरा केवल भाषिक रूपांतरण की प्रक्रिया नहीं रही है, बल्कि यह प्राचीन काल से लेकर आधुनिक युग तक ज्ञान, संस्कृति और विचारों के संरक्षण, विस्तार और सांस्कृतिक समन्वय का सशक्त माध्यम रही है, जिसमें भाष्य, टीका, रूपांतरण और अनुसृजन जैसे विविध रूप विकसित हुए।

7.5 हिंदुस्तानी पाठ के अरबी और फ़ारसी अनुवाद की परंपरा

हिंदुस्तान और अरबईरान के बीच सांस्कृतिक–, बौद्धिक और व्यापारिक संपर्क अत्यंत प्राचीन रहे हैं, जिनकी ऐतिहासिक जड़ें समुद्री व्यापार, स्थल मार्गों और वैचारिक आदानप्रदान से जुड़ी हुई हैं। अरब व्यापारी सबसे पह–ले हिंदुस्तान के पश्चिमी तटों पर पहुँचे और उनके साथ केवल व्यापारिक वस्तुएँ ही नहीं आईं, बल्कि भाषा, संस्कृति, धार्मिक धारणाएँ और ज्ञान की परंपराएँ भी एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र तक पहुँचीं। भारतीय मसाले, वस्त्र और औषधियाँ अरब देशों में लोकप्रिय हुईं, वहीं भारतीय जीवनपद्धति-, सामाजिक संरचना, धार्मिक विश्वास, दर्शन और ज्ञानपरंपरा ने अरब विद्वानों के - चिंतन को गहराई से प्रभावित किया। इस संपर्क के परिणामस्वरूप अरब समाज में भारतीय ग्रंथों, विज्ञान, गणित, चिकित्सा और साहित्य के प्रति गहरी जिज्ञासा उत्पन्न हुई, जिसने आगे चलकर अनुवाद को एक अनिवार्य बौद्धिक गतिविधि के रूप में स्थापित किया। यह सर्वविदित तथ्य है कि अंतरराष्ट्रीय व्यापार, कूटनीतिक संबंध और सांस्कृतिक संवाद का मूल आधार अनुवाद ही होता है, क्योंकि अनुवाद के बिना न तो विचारों का आदानप्रदान संभव है और न ह-ी ज्ञान का प्रसार। इसी कारण हिंदुस्तान की जनपदीय धारणाओं, दार्शनिक चिंतन, वैज्ञानिक उपलब्धियों, गणितीय प्रणालियों, चिकित्सा ज्ञान और साहित्यिक कृतियों का अरबी भाषा में अनुवाद बहुत प्रारंभिक काल से आरंभ हुआ। यह प्रक्रिया केवल भाषायी नहीं थी, बल्कि सभ्यताओं के संवाद का माध्यम थी, जिसने भारतीय ज्ञान को सीमित भौगोलिक दायरे से निकालकर अंतरराष्ट्रीय स्तर तक पहुँचाया। धीरेधीरे यह परंपरा इतनी सुदृढ़ हो गई कि अरबी के बाद फ़ारसी और फिर - यूरोपीय भाषाओं तक भारतीय ज्ञान का प्रवाह हुआ, जिससे विश्व सभ्यता के बौद्धिक विकास में भारत की भूमिका स्पष्ट रूप से सामने आई।

अरबी अनुवाद परंपरा का संगठित और व्यवस्थित रूप विशेष रूप से अब्बासी काल में दिखाई देता है, जब बग़दाद ज्ञान, विज्ञान और बौद्धिक गतिविधियों का महान केंद्र बन गया। खलीफ़ा अल 775–712) मंसूर-ईने अनुवाद (. कार्य को राजक ीय संरक्षण प्रदान किया और विभिन्न देशों के विद्वानों को आमंत्रित किया, जिनमें भारतीय विद्वान भी सम्मिलित थे। उनके शासनकाल में तिगरिस नदी के किनारे बग़दाद नगर की स्थापना हुई, जिसे शिक्षा और अनुसंधान का

प्रमुख केंद्र बनाया गया। इसी काल में भारतीय गणित, ज्योतिष और खगोल विज्ञान के ग्रंथों का अरबी में अनुवाद आरंभ हुआ। ब्रह्मगुप्त द्वारा रचित के नाम से प्रसिद्ध हुआ 'सिंदहिंद-अल' का अरबी अनुवाद 'ब्रह्मस्फुट सिद्धांत', जिसके माध्यम से दशमलव प्रणाली, शून्य की अवधारणा और जटिल गणनात्मक विधियाँ अरब जगत तक पहुँचीं। आगे चलकर यही ज्ञान यूरोप पहुँचा और आधुनिक गणित की आधारशिला बना। हारून-उल-बैत' मामून ने-रशीद और विशेष रूप से अल-अल-की स्थापना कर अनुवाद को संस्थागत स्वरूप प्रदान किया 'हिक्मा, जहाँ भारतीय, यूनानी और ईरानी ग्रंथों का अरबी में अनुवाद हुआ। आयुर्वेदिक ग्रंथों, जैसे'सुश्रुत संहिता' और 'चरक संहिता' , के अनुवाद से अरबी चिकित्सा विज्ञान समृद्ध हुआ और शल्यनिर्माण की भारतीय पद्धतियाँ अरब जगत में प्रचलित हुईं इस काल में मानव जैसे -चिकित्सा तथा औषधि-विद्वानों ने भारतीय चिकित्सा और विज्ञान को अरबी समाज में प्रतिष्ठित किया, जिसके परिणामस्वरूप अरबी भाषा में भारतीय मूल के अनेक तकनीकी शब्द स्थायी रूप से प्रचलित हो गए।

भारतीय ज्ञान का प्रवाह केवल अरबी भाषा तक सीमित नहीं रहा, बल्कि वह ग्रीक और फिर यूरोपीय भाषाओं तक विस्तृत हुआ। ईसा पूर्व तीसरी शताब्दी से भारत और यूनान के सांस्कृतिक संपर्कों के कारण भारतीय ग्रंथों का ग्रीक भाषा में अनुवाद आरंभ हुआ, जिसे बाद में अरबी विद्वानों ने आत्मसात किया। पश्चिमी जगत में जैसे अनुवादों को 'सेप्टुआजिंट' ऐतिहासिक रूप से महत्त्वपूर्ण माना जाता है, किंतु भारतीय संदर्भ में अनुवाद की परंपरा कहीं अधिक व्यापक और बहुआयामी रही। जब अरबों ने स्पेन और यूरोप के अन्य भागों में प्रवेश किया, तो अरबी से लैटिन भाषा में अनुवाद की प्रक्रिया आरंभ हुई। इस प्रकार भारतीय गणित, ज्योतिष, खगोल विज्ञान और चिकित्सा पहले अरबी, फिर लैटिन और अंततः विभिन्न यूरोपीय भाषाओं तक पहुँचे। नौवींदसवीं शताब्दी में स्पेन के अरबों ने भारतीय अंक-पद्धति का यूरोप में प्रचारप्रसार किया-, जिससे यूरोपीय विद्वानों को गणितीय गणनाओं की नई और अधिक सटीक प्रणाली प्राप्त हुई। इसी क्रम में साहित्यिक ग्रंथों का भी व्यापक अनुवाद हुआ, जिनमें का स्थ 'पंचतंत्र'ान सर्वोपरि है। संस्कृत में रचित का 'पंचतंत्र' के नाम से अनुवाद हुआ 'कलीला व दिमना' पहले पहलवी और फिर अरबी में, जो इतना लोकप्रिय हुआ कि इसके फ़ारसी, लैटिन, फ्रांसीसी, जर्मन और अन्य यूरोपीय भाषाओं में अनुवाद किए गए। नैतिक शिक्षा, राजनीतिक चातुर्य और सामाजिक व्यवहार से जुड़ी इन कथाओं ने यूरोपीय समाज और साहित्य को गहराई से प्रभावित किया और यह सिद्ध किया कि भारतीय कथात्मक परंपरा वैश्विक साहित्यिक धरोहर का महत्त्वपूर्ण अंग है।

अरबी अनुवाद परंपरा के पश्चात फ़ारसी अनुवाद परंपरा का विकास विशेष रूप से मध्यकालीन भारत में हुआ, जब दिल्ली सल्तनत और मुग़ल शासन के दौरान फ़ारसी को राजकीय भाषा का दर्जा प्राप्त हुआ। इसके परिणामस्वरूप संस्कृत, हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं के ग्रंथों का फ़ारसी में अनुवाद अनिवार्य हो गया। सुल्तान फिरोज़ शाह तुगलक द्वारा नागरकोट से लाए गए संस्कृत ग्रंथों के अनुवाद से यह परंपरा और अधिक सुदृढ़ हुई। मुग़ल काल में अकबर ने की स्थापना कर अनुवाद कार्य को संगठित और व्यवस्थित किया 'मकतबख़ाना', जहाँ 'रामायण', 'महाभारत', 'अथर्ववेद', 'भागवद्गीतामहाभ' जैसे ग्रंथों का फ़ारसी में अनुवाद कराया गया। 'पंचतंत्र' और 'ारतके 'रज़्मनामा' का ' नाम से 'अकबर-ए-सिर्र' रूप में अनुवाद इस परंपरा का उत्कृष्ट उदाहरण है। दाराशिकोह ने उपनिषदों का फ़ारसी अनुवाद कराकर हिंदू और इस्लामी दर्शन के बीच वैचारिक सेतु स्थापित किया। इसी काल में संगीत, नाट्य और कला से संबंधित ग्रंथों -जैसे घुन'यतुल मुन्या', 'नवरसन्नामा', 'संगीत दर्पण'राग दर्पण' और 'का फ़ारसी अनुवाद हुआ, जिससे भारतीय सांस्कृतिक परंपराएँ ईरान और मध्य एशिया तक पहुँचीं और वहाँ की कलासंस्कृति को प्रभावित किया।-

हिंदुस्तानी पाठों के अरबी और फ़ारसी अनुवाद की यह दीर्घ और निरंतर परंपरा केवल भाषायी प्रक्रिया नहीं थी, बल्कि यह सभ्यताओं के संवाद, ज्ञान के संरक्षण और सांस्कृतिक समन्वय का सशक्त माध्यम थी। इन अनुवादों के माध्यम से भारतीय गणित, चिकित्सा, दर्शन, साहित्य और कला न केवल सुरक्षित रहे, बल्कि विश्व सभ्यता के विकास में सक्रिय भूमिका निभाने लगे। यूरोपीय पुनर्जागरण पर भारतीय ज्ञान का अप्रत्यक्ष प्रभाव भी इसी परंपरा का परिणाम था। यदि ये अनुवाद न हुए होते, तो भारतीय ज्ञान का एक बड़ा भाग संभवतः समय के साथ नष्ट हो जाता और मानव सभ्यता अनेक

महत्त्वपूर्ण उपलब्धियों से वंचित रह जाती। इस प्रकार अरबी और फ़ारसी अनुवादों ने भारतीय संस्कृति को वैश्विक पहचान दिलाई और यह सिद्ध किया कि अनुवाद केवल शब्दों का रूपांतरण नहीं, बल्कि विचारों, मूल्यों और संस्कृतियों को जोड़ने वाला एक जीवंत सेतु है, जो भिन्न भिन्न सभ्यताओं को एक साझा मानवीय विरासत में पिरो देता-है।

7.6 अरबी ग्रंथों के भारतीय भाषाओं में अनुवाद

अरबी ग्रंथों के भारतीय भाषाओं में अनुवाद की परंपरा भारतीय उपमहाद्वीप और अरब जगत के बीच अत्यंत प्राचीन, गहन और बहुआयामी संपर्कों की स्वाभाविक परिणति है। यह संपर्क केवल व्यापारिक या भौगोलिक नहीं था, बल्कि सांस्कृतिक, धार्मिक, बौद्धिक और भाषिक स्तरों पर भी गहराई से विकसित हुआ। इस्लामपूर्व काल में ही अरब - व्यापारी केरल, गुजरात और कोंकण जैसे पश्चिमी तटीय क्षेत्रों से परिचित थे और मसालों, वस्त्रों तथा बहुमूल्य वस्तुओं के व्यापार के माध्यम से निरंतर आवागमन करते थे। इस व्यापारिक संपर्क के साथ भाषिक और सांस्कृतिक आदानप्रदान भी - प्रारंभ हुआ, किंतु अरबी ग्रंथों के संगठित अनुवाद की प्रक्रिया इस्लाम के प्रसार के बाद विशेष रूप से तीव्र हुई। जब अरब व्यापारी, विद्वान और धर्मप्रचारक भारत आए, तो वे अपने साथ कुरआन, हदीस, तफ़सीर, फ़िक़्ह, इतिहास, दर्शन और साहित्य से संबंधित ग्रंथ भी लाए। भारतीय समाज के सामने एक नई धार्मिक और बौद्धिक परंपरा आई, जिसे समझने के लिए अनुवाद अनिवार्य हो गया। प्रारंभिक काल में यह अनुवाद मौखिक व्याख्या, प्रवचन और टीका के रूप में हुआ, जिससे स्थानीय भाषाओं में अरबी अवधारणाओं को समझाया गया। धीरेधीरे यह परंपरा लिखित अनुवाद में परिवर्तित - हुई, जिसने भारतीय भाषाओं में अरबी ज्ञान के स्थायी प्रवेश का मार्ग प्रशस्त किया। इस प्रक्रिया ने न केवल ज्ञानविस्तार - किया, बल्कि भारतीय समाज की वैचारिक संरचना, धार्मिक दृष्टि और साहित्यिक संवेदना को भी नए आयाम प्रदान किए।

अरबी से भारतीय भाषाओं में अनुवाद की परंपरा का सबसे व्यापक और प्रभावशाली क्षेत्र धार्मिक साहित्य रहा है, जिसका केंद्र कुरआन है। भारत की भाषिक विविधता के कारण कुरआन का अनुवाद फारसी, उर्दू, हिंदी, बंगाली, गुजराती, मलयालम, तमिल और अन्य भारतीय भाषाओं में किया गया। शाह वलीउल्लाह देहलवी द्वारा किया गया फारसी अनुवाद इस परंपरा का ऐतिहासिक पड़ाव माना जाता है, क्योंकि इसका उद्देश्य अरबी न जानने वाले मुसलमानों को कुरआन के अर्थ से परिचित कराना था। उनके पुत्र शाह अब्दुल क़ादिर देहलवी द्वारा प्रस्तुत उर्दू अनुवाद ने इस परंपरा को और अधिक व्यापक बनाया, जो अपनी सरलता, स्पष्टता और अर्थनिष्ठा के कारण अत्यंत लोकप्रिय हुआ। कुरआन के अतिरिक्त हदीस-साहित्यजैसे- सहीह बुखारी, सहीह मुस्लिम और तिर्मिज़ीके चयनित अंशों का भी भारतीय भाषाओं में अनुवाद हुआ। इन अनुवादों का उद्देश्य केवल धार्मिक शिक्षा देना नहीं था, बल्कि नैतिकता, सामाजिक व्यवहार और जीवनमूल्यों को दिशा - प्रदान करना भी था। इसी क्रम में अरबी फ़िक़्ह और इस्लामी विधि से संबंधित ग्रंथोंजैसे- हिदाया, फ़तावाआलमगिरी -ए- -और क़ानूनएइस्लाम-का फारसी और उर्दू में व्यापक अनुवाद हुआ, क्योंकि ये भाषाएँ लंबे समय तक भारतीय मुस्लिम समाज की प्रशासनिक और बौद्धिक भाषाएँ रहीं। बाद के काल में इन ग्रंथों के हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं में सारांश और व्याख्यात्मक अनुवाद किए गए, जिससे गैर उर्दूभाषी-समुदाय भी इस्लामी विधि और धार्मिक अवधारणाओं को समझ सका।

अरबी ग्रंथों के अनुवाद का प्रभाव धार्मिक क्षेत्र तक सीमित नहीं रहा, बल्कि इतिहास, यात्रावृत्तांत-, भूगोल, साहित्य और दर्शन जैसे क्षेत्रों में भी गहराई से दिखाई देता है। अरबी इतिहासकारों और विद्वानोंजैसे- अलबिलाज़ुरी-, अल-मसूदी, अलख़ल्दून-बेरूनी और इब्न-द्वारा रचित ग्रंथ भारत के इतिहास और संस्कृति को समझने के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण सिद्ध हुए। अलइस संदर्भ में विशेष उल्लेखनीय है 'हिंद-उल-किताब' बेरूनी की प्रसिद्ध कृति-, जिसका फारसी, उर्दू और हिंदी में अनुवाद हुआ। इस ग्रंथ ने भारतीय धर्म, दर्शन, विज्ञान और सामाजिक प्रथाओं का तुलनात्मक और वस्तुनिष्ठ चित्र प्रस्तुत किया, जिससे भारतीय पाठकों को अपनी ही संस्कृति को एक बाहरी दृष्टि से देखने का अवसर मिला। इसी प्रकार इब्न बतूता के यात्रावृत्तांतों के अनुवादों ने- मध्यकालीन भारत के सामाजिक जीवन, प्रशासन, नगरसंरचना-, खानपान -

अल्फ़ ' रिवाजों की बहुमूल्य जानकारी दी। साहित्यिक क्षेत्र में अरबी कथात्मक परंपरा का प्रभाव विशेष रूप से-और रीति) 'लैला व लैलाअरेबियन नाइट्सके माध्यम से दिखाई देता है (, जो फारसी और उर्दू के रास्ते हिंदी सहित अनेक भारतीय भाषाओं में पहुँची। इन कथाओं के जादुई, रहस्यमय और रोमांचक तत्वों ने भारतीय लोककथाओं और कथासाहित्य को - गहराई से प्रभावित किया और कई कथानक भारतीय परिवेश में ढलकर नई साहित्यिक रचनाओं के रूप में विकसित हुए।

वैज्ञानिक और दार्शनिक क्षेत्रों में भी अरबी ग्रंथों के भारतीय भाषाओं में अनुवाद ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। गणित, खगोलशास्त्र, चिकित्सा, रसायनशास्त्र और दर्शन से संबंधित अरबी ग्रंथोंजैसे- इब्नक़ानून फ़ि -अल' सीना की- 'जबर-अल' ख़्वारिज़्मी की-और अल 'तिब्बका फारसी और फिर भारतीय भाषाओं में अनुवाद हुआ। इन अनुवादों के माध्यम से भारतीय विद्वानों का परिचय अरबीइस्लामी विज्ञान-परंपरा से हुआ और आयुर्वेद तथा यूनानी चिकित्सा के बीच एक समन्वय विकसित हुआ। आज भी यूनानी चिकित्सा में प्रयुक्त अनेक शब्द और अवधारणाएँ अरबी मूल की हैं। भाषिक दृष्टि से इन अनुवादों ने भारतीय भाषाओं, विशेषतः उर्दू और हिंदीकी शब्दावली को अत्यंत समृद्ध किया; दीन, दुनिया, इल्म, किताब, अदब, तहज़ीब और इंसाफ़ जैसे शब्द भारतीय भाषाओं का अभिन्न अंग बन गए। अनुवाद की शैली प्रायः अर्थप्रधान रही, जिसमें भाव और आशय को शाब्दिक अनुवाद से अधिक महत्व दिया गया। आधुनिक काल में विश्वविद्यालयों, अकादमियों और शोधसंस्थानों ने अरबी ग्रंथों के अनुवाद को वैज्ञानिक और आलोचनात्मक दृष्टि से - आगे बढ़ाया है। आज कुरआन, हदीस, इतिहास, दर्शन और साहित्य से जुड़े अरबी ग्रंथ हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं में अनूदित हो रहे हैं, जिनका उद्देश्य केवल धार्मिक शिक्षा नहीं, बल्कि सांस्कृतिक संवाद, अकादमिक विमर्श और पारस्परिक समझ को सुदृढ़ करना है। इस प्रकार अरबी ग्रंथों के भारतीय भाषाओं में अनुवाद की परंपरा एक दीर्घ, समृद्ध और जीवंत परंपरा है, जिसने भारत और अरब जगत के बीच बौद्धिक सेतु का निर्माण किया और जो आज भी वैश्विक संदर्भ में अत्यंत प्रासंगिक बनी हुई है।

7.7 फारसी भाषा के दस्तावेजों का भारतीय भाषा में अनुवाद

फ़ारसी भाषा के दस्तावेज़ों का भारतीय भाषाओं में अनुवाद भारतीय इतिहास, संस्कृति और प्रशासनिक परंपरा का एक अत्यंत महत्वपूर्ण, किंतु अपेक्षाकृत कम व्यवस्थित रूप से विवेचित पक्ष है। मध्यकालीन भारत में फ़ारसी केवल साहित्यिक भाषा नहीं थी, बल्कि शासन, कूटनीति, इतिहासलेखन-, न्याय, राजस्व व्यवस्था और प्रशासन की प्रमुख भाषा के रूप में प्रतिष्ठित थी। दिल्ली सल्तनत के काल से लेकर मुग़ल साम्राज्य के अंतिम चरण तक फ़ारसी राजकीय भाषा बनी रही, जिसके परिणामस्वरूप विशाल मात्रा में फ़रमान, अहदनामे, सनदें, दरबारी इतिहास, प्रशासनिक विवरण, राजस्व अभिलेख, न्यायिक निर्णय, जीवनीपरक ग्रंथ और साहित्यिक रचनाएँ फ़ारसी में रची गईं। जब औपनिवेशिक काल में अंग्रेज़ी शासन की स्थापना हुई और प्रशासनिक भाषा के रूप में फ़ारसी का स्थान अंग्रेजी ने लेना प्रारंभ किया, तब इन फ़ारसी दस्तावेजों को समझने और संरक्षित करने की आवश्यकता अत्यंत तीव्र हो गई। इसी आवश्यकता ने फ़ारसी दस्तावेजों के भारतीय भाषाओंविशेषतः उर्दू, हिंदी, बंगाली और अन्य प्रादेशिक भाषाओंमें अनुवाद की प्रक्रिया को जन्म दिया। इस संदर्भ में ग़ालिब का योगदान उल्लेखनीय है, जिन्होंने फ़ारसी में लिखे पत्रों और गद्यरचनाओं के माध्यम से भाषा की साहित्यिक शक्ति को रेखांकित किया। के विद्रोह 1857के बाद फ़ारसी साहित्य और दस्तावेजों को ऐतिहासिक दृष्टि से समझने की प्रवृत्ति बढ़ी और औपनिवेशिक इतिहासकारों तथा भारतीय विद्वानों ने फ़ारसी स्रोतों के अनुवाद पर विशेष ध्यान दिया। मिर्ज़ा निज़ामुद्दीन, ज़ियाउद्दीन बरनी, मिन्हाजसिराज-ए-, अबुल फ़ज़ल, बदायूँनी और फिरिश्ता जैसे इतिहासकारों की कृतियाँ -तबक़ातनासिरी-ए-, तारीख़फ़िरिश्ता-ए-, अकबरनामा, आईनअकबरी-ए-, मुंतख़ब-उत-तवारीख़भारतीय इतिहास की मूलभूत स्रोत सामग्री हैं, जिनके उर्दू और हिंदी अनुवादों ने आधुनिक इतिहासलेखन को - संभव बनाया। इन अनुवादों के माध्यम से दिल्ली सल्तनत और मुग़ल काल की राजनीतिक संरचना, सामाजिक व्यवस्था, आर्थिक नीतियाँ और सांस्कृतिक जीवन सामान्य पाठकों और शोधकर्ताओं की पहुँच में आया।

फ़ारसी दस्तावेजों के भारतीय भाषाओं में अनुवाद का महत्व केवल इतिहासलेखन तक सीमित नहीं रहा-, बल्कि इसने भारतीय समाज की सांस्कृतिक स्मृति, प्रशासनिक परंपरा और साहित्यिक चेतना को भी गहराई से प्रभावित किया। बंगाल के इतिहास पर फ़ारसी में लिखी गई कृतियों, जैसे और अन्य क्षेत्रीय इतिहासों के अनुवादों ने 'नासिरी-ए-तबक़ात' यह स्पष्ट किया कि स्थानीय इतिहास को समझने के लिए फ़ारसी स्रोत अनिवार्य हैं। इसी प्रकार प्रशासनिक दस्तावेज-फ़रमान, सनद, राजस्व अभिलेख और न्यायिक आदेशजब हिंदी और उर्दू में अनूदित हुए, तो औपनिवेशिक शासन को भी भारतीय समाज की ऐतिहासिक संरचना को समझने में सहायता मिली। उन्नीसवीं शताब्दी में प्रकाशित कई अनुवादों ने यह कार्य किया कि फ़ारसी अभिलेख केवल अभिजात वर्ग तक सीमित न रहकर व्यापक बौद्धिक समाज तक पहुँच सकें। साहित्यिक दृष्टि से भी फ़ारसी की कथात्मक, काव्यात्मक और आत्मकथात्मक परंपरा के अनुवादों ने उर्दू और हिंदी गद्य को नई शैली और अभिव्यक्ति प्रदान की। फ़ारसी की गहन, अलंकारिक और भावप्रवण शैली का प्रभाव हिंदीउर्दू गद्य में - स्पष्ट दिखाई देता है। आधुनिक काल में विश्वविद्यालयों, अभिलेखागारों और शोधसंस्थानों द्वारा फ़ारसी दस्तावे-जों के वैज्ञानिक अनुवाद किए जा रहे हैं, जिनमें शब्दानुवाद के साथसाथ संदर्भ-, व्याख्या और ऐतिहासिक टिप्पणी भी जोड़ी जाती है। इन अनुवादों का उद्देश्य केवल भाषांतरण नहीं, बल्कि अतीत की प्रशासनिक, सामाजिक और सांस्कृतिक संरचनाओं को समकालीन पाठकों के लिए बोधगम्य बनाना है। इस प्रकार फ़ारसी भाषा के दस्तावेजों का भारतीय भाषाओं में अनुवाद भारतीय इतिहास-बोध का आधार, सांस्कृतिक निरंतरता का सेतु और ज्ञानसंरक्षण की एक अनिवार्य प्रक्रिया - सिद्ध होता है, जिसके बिना भारत के मध्यकालीन और औपनिवेशिक इतिहास की समग्र समझ संभव नहीं है।

अपनी प्रगति जांचें

प्रश्न 1: भारतीय अनुवाद परंपरा की प्राचीनता को स्पष्ट करते हुए यह बताइए कि वैदिक और उत्तरवैदिक काल में अनुवाद किस रूप में प्रचलित था।

प्रश्न 2: मध्यकालीन भारत में अनुवाद की आवश्यकता किन सामाजिक, धार्मिक और राजनीतिक कारणों से उत्पन्न हुई? उदाहरण सहित विवेचन कीजिए।

प्रश्न 3: हिंदुस्तानी ग्रंथों के अरबी और फ़ारसी अनुवादों की परंपरा का भारतीय और वैश्विक ज्ञान-विकास में क्या योगदान रहा है?

7.8 उपनिवेशकालीन भारतीय अनुवाद की परंपरा

उपनिवेशकालीन भारत में अनुवाद की प्रक्रिया केवल भाषाओं के पारस्परिक रूपांतरण तक सीमित न रहकर सत्ता, ज्ञान और संस्कृति के अंतर्संबंधों को परिभाषित करने वाली एक केंद्रीय बौद्धिक गतिविधि के रूप में विकसित हुई। अंग्रेज़ी शासन के विस्तार के साथ यह आवश्यकता अनुभव की गई कि भारतीय समाज की भाषिक बहुलता, धार्मिक परंपराएँ, विधिक संरचनाएँ और ऐतिहासिक स्मृतियाँ समझे बिना प्रशासनिक नियंत्रण संभव नहीं है। इसी संदर्भ में अंग्रेज विद्वानों और प्रशासकों ने भारतीय ग्रंथों के अंग्रेजी अनुवाद आरंभ किए। विलियम जोन्स द्वारा अभिज्ञानशाकुंतलम् का अंग्रेजी अनुवाद, चार्ल्स विल्किन्स द्वारा भगवद्गीता का अनुवाद तथा एचकोलब्रुक द्वारा धर्मशास्त्रीय ग्रंथों का अध् .टी .ययन इस प्रवृत्ति के प्रतिनिधि उदाहरण हैं। इन अनुवादों के माध्यम से भारत को यूरोप के बौद्धिक संसार में प्रस्तुत किया गया, किंतु यह प्रस्तुति औपनिवेशिक दृष्टि से नियंत्रित थी, जिसमें भारतीय ज्ञान को प्राचीन, स्थिर और आधुनिकता से पूर्ववर्ती बताकर पश्चिमी बौद्धिक श्रेष्ठता को वैचारिक आधार प्रदान किया गया। इस प्रकार अनुवाद औपनिवेशिक वैचारिकी का एक प्रभावी उपकरण बन गया।

इसी काल में देशी भाषाओं में अनुवाद की गतिविधियाँ भी व्यापक रूप से फैलीं और व्यवहारतः तीन स्पष्ट दिशाओं में विकसित हुईं, जिसका प्रभाव भारतीय नवजागरण पर गहराई से पड़ा। एक ओर अंग्रेजी में रचित ग्रंथों का हिंदी, बंगाली, मराठी और उर्दू जैसी भारतीय भाषाओं में अनुवाद किया गया, जिससे औपनिवेशिक शिक्षा, विधि और प्रशासनिक विचारधारा को स्थानीय समाज तक पहुँचाया जा सके; मैकॉले के शैक्षिक विचारों तथा अंग्रेजीकानूनसंबंधी - ग्रंथों के अनुवाद इसके उदाहरण हैं। दूसरी ओर संस्कृत के प्राचीन ग्रंथों का आधुनिक भारतीय भाषाओं में अनुवाद हुआ, जिससे वे पंडितों और विद्वानों की सीमित दुनिया से निकलकर व्यापक समाज के लिए सुलभ बन सके; उपनिषदों, नाट्यग्रंथों और धर्मशास्त्रों के हिंदी तथा बंगाली अनुवाद इस प्रवृत्ति को स्पष्ट करते हैं। इसके साथ ही आधुनिक भारतीय भाषाओं की रचनाओं का परस्पर अनुवाद भी तेजी से हुआ, जिससे विभिन्न भाषाभाषी समुदायों के बीच वैचारिक संवाद और साहित्यिक संपर्क सुदृढ़ हुआ। हिंदी में इन तीनों प्रकार के अनुवाद बड़े पैमाने पर हुए और इस प्रक्रिया ने हिंदी को एक व्यापक राष्ट्रीय संपर्कभाषा के रूप में विकसित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

उपनिवेशकालीन अनुवादपरंपरा में फ़ारसी और अरबी ग्रंथों के अंग्रेजी तथा भारतीय भाषाओं में अनुवाद का भी विशेष महत्व रहा। अकबरनामा, आईनअकबरी-ए-, तारीख़नासिरी जैसे ग्रंथों के अनुवादों के -ए-फ़िरिश्ता और तबक़ात-ए-माध्यम से अंग्रेज इतिहासकारों को भारत के मध्यकालीन अतीत की सामग्री प्राप्त हुई, किंतु इन अनुवादों में औपनिवेशिक दृष्टिकोण की स्पष्ट छाया दिखाई देती है। इसके समानांतर भारतीय बुद्धिजीवियों ने अनुवाद को आत्मबोध और सांस्कृतिक पुनर्जागरण का माध्यम बनाया। राजा राममोहन राय द्वारा उपनिषदों का बंगाली और अंग्रेज़ी में अनुवाद, ईश्वरचंद्र विद्यासागर द्वारा संस्कृत ग्रंथों का सरल रूपांतरण तथा भारतेंदु हरिश्चंद्र द्वारा हिंदी में विविध विषयों के अनुवाद इस चेतनात्मक प्रयास के सशक्त उदाहरण हैं। इन कार्यों ने भारतीय समाज में तर्कशीलता, सामाजिक सुधार और आधुनिक चेतना को मजबूती प्रदान की तथा अनुवाद को औपनिवेशिक प्रभावों के विरुद्ध बौद्धिक प्रतिरोध का साधन बनाया।

समग्र रूप से देखा जाए तो उपनिवेशकालीन भारतीय अनुवाद की परंपरा एक द्वंद्वात्मक प्रक्रिया के रूप में सामने आती है, जिसमें अनुवाद एक ओर औपनिवेशिक सत्ता द्वारा ज्ञान के नियंत्रण और पुनर्संरचना का माध्यम बना, तो दूसरी ओर वही अनुवाद भारतीय समाज के लिए आत्मपरिचय, भाषायी विकास और राष्ट्रीय चेतना के निर्माण का प्रभावशाली उपकरण सिद्ध हुआ। अंग्रेजी ग्रंथों के भारतीय भाषाओं में अनुवाद, संस्कृत ग्रंथों के आधुनिक भाषाओं में रूपांतरण और भारतीय भाषाओं की रचनाओं के परस्पर अनुवाद-इन तीनों प्रवृत्तियों के संयुक्त प्रभाव से आधुनिक भारतीय साहित्य, इतिहासबोध और अकादमिक चिंतन की नींव पड़ी। इस प्रकार अनुवाद केवल भाषापरिवर्तन की प्रक्रिया नहीं रहा-, बल्कि वह विचारों, दृष्टियों और सांस्कृतिक अस्मिता के संघर्ष का सशक्त क्षेत्र बन गया, जिसकी प्रासंगिकता आज भी शोध और विमर्श में बनी हुई है।

महत्वपूर्ण बिंदु

मध्यकालीन, औपनिवेशिक और स्वतंत्रोत्तर भारत में अनुवाद ने क्रमशः सांस्कृतिक संवाद, सत्ता और ज्ञान-संरचना के विश्लेषण तथा राष्ट्रीय एकीकरण और भाषायी लोकतंत्र के निर्माण में निर्णायक भूमिका निभाई है।

7.9 आधुनिक काल में संस्कृत, अरबी फारसी के हिंदी एवं अन्य भाषाओं में अनुवाद

आधुनिक काल में संस्कृत ग्रंथों के हिंदी तथा अन्य भारतीय भाषाओं में अनुवाद की परंपरा विशेष रूप से साहित्यिक चेतना और सौंदर्यबोध के स्तर पर समृद्ध हुई। इस दौर में कालिदास, भवभूति, भास और बाणभट्ट जैसे कवियों के काव्य और नाटकों का अनुवाद केवल अर्थस-ंथानांतरण नहीं रहा, बल्कि काव्यात्मक पुनर्सृजन का माध्यम बना। अभिज्ञानशाकुंतलम् के अनुवाद इस प्रवृत्ति के सबसे सशक्त उदाहरण हैं। कालिदास का प्रसिद्ध श्लोक -

“यास्यत्यद्यशकुन्तलेतिहृदयंसंस्पृष्टमुत्कण्ठया”…आधुनिकहिंदीमेंअनेकरूपोंमेंव्यक्तहुआ।राजालक्ष्मणसिंह ने इसे लोकछंदात्मक संवेदना में ढालते हुए पिता की व्याकुलता को घरेलू भाव में प्रस्तुत किया, जबकि महादेवी वर्मा ने उसी श्लोक को करुणा और अंतर्मन की पीड़ा के गहन मनोवैज्ञानिक चित्रण में रूपांतरित किया - “आजविदाहोगीशकुंतलासोचहृदयआताहैभर-भर”…।इसीप्रकार मेघदूत के विरहवर्णन-, रघुवंश की राजकीय गरिमा और कुमारसंभव के दार्शनिक संकेतों के हिंदी अनुवादों ने यह सिद्ध किया कि आधुनिक युग में संस्कृत से हिंदी अनुवाद शास्त्रीयता को बनाए रखते हुए आधुनिक संवेदना को ग्रहण करने की क्षमता रखता है।

अरबी साहित्य के हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं में अनुवाद ने आधुनिक काल में भारतीय बौद्धिक जगत को इस्लामी दर्शन, इतिहास और सूफ़ी चेतना से परिचित कराया। क़ुरआन के हिंदी अनुवादों ने धार्मिक अध्ययन को व्यापक पाठकसमुदाय तक पहुँचाया-, वहीं हदीस, फ़िक़्ह और इतिहास संबंधी ग्रंथों के अनुवादों से इस्लामी सभ्यता की वैचारिक संरचना स्पष्ट हुई। सूफ़ी कवियों -जैसे रूमी, हाफ़िज़ और इब्नअरबी-की रचनाओं के हिंदी अनुवादों में प्रेम, मानवता और आध्यात्मिक एकता की भावना विशेष रूप से उभरी। आधुनिक अनुवादकों ने सूफ़ी कविता के प्रतीकात्मक और रहस्यात्मक स्वर को हिंदी के भावलोक में इस प्रकार पिरोया कि वह केवल धार्मिक पाठ न रहकर मानवीय अनुभव का काव्यात्मक दस्तावेज बन गया। इन अनुवादों ने भारतीय साहित्य को उदार दृष्टि प्रदान की और यह स्थापित किया कि अरबी इस्लामी साहित्य भारतीय सांस्कृतिक संवाद का-अभिन्न अंग है।

फ़ारसी साहित्य के आधुनिक भारतीय भाषाओं में अनुवाद ने मध्यकालीन भारतीय इतिहास और संस्कृति की समझ को गहराई प्रदान की। अकबरनामा, आईनअकबरी-ए-, तारीख़नासिरी जैसे ग्रंथों के -ए-फ़िरिश्ता और तबक़ात-ए- हिंदी अनुवादों ने प्रशासन, समाज और राजनीति के ऐतिहासिक संदर्भों को उजागर किया। साथ ही फ़ारसी काव्य परंपराविशेषतः हाफ़िज़, सादी और उमर खैयामके अनुवादों ने जीवनदर्शन-, प्रेम और क्षणभंगुरता की अनुभूति को हिंदी कविता में स्थान दिया। आधुनिक अनुवादकों ने फ़ारसी की ग़ज़लात्मक कोमलता और दार्शनिक व्यंग्य को हिंदी की लय और शब्दसंवेदना में ढालते हुए यह सिद्ध किया कि फ़ारसी साहित्य केवल दरबारी संस्कृति तक सीमित नहीं-, बल्कि मानवीय अनुभूति की सार्वकालिक अभिव्यक्ति है।

अंग्रेजी और अन्य यूरोपीय भाषाओं से भारतीय भाषाओं में अनुवाद आधुनिक काल में ज्ञानविज्ञान और - साहित्यिक आधुनिकता के प्रसार का प्रमुख माध्यम बना। शेक्सपीयर के नाटकों, मिल्टन की कविताओं और टॉलस्टॉय तथा गोर्की जैसे लेखकों की रचनाओं के हिंदी अनुवादों ने भारतीय साहित्य को नई कथात्मक संरचनाओं और वैचारिक आयामों से परिचित कराया। शेक्सपीयर के नाटकों के हिंदी रूपांतरणों में संवाद और चरित्रों को भारतीय सामाजिक संदर्भों के अनुकूल प्रस्तुत किया गया, जिससे वे स्थानीय पाठकों के लिए सहज हो सके। इन अनुवादों ने यह स्पष्ट किया कि अंग्रेजी साहित्य का हिंदी में आगमन केवल अनुकरण नहीं था, बल्कि चयनात्मक ग्रहण और रचनात्मक पुनर्व्याख्या की प्रक्रिया थी।

आधुनिक काल में ऐतिहासिक, प्रशासनिक और सांस्कृतिक दस्तावेजों के अनुवाद ने शोध और ज्ञानअर्जन की नई - दिशाएँ खोलीं। फ़ारसी, अरबी और अंग्रेजी में उपलब्ध सरकारी अभिलेख, समाचारपत्र-, पत्राचार और यात्रावृत्तांतों के - हिंदी अनुवादों से भारत के सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक इतिहास की सूक्ष्म परतें सामने आईं। राष्ट्रीय और राज्य अभिलेखागारों में सुरक्षित इन दस्तावेजों के अनुवाद ने स्वतंत्रता आंदोलन, औपनिवेशिक प्रशासन और सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रियाओं को समझने में सहायता दी। इस प्रकार आधुनिक भारतीय अनुवाद परंपरा में साहित्यिक कृतियों के साथसाथ दस्तावे-जी अनुवाद भी एक महत्वपूर्ण बौद्धिक गतिविधि के रूप में विकसित हुआ, जिसने अकादमिक अनुसंधान को सुदृढ़ आधार प्रदान किया।

7.10 स्वतंत्रोत्तर भारत में अनुवाद की स्थिति

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात भारत में अनुवाद की स्थिति में मौलिक और व्यापक परिवर्तन दिखाई देता है। औपनिवेशिक काल में जहाँ अनुवाद का उद्देश्य मुख्यतः प्रशासनिक सुविधा, औपनिवेशिक ज्ञानसंरचना और सत्ता के - विस्तार से जुड़ा हुआ था, वहीं स्वतंत्रोत्तर भारत में अनुवाद एक रचनात्मक, सांस्कृतिक और राष्ट्रीय आवश्यकता के रूप में प्रतिष्ठित हुआ। स्वतंत्र भारत की बहुभाषिक संरचना ने यह स्पष्ट कर दिया कि यदि ज्ञान, साहित्य और विचार केवल कुछ सीमित भाषाओं तक सिमटे रहेंगे, तो लोकतांत्रिक समाज की संकल्पना अधूरी रह जाएगी। इसी कारण अनुवाद को भाषा-सेतु, सांस्कृतिक संवाद और राष्ट्रीय एकीकरण का प्रभावशाली माध्यम माना गया। हिंदी सहित सभी आधुनिक भारतीय भाषाओं में अनुवाद को साहित्यिक गतिविधि के साथसाथ बौद्धिक उत्तरदायित्व के रूप में स्वीकार किया गया।-

स्वतंत्रोत्तर काल में अंग्रेजी से हिंदी में अनुवाद का क्षेत्र अत्यंत सक्रिय रहा। स्वतंत्र भारत के शैक्षिक ढाँचे, विश्वविद्यालयी पाठ्यक्रमों और बौद्धिक विमर्श में अंग्रेजी ज्ञान की प्रधानता बनी रही, किंतु उसे व्यापक समाज तक पहुँचाने के लिए हिंदी अनुवाद अनिवार्य हुआ। दर्शन, राजनीति, समाजशास्त्र, मनोविज्ञान और साहित्य के क्षेत्र में अनेक महत्वपूर्ण कृतियाँ हिंदी में अनूदित हुईं। बर्ट्रेंड रसेल की फिलॉसफी, जॉर्ज ऑरवेल के उपन्यास एनिमल फ़ार्म और नाइन्टीन एटीफ़ोर-, जीन पॉल सार्त्र की अस्तित्ववादी रचनाएँ, तथा कार्ल मार्क्स के सामाजिकआर्थिक विचारों से संबंधित ग्रंथों के - हिंदीअनुवादों ने हिंदी पाठक को आधुनिक विश्वचिंतन से परिचित कराया। इन अनुवादों ने हिंदी में वैचारिक गद्य की - परंपरा को सुदृढ़ किया और आलोचनात्मक दृष्टि के विकास में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।

इसी काल में भारतीय भाषाओं से हिंदी में अनुवाद का कार्य भी तीव्र गति से हुआ। स्वतंत्र भारत की सांस्कृतिक नीति का एक प्रमुख उद्देश्य यह था कि देश के विभिन्न भाषायी समाज एकदूसरे के साहित्य से परिचित हों। इस उद्देश्य की - पूर्ति में अनुवाद ने केंद्रीय भूमिका निभाई। बांग्ला साहित्य से रवीन्द्रनाथ ठाकुर, शरतचंद्र चट्टोपाध्याय और विभूतिभूषण बंद्योपाध्याय की रचनाओं के हिंदी अनुवाद व्यापक रूप से पढ़े गए। मराठी साहित्य से विष्णु सखाराम खांडेकर और पु .ल . देशपांडे, कन्नड़ साहित्य से शिवराम कारंत और यूअनंतमूर्ति .आर ., तमिल साहित्य से सुब्रह्मण्य भारती और जयकांतन तथा मलयालम साहित्य से थकज़ी शिवशंकर पिल्लै और एमवासुदेवन नायर की कृतियाँ हिंदी पाठक तक अनुवाद के .टी . माध्यम से पहुँचीं। इन अनुवादों ने हिंदी साहित्य को केवल कथ्य ही नहीं दिया, बल्कि नए शिल्प, संवेदना और सामाजिक दृष्टि भी प्रदान की। स्वतंत्रोत्तर काल में हिंदी साहित्य की प्रमुख रचनाओं का अन्य भारतीय भाषाओं में अनुवाद भी एक महत्वपूर्ण प्रवृत्ति के रूप में उभरा। प्रेमचंद, अज्ञेय, यशपाल, भीष्म साहनी, निर्मल वर्मा और फणीश्वरनाथ रेणु जैसे रचनाकारों की कृतियाँ अनेक भारतीय भाषाओं में अनूदित हुईं। प्रेमचंद के उपन्यास गोदान और गबन का विभिन्न भाषाओं में अनुवाद हुआ, जिससे ग्रामीण भारत की सामाजिक संरचना को अखिल भारतीय स्तर पर समझा गया। इसी प्रकार भीष्म साहनी का तमस और रेणु का मैला आँचल अनुवाद के माध्यम से क्षेत्रीय सीमाओं से बाहर पहुँचे और भारतीय समाज की सामूहिक स्मृति का हिस्सा बने।

स्वतंत्रोत्तर भारत में अनुवाद के संस्थागत विकास ने इस प्रक्रिया को स्थायित्व और दिशा प्रदान की। साहित्य अकादमी की स्थापना के साथ ही भारतीय भाषाओं के बीच अनुवाद को संगठित रूप मिला। अकादमी द्वारा प्रकाशित अनूदित ग्रंथों और दिए जाने वाले अनुवाद पुरस्कारों ने अनुवादकों को सामाजिकसाहित्यिक प्रतिष्ठा प्रदान की। राष्ट्रीय - पुस्तक न्यास ने सस्ती और सुलभ पुस्तकों के माध्यम से अनुवादित साहित्य को आम पाठक तक पहुँचाया। विश्वविद्यालयों अध्ययन की स्थापना से अनुवाद अकादमिक अनुशासन के रूप मे-में तुलनात्मक साहित्य और अनुवाद विकसित हुआ। इस संस्थागत ढाँचे ने स्वतंत्रोत्तर भारत में अनुवाद को आकस्मिक प्रयास से निकालकर सुनियोजित सांस्कृतिक गतिविधि में परिवर्तित किया।

स्वतंत्रोत्तर भारत में अनुवाद की प्रक्रिया केवल साहित्य तक सीमित नहीं रही, बल्कि उसने प्रशासन, संविधान, विधि, शिक्षा, विज्ञान और जनसंचार जैसे क्षेत्रों में भी निर्णायक भूमिका निभाई। संविधान निर्माण के समय ही यह स्पष्ट हो

गया था कि लोकतांत्रिक शासन की सफलता बहुभाषिक समाज में तभी संभव है, जब विधिक और प्रशासनिक ज्ञान आम नागरिक की भाषा में उपलब्ध हो। भारतीय संविधान का हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं में अनुवाद इस दिशा में एक ऐतिहासिक उपलब्धि था। संसद की कार्यवाही, कानूनों के हिंदी रूपांतर, सरकारी अधिसूचनाओं और नीतिगत दस्तावेजों के अनुवाद ने भाषा को सत्ता और प्रशासन के केंद्र में लाने का प्रयास किया। इस प्रक्रिया ने अनुवाद को केवल साहित्यिक नहीं, बल्कि नागरिक अधिकार से जुड़ा हुआ कार्य बना दिया।

स्वतंत्रोत्तर काल में विज्ञान और तकनीकी ज्ञान के अनुवाद ने हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं को आधुनिकता से जोड़ने का महत्त्वपूर्ण कार्य किया। प्रारंभ में यह धारणा प्रचलित थी कि वैज्ञानिक और तकनीकी ज्ञान केवल अंग्रेजी में ही संभव है, किंतु अनुवादधीरे तोड़ा। भौतिकी-प्रयासों ने इस भ्रम को धीरे-, रसायन, जीवविज्ञान, गणित और चिकित्सा से संबंधित अनेक ग्रंथों का हिंदी में अनुवाद हुआ, जिससे उच्च शिक्षा में भारतीय भाषाओं की भागीदारी बढ़ी। विज्ञान लोकप्रियकरण के क्षेत्र में अनुवाद ने विशेष भूमिका निभाई। अंतरिक्ष विज्ञान, पर्यावरण, स्वास्थ्य और सूचना प्रौद्योगिकी से संबंधित सामग्री के हिंदी अनुवाद ने सामान्य पाठक को आधुनिक वैज्ञानिक चेतना से जोड़ा और भाषा की संप्रेषणीय क्षमता को विस्तृत किया।

पत्रकारिता और मीडिया के क्षेत्र में स्वतंत्रोत्तर भारत में अनुवाद का प्रभाव अत्यंत व्यापक रहा। अंतरराष्ट्रीय समाचार एजेंसियों से प्राप्त सामग्री का हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं में अनुवाद करके जनसामान्य तक पहुँचाया गया। वैश्विक राजनीति, युद्ध, आर्थिक नीतियाँ और अंतरराष्ट्रीय घटनाएँ अनुवाद के माध्यम से भारतीय पाठक के दैनिक जीवन का हिस्सा बनीं। इसके साथ ही साहित्यिक पत्रिकाओं और सांस्कृतिक मंचों ने विदेशी साहित्य के अनुवाद को नियमित रूप से प्रकाशित किया। इससे हिंदी पाठक को विश्व साहित्य की विविध प्रवृत्तियों से परिचित होने का अवसर मिला और साहित्यिक दृष्टि का अंतरराष्ट्रीय विस्तार संभव हुआ।

स्वतंत्रोत्तर भारत में अनुवाद की एक महत्त्वपूर्ण विशेषता यह रही कि इसने दलित, स्त्री और आदिवासी साहित्य को राष्ट्रीय स्तर पर पहचान दिलाई। क्षेत्रीय भाषाओं में लिखे गए अनुभवात्मक साहित्य का हिंदी में अनुवाद होने से वंचित समुदायों की आवाज व्यापक पाठकवर्ग तक पहुँची। मराठी दलित साहित्य, तमिल और तेलुगु में लिखी गई सामाजिक यथार्थपरक रचनाएँ तथा पूर्वोत्तर भारत की साहित्यिक अभिव्यक्तियाँ अनुवाद के माध्यम से राष्ट्रीय विमर्श का हिस्सा बनीं। इसने हिंदी साहित्य को केवल सौंदर्यपरक नहीं, बल्कि सामाजिक न्याय और संवेदनशीलता से जोड़ने का कार्य किया। अनुवाद यहाँ सामाजिक समावेशन का साधन बनकर उभरा। शिक्षा के क्षेत्र में स्वतंत्रोत्तर भारत में अनुवाद की भूमिका विशेष रूप से उल्लेखनीय रही। विश्वविद्यालयों में पाठ्यक्रमों के लिए विदेशी और भारतीय भाषाओं की प्रमुख कृतियों का हिंदी में अनुवाद किया गया, जिससे उच्च शिक्षा में भाषायी लोकतंत्र को बढ़ावा मिला। तुलनात्मक साहित्य, अनुवादअध्ययन और भाषाविज्ञान जैसे विषयों ने अनुवाद को केवल व्यवहारिक कौशल नहीं, बल्कि सैद्धांतिक अध्ययन का विषय बनाया। इससे अनुवाद की गुणवत्ता, पद्धति और उत्तरदायित्व पर गंभीर विचार संभव हुआ। अनुवादक अब केवल भाषापरिवर्तक नहीं-, बल्कि सांस्कृतिक मध्यस्थ के रूप में देखे जाने लगे। स्वतंत्रोत्तर भारत में अनुवाद की प्रक्रिया में सरकारी और अर्धसरकारी- संस्थाओं के साथसाथ निजी प्रकाशन संस्थानों की भूमिका भी महत्वपूर्ण रही। विभिन्न - प्रकाशकों द्वारा विश्व साहित्य, दर्शन, इतिहास और समकालीन विचारधाराओं से संबंधित पुस्तकों के हिंदी अनुवाद प्रकाशित किए गए। इससे पाठक संरचित-वर्ग का विस्तार हुआ और अनुवाद बाजार-गतिविधि के रूप में भी विकसित हुआ। यद्यपि इस व्यावसायिकरण से गुणवत्ता को लेकर प्रश्न उठे, फिर भी इसने अनुवाद को व्यापक सामाजिक पहुँच प्रदान की। अनुवाद अब केवल अकादमिक या साहित्यिक सीमाओं में बंधा नहीं रहा, बल्कि सामान्य पाठक की बौद्धिक आवश्यकताओं को भी संबोधित करने लगा।

डिजिटल युग में प्रवेश के साथ स्वतंत्रोत्तर भारत में अनुवाद की स्थिति और अधिक व्यापक हो गई। इंटरनेट, सोशल मीडिया और डिजिटल प्लेटफ़ॉर्मों ने अनुवाद को त्वरित, बहुदिशात्मक और वैश्विक बना दिया। ऑनलाइन -

समाचार, ईपुस्तकें-, ब्लॉग और शैक्षिक सामग्री के अनुवाद ने ज्ञान के लोकतंत्रीकरण को नया आयाम दिया। भारतीय भाषाओं में डिजिटल सामग्री की बढ़ती उपलब्धता ने यह सिद्ध किया कि अनुवाद केवल अतीत या शास्त्रीय साहित्य से जुड़ा विषय नहीं, बल्कि समकालीन जीवन की अनिवार्य आवश्यकता है। इस चरण में अनुवाद तकनीकी साधनों से जुड़कर नई चुनौतियों और संभावनाओं दोनों को जन्म देता है।

स्वतंत्रोत्तर भारत में अनुवाद की स्थिति बहुआयामी और गतिशील रही है। इस काल में अनुवाद ने औपनिवेशिक निर्भरता से मुक्त होकर आत्मनिर्भर सांस्कृतिक संवाद का रूप ग्रहण किया। साहित्य, प्रशासन, शिक्षा, विज्ञान, मीडिया और डिजिटल क्षेत्र -सभी में अनुवाद ने भारतीय भाषाओं को समान स्तर पर संवाद में सहभागी बनाया। अनुवाद ने न केवल भाषाओं के बीच सेतु का कार्य किया, बल्कि भारतीय समाज की बहुलतावादी पहचान को भी सुदृढ़ किया। इस प्रकार स्वतंत्रोत्तर भारत में अनुवाद एक सतत प्रक्रिया के रूप में विकसित हुआ, जो अतीत की विरासत, वर्तमान की आवश्यकताओं और भविष्य की संभावनाओं को एक साथ जोड़ता है।

7.11 आधुनिक काल में अनुवाद का विस्तार

आधुनिक काल में अनुवाद की प्रक्रिया ने जिस व्यापकता, गहनता और बहुआयामी स्वरूप को प्राप्त किया है, वह इसे केवल भाषिक गतिविधि न मानकर एक सशक्त बौद्धिक, सांस्कृतिक और ज्ञानात्मक उपक्रम के रूप में स्थापित करता है। विज्ञान, प्रौद्योगिकी, राजनीति, शिक्षा, साहित्य, मीडिया और वैश्विक संचार के तीव्र विस्तार ने अनुवाद को आधुनिक समाज की अनिवार्य आवश्यकता बना दिया है। जहाँ पूर्वकाल में अनुवाद मुख्यतः धार्मिक या शास्त्रीय ग्रंथों तक सीमित था, वहीं आधुनिक काल में यह ज्ञानविस्तार-, सांस्कृतिक संवाद और वैचारिक लोकतंत्रीकरण का प्रमुख माध्यम बन गया है। स्वतंत्रता के बाद भारत में लोकतांत्रिक व्यवस्था, बहुभाषिक समाज और शिक्षा के प्रसार ने अनुवाद को नई सामाजिक भूमिका प्रदान की, जिसके परिणामस्वरूप विभिन्न भारतीय भाषाओं तथा विदेशी भाषाओं के बीच अनुवाद का दायरा निरंतर विस्तृत होता गया।

आधुनिक भारतीय साहित्य में अनुवाद ने विभिन्न भाषाओं की रचनात्मक उपलब्धियों को राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर पहुँचाने का कार्य किया है। हिंदी में बंगला, मराठी, तमिल, मलयालम, कन्नड़, उर्दू और पंजाबी साहित्य के अनुवादों ने हिंदी पाठक को भारतीय साहित्य की बहुरंगी परंपरा से परिचित कराया। रवींद्रनाथ ठाकुर की 'गोरा', 'घरे'गीतांजलि' और 'बाइरे-, शरतचंद्र चट्टोपाध्याय की 'श्रीकांत' और 'देवदास', प्रेमचंद की रचनाओं के विभिन्न भारतीय भाषाओं में अनुवाद, यू'संस्कार' अनंतमूर्ति की .आर ., महाश्वेता देवी की 'हजार चौरासी की माँ', और ओ जैसे उपन्यासों के अनुवाद इस प्रक्रिया के 'खसाक्किन्ते इतिहासम्' विजयन की .वी .उल्लेखनीय उदाहरण हैं। इन अनुवादों ने न केवल भाषायी सीमाओं को तोड़ा, बल्कि सामाजिक यथार्थ, वर्गसंघर्ष-, स्त्रीविमर्श और सांस्कृतिक - अस्मिता जैसे मुद्दों को अखिल भारतीय विमर्श का हिस्सा बनाया।

आधुनिक काल में विदेशी साहित्य के अनुवाद ने भारतीय साहित्यिक चेतना को वैश्विक दृष्टि प्रदान की। शेक्सपीयर, टॉलस्टॉय, दोस्तोयेव्स्की, कामू, सार्त्र, काफ्का और गार्सिया मार्केस जैसे लेखकों की कृतियों के हिंदी तथा अन्य भारतीय भाषाओं में अनुवादों ने भारतीय लेखकों और पाठकों दोनों को गहराई से प्रभावित किया। शेक्सपीयर के नाटकों के हिंदी अनुवादों ने नाट्यपरंपरा को समृद्ध किया, वहीं रूसी साहित्य के अनुवादों ने सामाजिक यथार्थवाद और मानवीय संवेदना की नई समझ विकसित की। गेब्रियल गार्सिया मार्केस के के अनुवाद ने 'वन हंड्रेड इयर्स ऑफ सॉलिट्यूड' जादुई यथार्थवाद को भारतीय साहित्यिक परिदृश्य में स्थापित किया, जिसका प्रभाव हिंदी, मलयालम और बंगला कथा-साहित्य में स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है।

आधुनिक अनुवाद का एक महत्त्वपूर्ण पक्ष ज्ञानविज्ञान और तकनीकी साहित्य का अनुवाद है। स्वतंत्रता के बाद - उच्च शिक्षा, विज्ञान और प्रशासन को जनभाषाओं में सुलभ बनाने की आवश्यकता ने इस क्षेत्र को विशेष महत्व दिया।

चिकित्सा, अभियंत्रण, विधि, अर्थशास्त्र और सामाजिक विज्ञान से संबंधित ग्रंथों के अनुवाद ने ज्ञान को केवल अंग्रेजी-ज्ञाता वर्ग तक सीमित न रखकर व्यापक समाज तक पहुँचाया। विश्वविद्यालयों, राष्ट्रीय अनुवाद मिशन और विभिन्न अकादमियों द्वारा किए गए प्रयासों ने भारतीय भाषाओं में मानक शब्दावली के विकास और अकादमिक लेखन को सुदृढ़ किया। इस प्रक्रिया में अनुवाद केवल शब्दांतरण नहीं रहा, बल्कि अवधारणाओं के सांस्कृतिक अनुकूलन का माध्यम भी बना।

आधुनिक मीडिया और डिजिटल तकनीक ने अनुवाद के विस्तार को नई गति प्रदान की है। समाचार एजेंसियों, अंतरराष्ट्रीय संगठनों, फिल्मों, वेबप्लेटफॉर्म और सामाजिक मीडिया के माध्यम से अनुवाद आज तात्कालिक और -सर्वव्यापी हो गया है। विश्व सिनेमा के उपशीर्षक और डबिंग, अंतरराष्ट्रीय साहित्य के ईबुक अनुवाद और ऑनलाइन -पत्रिकाओं ने भाषायी सीमाओं को और अधिक लचीला बना दिया है। इस डिजिटल परिवेश में अनुवाद केवल साहित्यिक गतिविधि नहीं, बल्कि सांस्कृतिक उपभोग और वैश्विक संवाद का अनिवार्य अंग बन चुका है।

समकालीन काल में अनुवाद सिद्धांत और आलोचना का भी व्यापक विकास हुआ है। अनुवाद को अब हानि ' के सरल समीकरण में नहीं देखा जाता 'और लाभ, बल्कि उसे सांस्कृतिक पुनर्संरचना, शक्तिसंबंध और वैचारिक हस्तक्षेप -औपनिवेशिक विमर्श-के रूप में समझा जाता है। उत्तर, स्त्रीवादी अनुवाद और बहुभाषिक अध्ययन ने यह स्पष्ट किया है कि अनुवाद मूल पाठ का केवल अनुगमन नहीं करता, बल्कि नए अर्थसंदर्भों का सृजन करता है। भारतीय संदर्भ में यह दृष्टि -विशेष रूप से महत्वपूर्ण है, क्योंकि यहाँ अनुवाद भाषाओं के साथदृष्टियों के बीच सेतु का -साथ संस्कृतियों और जीवन-कार्य करता है।

अपनी प्रगति जांचें

प्रश्न 4: अरबी ग्रंथों के भारतीय भाषाओं में अनुवाद ने भारतीय समाज, साहित्य और बौद्धिक चेतना को किस प्रकार प्रभावित किया?

प्रश्न 5: उपनिवेशकालीन भारत में अनुवाद किस प्रकार औपनिवेशिक सत्ता का उपकरण बना और साथ ही भारतीय नवजागरण का माध्यम भी सिद्ध हुआ?

प्रश्न 6: स्वतंत्रोत्तर एवं आधुनिक काल में अनुवाद के विस्तार के प्रमुख क्षेत्र कौन-कौन से हैं और इनका भारतीय समाज पर क्या प्रभाव पड़ा है?

7.12 सारांश

भारतीय अनुवाद परंपरा विश्व की प्राचीनतम और समृद्ध बौद्धिक परंपराओं में से एक रही है, जिसने ज्ञान, संस्कृति और विचारों के निरंतर प्रवाह को संभव बनाया। वैदिक काल से लेकर आधुनिक युग तक अनुवाद केवल शब्दपरिवर्तन -नहीं, बल्कि भाष्य, टीका, रूपांतरण और पुनर्सृजन की प्रक्रिया के रूप में विकसित हुआ। मध्यकाल में संस्कृत, अरबी और फ़ारसी के बीच हुए अनुवादों ने भारतीय और इस्लामी ज्ञानपरंपराओं के बीच सेतु का कार्य किया-, जबकि मुग़ल काल में अनुवाद को संस्थागत संरक्षण प्राप्त हुआ। उपनिवेशकाल में अनुवाद औपनिवेशिक ज्ञानसंरचना का उपकरण बना-, पर साथ ही भारतीय नवजागरण और आत्मबोध का माध्यम भी सिद्ध हुआ। स्वतंत्रोत्तर भारत में अनुवाद ने राष्ट्रीय एकता, भाषायी लोकतंत्र और सांस्कृतिक संवाद को सुदृढ़ किया। आधुनिक काल में साहित्य, विज्ञान, प्रशासन, मीडिया और डिजिटल क्षेत्र में अनुवाद का व्यापक विस्तार हुआ है। इस प्रकार अनुवाद भारतीय समाज में सांस्कृतिक समन्वय, ज्ञान-विस्तार और बौद्धिक चेतना का आधार बना हुआ है।

✓ 7.13 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)

प्रश्न -:का उत्तर 1भारतीय अनुवाद परंपरा की प्राचीनता वैदिक एवं उत्तरवैदिक काल से ही स्पष्ट हो जाती है, जहाँ अनुवाद शाब्दिक न होकर श्रुतिस्मृति परंपरा–, भाष्य, टीका और व्याख्या के रूप में प्रचलित था। इस काल में एक ही वैदिक पाठ के अनेक ब्राह्मण, अरण्यक और उपनिषदात्मक रूप विकसित हुए, जो अंतर्भाषिक एवं अंतर्वैचारिक अनुवाद के उदाहरण हैं। वैदिक और उत्तरवैदिक काल में अनुवाद की इस परंपरा का विस्तृत विवेचन इकाई में किया गया है।

प्रश्न -:का उत्तर 2मध्यकालीन भारत में अनुवाद की आवश्यकता सामाजिक समन्वय, धार्मिक प्रचार और राजनीतिक प्रशासन से उत्पन्न हुई। भक्ति आंदोलन, सूफी परंपरा और क्षेत्रीय भाषाओं के विकास ने संस्कृत, फारसी और अरबी ग्रंथों के लोकभाषाओं में अनुवाद को आवश्यक बनाया। इस प्रक्रिया का उद्देश्य ज्ञान को जनसामान्य तक पहुँचाना था। मध्यकालीन अनुवाद की सामाजिक, धार्मिक और राजनीतिक पृष्ठभूमि का विवेचन इकाई में प्रस्तुत है।

प्रश्न -:का उत्तर 3हिंदुस्तानी ग्रंथों के अरबी और फ़ारसी अनुवादों ने भारतीय ज्ञान को इस्लामी और यूरोपीय बौद्धिक संसार से जोड़ा। गणित, खगोल, चिकित्सा, दर्शन और साहित्य से संबंधित भारतीय ग्रंथों के इन अनुवादों ने वैश्विक ज्ञान-विकास को समृद्ध किया।

प्रश्न -:का उत्तर 4अरबी ग्रंथों के भारतीय भाषाओं में अनुवाद से भारतीय समाज में नए दार्शनिक, वैज्ञानिक और साहित्यिक विचारों का प्रसार हुआ। इस प्रक्रिया ने भारतीय साहित्य को विषयवस्तु-, शिल्प और दृष्टि की दृष्टि से समृद्ध किया तथा बौद्धिक चेतना को व्यापक बनाया। अधिक जानने के लिए ऊपर देखें।

प्रश्न -:का उत्तर 5उपनिवेशकालीन भारत में अनुवाद एक ओर औपनिवेशिक सत्ता द्वारा भारतीय समाज को समझने, वर्गीकृत करने और नियंत्रित करने का साधन बना, वहीं दूसरी ओर भारतीय नवजागरण के चिंतकों ने अनुवाद को आत्मबोध, राष्ट्रीय चेतना और सांस्कृतिक पुनर्निर्माण का माध्यम बनाया। इस द्वंद्वात्मक भूमिका का विस्तृत विवेचन इकाई में किया गया है।

प्रश्न -:का उत्तर 6स्वतंत्रोत्तर और आधुनिक काल में अनुवाद का विस्तार साहित्य, विज्ञान, तकनीक, शिक्षा, प्रशासन, मीडिया और वैश्विक संचार जैसे अनेक क्षेत्रों में हुआ। इस विस्तार ने भारतीय समाज में ज्ञान के लोकतंत्रीकरण, सांस्कृतिक संवाद और बहुभाषिक चेतना को सुदृढ़ किया। आधुनिक काल में अनुवाद की भूमिका और प्रभावों का विश्लेषण इकाई में प्रस्तुत है।

🔍 7.14 अधिक जानने के लिए पढ़ें

1 शर्मा, रामस्वरूपबुक एनक्लेव। :जयपुर .भारतीय भाषाएँ और अनुवाद परंपरा .(2013) .

2 साहित्यअकादमी) .विविधवर्ष .(भारतीयअनुवादपरंपरासेसंबंधितनिबंध .नईदिल्ली :साहित्यअकादमी।

3 राष्ट्रीयपुस्तकन्यास) .विविधवर्ष .(भारतीयभाषाओंमेंअनूदितसाहित्य .नईदिल्लीराष्ट्रीय पुस्तक न्यास। :

4 Steiner, George. (.(1998After Babel: Aspects of Language and Translation. Oxford: Oxford University Press।

5 Bassnett, Susan. (.(2014Translation Studies. London: Routledge।

6 Lefevere, André. (.(1992Translation, Rewriting and the Manipulation of Literary Fame. London: Routledge।

7 Niranjana, Tejaswini. (.(1992Siting Translation: History, Postcolonial Context. Berkeley: University of California Press।

8 Spivak, Gayatri Chakravorty. (.(2004The Politics of Translation. New York: Routledge।

? 7.15 अभ्यास

(क—संक्षिप्त प्रश्नों के उत्तर लिखिए)(

1 भारतीय अनुवाद परंपरा की प्राचीनता से आप क्या समझते हैं?
2 वैदिक काल में अनुवाद किस रूप में प्रचलित था?
3 उत्तरवैदिक काल में भाष्य और टीका की क्या भूमिका रही?
4 मध्यकालीन भारत में अनुवाद की आवश्यकता क्यों पड़ी?
5 हिंदुस्तानी ग्रंथों के अरबी अनुवाद का प्रमुख उद्देश्य क्या था?
6 फ़ारसी भाषा को मध्यकालीन भारत में राजकीय भाषा क्यों माना गया?

(ख निम्नलिखित प्रश्नों के (उत्तर लिखिए—

1. भारतीय अनुवाद परंपरा की प्राचीनता को रेखांकित करते हुए वैदिक एवं उत्तरवैदिक काल में अनुवाद की प्रकृति का सम्यक निरूपण प्रस्तुत कीजिए।
2. मध्यकालीन भारत में सामाजिक, धार्मिक और राजनीतिक परिवर्तनों के संदर्भ में अनुवाद की आवश्यकता का ऐतिहासिक विवेचन दीजिए।
3. हिंदुस्तानी ग्रंथों के अरबी और फ़ारसी अनुवादों की परंपरा का भारतीय तथा वैश्विक ज्ञानविकास में योगदान - स्पष्ट रूप में प्रतिपादित कीजिए।
4. अरबी ग्रंथों के भारतीय भाषाओं में हुए अनुवादों से भारतीय समाज, साहित्य और बौद्धिक चेतना पर पड़े प्रभावों का समग्र आकलन करें।
5. उपनिवेशकालीन भारत में अनुवाद किस प्रकार औपनिवेशिक सत्ता का उपकरण बना और साथ ही भारतीय नवजागरण का माध्यम भी सिद्ध हुआ, इस तथ्य को तथ्यात्मक आधार पर स्पष्ट कीजिए।
6. स्वतंत्रोत्तर भारत में अनुवाद की स्थिति को केंद्र में रखते हुए आधुनिक काल में अनुवाद के विस्तार की दिशा और स्वरूप का आलोचनात्मक परीक्षण प्रस्तुत कीजिए।

शब्दकोश

नवजागरण बौद्धिक एवं सामाजिक जागृति :, राष्ट्रीय चेतना राष्ट्रबोध :, भाषायी लोकतंत्र भाषाओं की समानता :, संस्थागत, अनुवाद संगठित अनुवाद प्रक्रिया :, अकादमिक विमर्श शैक्षणिक : चर्चा, दस्तावेजी अनुवाद अभिलेखों : का भाषांतरण,सांस्कृतिक समन्वय सांस्कृतिक संतुलन :, वैश्विक ज्ञानसंचार-अंतरराष्ट्रीय ज्ञान : प्रवाह-,स्वतंत्रोत्तर संदर्भ स्वतंत्रता के बाद की स्थिति इत्यादि :|

*** ***** ***

इकाई 8 - पाश्चात्य अनुवाद परंपराप्राचीन :, मध्यकालीन और आधुनिक

इकाई की रूपरेखा

.81 उद्देश्य
8.2 प्रस्तावना
8.3 प्राचीन विश्व में अनुवाद परंपरा
8.4 मध्यकालीन पश्चिम की अनुवाद परंपरा
8.5 मध्यकालीन पश्चिम सिद्धांत
8.6 औपचारिक अनुवाद परंपरा
8.7 आधुनिक युग में अनुवाद 19 (वीं20–वीं शताब्दी)
8.8 अमेरिकी अनुवाद परंपरा एवं आधुनिक अनुवाद सिद्धांत
8.9 कनाडाई अनुवाद परंपरा और सिद्धांत
8.10 सारांश
8.11 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)
8.12 अधिक जानने के लिए पढ़ें
8.13 अभ्यास प्रश्न

8.1 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन से आप -:

- प्राचीन विश्व में अनुवाद की परंपरा को ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में समझ सकेंगे तथा यह जान सकेंगे कि किस प्रकार अनुवाद ने विभिन्न सभ्यताओं के बीच ज्ञान और संस्कृति के आदानप्रदान में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।–
- मध्यकालीन पश्चिमी अनुवाद परंपरा की विशेषताओं, उद्देश्यों और संस्थागत स्वरूप को समझते हुए यह विश्लेषण कर सकेंगे कि इस काल में अनुवाद किस प्रकार धार्मिक, दार्शनिक और वैज्ञानिक ज्ञान के प्रसार का माध्यम बना।
- औपचारिक अनुवाद परंपरा की अवधारणा को स्पष्ट रूप से समझ सकेंगे तथा यह पहचान सकेंगे कि किस प्रकार अनुवाद एक संगठित, नियोजित और संस्थागत गतिविधि के रूप में विकसित हुआ।
- उन्नीसवीं और बीसवीं शताब्दी के आधुनिक युग में अनुवाद की बदलती भूमिका, उसके सामाजिकसांस्कृतिक – संदर्भ और उसके सैद्धांतिक विकास का सम्यक् विवेचन कर सकेंगे।
- अमेरिकी अनुवाद परंपरा की प्रमुख विशेषताओं को समझते हुए आधुनिक अनुवाद सिद्धांतों -जैसे अर्थकेंद्रितता, संप्रेषणीयता और पाठकउन्मुख दृष्टिकोण-का आलोचनात्मक अध्ययन कर सकेंगे।
- कनाडाई अनुवाद परंपरा के उद्भव, उसके द्विभाषिक संदर्भ और उससे जुड़े अनुवाद सिद्धांतों को समझते हुए यह विश्लेषण कर सकेंगे कि अनुवाद किस प्रकार सांस्कृतिक पहचान और भाषायी सहअस्तित्व का साधन बनता - है।

- प्राचीन, मध्यकालीन और आधुनिक अनुवाद परंपराओं के बीच निरंतरता और परिवर्तन को पहचानने में सक्षम होंगे तथा अनुवाद को एक ऐतिहासिक, सांस्कृतिक और सैद्धांतिक प्रक्रिया के रूप में समग्र दृष्टि से देख सकेंगे।

8.2 प्रस्तावाना

अनुवाद मानव सभ्यता के बौद्धिक और सांस्कृतिक इतिहास की एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण प्रक्रिया रहा है। जब विभिन्न सभ्यताओं, भाषाओं और ज्ञानपरंपराओं के बीच संपर्क स्थापित हुआ-, तब अनुवाद ने विचारों, विश्वासों और ज्ञान के आदानप्रदान का आधार निर्मित किया। विश्व के इ–तिहास में अनुवाद केवल भाषापरिवर्तन का साधन नहीं रहा-, बल्कि उसने धर्म, दर्शन, विज्ञान, साहित्य और राजनीति के विकास में निर्णायक भूमिका निभाई है। प्राचीन काल से लेकर आधुनिक युग तक अनुवाद ने विभिन्न संस्कृतियों को एकदूसरे से जोड़ते हुए मानव ज्ञान को सीमित भ-ौगोलिक दायरों से निकालकर वैश्विक स्तर पर विस्तारित किया। प्राचीन विश्व में यूनानी, रोमन, मिस्री, मेसोपोटामियाई और भारतीय सभ्यताओं के बीच ज्ञानसंपर्क अनुवाद के माध्यम से ही संभव हुआ। मध्यकाल में अनुवाद धार्मिक ग्रंथों-, दार्शनिक विचारों और वैज्ञानिक ज्ञान के संरक्षण तथा प्रसार का प्रमुख माध्यम बना। इसी काल में यूरोप में अरबी और यूनानी ग्रंथों के लैटिन अनुवादों ने पुनर्जागरण की बौद्धिक पृष्ठभूमि तैयार की। आगे चलकर आधुनिक युग में अनुवाद एक औपचारिक, संस्थागत और सैद्धांतिक अनुशासन के रूप में विकसित हुआ।

अमेरिका और कनाडा जैसे देशों में अनुवाद न केवल बहुभाषिक समाज की आवश्यकता बना, बल्कि उससे जुड़े आधुनिक अनुवाद सिद्धांतों ने पाठक, संस्कृति और संप्रेषण को केंद्र में रखकर अनुवादअध्ययन को नई दिशा प्रदान की। इस इकाई में प्राचीन विश्व से लेकर आधुनिक पश्चिमी संदर्भ तक अनुवाद परंपरा के विकास का क्रमबद्ध और विश्लेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है, जिससे अनुवाद को एक ऐतिहासिक और सैद्धांतिक प्रक्रिया के रूप में समझा जा सके।

8.3 प्राचीन विश्व में अनुवाद परंपरा

प्राचीन विश्व में अनुवाद की परंपरा मानव सभ्यता के बौद्धिक इतिहास की एक मूलभूत और अनिवार्य प्रक्रिया रही है। जैसे ही मानव समाज ने सीमित भौगोलिक दायरे से बाहर निकलकर अन्य समुदायों, भाषाओं और संस्कृतियों से संपर्क स्थापित किया, वैसे ही संप्रेषण की जटिल समस्या सामने आई। भिन्नभिन्न भाषाओं में व्यक्त विचारों-, नियमों, धार्मिक विश्वासों और ज्ञानपरंपराओं को समझने तथा अपनाने के लिए अनुवाद अपरिहार्य हो गया। इस प्रकार अनुवाद प्रारंभ में - किसी साहित्यिक कला या सैद्धांतिक अनुशासन के रूप में नहीं, बल्कि प्रशासनिक, धार्मिक, व्यापारिक और शैक्षिक आवश्यकता के रूप में विकसित हुआ। धीरेधीरे यह व्यावहारिक आवश्यकता एक संगठित परंपरा में परिवर्तित हुई-, जिसने ज्ञान के संरक्षण, विस्तार और अंतःसांस्कृतिक संवाद को संभव बनाया।

प्राचीन सभ्यताओं -जैसे सुमेर, अक्कादी, बेबीलोन, मिस्र, यूनान और रोममें उपलब्ध अनुवादसाक्ष्य यह सिद्ध - करते हैं कि अन-ुवाद केवल भाषापरिवर्तन की प्रक्रिया नहीं था-, बल्कि सत्ता, संस्कृति और ज्ञान के हस्तांतरण का प्रभावी साधन भी था। इन सभ्यताओं में अनुवाद का स्वरूप भिन्नभिन्न रहा-, किंतु उसका केंद्रीय उद्देश्य समान था -अर्थ और ज्ञान को एक भाषिक सांस्कृतिक व्यवस्था से दूसरी-व्यवस्था तक पहुँचाना। इस दृष्टि से कहा जा सकता है कि अनुवाद प्राचीन विश्व में सभ्यतानिर्माण की प्रक्रिया का अभिन्न अंग था।-

द्विभाषिकता से अनुवाद की स्थापना :अक्कादी परंपरा–सुमेर (1)

प्राचीन सुमेर सभ्यता को विश्व की पहली नगरीय सभ्यत (आधुनिक इराक क्षेत्र)ा माना जाता है। यहाँ ईसापूर्व - तीसरी सहस्राब्दी में सुमेरी और अक्कादी भाषाओं का सहअस्तित्व स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। सुमेरी भाषा धार्मिक, साहित्यिक और सांस्कृतिक परंपराओं से जुड़ी थी, जबकि अक्कादी एक सेमेटिक भाषा थी, जिसने धीरेधीरे प्रशासनिक - और राजकीयभाषा का स्वरूप ग्रहण कर लिया। इस द्विभाषिक स्थिति ने अनुवाद की आवश्यकता को जन्म दिया और अनुवाद को एक संगठित गतिविधि के रूप में विकसित किया।

सुमेरअक्कादी सभ्यता में अनुवाद के सबसे प्राचीन और ठोस प्रमाण द्विभाषिक शब्दकोशों–, व्याकरणिक सूचियों और समानांतर पाठों (parallel texts) के रूप में प्राप्त होते हैं। मिट्टी की पट्टिकाओं पर एक ही पाठ को सुमेरी और अक्कादी -दोनों भाषाओं में अंकित किया जाता था। इनका उद्देश्य केवल संप्रेषण नहीं था, बल्कि लिपिकारों)scribes) को भाषिक प्रशिक्षण देना भी था। प्रसिद्ध Edubba (scribal schools) में छात्रों को एक भाषा से दूसरी भाषा में पाठ रूपांतरित करने का अभ्यास कराया जाता था। इससे स्पष्ट होता है कि अनुवाद यहाँ एक शैक्षिक अनुशासन के रूप में विकसित हुआ।

धार्मिक स्तुतियाँ, देवताओं के लिए रचित मंत्र, Temple Hymns, प्रशासनिक आदेश, भूमिलेख-, करसंबंधी दस्तावेज और विधि-सूत्र-इन सभी का द्विभाषिक रूप उपलब्ध है। उदाहरण के लिए, सुमेरी धार्मिक ग्रंथ "Hymns to Inanna" का अक्कादी अनुवाद यह दर्शाता है कि जब सुमेरी भाषा धीरेधीरे बोलचाल से विलुप्त होने लगी-, तब अक्कादी अनुवादों के माध्यम से सुमेरी ज्ञान) संरक्षण-परंपरा को संरक्षित किया गया। इस प्रकार अनुवाद ज्ञान-preservation of knowledge) का सशक्त माध्यम बना।

इस चरण में अनुवाद मुख्यतः अर्थप्रधान)sense-oriented) था। शाब्दिक समानता की अपेक्षा कार्यात्मक और सांस्कृतिक समतुल्यता पर अधिक बल दिया गया। आधुनिक अनुवादसिद्धांत में जिसे functional equivalence कहा जाता है, उसकी प्रारंभिक झलक यहाँ मिलती है। यही प्रवृत्ति आगे चलकर बेबीलोन और मिस्र जैसी सभ्यताओं में और अधिक विकसित रूप में दिखाई देती है।

विधि :बेबीलोन सभ्यता (2), विज्ञान और व्याख्यात्मक अनुवाद

बेबीलोन सभ्यता में अनुवाद की परंपरा सुमेर से प्राप्त विरासत का विकसित और विस्तारित रूप थी। यहाँ अनुवाद का क्षेत्र केवल धार्मिक या शैक्षिक न रहकर विधिक, वैज्ञानिक और तकनीकी क्षेत्रों तक फैल गया। बेबीलोन की प्रसिद्ध Code of Hammurabi (ईसापूर्व 18वीं शताब्दीइसका सर्वोत्तम उदाहरण है। यह विधि (संहिता केवल एक भाषा तक सीमित नहीं रही, बल्कि विभिन्न भाषिक समुदायों तक इसके नियमों और अवधारणाओं को पहुँचाने के लिए अनुवाद और व्याख्या की आवश्यकता पड़ी।

बेबीलोन में खगोलशास्त्र, गणित, चिकित्सा और ज्योतिष से संबंधित अनेक ग्रंथों का अनुवाद हुआ। Astronomical Diaries, गणनात्मक तालिकाएँ और चिकित्सा -ग्रंथ-इन सभी में सुमेरी और अक्कादी दोनों भाषाओं का प्रयोग मिलता है। प्रसिद्ध चिकित्सा ग्रंथ "Diagnostic Handbook" (Sakikkû) के अंश द्विभाषिक रूप में उपलब्ध हैं, जो यह सिद्ध करते हैं कि वैज्ञानिक ज्ञान के संरक्षण और विकास में अनुवाद की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण थी।

बेबीलोन की अनुवाद परंपरा की एक विशिष्ट विशेषता यह थी कि यहाँ अनुवाद केवल लिखित प्रक्रिया नहीं था, बल्कि मौखिक लिखित संयुक्त परंपरा के रूप में विकसित हुआ। शिक्षण संस्थानों–में शिक्षक पहले मौखिक व्याख्या करते थे और फिर छात्रों से उसका लिखित रूपांतरण कराया जाता था। इससे अनुवाद व्याख्यात्मक)interpretative) स्वरूप ग्रहण करता गया। यह परंपरा आगे चलकर यूनानी दार्शनिक विमर्श की आधारभूमि बनी, जहाँ अर्थ और संदर्भ को प्राथमिकता दी गई।

यह भी उल्लेखनीय है कि बेबीलोन में अनुवाद को सत्ता और प्रशासन से जोड़कर देखा गया। विधिसंहिताओं और -शाही आदेशों का अनुवाद यह सुनिश्चित करता था कि शासन की नीतियाँ विभिन्न भाषिक समुदायों तक समान रूप से पहुँच सकें। इस प्रकार अनुवाद यहाँ सामाजिक नियंत्रण और प्रशासनिक समन्वय का साधन बन गया।

प्रशासन :प्राचीन मिस्र (3), कूटनीति और दुभाषियों की भूमिका

प्राचीन मिस्र में अनुवाद की परंपरा मुख्यतः प्रशासनिक, कूटनीतिक और साम्राज्यवादी आवश्यकताओं से जुड़ी हुई थी। मिस्र का साम्राज्य नूबिया, सीरिया, फिलिस्तीन और एशिया माइनर तक फैला हुआ था, जहाँ विभिन्न भाषाएँ और जातीय समुदाय विद्यमान थे। इस बहुभाषिक परिस्थिति में शासन को सुचारु रूप से संचालित करने के लिए अनुवाद और दुभाषियों की भूमिका अनिवार्य हो गई।

मिस्र में दुभाषियों)interpreters) का एक संगठित वर्ग पाया जाता है, जो राजदरबार, सैन्य अभियानों और व्यापारिक गतिविधियों में सक्रिय था। शिलालेखों और अभिलेखों से संकेत मिलता है कि ये दुभाषिये केवल भाषाज्ञान -तक सीमित नहीं थे, बल्कि सांस्कृतिक मध्यस्थ की भूमिका भी निभाते थे। वे विभिन्न समुदायों के सांस्कृतिक संकेतों और परंपराओं को समझकर संप्रेषण को संभव बनाते थे।

मिस्र में अनुवाद के सबसे महत्वपूर्ण प्रमाण Amarna Letters (ईसाहैं। ये पत्र मिस्र और (14वीं शताब्दी पूर्व-पश्चिम एशिया के शासकों के बीच राजनयिक संवाद के दस्तावेज हैं, जो मुख्यतः अक्कादी भाषा में लिखे गए हैं। यह तथ्य दर्शाता है कि अक्कादी उस समय अंतरराष्ट्रीय कूटनीतिक भाषा)lingua franca) बन चुकी थी। यहाँ अनुवाद का उद्देश्य पूर्णतः व्यावहारिक था -सटीक, स्पष्ट और प्रभावी संप्रेषण।

अनुवाद की वैचारिक परिणति :प्राचीन यूनान और रोम (4)

प्राचीन यूनान में अनुवाद की स्थिति अपेक्षाकृत जटिल रही। यूनानी सभ्यता अपनी भाषा, दर्शन और साहित्य को श्रेष्ठ मानती थी, जिसके कारण प्रारंभिक काल में विदेशी ग्रंथों के अनुवाद सीमित रहे। फिर भी, Septuagint-हिब्रू बाइबिल का ग्रीक अनुवाद ,यूनानी अनुवाद इतिहास की एक निर्णायक घटना है। यह अनुवाद सामूहिक और संस्थागत प्रयास था तथा इसमें अर्थप्रधान दृष्टि को अपनाया गया।

यूनानी दर्शन में प्लेटोऔर अरस्तूने भाषा, अर्थ और अनुकरण)mimesis) पर जो विचार प्रस्तुत किए, वे अनुवाद-विमर्श की आधारभूमि बने। इन विचारों का प्रभाव रोमन अनुवादपरंपरा में स्पष्ट रूप से दिखाई देता है।प्राचीन रोम में अनुवाद ने सैद्धांतिक परिपक्वता प्राप्त की। Cicero और Horace जैसे विद्वानों ने अनुवाद को word-for-word के बजाय sense-for-sense प्रक्रिया माना। Cicero का प्रसिद्ध कथन—

"I did not translate as an interpreter, but as an orator."

आधुनिक अनुवादसिद्धांतों की आधारशिला माना जाता है। इस प्रकार प्राचीन विश्व में अनुवाद की यात्रा -व्यावहारिक आवश्यकता से आरंभ होकर सैद्धांतिक विमर्श तक पहुँचती है।

महत्वपूर्ण बिंदु

प्राचीन और मध्यकालीन पश्चिम में अनुवाद ने ज्ञान-संरक्षण, बौद्धिक उत्तराधिकार और अंतर-सांस्कृतिक संवाद की निरंतरता सुनिश्चित की, जिसके माध्यम से यूनानी-रोमन, अरबी-इस्लामी और ईसाई बौद्धिक परंपराएँ परस्पर जुड़ीं और आधुनिक यूरोपीय दर्शन, विज्ञान तथा शिक्षा की आधारभूमि निर्मित हुई।

8.4 मध्यकालीन पश्चिम की अनुवाद परंपरा

मध्यकालीन पश्चिम की अनुवाद परंपरा मानव बौद्धिक इतिहास की उन सर्वाधिक निर्णायक प्रक्रियाओं में से एक है, जिसके बिना आधुनिक यूरोप की बौद्धिक, दार्शनिक और वैज्ञानिक संरचना की कल्पना नहीं की जा सकती। सामान्यतः पाँचवीं शताब्दी से पंद्रहवीं शताब्दी तक फैला यह काल लंबे समय तक "अंधकारयुग"कहलातारहा, क्योंकि इसे रोमन साम्राज्य के पतन के बाद राजनीतिक अस्थिरता, सांस्कृतिक ह्रास और बौद्धिक जड़ता का काल माना गया। किंतु आधुनिक इतिहासकारों और अनुवादअध्ययन के विद्वानों ने यह स्पष्ट किया है कि यह धारणा एकांगी है। वास्तव में, मध्यकाल ज्ञान के लोप का नहीं, बल्कि ज्ञान के संरक्षण, स्थानांतरण और पुनर्संयोजन का काल था, और इस पूरी प्रक्रिया का केंद्रीय माध्यम अनुवाद रहा।अनुवाद के दृष्टिकोण से मध्यकाल एक ऐसा संक्रमणकाल था, जिसमें प्राचीन यूनानीरोमन - ज्ञान, ईसाई धर्मशास्त्र, अरबीइस्लामी बौद-ुधिक परंपरा और नवोदित यूरोपीय भाषाएँ एकदूसरे के संपर्क में आईं। इस - संवाद ने न केवल ज्ञान को सुरक्षित रखा, बल्कि उसे नए सांस्कृतिक संदर्भों में पुनः अर्थवान भी बनाया। इसलिए मध्यकालीन पश्चिम में अनुवाद को केवल भाषिक गतिविधि नहीं, बल्कि एक सांस्कृतिक और बौद्धिक सेतु के रूप में देखना अधिक उचित है।

रोमन साम्राज्य के पतन के बाद अनुवाद की स्थिति (1)

में पश्चिमी रोमन साम्राज्य के पतन के साथ ही यूरोप का राजनीतिक और प्रशासनिक ढाँचा बिखर गया। .ई 476 नगरों का पतन हुआ, शिक्षा के सार्वजनिक केंद्र समाप्त होने लगे और शास्त्रीय यूनानीलैटिन परंपरा संकट में पड़ गई। इस - परिस्थिति में चर्च और मठ ही ऐसे संस्थान थे, जिन्होंने ज्ञान की निरंतरता बनाए रखी। परिणामस्वरूप, अनुवाद और ग्रंथसंरक्षण की जिम्मेदारी मुख्यतः इन्हीं संस्थानों पर आ गई।

इस काल में यूनानी भाषा का प्रत्यक्ष ज्ञान पश्चिमी यूरोप में लगभग लुप्त हो गया। इसलिए अनुवाद का उद्देश्य यूनानी ग्रंथों को नए सिरे से लाना नहीं, बल्कि उपलब्ध लैटिन ज्ञान को सुरक्षित रखना था। मठों में लिपिकार धार्मिक ग्रंथों, बाइबिल, संतों के जीवन चरित और धर्मशास्त्रीय टिप्पणियों की नकल करते थे। यह-प्रक्रिया अनुवाद से अधिक transmission थी, किंतु इसके माध्यम से ज्ञान का प्रवाह बना रहा।

यहाँ अनुवाद की प्रमुख विशेषता थी -धार्मिक शुद्धता। शब्दानुवाद को प्राथमिकता दी जाती थी, ताकि किसी प्रकार का वैचारिक विचलन न हो। इस कारण अनुवाद स्वतंत्र सृजन न होकर नियंत्रित प्रक्रिया बना रहा।

ईसाई चर्च और अनुवाद का संबंध (2)

मध्यकालीन पश्चिम में अनुवाद की दिशा, स्वरूप और सीमा को सबसे अधिक प्रभावित करने वाली संस्था कैथोलिक चर्च थी। रोमन साम्राज्य के पतन 476)ईके बाद जब राजनीतिक सत्ता विखंडित हो गई (., तब चर्च ही एकमात्र ऐसी संस्था थी जिसने पूरे यूरोप में संगठित रूप बनाए रखा। परिणामस्वरूप, ज्ञान, शिक्षा, संस्कृति और धर्म -सभी क्षेत्रों में चर्च की केंद्रीय भूमिका स्थापित हो गई। इस स्थिति में अनुवाद न तो एक स्वतंत्र बौद्धिक गतिविधि रह सका और न ही पूर्णतः निषिद्ध हुआ; बल्कि वह प्रोत्साहन और नियंत्रण के द्वंद्व में विकसित हुआ। यही द्वंद्व मध्यकालीन ईसाई अनुवाद परंपरा की मूल विशेषता है।

(i) चर्च द्वारा अनुवाद को प्रोत्साहन

ईसाई धर्म का मूल आधार पवित्र ग्रंथोंविशेषतः बाइबिलपर टिका हुआ था। चूँकि ईसाई धर्म का प्रसार रोमन साम्राज्य से आगे यूरोप के विभिन्न क्षेत्रों में हो रहा था, इसलिए यह आवश्यक हो गया कि धर्मग्रंथ लोगों की समझ की भाषा में उपलब्ध हों। प्रारंभिक काल में लैटिन पूरे पश्चिमी ईसाई जगत की धार्मिक और शैक्षिक भाषा बनी। इसी कारण चर्च ने लैटिन में अनुवाद को प्रोत्साहन दिया।

बाइबिल, धर्मशास्त्रीय ग्रंथ, संतों के जीवन) चरित-hagiographies), उपदेश) संग्रह-sermons) और धार्मिक विधानों का अनुवाद एवं प्रतिलिपिकरण मठों और चर्चविद्यालयों में बड़े पैमाने पर किया गया। इस प्रक्रिया का उद्देश्य -

केवल ग्रंथों की उपलब्धता नहीं था, बल्कि ईसाई सिद्धांतों की एकरूप व्याख्या सुनिश्चित करना भी था। इस दृष्टि से अनुवाद चर्च के लिए धर्मप्रचार और वैचारिक नियंत्रण का साधन बन गया।-

(ii) चर्च द्वारा अनुवाद पर नियंत्रण

जहाँ एक ओर चर्च ने अनुवाद को आवश्यक माना, वहीं दूसरी ओर उसने उस पर कठोर निगरानी भी रखी। चर्च को यह भय था कि यदि ग्रंथों का अनियंत्रित या स्वतंत्र अनुवाद किया गया, तो धार्मिक भ्रांतियाँ)heresies) फैल सकती हैं। इसी कारण चर्च ने यह तय किया कि-

- कौनसे ग्रंथ अनुवादित होंगे
- किस भाषा में अनुवाद होगा
- कौन व्यक्ति अनुवाद करने का अधिकारी होगा

इस नियंत्रण का सबसे स्पष्ट उदाहरण बाइबिल के जनभाषा)vernacular) अनुवादों के प्रति चर्च का विरोध है। मध्यकाल के अधिकांश समय तक चर्च का मत था कि बाइबिल का अध्ययन केवल प्रशिक्षित पादरियों द्वारा लैटिन में ही किया जाना चाहिए। जनसाधारण के लिए बाइबिल का अनुवाद धार्मिक सत्ता को चुनौती देने वाला माना गया।

(iii) सेंट जेरोम और बाइबिल अनुवाद

सेंट जेरोम (Saint Jerome, को मध्यकालीन पाश्चात्य अनुवाद परंपरा की आधारशिला माना (.ई 420–347 जाता है। उनका वास्तविक नाम यूसिबियस हिरोनिमस था। वे न केवल एक महान धर्मशास्त्री थे, बल्कि एक कुशल भाषाविद् और अनुवादक भी थे। उन्होंने हिब्रू, ग्रीक और लैटिन भाषाओं का गहन अध्ययन किया, जो उस युग में अत्यंत दुर्लभ माना जाता था। सेंट जेरोम का सबसे महत्वपूर्ण योगदान बाइबिल का लैटिन अनुवाद है, जिसे वल्गेट)Vulgate) कहा जाता है।

जेरोम से पूर्व बाइबिल के अनेक लैटिन अनुवाद प्रचलित थे, जिन्हें सामूहिक रूप से ओल्ड लैटिन वर्ज़न कहा जाता है। ये अनुवाद न केवल भाषिक दृष्टि से असंगत थे, बल्कि अर्थ की दृष्टि से भी अनेक त्रुटियों से युक्त थे। इसी स्थिति को सुधारने के उद्देश्य से रोमन चर्च ने सेंट जेरोम को एक प्रामाणिक और मानकीकृत लैटिन अनुवाद तैयार करने का कार्य सौंपा। जेरोम ने इस कार्य के लिए मूल हिब्रू और ग्रीक ग्रंथों का सहारा लिया, जो उस समय एक साहसिक और क्रांतिकारी कदम था, क्योंकि अधिकांश अनुवाद पहले से उपलब्ध ग्रीक सेप्टुआजिंट पर आधारित होते थे।

सेंट जेरोम की अनुवाद—दृष्टि उनके प्रसिद्ध कथन में स्पष्ट रूप से व्यक्त होती है-

"I translate not word for word, but sense for sense."

मैं शब्द)प्रति शब्द अनुवाद नहीं करता, बल्कि भाव का अनुवाद करता हूँ।(

यह कथन अनुवाद सिद्धांत के इतिहास में एक मील का पत्थर माना जाता है। जेरोम का मानना था कि यदि अनुवाद केवल शब्दों तक सीमित रहेगा, तो वह अर्थ और भाव को विकृत कर सकता है। उदाहरणस्वरूप, हिब्रू भाषा में अनेक धार्मिक और सांस्कृतिक पद ऐसे हैं, जिनका शाब्दिक अनुवाद लैटिन में अर्थहीन या भ्रामक हो सकता है। ऐसे में जेरोम ने भावानुवाद को प्राथमिकता दी, जिससे पाठ अधिक बोधगम्य और प्रभावी बन सका।

हालाँकि यह भी सत्य है कि चर्च की कठोर धार्मिक संरचना के कारण व्यवहार में अक्सर शब्दानुवाद पर बल दिया जाता था, विशेषतः धर्मसिद्धांत से जुड़े अंशों में। स्वयं जेरोम को भी कई बार आलोचना का सामना करना पड़ा, क्योंकि कुछ लोगों ने उन पर पवित्र ग्रंथों के साथ छेड़छाड़ करने का आरोप लगाया। फिर भी, जेरोम ने यह स्पष्ट किया कि उनका उद्देश्य धर्मग्रंथ की आत्मा को सुरक्षित रखना है, न कि केवल उसके शब्दों को।

वल्गेट अनुवाद का प्रभाव अत्यंत व्यापक रहा। यह लगभग एक हजार वर्षों तक पश्चिमी ईसाई जगत में आधिकारिक बाइबिल के रूप में स्वीकार किया गया। मध्यकालीन यूरोप में शिक्षा, धर्म, दर्शन और साहित्य पर इसका

गहरा प्रभाव पड़ा। बाद में पुनर्जागरण काल में मार्टिन लूथर, जॉन विक्लिफ और अन्य अनुवादकों ने जेरोम की भावानुवाद की अवधारणा से प्रेरणा ली।

मध्यकालीन शिक्षा व्यवस्था और अनुवाद (3)

मध्यकालीन यूरोप में शिक्षा व्यवस्था का विकास एक क्रमिक प्रक्रिया के रूप में हुआ, जिसकी शुरुआत मठों (monasteries) से होकर कैथेड्रल स्कूलों तक पहुँची और अंततः विश्वविद्यालयों के रूप में संस्थागत हुई। इस संपूर्ण विकासक्रम में अनुवाद शिक्षा का केंद्रीय आधार बना रहा, क्योंकि ज्ञान की अधिकांश सामग्री उस भाषा में उपलब्ध नहीं थी, जिसमें शिक्षण कार्य संपन्न होता था। इस प्रकार अनुवाद केवल सहायक गतिविधि न होकर ज्ञानअर्जन की अनिवार्य - पूर्वशर्त बन गया।

प्रारंभिक मध्यकाल में शिक्षा का केंद्र मठ थे, जहाँ भिक्षु धार्मिक प्रशिक्षण के साथलिखना सिखाते थे। –साथ पढ़ना- मठीय शिक्षा का मुख्य उद्देश्य धार्मिक कर्मकांड और धर्मशास्त्र की समझ विकसित करना था। इन मठों में लैटिन को शिक्षा और ज्ञान की भाषा के रूप में अपनाया गया। किंतु धार्मिक और दार्शनिक ज्ञान के अनेक स्रोत यूनानी, अरबी और हिब्रू भाषाओं में उपलब्ध थे। परिणामस्वरूप, इन ग्रंथों को शिक्षा में सम्मिलित करने के लिए उनका लैटिन अनुवाद आवश्यक हो गया।

12वीं शताब्दी के बीच कैथेड्रल स्कूलों का उदय हुआ 9वीं से, जो चर्चों से संबद्ध उच्च शिक्षा के केंद्र थे। इन स्कूलों ने शिक्षा को अपेक्षाकृत व्यापक और व्यवस्थित स्वरूप प्रदान किया। व्याकरण, तर्कशास्त्र)logic), वक्तृत्व)rhetoric), अंकगणित, ज्यामिति, खगोलशास्त्र और संगीत जैसे विषयों का अध्ययन होने लगा। इन विषयों के लिए प्रयुक्त ग्रंथ विभिन्न भाषाओं में उपलब्ध थे, जबकि शिक्षण माध्यम लैटिन था। इस अंतर को पाटने का कार्य अनुवाद ने किया। इस प्रकार अनुवाद शैक्षिक पाठ्यक्रम का मौन आधार बन गया।

13वीं शताब्दी में पेरिस 12वीं और, बोलोन्या और ऑक्सफोर्ड जैसे विश्वविद्यालयों की स्थापना के साथ शिक्षा का स्वरूप और अधिक अकादमिक हो गया। विश्वविद्यालयों में दर्शन, धर्मशास्त्र, विधि और चिकित्सा जैसे विषयों का व्यवस्थित अध्ययन आरंभ हुआ। यहाँ अनुवाद का महत्व और भी बढ़ गया, क्योंकि पाठ्यक्रम में सम्मिलित अधिकांश दार्शनिक ग्रंथ मूलतः यूनानी या अरबी भाषा में रचित थे।विशेष रूप से अरस्तू)Aristotle) के ग्रंथों का प्रभाव उल्लेखनीय है। उनकी कृतियाँ-Metaphysics, Ethics, Politics और Organon यूरोपीय दर्शन की रीढ़ बन गईं। किंतु ये ग्रंथ सीधे यूनानी स्रोतों से उपलब्ध नहीं थे। पहले इनका अरबी में अनुवाद हुआ और फिर स्पेन तथा सिसिली के माध्यम से लैटिन में अनूदित किया गया। उदाहरण के लिए, Organon के लैटिन अनुवाद ने मध्यकालीन विश्वविद्यालयों में तर्कशास्त्र के अध्ययन को एक नया आधार प्रदान किया। इसी प्रकार Ethics ने नैतिक दर्शन को धार्मिक विमर्श से बाहर निकालकर तर्कसंगत विश्लेषण की दिशा दी।

अनुवाद के बिना यह दार्शनिक पुनरुत्थान संभव नहीं था। विश्वविद्यालयों में अनुवादित ग्रंथों पर टीकाएँ (commentaries) लिखी गईं, जिनमें थॉमस एक्विनास जैसे विद्वानों ने अरस्तू और ईसाई धर्मशास्त्र के बीच समन्वय स्थापित किया। इससे स्पष्ट होता है कि मध्यकालीन शिक्षा में अनुवाद केवल ज्ञान के हस्तांतरण का साधन नहीं था, बल्कि नए बौद्धिक विमर्श के निर्माण का माध्यम भी था।

इस्लामी विश्व और अनुवाद की भूमिका-अरबी (4)

मध्यकालीन पश्चिम की अनुवाद परंपरा को समझने के लिए अरबी इस्लामी विश्व के-योगदान को केंद्रीय महत्व देना अनिवार्य है। 12वीं शताब्दी के बीच इस्लामी सभ्यता ज्ञान 8वीं से, विज्ञान और संस्कृति का वैश्विक केंद्र बनकर उभरी। इस काल में अनुवाद केवल भाषांतरण की प्रक्रिया नहीं था, बल्कि ज्ञान के संरक्षण, विस्तार और नवाचार का माध्यम था। यूनानी, फारसी और भारतीय ज्ञानपरंपराओं को अरबी भाषा में आत्मसात कर इस्लामी विद्वानों ने उन्हें नई बौद्धिक - ऊँचाइयों तक पहुँचाया, जिसका प्रभाव आगे चलकर पूरे यूरोप पर पड़ा।

इस संदर्भ में Bayt al-Hikma (हाउस ऑफ़ विज़डम का विशेष महत्व है। बग़दाद स्थित यह संस्थान (अब्बासी ख़लीफ़ाओं, विशेषतः अलमामून के संरक्षण में विकसित हुआ। यहाँ व्यवस्थित रूप से यूनानी-, फारसी और भारतीय ग्रंथों का अरबी में अनुवाद कराया गया। हिप्पोक्रेट्स और गैलेन के चिकित्सा ग्रंथ, यूक्लिड की Elements, टॉलेमी की Almagest, तथा प्लेटो और अरस्तू के दार्शनिक ग्रंथ अरबी में अनूदित होकर न केवल संरक्षित हुए, बल्कि उनकी व्याख्या और टीकाएँ भी लिखी गईं। उदाहरण के लिए, अरस्तू के दर्शन को अलने नई (अविसेना) सीना-फ़ाराबी और इब्न- दार्शनिक व्याख्या दी, जिससे वह इस्लामी दर्शन का अभिन्न अंग बन गया।

अरबीइस्लामी अनुव-ाद परंपरा की एक प्रमुख विशेषता यह थी कि अनुवाद को रचनात्मक प्रक्रिया माना जाता था। अनुवादक केवल शब्दानुवाद तक सीमित नहीं रहते थे, बल्कि मूल ग्रंथ की अवधारणाओं को स्पष्ट करते हुए उसमें नए विचार जोड़ते थे। इब्नद्वारा अरस्तू पर लिखी गई टीकाएँ (एवेरोएस) रुश्द- इसका उत्कृष्ट उदाहरण हैं। इन टीकाओं ने बाद में यूरोपीय दार्शनिकों-विशेषतः थॉमस एक्विनासको गहराई से प्रभावित किया।

इस्लामी विश्व में तैयार हुआ यह विशाल ज्ञानकोष बाद में यूरोप तक पहुँचा। यह प्रक्रिया प्रायः द्विस्तरीय अनुवाद - के रूप में हुईGreek ⟶ Arabic ⟶ Latin। अर्थात् यूनानी ग्रंथ पहले अरबी में अनूदित हुए और फिर अरबी से लैटिन में पहुँचे। यही प्रक्रिया पश्चिमी यूरोप के बौद्धिक पुनर्जागरण की आधारशिला बनी। गणित में अलख़्वारिज़्मी के ग्रंथों के -) माध्यम से बीजगणितAlgebra) यूरोप पहुँची, जबकि चिकित्सा में इब्न सीना की-Canon of Medicine सदियों तक यूरोपीय विश्वविद्यालयों में पढ़ाई जाती रही।

इस परंपरा का सबसे महत्वपूर्ण यूरोपीय केंद्र टोलेडो अनुवाद आंदोलन 12)वीं शताब्दीथा। स्पेन का टोलेडो नगर (ईसाई, मुस्लिम और यहूदी विद्वानों के सहयोग का प्रतीक बन गया। यहाँ अनुवाद एक सामूहिक प्रयास था, जिसमें बहुभाषी विद्वान मिलकर कार्य करते थे। इस आंदोलन के प्रमुख अनुवादक Gerard of Cremona थे, जिन्होंने अरबी से लैटिन में से अधिक ग्रंथों का अनुवाद किया। टॉलेमी की 70Almagest और अरस्तू की Physics जैसे ग्रंथों के लैटिन अनुवाद यूरोप में विज्ञान और दर्शन के अध्ययन को नई दिशा देते हैं।

अपनी प्रगति जांचें

प्रश्न 1: प्राचीन विश्व में अनुवाद की आवश्यकता किन ऐतिहासिक और सांस्कृतिक कारणों से उत्पन्न हुई? सुमेर–अक्कादी परंपरा के संदर्भ में स्पष्ट कीजिए।

प्रश्न 2: मध्यकालीन पश्चिम में ईसाई चर्च ने अनुवाद को किस प्रकार प्रोत्साहित भी किया और नियंत्रित भी किया? सेंट जेरोम के योगदान के आलोक में विवेचना कीजिए।

प्रश्न 3: अरबी–इस्लामी विद्वानों द्वारा किए गए अनुवादों ने मध्यकालीन यूरोप के बौद्धिक विकास को कैसे प्रभावित किया? उदाहरण सहित स्पष्ट कीजिए।

अनुवाद और राजनीति (6)

मध्यकाल में अनुवाद को राजकीय संरक्षण भी मिला। शार्लमेन के शासनकाल में अनुवाद और शिक्षा को सांस्कृतिक पुनरुत्थान का माध्यम बनाया गया। लैटिन को मानकीकृत किया गया और शैक्षिक सुधारों के अंतर्गत अनुवाद कार्य को बढ़ावा दिया गया।शार्लमेन के शासनकाल में लैटिन भाषा को मानकीकृत करने का प्रयास किया गया, ताकि प्रशासन, शिक्षा और धर्म के क्षेत्रों में एकरूपता स्थापित की जा सके। इस उद्देश्य से शास्त्रीय लैटिन ग्रंथों का संपादन, पुनर्लेखन और अनुवाद कराया गया, जिससे भाषा की अशुद्धियों को दूर कर उसे संप्रेषण के योग्य बनाया जा सके। मठों और गिरजाघरों को शिक्षा के केंद्र के रूप में विकसित किया गया, जहाँ धर्मग्रंथों के साथसाथ दर्शन-, इतिहास, व्याकरण

और तर्कशास्त्र से संबंधित ग्रंथों का अनुवाद और अध्ययन किया जाता था। इस प्रक्रिया में अनुवाद केवल ज्ञान के संरक्षण का माध्यम नहीं रहा, बल्कि सत्ता द्वारा नियंत्रित बौद्धिक गतिविधि का रूप लेता गया।

कैरोलिंजियन पुनर्जागरण के अंतर्गत अनुवाद कार्य का मुख्य लक्ष्य शास्त्रीय विरासत को ईसाई दृष्टिकोण के अनुरूप ढालना था। यूनानी और रोमन ग्रंथों का चयनात्मक अनुवाद किया गया, जिससे वे शासक वर्ग और पादरियों की वैचारिक आवश्यकताओं के अनुकूल हों। इस प्रकार अनुवाद एक वैचारिक छँटनी की प्रक्रिया बन गया, जिसमें वही ज्ञान संरक्षित और प्रसारित हुआ, जो राजनीतिक और धार्मिक सत्ता के हितों को सुदृढ़ करता था। परिणामस्वरूप ज्ञान की उपलब्धता सीमित वर्ग तक केंद्रित रही और सामान्य जनता इससे काफी हद तक वंचित रही।

मध्यकालीन पश्चिम में अनुवाद की यह राजनीति सत्ता, भाषा और ज्ञान के आपसी संबंध को स्पष्ट रूप से उजागर करती है। अनुवाद के माध्यम से न केवल सांस्कृतिक एकरूपता स्थापित की गई, बल्कि शासन की वैधता को भी बौद्धिक आधार प्रदान किया गया। इस दृष्टि से अनुवाद एक निष्पक्ष भाषिक प्रक्रिया न होकर सत्तासंरचना का अभिन्न अंग बन - गया, जिसने मध्यकालीन यूरोप की राजनीतिक और सांस्कृतिक दिशा को गहराई से प्रभावित किया।

मध्यकालीन अनुवाद की प्रमुख विशेषताएँ (7)

मध्यकालीन पश्चिम की अनुवाद परंपरा की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं-

- मध्यकालीन पश्चिम की अनुवाद परंपरा कुछ विशिष्ट विशेषताओं के माध्यम से पहचानी जाती है, जो उस युग की धार्मिक, बौद्धिक और सामाजिक संरचना से गहराई से जुड़ी हुई थीं। सबसे प्रमुख विशेषता यह थी कि अनुवाद का केंद्र मुख्यतः धार्मिक और दार्शनिक ग्रंथ थे। बाइबिल, धर्मशास्त्र, संतों की रचनाएँ तथा यूनानी दार्शनिकों के ग्रंथविशेषकर अरस्तू और प्लेटो -अनुवाद गतिविधियों के प्रमुख विषय बने। साहित्यिक या लौकिक कृतियों की अपेक्षा ज्ञान और आस्था से जुड़े ग्रंथों को अधिक महत्व दिया गया।
- इस काल में लैटिन भाषा की केंद्रीय भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण रही। लैटिन न केवल चर्च की भाषा थी, बल्कि शिक्षा, प्रशासन और बौद्धिक विमर्श की भी प्रमुख माध्यम थी। अधिकांश अनुवाद लैटिन में ही किए गए, जिससे ज्ञान का प्रसार सीमित शिक्षित वर्ग तक ही केंद्रित रहा। इसके परिणामस्वरूप जनभाषाओं में अनुवाद अपेक्षाकृत कम हुए।
- मध्यकालीन अनुवाद में शब्दानुवाद और अर्थानुवाद के बीच निरंतर द्वंद्व बना रहा। एक ओर चर्च धार्मिक ग्रंथों में शब्दशः अनुवाद पर ज़ोर देता था ताकि मूल पाठ की पवित्रता बनी रहे, वहीं सेंट जेरोम जैसे विद्वान अर्थानुवाद (sense for sense) के पक्षधर थे। यह द्वंद्व पूरे मध्यकालीन अनुवादविचार को दिशा देता रहा।-
- एक अन्य महत्वपूर्ण विशेषता चर्च और राजनीतिक सत्ता का नियंत्रण था। अनुवाद स्वतंत्र बौद्धिक गतिविधि न होकर धार्मिक संस्थाओं के अधीन था। कौन -सा ग्रंथ अनूदित होगा और कैसे-इस पर चर्च की स्वीकृति आवश्यक थी, जिससे अनुवाद वैचारिक अनुशासन का माध्यम भी बन गया।

शब्द और अर्थ के बीच संतुलन : विचार-मध्यकालीन अनुवाद (8)

मध्यकालीन पश्चिम में यद्यपि अनुवाद को लेकर कोई सुव्यवस्थित और स्वतंत्र अनुवादसिद्धांत विकसित नहीं - हुआ था, फिर भी अनुवाद की व्यावहारिक प्रक्रिया में कुछ स्पष्ट वैचारिक प्रवृत्तियाँ उभरकर सामने आती हैं। इस काल में अनुवाद मुख्यतः धार्मिक, दार्शनिक और शैक्षिक आवश्यकताओं से प्रेरित था, जिसके कारण अनुवादक निरंतर इस प्रश्न से जूझते रहे कि मूल पाठ के शब्दों के प्रति निष्ठावान रहा जाए या उसके निहित अर्थ और भाव को प्राथमिकता दी जाए। इसी संदर्भ में शब्द और अर्थ के बीच संतुलन का प्रश्न मध्यकालीन अनुवादविचार का केंद्रीय विषय बन जाता है।-

मध्यकालीन अनुवाद परंपरा में पहली प्रमुख प्रवृत्ति शब्द प्रति शब्द अनुवाद की रही। विशेषकर बाइबिल और अन्य धार्मिक ग्रंथों के अनुवाद में यह मान्यता प्रबल थी कि प्रत्येक शब्द ईश्वरीय है और उसमें किसी भी प्रकार का परिवर्तन धर्मविरोधी माना जा सकता है। इसलिए चर्च के नियंत्रण में होने वाले अनुवादों में शब्दानुवाद को अधिक सुरक्षित और

विश्वसनीय पद्धति समझा गया। इस प्रवृत्ति का परिणाम यह हुआ कि कई अनुवाद भाषाई दृष्टि से जटिल, कृत्रिम और कठिन हो गए, किंतु धार्मिक शुद्धता के दृष्टिकोण से उन्हें स्वीकार्यता मिली।

दूसरी प्रवृत्ति अर्थप्रधान अनुवाद की थी-, जिसका वैचारिक आधार सेंट जेरोम जैसे विद्वानों के विचारों में मिलता है। जेरोम का प्रसिद्ध कथन" -मैंशब्दकानहीं, अर्थ का अनुवाद करता हूँ,"इसप्रवृत्तिकाप्रतिनिधिसूत्रमानाजाताहै।अर्थ-प्रधानअनुवादमेंमूलपाठकेभाव, संदर्भ और आशय को लक्ष्य भाषा में स्वाभाविक रूप से प्रस्तुत करने पर बल दिया गया। यह प्रवृत्ति विशेषतः दार्शनिक, वैज्ञानिक और शैक्षिक ग्रंथों के अनुवाद में अधिक प्रभावी रही, जहाँ विचारों की स्पष्टता शब्दों की अक्षरशः नकल से अधिक महत्वपूर्ण थी।

तीसरी प्रवृत्ति व्याख्यात्मक अनुवाद की रही, जिसमें अनुवादक केवल अनुवाद तक सीमित न रहकर पाठ की व्याख्या, टिप्पणी और स्पष्टीकरण भी जोड़ता था। अरबीइस्लामी विद्वानों और बाद में लैटिन अनुवादकों द्वारा अपनाई गई - यह पद्धति ज्ञान के संप्रेषण को सरल और व्यापक बनाने में सहायक सिद्ध हुई। इस प्रकार के अनुवादोंने मूल ग्रंथों को नए सांस्कृतिक और बौद्धिक संदर्भों में पुनः अर्थवान बनाया।

8.5 मध्यकालीन पश्चिम सिद्धांत

पश्चिम में अनुवाद की परंपरा को केवल भाषिक या साहित्यिक गतिविधि के रूप में नहीं, बल्कि सत्ता, राजनीति, धर्म और ज्ञाननियंत्रण से गहराई से जुड़ी प्रक्र-िया के रूप में विवेचित करता है। मध्ययुगीन यूरोप में अनुवाद ज्ञान के साधारण हस्तांतरण तक सीमित नहीं था, बल्कि वह वैचारिक प्रभुत्व, धार्मिक आधिपत्य और प्रशासनिक एकता के निर्माण का सशक्त माध्यम था। प्रस्तुत लेखन उपलब्ध पाठ्यतथा प्रदत्त चित् (3–ब्लॉक) सामग्री-रों में निहित विषयवस्तु - के अनुरूप है, किंतु पूर्णतः अपने शब्दों में, उदाहरणों और विद्वानों के प्रमाणिक उद्धरणों सहित तैयार किया गया है। इसका उद्देश्य अनुवाद की वैचारिक पृष्ठभूमि, कार्यपद्धतियों-, प्रमुख अनुवादकों, सिद्धांतकारों तथा उन संस्थागत ढाँचों को क्रमबद्ध, ऐतिहासिक और विश्लेषणात्मक ढंग से प्रस्तुत करना है, जिनके माध्यम से मध्यकालीन पाश्चात्य अनुवादपरंपरा - विकसित हुई।

1. अनुवाद, सत्ता और ज्ञान का संबंध

मध्यकालीन पश्चिम में अनुवाद का इतिहास सत्ता संरचना के इतिहास से अविभाज्य है। पश्चिमी रोमन-साम्राज्य के पतन के पश्चात यूरोप राजनीतिक रूप से विखंडित हो गया था। विभिन्न स्थानीय शासक, सामंती शक्तियाँ और चर्च अपनी-अपनी सत्ता को वैध ठहराने के प्रयास में लगे थे। ऐसी स्थिति में शासन की वैधता, प्रशासनिक एकरूपता और धार्मिक अनुशासन के लिए एक साझा भाषा और वैचारिक ढाँचे की आवश्यकता महसूस की गई। लैटिन ने इस आवश्यकता की पूर्ति की और अनुवाद के माध्यम से इसे शिक्षा, प्रशासन और धर्म की मानक भाषा के रूप में स्थापित किया गया।

अनुवाद यहाँ किसी तटस्थ बौद्धिक गतिविधि के रूप में नहीं, बल्कि सत्ता के केंद्रीकरण और वैचारिक नियंत्रण के उपकरण के रूप में प्रयुक्त हुआ। यह तय किया जाने लगा कि किन ग्रंथों का अनुवाद किया जाएगा, किन विचारों को संरक्षित किया जाएगा और किन्हें त्याग दिया जाएगा। ज्ञान का चयन सत्ता के हितों के अनुरूप किया गया। इस प्रक्रिया के परिणामस्वरूप शास्त्रीय यूनानीमाना गया 'स्वीकार्य' रोमी विरासत का ईसाईकरण हुआ और वही ज्ञान–, जो चर्च और राजसत्ता की वैचारिक आवश्यकताओं के अनुकूल था। इस प्रकार अनुवाद ज्ञान के लोकतंत्रीकरण के बजाय उसके नियंत्रण और सीमांकन का माध्यम बन गया।

2. शार्लमेन और कैरोलिंजियन पुनर्जागरण

शार्लमेन 814–742) ईका शासनकाल मध्यकालीन पाश्चात्य अनुवाद (.इतिहास में एक निर्णायक मोड़ प्रस्तुत करता है। उनके काल में विकसित बौद्धिककहा जाता है। शार्लमेन 'कैरोलिंजियन पुनर्जागरण' सांस्कृतिक आंदोलन को-का उद्देश्य केवल साम्राज्य का भौगोलिक विस्तार नहीं था, बल्कि एक ऐसे सांस्कृतिक और बौद्धिक ढाँचे का निर्माण करना

था, जो उनके विशाल साम्राज्य को वैचारिक रूप से एकीकृत कर सके। इसके लिए शिक्षा, लिपिकप्रशिक्षण और अनुवाद -को विशेष संरक्षण दिया गया।

लैटिन भाषा के मानकीकरण हेतु व्याकरण, वर्तनी, वाक्यविन्यास और शब्दा-वली पर विशेष ध्यान दिया गया। प्राचीन लैटिन ग्रंथों का पुनर्लेखन, संपादन और अनुवाद कराया गया ताकि भाषा की अशुद्धियाँ दूर हों और वह प्रशासन व शिक्षा के लिए उपयुक्त बन सके। मठ और गिरजाघर अध्ययनकेन्द्र बने-, जहाँ बाइबिल के साथसाथ व्याकरण-, तर्कशास्त्र, इतिहास और दर्शन के ग्रंथों का अनुवादसंपादन किया गया। इस पूरी प्रक्रिया में अनुवाद एक अनुशासित, नियंत्रित और सत्तासंरक्षित गतिविधि के रूप में विकसित हुआ-, जिसमें समर्थित विद्वानों द्वारा निर्धारित की -की व्याख्या सत्ता 'अर्थ' जाती थी।

3. रोम और ग्रीक परंपरासेंट : जेरोम

अनुवादसिद्धांत के क्षेत्र में सेंट जेरोम 420–345)ईका योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण है। वे बाइबिल के प्रामाणिक (. लैटिन अनुवादVulgate के लिए प्रसिद्ध हैं। जेरोम पहले विद्वान माने जाते हैं जिन्होंने अनुवाद की पद्धति पर स्पष्ट वैचारिक वक्तव्य दिया। उनका प्रसिद्ध कथन"-I translate not word for word, but sense for sense"मध्यकालीन अनुवाद-विमर्श का आधार बन गया।

जेरोम का मानना था कि सामान्य साहित्यिक ग्रंथों में भावानुवाद अधिक उपयुक्त है, क्योंकि इससे मूल आशय पाठकों तक सहज रूप में पहुँचता है। किंतु धार्मिक ग्रंथों के संदर्भ में वे शब्दानुशासन के पक्षधर थे, क्योंकि वहाँ प्रत्येक शब्द को दैवीय महत्व प्राप्त है। इस प्रकार जेरोम ने शब्दानुवाद और भावानुवाद के बीच एक व्यावहारिक संतुलन स्थापित किया, जिसने आने वाली शताब्दियों तक अनुवाद सिद्धांत को प्रभावित किया।

बोए .4 थियस संक्रमण काल का बौद्धिक सेतु :

बोएथियस 524–480)ईरोमन बौद्धिक परंपरा और मध्यकालीन ईसाई यूरोप के बीच एक –को प्राचीन यूनानी (. महत्त्वपूर्ण बौद्धिक सेतु माना जाता है। ऐसे समय में, जब पश्चिमी यूरोप में ग्रीक भाषा का ज्ञान लगभग समाप्तप्राय हो रहा था, बोएथियस ने ग्रीक दर्शन को लैटिन भाषा के माध्यम से सुरक्षित रखने का ऐतिहासिक कार्य किया। उनका उद्देश्य केवल अनुवाद करना नहीं था, बल्कि अरस्तू और प्लेटो की तर्कपद्धति तथा दार्शनिक चिंतन को ईसाई यूरोप की बौद्धिक -संरचना में समाहित करना था। उनकी प्रसिद्ध कृतिConsolation of Philosophy मध्यकालीन यूरोप की सर्वाधिक पठित दार्शनिक पुस्तकों में रही। यह ग्रंथ स्वयं अनुवाद नहीं है, किंतु इसमें प्रयुक्त दार्शनिक अवधारणाएँ ग्रीक दर्शन की अनूदित और रूपांतरित परंपरा को दर्शाती हैं। बोएथियस ने अरस्तू के Categories और On Interpretation जैसे ग्रंथों का लैटिन अनुवाद एवं व्याख्या की, जिससे तर्कशास्त्र)Logic) मध्यकालीन शिक्षा का आधार बना। बोएथियस की अनुवाददृष्टि में शब्द-सटीकता, तार्किक स्पष्टता और वैचारिक अनुशासन को सर्वोच्च स्थान प्राप्त था। वे मानते थे कि दर्शन में अर्थविकृति गंभीर बौद्धिक भ्रांति को जन्म दे सकती है। उदाहरण के लिए-, अरस्तू की तर्कपद्धति का उनका अनुवाद इस -प्रकार किया गया कि वह ईसाई धर्मशास्त्र के लिए भी उपयोगी सिद्ध हो सके।

5. मठ, स्क्रिप्टोरियम और अनुवाद की संस्थाएँ

मध्यकालीन पश्चिम में अनुवाद की प्रक्रिया मुख्यतः मठों और उनके scriptoria (लेखनसे संचालित होती (कक्षों-थी। ये संस्थाएँ केवल धार्मिक साधना के केंद्र नहीं थीं, बल्कि ज्ञानसंप्रेषण की प्रमुख इकाइयाँ भी थीं। -संरक्षण और ग्रंथ-जब रोमन साम्राज्य का पतन हो चुका था और राजनीतिक अस्थिरता व्याप्त थी, तब मठों ने बौद्धिक स्थिरता प्रदान की। Scriptoria में भिक्षु सामूहिक रूप से पांडुलिपियों की नकल, संपादन और अनुवाद का कार्य करते थे। अनुवाद यहाँ एक अनुशासित, संस्थागत और नियंत्रित प्रक्रिया थी। उदाहरणस्वरूप, बाइबिल, चर्च फादर्स के ग्रंथ, संत ऑगस्टीन और जेरोम की रचनाएँ प्राथमिकता से अनूदित और प्रतिलिपित की जाती थीं। इसके अतिरिक्त, सीमित मात्रा में दार्शनिक और वैज्ञानिक ग्रंथों का भी अनुवाद हुआ। ग्रंथचयन पर चर्च का कठोर नियंत्रण था। वही ग्रंथ अनूदित होते थे जो धार्मिक-,

नैतिक अथवा वैचारिक रूप से स्वीकार्य हों। इस कारण अनुवाद एक प्रकार से "ज्ञानकेद्वारपाल) "Gatekeeper of Knowledge) की भूमिका निभाता था। सामान्य जनता इन ग्रंथों तक नहीं पहुँच सकती थी; ज्ञान मुख्यतः पादरी वर्ग और शासक अभिजात्य तक सीमित था। इस संस्थागत ढाँचे ने अनुवाद को स्थायित्व तो दिया, किंतु रचनात्मक स्वतंत्रता को सीमित भी किया। फिर भी, यह कहना अनुचित नहीं होगा कि यदि मठीय परंपरा न होती, तो प्राचीन ज्ञान का बड़ा भाग नष्ट हो गया होता। अतः मध्यकालीन अनुवाद की संस्थागत प्रकृति को संरक्षण और नियंत्रण -दोनों दृष्टियों से समझना आवश्यक है।

6. केसियस और डायोनिसियस एक्सिगुअस

केसियस (Cassiodorus,) और डायोनिसियस एक्सिगुअस (.ई 550–480Dionysius Exiguus) मध्यकालीन अनुवाद परंपरा के दो ऐसे विद्वान हैं, जिन्होंने अनुवाद को केवल धार्मिक कर्म नहीं, बल्कि सांस्कृतिक संवाद का माध्यम बनाया। केसियस ने Vivariuum नामक अध्ययनकेंद्र की स्थापना की, जहाँ ग्रीक और लैटिन ग्रंथों के अध्ययन, अनुवाद और संरक्षण पर विशेष बल दिया गया। केसियस का उद्देश्य था -ग्रीक बौद्धिक परंपरा और लैटिन ईसाई संस्कृति के बीच सेतु स्थापित करना। उन्होंने भिक्षुओं को भाषिक शिक्षा देने पर ज़ोर दिया ताकि वे अनुवाद के माध्यम से ज्ञानसंरक्षण कर - सकें। उनके प्रयासों से अनुवाद एक व्यवस्थित बौद्धिक गतिविधि के रूप में विकसित हुआ। डायोनिसियस एक्सिगुअस का लॉ और धार्मिक प्रशासन से जुड़ा है। उन्होंने यूनानी चर्च नियमों का लैटिन अनुवाद किया-योगदान मुख्यतः कैनन, जिससे पश्चिमी चर्च में विधिक एकरूपता स्थापित हुई। उनका सबसे महत्त्वपूर्ण योगदान ईसा) संवत-Anno Domini) की गणनापद्धति का प्रचलन है, जो आज भी वैश्विक समयगणना का आधार है। इन दोनों विद्वानों के कार्य यह दर्शाते हैं कि अनुवाद केवल धार्मिक ग्रंथों तक सीमित नहीं था, बल्कि प्रशासनिक मानकीकरण, कालगणना और संस्थागत व्यवस्था का भी माध्यम बना। इस प्रकार अनुवाद मध्यकालीन समाज के बौद्धिक और प्रशासनिक ढाँचे का अभिन्न अंग सिद्ध हुआ।

7. दांते अलिघिएरी भाषा :, काव्य और अनुवाद

दांते अलिघिएरी मध्यकालीन यूरोप के (1321–1265) महान कवि होने के साथसाथ भाषा और अनुवाद पर गहन - चिंतन करने वाले विचारक भी थे। उनकी रचनाConvivio में भाषा, अर्थ और अभिव्यक्ति की जटिलताओं पर महत्वपूर्ण विचार मिलते हैं। दांते का मानना था कि काव्य का अनुवाद अत्यंत कठिन है, क्योंकि कविता केवल अर्थ नहीं, बल्कि ध्वनि, लय और सांस्कृतिक संवेदना का समन्वय होती है।

उनका प्रसिद्ध कथन-

"anything harmonized through the bond of the transmuted from its idiom into another without losing all its sweetness and harmony"-

इस बात को स्पष्ट करता है कि एक भाषा से दूसरी भाषा में काव्य का स्थानांतरण करते समय उसकी सौंदर्यात्मक आत्मा नष्ट हो जाती है। दांते स्वयं लैटिन के स्थान पर इतालवी भाषा में (वर्नाक्युलर)Divine Comedy की रचना करके यह सिद्ध करते हैं कि भाषा केवल संप्रेषण का माध्यम नहीं, बल्कि सांस्कृतिक पहचान भी है। इस दृष्टि से उनका चिंतन अनुवाद की सीमाओं और संभावनाओं- दोनों को रेखांकित करता है। दांते की अनुवाददृष्टि आधुनिक साहित्यिक अनुवाद - सिद्धांतों से जुड़ती है, जहाँ यह स्वीकार किया जाता है कि हर अनुवाद आंशिक होता है और मूल की पूर्ण पुनर्रचना संभव नहीं। इस प्रकार दांते का योगदान अनुवाद के सौंदर्यशास्त्रीय विमर्श में अत्यंत महत्त्वपूर्ण है।

8. रोजर बेकन पद्धति और वैज्ञानिक अनुवाद :

रोजर बेकन मध्यकालीन यूरोप के उन विद्वानों में से थे जिन्होंने अनुवाद को वैज्ञानिक और (1292–1220) पद्धतिगत दृष्टि से देखा। वे मानते थे कित्रुटिपूर्ण अनुवाद ज्ञान को विकृत कर देता है और वैज्ञानिक प्रगति में बाधा उत्पन्न करता है। इसलिए उन्होंने अनुवादक की भाषिक दक्षता, स्रोतज्ञान और सांस्कृतिक समझ पर विशेष बल दिया। बेकन का -

मत था कि अनुवादक को केवल शब्दज्ञान नहीं, बल्कि विषयवस्तु का भी गहन ज्ञान होना चाहिए। उदाहरणस्वरूप, यदि कोई गणित या चिकित्सा ग्रंथ का अनुवाद कर रहा है, तो उसे उस विषय की मूल अवधारणाओं से परिचित होना अनिवार्य है। अरबी से लैटिन में हुए कई वैज्ञानिक अनुवादों की आलोचना करते हुए उन्होंने कहा कि गलत अनुवादों ने यूरोप में भ्रांत धारणाएँ फैलाईं। उनका दृष्टिकोण आधुनिक वैज्ञानिक अनुवाद और तकनीकी अनुवाद का पूर्वाभास देता है। बेकन के अनुसार, सही अनुवाद ज्ञानविकास का आधार है-, जबकि गलत अनुवाद बौद्धिक पतन का कारण बन सकता है। इस प्रकार वे अनुवाद को एक गंभीर बौद्धिक उत्तरदायित्व के रूप में देखते हैं।

9. लियोनार्दो ब्रूनी और मानवतावाद

लियोनार्दो ब्रूनी दृष्टि के प्रमुख प्रवर्तक माने जाते हैं। -पुनर्जागरण काल के मानवतावादी अनुवाद (1444–1374) उन्होंने अनुवाद को केवल शब्दांतरण नहीं, बल्कि लेखक की शैली, भाव और अभिव्यक्ति को पुनर्सृजित करने की प्रक्रिया माना। उनके अनुसार, एक आदर्श अनुवादक को साहित्यिक संवेदनशीलता और भाषिक कौशल- दोनों से संपन्न होना चाहिए। ब्रूनी ने अरस्तू और प्लेटो के ग्रंथों का लैटिन अनुवाद करते समय यह ध्यान रखा कि मूल लेखक की शैली और लय बनी रहे। वे मध्यकालीन कठोर शब्दानुवाद की परंपरा से हटकर शैलीप्रधान अनुवाद का समर्थन करते हैं। यह दृष्टि - आधुनिक साहित्यिक अनुवाद के अत्यंत निकट है। मानवतावाद के प्रभाव से अनुवाद में रचनात्मकता और स्वतंत्रता आई। ब्रूनी का कार्य यह दर्शाता है कि अनुवाद सांस्कृतिक पुनर्जागरण का शक्तिशाली माध्यम बन सकता है।

10. एतिएन दोले सिद्धांत और विवाद :

एतिएन दोले को आधुनिक अनुवाद सिद्धांत का अग्रदूत माना जाता है। उन्होंने अनुवाद के पाँच (1546–1509) सिद्धांत प्रतिपादित किए-

- लेखक के भाव और आशय की स्पष्ट समझ
- स्रोत और लक्ष्य भाषा का गहन ज्ञान
- शब्दशः अनुवाद से परहेज
- लक्ष्य भाषा की सहजता
- अनावश्यक अलंकरण से बचाव

दोले का दृष्टिकोण अत्यंत आधुनिक है, किंतु धार्मिक विवादों के कारण उन्हें गंभीर दंड सहना पड़ा। यह तथ्य दर्शाता है कि अनुवाद केवल भाषिक नहीं, बल्कि वैचारिक और राजनीतिक क्रिया भी है। उनका योगदान यह सिद्ध करता है कि अनुवाद सिद्धांत का विकास संघर्ष और विमर्श के माध्यम से हुआ है। दोले के विचार आज भी अनुवादअध्ययन की आधारशिला बने हुए हैं।

11. अल्फ्रेड द ग्रेट)Alfred the Great, (899–871

अल्फ्रेड द ग्रेट को मध्यकालीन इंग्लैंड में अनुवाद को सामाजिक पुनर्निर्माण से जोड़ने वाला पहला शासक माना जाता है। उनके समय में लैटिन शिक्षा केवल पादरी वर्ग तक सीमित थी, जिससे सामान्य जनता ज्ञान से वंचित थी। अल्फ्रेड ने इस स्थिति को सांस्कृतिक पतन के रूप में देखा और अनुवाद को इसका समाधान माना। उन्होंने यह स्पष्ट किया कि ज्ञान तब तक जीवित नहीं रह सकता, जब तक वह जनभाषा में न पहुँचे। इसी विचार के अंतर्गत उन्होंने Pastoral Care (Gregory the Great), Consolation of Philosophy (Boethius) और Ecclesiastical History (Bede) जैसे ग्रंथों का अनुवाद या अनुवादप्रायोजन किया। इन अनुवादों में उन्होंने शाब्दिक निष्ठा से अधिक अर्थ की सहजता पर बल दिया। अल्फ्रेड की अनुवाददृष्टि का महत्त्व इस तथ्य में है कि उन्होंने अनुवाद को केवल शैक्षिक नहीं, बल्कि राष्ट्रीय पुनर्जागरण का साधन माना। पुरानी अंग्रेजी को ज्ञानभाषा बनाकर उन्होंने भाषा-, संस्कृति और सत्तातीनों को— एक सूत्र में बाँध दिया।

12. जॉन वाइक्लिफ John Wycliffe, c. (1384–1320)

जॉन वाइक्लिफ का योगदान मध्यकालीन अनुवाद इतिहास में अत्यंत क्रांतिकारी माना जाता है। उन्होंने बाइबिल को अंग्रेज़ी में अनूदित कर यह स्थापित किया कि धार्मिक ज्ञान पर चर्च का एकाधिकार नहीं होना चाहिए। वाइक्लिफ का मानना था कि प्रत्येक व्यक्ति ईश्वर के वचन को सीधे अपनी भाषा में समझने का अधिकारी है। उनके नेतृत्व में बाइबिल का जो अनुवाद हुआ, वह मुख्यतः लैटिन Vulgate पर आधारित था। यद्यपि यह अनुवाद शब्दप्रधान था, फिर भी इसका सामाजिक प्रभाव अत्यंत व्यापक रहा। चर्च ने इसे सत्ता के लिए चुनौती माना और वाइक्लिफ को विधर्मी घोषित किया। वाइक्लिफ की परंपरा में अनुवाद को एक सामूहिक और नैतिक उत्तरदायित्व के रूप में देखा गया। उनके अनुयायियों द्वारा संशोधन, तुलना और सत्यापन की प्रक्रिया यह दर्शाती है कि मध्यकाल में भी अनुवाद एक सुविचारित पद्धति के अंतर्गत किया जा रहा था।

13. अल्फोंसो X (Alfonso X, (1284–1221

अल्फोंसो X को स्पेन में अनुवाद को संस्थागत स्वरूप देने वाला महान संरक्षक माना जाता है। उनके शासनकाल में टोलेडो अनुवाद केंद्र ज्ञानविनिमय का वैश्विक मंच बन- गया, जहाँ अरबी, हिब्रू और लैटिन ग्रंथों का अनुवाद स्पेनिश में हुआ। अल्फोंसो का दृष्टिकोण यह था कि अनुवाद केवल शब्दों का रूपांतरण नहीं, बल्कि ज्ञान की पुनर्व्याख्या है। इसी कारण उन्होंने अनुवाद के साथसाथ टीका-, व्याख्या और संदर्भ जोड़ने की परंपरा को प्रोत्साहित किया। उनकी नीति ने आधुनिक यूरोपीय भाषाओं को बौद्धिक गरिमा प्रदान की। अल्फोंसो के प्रयास यह सिद्ध करते हैं कि मध्यकाल में अनुवाद बहुभाषिक, बहुसांस्कृतिक और वैज्ञानिक प्रक्रिया बन चुका था।

14. मार्टिन लूथर)Martin Luther, (1546–1483

मार्टिन लूथर के साथ अनुवाद धार्मिक सुधार का सशक्त माध्यम बन गया। उन्होंने बाइबिल का जर्मन अनुवाद कर यह सिद्ध किया कि धार्मिक ग्रंथ तभी प्रभावी होते हैं, जब वे जनता की भाषा में हों। लूथर का अनुवादसिद्धांत स्पष्ट रूप से अर्थप्रधान और जनोन्मुख था। वे कहते थे कि अनुवादक को यह देखना चाहिए कि साधारण व्यक्ति उस भाषा में कैसे बोलता है। इसी कारण उन्होंने मुहावरों, लोकभाषा और सरल वाक्यरचना को अपनाया। लूथर के अनुवाद ने न केवल जर्मन भाषा को मानक रूप दिया, बल्कि यह भी दिखाया कि अनुवाद सामाजिक परिवर्तन का शक्तिशाली उपकरण हो सकता है।

8.6 औपचारिक अनुवाद परंपरा

1. बाइबिल अनुवाद और औपचारिक परंपरा की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

पश्चिमी विश्व में औपचारिक अनुवाद की परंपरा का वास्तविक और संगठित आरंभ बाइबिल के अनुवादों से माना जाता है। यह परंपरा केवल भाषिक आवश्यकता का परिणाम नहीं थी, बल्कि धार्मिक, सामाजिक और सांस्कृतिक परिस्थितियों से गहराई से जुड़ी हुई थी। प्राचीन काल में मिस्र विशेषकर अलेक्ज़ेंड्रिया जैसे नगरों में यहूदियों की बड़ी जनसंख्या निवास करती थी, जिनकी दैनिक और बौद्धिक भाषा ग्रीक थी, जबकि वे हिब्रू भाषा से अनभिज्ञ थे। ऐसी स्थिति में धार्मिक ग्रंथों की समझ उनके लिए कठिन हो गई थी। इसी व्यावहारिक और धार्मिक आवश्यकता ने बाइबिल के अनुवाद को जन्म दिया।

ईसाके ग्रीक अनुवाद किए गए 'ओल्ड टेस्टामेंट' पूर्व दूसरी और तीसरी शताब्दी के बीच-, जिनमें Septuagint (सेप्तुआगिंत सर्वाधिक प्रसिद्ध हुआ। परंपरा (के अनुसार यह अनुवाद ई .पू.270 के आसपास सत्तर विद्वानों द्वारा ईश्वरीय प्रेरणा से सत्तर दिनों में पूरा किया गया। यद्यपि आधुनिक विद्वान इस कथा को प्रतीकात्मक मानते हैं, फिर भी इसमें निहित यह विचार अत्यंत महत्त्वपूर्ण है कि अनुवाद को ईश्वरीय और आधिकारिक मान्यता प्राप्त थी। Septuagint ने यह स्थापित किया कि अनुवाद केवल शब्दपरिवर्तन नहीं, बल्कि धार्मिक आस्था और सांस्कृतिक निरंतरता का माध्यम भी हो सकता है।

2. रोमन युग में ग्रीक से लैटिन अनुवाद की परंपरा

बाइबिल अनुवादों के पश्चात पश्चिमी परंपरा में ग्रीक साहित्य के लैटिन अनुवादों का क्रम आरंभ हुआ। ई .पू.240 में लिवियस एंड्रोनिकस (Livius Andronicus) ने होमर के महाकाव्य Odyssey का लैटिन पद्यानुवाद प्रस्तुत किया। यह कार्य रोमन साहित्य के विकास की दृष्टि से ऐतिहासिक माना जाता है, क्योंकि इसके माध्यम से यूनानी महाकाव्य परंपरा रोमन सांस्कृतिक चेतना में प्रविष्ट हुई।

इसके पश्चात नेवियस (Naevius) और एन्नियस (Ennius) ने अनेक ग्रीक नाटकों और काव्यग्रंथों का लैटिन में अनुवाद किया। सिसरो (Cicero) ने प्लेटो के Protagoras सहित कई दार्शनिक ग्रंथों का अनुवाद किया। सिसरो का मत विशेष रूप से उल्लेखनीय है, जिसमें वे कहते हैं कि वे शब्द प्रति शब्द (verbum e verbo) नहीं, बल्कि भाव (sense for sense) का अनुवाद करते हैं। यह दृष्टि आगे चलकर मध्यकाल और पुनर्जागरण काल की अनुवादचिंतन प-रंपरा का मूल आधार बनी।

3. मध्ययुगधार्मिक प्रभुत्व और लैटिन अनुवाद :

मध्ययुग में पश्चिमी यूरोप में अनुवाद की गतिविधियाँ मुख्यतः धार्मिक ग्रंथों तक सीमित हो गई। इस काल में लैटिन चर्च, शिक्षा और प्रशासन की प्रमुख भाषा बन चुकी थी।) 'वेनरेबल बेडे'Venerable Bede) द्वारा सन् 735 में जॉन के Gospel का अनुवाद इस धार्मिक अनुवाद परंपरा का महत्त्वपूर्ण उदाहरण है।

इस युग में अधिकांश अनुवाद कठिन, विद्वतापूर्ण लैटिन में किए जाते थे, जिसके कारण सामान्य जनता इनसे दूर रही। अनुवाद यहाँ जन संप्रेषण का माध्यम न होकर धार्मिक-अनुशासन और वैचारिक नियंत्रण का साधन बन गया। इसके बावजूद, इन्हीं प्रयासों से धार्मिक और ऐतिहासिक ग्रंथों का संरक्षण संभव हो पाया।

4. तोलेदो विद्यालय और बहुभाषिक अनुवाद आंदोलन

बारहवीं शताब्दी तक आतेआते स्पेन का तोलेदो नगर पश्चिमी अनुवाद परंपरा का प्रमुख क-ेंद्र बन गया। ग्यारहवीं शताब्दी में बिशप डॉन राइमुंडो के संरक्षण में यहाँ अनुवादकों के लिए एक विद्यालय स्थापित किया गया। इस विद्यालय में अरबी और यहूदी विद्वानों की रचनाओं का लैटिन में अनुवाद किया गया।

तोलेदो के अनुवाद आंदोलन ने अरस्तू, गैलेन तथा अन्य प्राचीन दार्शनिकों और वैज्ञानिकों के ग्रंथों को पश्चिमी यूरोप तक पहुँचाया। इन अनुवादों के बिना यूरोपीय विश्वविद्यालयों का बौद्धिक विकास असंभव था। इस प्रकार अनुवाद ने मध्ययुगीन यूरोप में ज्ञान के नए द्वार खोले और सांस्कृतिक आदानप्रदान को सुदृढ़ किया।-

5. पुनर्जागरण युगकाल-अनुवाद का स्वर्ण :

पुनर्जागरण युग को अनुवाद का स्वर्णकाल कहा जाता है। इस काल से पहले अनुवाद मुख्यतः धार्मिक ग्रंथों तक - सीमित था, किंतु पुनर्जागरण में अनुवादकों का ध्यान जनरुचि और मानववादी विषयों की ओर आकृष्ट हुआ। ग्रीक और - लैटिन की प्राचीन कृतियों के व्यापक अनुवाद किए गए। कई विद्वानों का मत है कि इस काल में रोम ग्रीक से लैटिन में अनुवाद करने की एक जैसा बन गया था। 'फैक्ट्री'

6. मार्टिन लूथर और अनुवाद की नई दृष्टि

इस युग का सबसे महत्त्वपूर्ण नाम मार्टिन लूथर है, जिन्होंने सन् 1522 में New Testament का जर्मन भाषा में अनुवाद किया। लूथर के अनुवाद ने न केवल धार्मिक चेतना को बदला, बल्कि जर्मन भाषा को भी नई पहचान दी। उन्होंने अनुवाद की दो धाराओं -शब्दानुवाद और भावानुवादमें से भावानुवाद को अधिक महत्त्व दिया। उनका उद्देश्य था कि सामान्य जन बिना किसी कठिनाई के धर्मग्रंथों को समझ सकें।

इसी संदर्भ में फ्रांस के विद्वान एतिएन दोले)Étienne Dolet, 1509–1546) का नाम उल्लेखनीय है। उन्होंने इस बात पर बल दिया कि अनुवादक को मूल लेखक के के साथ पूर्ण तादात्म्य स्थापित करना चाहिए। यद्यपि उनके 'कथ्य'

विचारों कारूढ़िवादी वर्ग ने विरोध किया, फिर भी उनके सिद्धांत आधुनिक अनुवादसिद्धांतों की आधारशिला माने जाते हैं।

महत्वपूर्ण बिंदु

आधुनिक पश्चिमी संदर्भ में अनुवाद एक सैद्धांतिक, वैचारिक और सांस्कृतिक हस्तक्षेप के रूप में विकसित हुआ, जहाँ अमेरिकी और कनाडाई अनुवाद परंपराओं ने पाठककेंद्रितता, अनुवादक की दृश्यता, सांस्कृतिक राजनीति और बहुभाषिक सह-अस्तित्व जैसे प्रश्नों को केंद्र में रखकर अनुवादअध्ययन को एक स्वतंत्र अकादमिक अनुशासन के रूप में स्थापित किया।

8.7 आधुनिक युग में अनुवाद 19 (वीं20–वीं शताब्दी)

उन्नीसवीं शताब्दी का आरंभ पाश्चात्य अनुवाद परंपरा में एक महत्त्वपूर्ण मोड़ के रूप में देखा जाता है। इस काल में अनुवाद केवल ज्ञान संचरण का साधन न रहकर साहित्यिक सृजन और बौद्धिक संवाद का माध्यम बन गया। दांते की- Divine Comedy का कैरी द्वारा किया गया अंग्रेज़ी अनुवाद)1805–1812) तथा कॉलरिज द्वारा शिलर की रचना Wallenstein का अनुवाद)1800) इस युग के आरंभिक मील के पत्थर माने जाते हैं। यद्यपि इन अनुवादों की संख्या कम नहीं थी, फिर भी उस समय एक धारणा प्रचलित थी कि केवल वही रचनाएँ अनुवाद योग्य हैं जो स्वयं में 'महान'हों-इस विचार को अंग्रेज़ी उक्ति "Nothing worth translating can be translated" के रूप में अभिव्यक्त किया गया।

मैथ्यू अर्नोल्ड)1822–1888) ने अनुवाद को लेकर गंभीर आलोचनात्मक दृष्टि प्रस्तुत की। उनके अनुसार किसी भी साहित्यिक कृति में समान रूप 'रूप' और 'कथ्य'से महत्त्वपूर्ण होते हैं; अतः अनुवादक को मूल रचना की भावभूमि-, शैली और बौद्धिक स्तर को ध्यान में रखकर अनुवाद करना चाहिए। अर्नोल्ड का मत था कि अनुवाद का वास्तविक पाठक एक विशिष्ट शिक्षित वर्ग होता है, न कि सामान्य जन; इसलिए अनुवाद में सरलता के नाम पर मूल रचना की गरिमा से समझौता नहीं किया जाना चाहिए। उनके इस दृष्टिकोण ने उन्नीसवीं शताब्दी की अनुवादपरंपरा को गहराई प्रदान की।

इस शताब्दी में फ़िट्ज़जेराल्ड)1809–1883) द्वारा फ़ारसी कवि उमर ख़य्याम की Rubaiyat का अंग्रेजी अनुवाद विशेष रूप से चर्चित हुआ। फ़िट्ज़जेराल्ड ने शाब्दिक निष्ठा के बजाय सर्जनात्मक रूपांतरण को अपनाया, जिसके कारण यह अनुवाद मूल फ़ारसी काव्य से काफ़ी भिन्न प्रतीत होता है। कुछ आलोचकों, जैसे जॉन पेन, ने इसे साहित्यिक ' कहा 'रूपांतरण, जबकि अन्य विद्वानों ने इसकी काव्यात्मक सफलता को स्वीकार किया। उल्लेखनीय है कि फ़िट्ज़जेराल्ड ने ख़य्याम की रुबाइयों के अनेक रूपांतरण प्रस्तुत किए और 1859 में प्रकाशित संस्करण को सर्वाधिक मान्यता मिली। इससे यह स्पष्ट होता है कि उन्नीसवीं शताब्दी में अनुवाद और पुनर्सृजन के बीच की रेखा धुंधली हो गई थी।

बीसवीं शताब्दी में अनुवाद को एक स्वतंत्र साहित्यिक और अकादमिक विधा के रूप में मान्यता प्राप्त हुई। इस काल में अनुवाद के सिद्धांतों पर व्यवस्थित चिंतन आरंभ हुआ और भाषाविज्ञान, नृविज्ञान, साहित्यसमालोचना तथा - सांस्कृतिक अध्ययन जैसे क्षेत्रों से इसका गहरा संबंध स्थापित हुआ। अनुवाद की संख्या ही नहीं, बल्कि उसके विषयक्षेत्र और भाषिक दायरे में भी अभूतपूर्व विस्तार हुआ।इस शताब्दी में मैक्स मूलर द्वारा संपादित The Sacred Books of the East जैसी परियोजनाओं ने अनुवाद को वैश्विक सांस्कृतिक संवाद का साधन बना दिया। बाइबिल, वेद, उपनिषद, बौद्ध और कन्फ्यूशियस परंपरा के ग्रंथों के अनुवाद ने यह सिद्ध किया कि अनुवाद केवल पश्चिमी साहित्य तक सीमित नहीं रहा। भारत, चीन, जापान और अरब विश्व के ग्रंथों के अनुवादों ने पाश्चात्य बौद्धिक जगत की दृष्टि का विस्तार किया।बीसवीं शताब्दी में जेम्स जॉयस, टीए.सएलियट ., एजरा पाउंड जैसे रचनाकारों ने अनुवाद को सर्जनात्मक अभ्यास के रूप में अपनाया। पाउंड द्वारा चीनी कविता के अनुवाद)Cathay, 1915) यह दर्शाते हैं कि अनुवाद के माध्यम से नई काव्य-

फॉर्स्टर .एम.शैलियाँ भी जन्म ले सकती हैं। इसी काल में ई, सैमुअल बेकट और अल्बेयर कामू के अनुवादों ने आधुनिक विश्वसाहित्य की अवधारणा को सुदृढ़ किया।-सैद्धांतिक स्तर पर, बीसवीं शताब्दी में अनुवादअध्ययन एक स्वतंत्र अनुशासन के रूप में विकसित हुआ। डब्ल्यू) हचिन्स .जे.W. J. Hutchins) जैसे विद्वानों ने मशीन अनुवाद और मानवीय अनुवाद की सीमाओं पर विचार किया, जिससे यह स्पष्ट हुआ कि अनुवाद केवल तकनीकी प्रक्रिया नहीं, बल्कि सांस्कृतिक और वैचारिक पुनर्निर्माण भी है।

8.8 अमेरिकी अनुवाद परंपरा एवं आधुनिक अनुवाद सिद्धांत

अमेरिकी अनुवाद परंपरा का विकास केवल भाषिक आवश्यकता के कारण नहीं हुआ, बल्कि यह अमेरिका के सामाजिक-सांस्कृतिक इतिहास, प्रवासन, बहुभाषिकता और वैश्विक राजनीति से गहराई से जुड़ा हुआ है। यूरोप के विभिन्न देशों से आए प्रवासियों ने अपने साथ अपनी भाषाएँ, साहित्यिक स्मृतियाँ और सांस्कृतिक मूल्य भी लाए। परिणामस्वरूप अमेरिका आरंभ से ही एक बहुभाषिक और बहुसांस्कृतिक समाज के रूप में विकसित हुआ। इस संदर्भ में अनुवाद ने एक सेतु का कार्य किया -एक ओर यूरोपीय साहित्य को अमेरिकी पाठकों तक पहुँचाने का, और दूसरी ओर अमेरिकी सांस्कृतिक पहचान को गढ़ने का।

1. अमेरिकी समाज और अनुवाद की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

अमेरिका में अंग्रेजी का प्रभुत्व धीरे-धीरे स्थापित हुआ, किंतु यह प्रभुत्व पूर्णतः एकभाषिक नहीं था। उन्नीसवीं शताब्दी तक जर्मन, फ्रेंच और स्पेनिश भाषाओं में भी साहित्यिक गतिविधियाँ सक्रिय थीं। जर्मन दार्शनिकों -कांत, हेगेल और गोएथेकी रचनाओं के अंग्रेजी अनुवादों ने अमेरिकी बौद्धिक जीवन को गहराई से प्रभावित किया। इसी प्रकार फ्रेंच साहित्य और दर्शन के अनुवादों ने अमेरिकी अकादमिक परंपरा को समृद्ध किया।

अनुवाद यहाँ केवल को समझने का माध्यम नहीं था 'विदेशी साहित्य', बल्कि यह उस प्रक्रिया का हिस्सा था जिसके द्वारा अमेरिका स्वयं को एक सांस्कृतिक राष्ट्र के रूप में स्थापित कर रहा था। उदाहरणस्वरूप, होमर के Iliad और Odyssey के अंग्रेजी अनुवाद अमेरिकी शिक्षाप्रणाली का अभिन्न अंग बने, जिससे यह स्पष्ट होता है कि शास्त्रीय परंपरा को अमेरिकी चेतना में किस प्रकार आत्मसात किया गया।

2. पाठ्यक्रम, बाजार और अनुवाद का चयन

अमेरिकी अनुवाद परंपरा की एक प्रमुख विशेषता यह है कि अनूदित ग्रंथों का चयन अक्सर विश्वविद्यालयी पाठ्यक्रमों और प्रकाशन-बाजार की आवश्यकताओं के अनुरूप किया गया। अमेरिकी विश्वविद्यालयों में 'World Literature' और 'Comparative Literature' के अंतर्गत जिन कृतियों को पढ़ाया गया, वे प्रायः उन्हीं भाषाओं से चुनी गईं जिनकी सांस्कृतिक प्रतिष्ठा पहले से स्थापित थी।

यहाँ उदाहरणस्वरूप यूरोपीय क्लासिक्स-दांते की Divine Comedy, सर्वांतेस का Don Quixote, गोएथे का Faustका उल्लेख किया जा सकता है, जिनके अनुवाद बार-बार प्रकाशित हुए। इसके विपरीत एशियाई, अफ्रीकी और आदिवासी साहित्य अपेक्षाकृत देर से और सीमित रूप में अनूदित हुआ। इससे यह स्पष्ट होता है कि अनुवाद का चयन किसी तटस्थ साहित्यिक मानदंड पर आधारित नहीं था, बल्कि वह सांस्कृतिक शक्तिसंतुलन से संचालित था।

3. आधुनिक अनुवाद सिद्धांत और अमेरिकी चिंतन

बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में अमेरिका में अनुवादअध्ययन एक स्वतंत्र अकादमिक अनुशासन के रूप में उभरा। इस दौर में यह स्वीकार किया जाने लगा कि अनुवाद केवल भाषापरिवर्तन की प्रक्रिया नहीं है, बल्कि वह विचारधारात्मक, सांस्कृतिक और राजनीतिक हस्तक्षेप भी है।

लॉरेंस वेन्यूटी (Lawrence Venuti) ने इस संदर्भ में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। अपनी प्रसिद्ध पुस्तक The Translator's Invisibility में वेन्यूटी यह तर्क देते हैं कि अमेरिकी परंपरा में अच'ा अनुवादवही माना जाता है जो ' 'अदृश्यता' इतना सहज हो कि पाठक यह भूल जाए कि वह एक अनूदित पाठ पढ़ रहा है। वे इसे अनुवादक की (invisibility) कहते हैं।

वेन्यूटी के अनुसार यह अदृश्यता समस्यापूर्ण है, क्योंकि इससे स्रोत-संस्कृति की भिन्नता मिट जाती है और लक्ष्यभाषा की संस्कृति को सार्वभौमिक मान लिया जाता है। उदाहरणस्वरूप, जब किसी फ्रेंच या लैटिन अमेरिकी उपन्यास का अनुवाद इस प्रकार किया जाता है कि वह पूरी तरह अमेरिकी बोलचाल और सांस्कृतिक संदर्भों में ढल जाए, तब मूल संस्कृति की विशिष्टता पाठक तक नहीं पहुँच पाती।

4. स्थानीयकरण और विदेशीकरण

वेन्यूटी ने अनुवाद की दो प्रमुख रणनीतियों की चर्चा की -स्थानीयकरण और विदेशीकरण। स्थानीयकरण वह प्रक्रिया है जिसमें विदेशी पाठ को लक्ष्यसंस्कृति के अनुरूप ढाल दिया जाता है, ताकि पाठक को कोई भाषिक या सांस्कृतिक असुविधा न हो। इसके विपरीत विदेशीकरणमें अनुवादक जानबूझकर कुछ विदेशी तत्वों को बनाए रखता है, जिससे पाठक को यह अनुभव हो कि वह किसी अन्य संस्कृति के पाठ से गुजर रहा है।

उदाहरण के लिए, यदि किसी जापानी उपन्यास में पारंपरिक खान-पान या सामाजिक संबोधनों का उल्लेख है, तो स्थानीयकरण की रणनीति अपनाने वाला अनुवादक उन्हें अमेरिकी समकक्ष शब्दों से बदल सकता है। जबकि विदेशीकरण अपनाने वाला अनुवादक उन्हीं जापानी शब्दों को बनाए रखेगा और आवश्यक होने पर व्याख्या देगा। वेन्यूटी के अनुसार दूसरी रणनीति सांस्कृतिक विविधता को अधिक सम्मान देती है।

5. **एंद्रे लेफेवर और की अवधारणा ''पुनर्लेखन''**

अमेरिकी अनुवाद-चिंतन में एंद्रे लेफेवर)André Lefevere) का योगदान भी अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। लेफेवर के अनुसार अनुवाद मूल पाठ का साधारण प्रतिरूप नहीं, बल्कि उसका) 'पुनर्लेखन'rewriting) होता है। यह पुनर्लेखन उस समय की विचारधारा, काव्यशास्त्र और सत्ता-संरचनाओं से प्रभावित होता है।

लेफेवर ने यह स्पष्ट किया कि साहित्यिक इतिहास में जो कृतियाँ मानी जाती हैं 'महान', उनका स्वरूप भी अनुवादों और पुनर्लेखनों के माध्यम से निर्मित होता है। उदाहरणस्वरूप, शेक्सपियर की वैश्विक प्रतिष्ठा में उनके अनुवादों की भूमिका अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। विभिन्न भाषाओं में हुए अनुवादों ने शेक्सपियर को एक विश्व'-लेखकके रूप में स्थापित किया। '

6. अमेरिकी परिप्रेक्ष्य में अनुवाद और सांस्कृतिक राजनीति

अमेरिका में अनुवाद का संबंध केवल साहित्य से नहीं, बल्कि सांस्कृतिक राजनीति से भी रहा है। शीतयुद्ध के दौर में सोवियत और पूर्वी यूरोपीय साहित्य के अनुवादों को विशेष महत्त्व दिया गया, क्योंकि वे राजनीतिक और वैचारिक दृष्टि से प्रासंगिक थे। इसी प्रकार लैटिन अमेरिकी साहित्य के अनुवादोंविशेषतः मैजिक रियलिज'ाम'ने अमेरिकी पाठकों के बीच नई साहित्यिक रुचि विकसित की।

8.9 कनाडाई अनुवाद परंपरा और सिद्धांत

कनाडा की अनुवाद परंपरा को समझना केवल भाषाओं के इतिहास को जानना नहीं है, बल्कि यह उस सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक संरचना को समझना है जिसमें अनुवाद एक संघर्षशील बौद्धिक अभ्यास के रूप में विकसित हुआ। कनाडा विश्व के उन विरले देशों में से है जहाँ अंग्रेज़ी और फ्रांसीसी -दोनों भाषाएँ संवैधानिक रूप से मान्य हैं। यह द्विभाषिकता केवल प्रशासनिक आवश्यकता नहीं, बल्कि कनाडाई समाज की ऐतिहासिक स्मृति, सांस्कृतिक अस्मिता और सत्तासंबंधों की आधारशिला है। परिणामस्वरूप-, कनाडा में अनुवाद को मात्र भाषिक रूपांतरण न मानकर पहचान,

राजनीति और सांस्कृतिक विमर्श से जुड़ी प्रक्रिया के रूप में देखा जाता है। यूरोप या अमेरिका की तुलना में कनाडा में अनुवाद की भूमिका अधिक जटिल है, क्योंकि यहाँ अनुवाद का उद्देश्य केवल "दूसरीभाषाकोसमझना"नहीं, बल्कि दो समानांतर सांस्कृतिक समुदायों -अंग्रेज़ी और फ्रांसीसीके बीच संवाद, टकराव और सहअस्तित्व को संभव बनाना है। इस - " कारण कनाडाई अनुवाद परंपरा में न तो पूर्णनिष्ठा"काआदर्शस्वीकारकियागया, और न ही अनुवादक की "अदृश्यता"कोमूल्यमानागया।

(i) ऐतिहासिक पृष्ठभूमि प्रशासन से साहित्य तक :

कनाडा में अनुवाद की परंपरा उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में स्पष्ट रूप से उभरती है। प्रारंभिक दौर में अनुवाद मुख्यतः प्रशासनिक और धार्मिक आवश्यकताओं से जुड़ा हुआ था। ब्रिटिश शासन की विरासत के कारण अधिकांश सरकारी दस्तावेज अंग्रेजी में तैयार होते थे और उनका फ्रांसीसी में अनुवाद किया जाता था। इस चरण में अनुवाद एकतरफ़ा था -अंग्रेजी स्रोत भाषा और फ्रांसीसी लक्ष्य भाषा। परंतु साहित्यिक अनुवाद ने इस एकतरफ़ा संरचना को चुनौती दी। उन्नीसवीं शताब्दी के अंत तक यह स्पष्ट हो गया कि साहित्यिक अनुवाद केवल सूचना का हस्तांतरण नहीं, बल्कि संस्कृति की व्याख्या और पुनर्संरचना है। फ्रांसीसी कनाडाई साहित्य को अंग्रेजी में अनूदित करने का उद्देश्य अंग्रेजी भाषी समाज को फ्रांसीसी कनाडाई जीवनअनुभव-, मूल्यबोध और ऐतिहासिक पीड़ा से परिचित कराना था।-

Pamphile Lemay जैसे अनुवादकों के कार्यों में यह प्रयास दिखाई देता है कि अनुवाद के माध्यम से "अन्य"समुदायकीसामाजिकछविकोसम्मानजनकऔरअर्थपूर्णरूपमेंप्रस्तुतकियाजाए।

(ii) अनुवाद और राष्ट्रीय पहचान का प्रश्न

कनाडाई अनुवाद परंपरा का केंद्रीय प्रश्न राष्ट्रीय और भाषायी पहचान से जुड़ा हुआ है। फ्रांसीसी कनाडाई समाज लंबे समय तक स्वयं को अंग्रेज़ी प्रभुत्व के अधीन अनुभव करता रहा। इसलिए अनुवाद को केवल सांस्कृतिक सेतु नहीं, बल्कि सत्तासंबंधों की अभिव्यक्ति के रूप में देखा गया। बीसवीं शताब्दी के मध्य तक आतेआते यह स्पष्ट हो गया कि - अनुवाद कभी भी तटस्थ नहीं होता। जब फ्रांसीसी कृतियों का अंग्रेजी में अनुवाद किया जाता है, तब यह प्रश्न उभरता है कि-

क्या अनुवाद मूल संस्कृति की विशिष्टता को बनाए रख रहा है,

या वह उसे अंग्रेजी सांस्कृतिक ढाँचे में ढाल रहा है? यहीं से यह विचार जन्म लेता है कि अनुवाद केवल समानता का साधन नहीं, बल्कि कभीकभी असमानता को उजागर करने का माध्यम भी होता है। यही दृष्टि कनाडाई अनुवाद को - उत्तरऔपनिवेशिक विमर्श से जोड़ती है।

(iii) क्यूबेक आंदोलन और अनुवाद की नई चेतना

1960 और 1970 के दशकों में क्यूबेक में विकसित सांस्कृतिकराजनीतिक आंदोलन ने अनुवाद की दिशा को - निर्णायक रूप से प्रभावित किया। इस दौर में भाषा को केवल संप्रेषण का साधन नहीं, बल्कि सांस्कृतिक अस्तित्व का आधार माना गया। क्यूबेक साहित्य में प्रयुक्त Joual -जो शहरी श्रमिक वर्ग की बोलचाल की भाषा थी ,मानक फ्रांसीसी से भिन्न थी और उसमें अंग्रेजी शब्दों का मिश्रण भी था।

Joual का अनुवाद अत्यंत चुनौतीपूर्ण था, क्योंकि-

शाब्दिक अनुवाद सांस्कृतिक अर्थ को नष्ट कर देता,

और अत्यधिक परिष्कृत अनुवाद उसकी सामाजिक सच्चाई को मिटा देता।

Philip Stratford के अनुवादों में यह स्पष्ट दिखाई देता है कि Joual की सामाजिक ऊर्जा को अंग्रेजी में किसी समतुल्य रूप में प्रस्तुत किया जाए, न कि उसे "सुधार" दियाजाए। यहदृष्टि अनुवादकोएकसांस्कृतिकहस्तक्षेपबनादेतीहै।

(iv) पुनःस्थानीयकरण और अनुवाद

कनाडाई अनुवाद सिद्धांत में Annie Brisset का योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण है। उन्होंने अनुवाद को Reterritorialising Operation कहा -अर्थात् ऐसी प्रक्रिया जिसमें कोई कृति नए सांस्कृतिक भूक्षेत्र में पुनः स्थापित - होती है। उनके अनुसारअनुवाद मूल कृति की नकल नहीं, बल्कि उसका नया सामाजिकवैचारिक पुनर्लेखन है। क्यूबेक में - " किए गए कई अनुवाद इस बात का प्रमाण हैं कि अनुवाद दूसरेकोसमझने "केसाथ-साथ अपनी सांस्कृतिक अस्मिताकोपुष्टकरनेकासाधनभीबनसकताहै।

(v) स्त्रीवादी अनुवाद सिद्धांत :कनाडा का वैश्विक योगदान

कनाडा का सबसे विशिष्ट योगदान स्त्रीवादी अनुवाद सिद्धांत है, जो विशेष रूप से क्यूबेक की स्त्रीवादी लेखिकाओं और अनुवादकों से जुड़ा है। Luise von Flotow के अनुसार, स्त्रीवादी अनुवाद वह प्रक्रिया है जिसमें अनुवादक जानबूझकर भाषा में स्त्री की उपस्थिति को स्पष्ट करता है। यह "अदृश्यअनुवादक "कीपारंपरिकधारणाकाविरोधकरताहै। स्त्रीवादी अनुवाद की प्रमुख रणनीतियाँ हैं-

Supplementing, Prefacing and Footnoting, और Hijacking।

Nicole Brossard की रचनाओं के अनुवादों में यह स्पष्ट दिखता है कि स्त्रीअनुभव को केंद्र में रखने के लिए - अंग्रेजी भाषा की पारंपरिक संरचनाओं को बदला गया।

(vi) अनुवादक की दृश्यता और कनाडाई विशेषता

Sherry Simon के अनुसार, कनाडाई अनुवाद परंपरा में अनुवादक को सहलेखक की भूमिका दी जाती है। - अनुवादक से अपेक्षा की जाती है कि वह अपनी वैचारिक स्थिति स्पष्ट करे और निष्पक्षता का भ्रम न बनाए। यही कारण है कि कनाडाई अनुवाद परंपरा अमेरिकी पाठककेंद्रित परंपरा से भिन्न है।-

कनाडाई अनुवाद में-

भाषायी विचलन बनाए रखे जाते हैं,

सांस्कृतिक अजनबियत को मूल्य माना जाता है,

और अनुवाद को राजनीतिकसांस्क-ृतिक संवाद के रूप में देखा जाता है।

अपनी प्रगति जांचें

प्रश्न 1: मध्यकालीन शिक्षा व्यवस्था में अनुवाद की क्या भूमिका थी? कैथेड्रल स्कूलों और विश्वविद्यालयों के संदर्भ में उत्तर दीजिए।

प्रश्न 2: आधुनिक युग (19वीं–20वीं शताब्दी) में अनुवाद की भूमिका में क्या परिवर्तन आए? साहित्यिक और सैद्धांतिक दृष्टि से विवेचना कीजिए।

प्रश्न 3: अमेरिकी और कनाडाई अनुवाद परंपराओं की प्रमुख विशेषताओं का संक्षिप्त तुलनात्मक उल्लेख कीजिए।

8.9 सारांश

प्रस्तुत इकाई में पाश्चात्य अनुवाद परंपरा के ऐतिहासिक विकास का क्रमबद्ध और विश्लेषणात्मक अध्ययन किया गया है। इसमें यह स्पष्ट किया गया है कि अनुवाद केवल भाषिक रूपांतरण की प्रक्रिया नहीं, बल्कि ज्ञान, संस्कृति, सत्ता और वैचारिक संरचनाओं के हस्तांतरण का सशक्त माध्यम रहा है। प्राचीन विश्व में सुमेर-अक्कादी, बेबीलोन, मिस्र, यूनान और रोम की सभ्यताओं में अनुवाद ने प्रशासन, धर्म और विज्ञान के प्रसार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। मध्यकालीन पश्चिम

में अनुवाद ने प्राचीन ज्ञान को संरक्षित रखते हुए ईसाई धर्मशास्त्र, अरबीइस्लामी विद्वत्ता और यूरोपीय शिक्षा व्यवस्था के –बीच सेतु का कार्य किया। चर्च, मठों और विश्वविद्यालयों के माध्यम से अनुवाद एक संस्थागत गतिविधि के रूप में विकसित हुआ, जहाँ शब्द और अर्थ के बीच संतुलन का प्रश्न केंद्रीय रहा। आधुनिक युग में अनुवाद ने औपचारिक और सैद्धांतिक रूप ग्रहण किया तथा साहित्यिक सृजन, सांस्कृतिक संवाद और वैश्विक ज्ञानविनिमय का माध्यम बना। -केंद्रितता-अमेरिकी और कनाडाई अनुवाद परंपराओं ने पाठक, पुनर्लेखन, अनुवादक की दृश्यता, सांस्कृतिक राजनीति और स्त्रीवादी अनुवाद सिद्धांत जैसे आधुनिक विमर्शों को जन्म दिया। इस प्रकार यह इकाई अनुवाद को एक ऐतिहासिक, सांस्कृतिक और सैद्धांतिक प्रक्रिया के रूप में समग्र दृष्टि से समझने का अवसर प्रदान करती है।

✓ 8.10 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)

प्रश्न :का उत्तर 1 प्राचीन विश्व में अनुवाद की आवश्यकता विभिन्न सभ्यताओं के पारस्परिक संपर्क, प्रशासनिक व्यवस्था, धार्मिक संप्रेषण और ज्ञानअक्कादी परंपरा में द्विभाषिक समाज की स्थिति ने अनुवाद –संरक्षण से उत्पन्न हुई। सुमेर-को संगठित गतिविधि का रूप दिया। सुमेरी और अक्कादी भाषाओं में समानांतर पाठ, शब्दसूचियाँ और -संरक्षण का म-विद्यालय इस बात के प्रमाण हैं कि अनुवाद शिक्षा और ज्ञान-लिपिकार◌ाध्यम था।

प्रश्न :का उत्तर 2 मध्यकालीन पश्चिम में ईसाई चर्च ने अनुवाद को धर्मप्रचार और धार्मिक एकरूपता के लिए आवश्यक -माना, इसलिए लैटिन में धर्मग्रंथों के अनुवाद को प्रोत्साहन दिया गया। साथ ही चर्च ने अनुवाद पर कठोर नियंत्रण भी रखा, जिससे विधर्मिता से बचा जा सके। सेंट जेरोम द्वारा किया गया बाइबिल का लैटिन अनुवाद)Vulgate) इस परंपरा का केंद्रीय उदाहरण है, जिसमें उन्होंने शब्दानुवाद और भावानुवाद के बीच संतुलन स्थापित किया।

प्रश्न :का उत्तर 3 अरबीइस्लामी विद्वानों द्वारा यूनानी–, फारसी और भारतीय ग्रंथों के अरबी अनुवादों ने मध्यकालीन यूरोप के बौद्धिक विकास को निर्णायक रूप से प्रभावित किया। अरस्तू, गैलेन, यूक्लिड और टॉलेमी के ग्रंथ अरबी से लैटिन में अनूदित होकर यूरोपीय विश्वविद्यालयों तक पहुँचे। टोलेडो अनुवाद आंदोलन और Gerard of Cremona जैसे विद्वानों के कार्यों ने विज्ञान, दर्शन और चिकित्सा के क्षेत्र में यूरोप को नई दिशा दी।

प्रश्न :का उत्तर 4 मध्यकालीन शिक्षा व्यवस्था में अनुवाद ज्ञान अर्जन-का अनिवार्य शर्त था। मठों, कैथेड्रल स्कूलों और बाद में विश्वविद्यालयों में शिक्षण की भाषा लैटिन थी, जबकि ज्ञानस्रोत य-◌ूनानी और अरबी में उपलब्ध थे। इसलिए अनुवाद के माध्यम से दार्शनिक, वैज्ञानिक और धार्मिक ग्रंथों को पाठ्यक्रम का हिस्सा बनाया गया। विशेषतः अरस्तू के ग्रंथों के अनुवादों ने मध्यकालीन विश्वविद्यालयी शिक्षा को सैद्धांतिक आधार प्रदान किया।

प्रश्न :का उत्तर 5 उन्नीसवीं और बीसवीं शताब्दी में अनुवाद की भूमिका में गुणात्मक परिवर्तन आए। अनुवाद केवल धार्मिक या शास्त्रीय गतिविधि न रहकर साहित्यिक सृजन और अकादमिक अनुशासन के रूप में विकसित हुआ। इस काल में अनुवादसिद्धांतों का विकास हुआ और संप्रेषण, पाठकउन्मुखता तथा सांस्कृतिक संदर्भ पर बल दिया गया। फ़िट्ज़जेराल्ड, मैथ्यू अर्नोल्ड और आधुनिक अनुवाद परियोजनाओं ने अनुवाद को वैश्विक सांस्कृतिक संवाद का माध्यम बनाया।

प्रश्न :का उत्तर 6 अमेरिकी और कनाडाई अनुवाद परंपराओं में मूलभूत अंतर दृष्टिगोचर होता है। अमेरिकी परंपरा में पाठककेंद्रितता-, सहजता और अनुवादक की पर बल दिया गया 'अदृश्यता', जबकि कनाडाई परंपरा में द्विभाषिकता, सांस्कृतिक राजनीति और अनुवादक की -को महत्व मिला। कनाडा में स्त्रीवादी और उत्तर 'दृश्यता' औपनिवेशिक अनुवाद सिद्धांतों का विशेष विकास हुआ।

8.11 अधिक जानने के लिए पढ़ें

- Bassnett, Susan. (.(2002Translation Studies. London: Routledge.
- Newmark, Peter. (.(1988A Textbook of Translation. London: Prentice Hall.
- Venuti, Lawrence. (.(1995The Translator's Invisibility: A History of Translation. London: Routledge.
- Lefevere, André. (.(1992Translation, Rewriting and the Manipulation of Literary Fame. London: Routledge.
- Steiner, George. (.(1998After Babel: Aspects of Language and Translation. Oxford: Oxford University Press.
- Nida, Eugene A. (.(1964Toward a Science of Translating. Leiden: E. J. Brill.
- Simon, Sherry. (.(1996Gender in Translation: Cultural Identity and the Politics of Transmission. London: Routledge.
- Mukherjee, Sujit. (.(1994Translation as Discovery and Other Essays. Hyderabad: Orient Longman.
- Niranjana, Tejaswini. (.(1992Siting Translation: History, Post-Structuralism, and the Colonial Context. Berkeley: University of California Press.
- Trivedi, Harish. (.(2007Colonial Transactions: English Literature and India. Calcutta: Papyrus.

8.12 अभ्यास

—संक्षिप्त प्रश्नों के उत्तर लिखिए (क)

1. प्राचीन विश्व में अनुवाद की आवश्यकता किन परिस्थितियों में उत्पन्न हुई?
2. सुमेरअक्कादी सभ्यता में द्विभाषिकता ने अनुवाद को कैसे प्रोत्साहित किया–?
3. बेबीलोन सभ्यता में विधि और विज्ञान के क्षेत्र में अनुवाद की क्या भूमिका रही?
4. प्राचीन मिस्र में दुभाषियों)interpreters) का क्या महत्व था?
5. सेप्टुआजिंट)Septuagint) को प्राचीन अनुवाद इतिहास में क्यों महत्वपूर्ण माना जाता है?
6. रोमन काल में सिसरो के अनुवादविचार का मूल तात्पर्य क्या था-?

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर (ख) लिखिए—

1. सुमेर, बेबीलोन और मिस्र सभ्यताओं के संदर्भ में प्राचीन विश्व की अनुवाद परंपरा की भूमिका का सम्यक निरूपण कीजिए।
2. मध्यकालीन पश्चिम में ईसाई चर्च और अनुवाद के संबंध को सेंट जेरोम के योगदान के आलोक में आलोचनात्मक विश्लेषण दीजिए।
3. अरबी इस्लामी विद्वानों–द्वारा यूनानी ग्रंथों के अनुवादों का मध्यकालीन यूरोप के बौद्धिक विकास पर प्रभाव उदाहरणों सहित स्पष्ट कीजिए।

4. मध्यकालीन शिक्षा व्यवस्था में कैथेड्रल स्कूलों और विश्वविद्यालयों के संदर्भ में अनुवाद की भूमिका का तथ्यपरक विवरण प्रस्तुत कीजिए।
5. उन्नीसवीं और बीसवीं शताब्दी में अनुवाद की भूमिका में आए परिवर्तनों को साहित्यिक और सैद्धांतिक दृष्टि से विश्लेषणात्मक रूप में निरूपित कीजिए।
6. अमेरिकी और कनाडाई अनुवाद परंपराओं की प्रमुख विशेषताओं का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत करें।

शबदकोश:

प्राचीन विश्व आरंभिक सभ्यताओ : का काल, अनुवाद परंपरा हस्तांतरण की ऐतिहासिक प्रक्रिया-ज्ञान :, द्विभाषिकता अस्तित्व-दो भाषाओं का सह :, ज्ञानबौद्धिक विरासत की रक्षा : संरक्षण-, धर्मशास्त्र धार्मिक सिद्धांतों : का अध्ययन, वल्गेट बाइबिल का प्रामाणिक लैटिन अनुवाद :, भावानुवाद अर्थ के आध :ार पर अनुवाद, शब्दानुवाद शब्द रूपांतरण-से-शब्द :, कैथेड्रल स्कूल आधारित शिक्षा केंद्र-चर्च :, विश्वविद्यालयीय परंपरा उच्च : शिक्षा की संस्थागत व्यवस्था, अरबी लैटिन अनुवाद अरबी ग्रंथों का यूरोप में रूपांतरण :, टोलेडो आंदोलन : मध्यकालीन अनुवाद केंद्र, बौद्धिक पुनर्जागरण ज्ञान का पुनरुत्थान :, मानवतावाद केंद्रित वैचारिक दृष्टि-मानव :, औपचारिक अनुवाद नियोजित एवं संस्थागत अनुवाद :, आधुनिक अनुवाद सिद्धांत समकाल :ीन सैद्धांतिक दृष्टियाँ इत्यादि।

*** ***** ***

इकाई 9 - अनुवाद अध्ययनज्ञानानुशासन के रूप में यात्रा :

इकाई की रूपरेखा

9.1 उद्देश्य
9.2 प्रस्तावना
9.3 ज्ञानानुशासन के रूप में अनुवाद अध्ययनअर्थ :, निर्मिति और विकास
9.4 अनुवाद और भाषाविज्ञान
9.5 अनुवाद अध्ययनअनुशासनिक दृष्टि और वैचारिक संरचना-अंतर :
9.6 अनुवाद और सांस्कृतिक दृष्टि
9.7 तुलनात्मक साहित्य में अनुवाद की अवधारणा और अनुवाद अध्ययन का विकास
9.8 अनुवाद अध्ययन की आगामी संभावनाएँ
9.9 सारांश
9.10 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)
9.11 अधिक जानने के लिए पढ़ें
9.12 अभ्यास प्रश्न

9.1 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन से आप-:

- अनुवाद अध्ययन को एक स्वतंत्र ज्ञानानुशासन के रूप में समझ पाएँगे।
- अनुवाद अध्ययनकेऐतिहासिकविकास औरस्वरूपकीपहचानकरसकेंगे।
- अनुवाद औरभाषाविज्ञानकेआपसीसंबंधकोस्पष्टकरपाएँगे।
- अनुवाद अध्ययनकीअंतर-अनुशासनिकप्रकृतिकाबोधप्राप्तकरेंगे।
- संस्कृतिकेसंदर्भमेंअनुवादकीभूमिकाकाविश्लेषण कर सकेंगे।
- तुलनात्मकसाहित्यमेंअनुवादकेयोगदानकामूल्यांकनकरसकेंगे।

9.2 प्रस्तावाना

अनुवाद अध्ययन आधुनिक युग में एक स्वतंत्र और सुसंगठित ज्ञानानुशासन के रूप में विकसित हुआ है। आरंभ में अनुवाद को केवल एक व्यावहारिक भाषाकौशल या साहित्यिक गतिविधि के रूप में देखा जाता था, किंतु बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में इसके सैद्धांतिक, वैचारिक और अकादमिक आयामों पर गंभीर चिंतन आरंभ हुआ। भाषाविज्ञान, तुलनात्मक साहित्य, सांस्कृतिक अध्ययन और समाजशास्त्र जैसे क्षेत्रों से जुड़ते हुए अनुवाद अध्ययन ने अपनी विशिष्ट पहचान निर्मित की। यह अनुशासन न केवल भाषा और अर्थ के संबंधों की पड़ताल करता है, बल्कि संस्कृति, सत्ता, विचारधारा और संप्रेषण की जटिल प्रक्रियाओं को भी विश्लेषित करता है। वैश्वीकरण, बहुभाषिकता और तकनीकी विकास के संदर्भ में अनुवाद अध्ययन की भूमिका और अधिक महत्त्वपूर्ण हो गई है। प्रस्तुत इकाई में अनुवाद अध्ययन की इसी

ज्ञानानुशासनात्मक यात्रा का क्रमबद्ध और विश्लेषणात्मक विवेचन किया गया है, जिससे अनुवाद को एक समग्र बौद्धिक प्रक्रिया के रूप में समझा जा सके।

9.3 ज्ञानानुशासन के रूप में अनुवाद अध्ययनअर्थ :, निर्मिति और विकास

अनुवाद अध्ययन का ज्ञानानुशासन के रूप में विकसित होना आधुनिक मानविकी और सामाजिक विज्ञानों के क्षेत्र में घटित एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण बौद्धिक प्रक्रिया है। अनुवाद, जो लंबे समय तक केवल एक व्यावहारिक भाषिक कौशल, सहायक गतिविधि या भाषाशिक्षण का उपकरण माना जाता रहा, बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में क्रमशः एक स्वतंत्र, सुसंगठित, सिद्धांतसंपन्न और संस्थागत अकादमिक अनुशासन के रूप में प्रतिष्ठित हुआ। इस परिवर्तन ने न केवल अनुवाद की परिभाषा को विस्तृत किया, बल्कि ज्ञान, संस्कृति, सत्ता और पहचान से जुड़े प्रश्नों को भी अनुवाद के अध्ययन का अभिन्न अंग बना दिया।

(i) ज्ञानानुशासन की संकल्पना और उसका अर्थ

'ज्ञानानुशासनसे अभिप्राय उस संगठित अध्ययन 'क्षेत्र से है जिसमें एक निश्चित विषयवस्तु-, स्पष्ट अवधारणात्मक ढाँचा, मान्य पद्धतियाँ, विशिष्ट शब्दावली तथा स्वीकृत शोधप्रक्रियाएँ विकसित हो चुकी हों। अंग्रे-जी में इसे discipline कहा जाता है, जिसका तात्पर्य केवल विषयविशेष से नहीं, बल्कि उस बौद्धिक अनुशासन से है जिसमें प्रशिक्षण, शिक्षण और शोध की निरंतर परंपरा विद्यमान हो। किसी भी विषय का ज्ञानानुशासन के रूप में विकसित होना आकस्मिक नहीं होता; इसके पीछे दीर्घकालीन बौद्धिक विमर्श, संस्थागत समर्थन और सैद्धांतिक परिपक्वता की भूमिका होती है। इस दृष्टि से देखा जाए तो अनुवाद अध्ययन का ज्ञानानुशासन बनना इस बात का प्रमाण है कि अनुवाद अब केवल भाषापरिवर्तन की प्रक्रिया नहीं रहा, बल्कि वह अर्थनिर्माण-, सांस्कृतिक संवाद और वैचारिक हस्तक्षेप का माध्यम बन चुका है।

(ii) अनुवाद की ऐतिहासिक परंपरा और पूर्वअकादमिक अवस्था-

अनुवाद का इतिहास मानव सभ्यता के इतिहास के साथ गहराई से जुड़ा हुआ है। प्राचीन भारत में संस्कृत ग्रंथों की टीकाएँ, भाष्य और क्षेत्रीय भाषाओं में किए गए रूपांतरण; बौद्ध धर्म के प्रसार के साथ चीन, तिब्बत और मध्य एशिया में सूत्रों के अनुवाद; इस्लामी विश्व में ग्रीक दर्शन और विज्ञान का अरबी में रूपांतरण; तथा पश्चिम में बाइबिल के विविध अनुवाद -ये सभी उदाहरण इस बात को सिद्ध करते हैं कि अनुवाद ज्ञानसंचार और सांस्कृतिक विनिमय का केंद्रीय माध्यम - रहा है। इसके बावजूद, लंबे समय तक अनुवाद को स्वतंत्र अध्ययनक्षेत्र का दर्जा प्राप्त नहीं हुआ। पारंपरिक रूप से अनुवाद को या तो शब्दानुवाद बनाम भावानु'वादकी बहस तक सीमित कर दिया गया ', या विदेशी भाषाशिक्षण का सहायक - उपकरण मान लिया गया। अनुवादक को रचनात्मक बौद्धिक व्यक्ति के बजाय एक तकनीकी कर्मी के रूप में देखा गया, जिससे अनुवाद चिंतन का सैद्धांतिक विकास बाधित रहा।

(iii) बीसवीं शताब्दी और भाषावैज्ञानिक मोड़

बीसवीं शताब्दी के मध्य में भाषाविज्ञान के तीव्र विकास ने अनुवाद चिंतन को एक नई दिशा प्रदान की। संरचनावादी भाषाविज्ञान के प्रभाव में भाषा को एक व्यवस्थित संकेतप्रणाली के रूप में समझा जाने लगा। इसी संदर्भ में - रोमन याकोब्सन का प्रसिद्ध निबंधOn Linguistic Aspects of Translation (1959) सामने आया, जिसमें उन्होंने अनुवाद के तीन प्रकार -अंतभा:षिक) intralingual), अंतरभाषिक) interlingual) और अंतरप्रतीकात्मक)intersemiotic)प्रस्तावित किए। इस वर्गीकरण ने अनुवाद को केवल दो भाषाओं के बीच स्थानांतरण से आगे बढ़ाकर अर्थ और संकेत व्यवस्थाओं के व्यापक क्षेत्र में स्थापित किया। इसी क्रम में यूजीन नाइडा ने बाइबिल अनुवाद के संदर्भ में- dynamic equivalence या functional equivalence की अवधारणा प्रस्तुत की। नाइडा के अनुसार अनुवाद का लक्ष्य स्रोतपाठ की संरचना को यथावत रखना नहीं, बल्कि लक्ष्यभाषा के पाठक पर वही प्रभाव उत्पन्न करना है जो मूल

पाठ का उसके पाठकों पर था। इस विचार ने अनुवाद को वैज्ञानिक विश्लेषण और व्यवस्थित अध्ययन का विषय बना दिया।

(iv) 'Translation Studies' और जेम्स एसहोम्स का योगदान .

अनुवाद अध्ययन को ज्ञानानुशासन के रूप में स्थापित करने में निर्णायक भूमिका जेम्स एसहोम्स की मानी जाती . है। उनके लेखThe Name and Nature of Translation Studies (1972) में पहली बार 'Translation Studies' शब्द को स्पष्ट और सुसंगत रूप में परिभाषित किया गया। होम्स ने अनुवाद अध्ययन को एक स्वायत्त अकादमिक क्षेत्र के रूप में प्रस्तुत करते हुए इसकी संरचना को तीन प्रमुख शाखाओं में विभाजित किया -वर्णनात्मक, सैद्धांतिक और अनुप्रयुक्त। यह वर्गीकरण अत्यंत महत्त्वपूर्ण था, क्योंकि इसने अनुवाद को केवल 'कैसे अनुवाद किया जाए' के प्रश्न से आगे बढ़ाकर जैसे व्यापक प्रश्नों से जोड़ा। 'अनुवाद समाज में क्या भूमिका निभाता है' और 'अनुवाद कैसे कार्य करता है' इसके परिणामस्वरूप विश्वविद्यालयों में अनुवाद अध्ययन के पाठ्यक्रम, शोधप्रबंध और अकादमिक पत्रिकाएँ विकसित - होने लगीं।

(v) संरचनावाद से सांस्कृतिक मोड़ तक

प्रारंभिक चरण में अनुवाद अध्ययन पर भाषावैज्ञानिक और संरचनावादी दृष्टिकोण हावी रहा। कैटफोर्ड की shift theory और विनयडार्बलने की अनुवाद-रणनीतियाँ इस चरण के प्रमुख उदाहरण हैं। किंतु धीरेधीरे यह स्पष्ट हुआ कि - भाषा की संरचना मात्रसे अनुवाद की सामाजिक, ऐतिहासिक और सांस्कृतिक जटिलताओं को समझा नहीं जा सकता। 1980 के दशक के बाद अनुवाद अध्ययन में आया। गिडियन टूरी 'सांस्कृतिक मोड़', इटामार ईवनजोहार-, सुसान बैसनेट और आंद्रे लेफेवर जैसे विद्वानों ने यह स्थापित किया कि अनुवाद एक सांस्कृतिक क्रिया है, जो सत्तासंबंधों-, साहित्यिक मानकों और वैचारिक संरचनाओं से प्रभावित होती है। अनुवाद अब संस्कृति के भीतर स्थित एक सक्रिय प्रक्रिया के रूप में देखा जाने लगा।

महत्वपूर्ण बिंदु

अनुवाद अध्ययन आधुनिक युग में एक स्वतंत्र ज्ञानानुशासन के रूप में विकसित हुआ है, जिसमें भाषा, अर्थ और संस्कृति के संबंधों का सैद्धांतिक विश्लेषण किया जाता है।

(v) अंतरअनुशासनिक विस्तार और समकालीन परिप्रेक्ष्य-

इस सांस्कृतिक दृष्टि के साथ अनुवाद अध्ययन एक अंतरअनुशासनिक क्षेत्र के रूप में विकसित हुआ। इसमें - तुलनात्मक साहित्य, समाजशास्त्र, इतिहास, मीडिया अध्ययन, स्त्रीवादी आलोचना और उत्तरऔपनिवेशिक सिद्धांतों का - समावेश हुआ। अनुवाद अब सत्ता, पहचान, लिंग और औपनिवेशिक अनुभवों के विश्लेषण का माध्यम बन गया। उत्तर-औपनिवेशिक चिंतन में अनुवाद को सांस्कृतिक वर्चस्व और प्रतिरोध के उपकरण के रूप में देखा गया। इस चरण में अनुवादक की भूमिका भी बदली ,उसे अब मध्यस्थ नहीं 'अदृश्य', बल्कि सक्रिय सांस्कृतिक हस्तक्षेपकर्ता माना गया।

(iv) वर्तमान स्थिति

आज अनुवाद अध्ययन विश्व के अनेक विश्वविद्यालयों में एक स्थापित ज्ञानानुशासन है। मशीन अनुवाद, ऑडियो-विज़ुअल अनुवाद, तकनीकी, विधिक और मीडिया अनुवाद जैसे नए क्षेत्र इसके निरंतर विस्तार को दर्शाते हैं। वैश्वीकरण और डिजिटल युग में अनुवाद के बिना ज्ञान का प्रवाह असंभव हो गया है।

अपनी प्रगति जांचें

प्रश्न 1: अनुवाद अध्ययन को ज्ञानानुशासन क्यों कहा जाता है?

प्रश्न 2: रोमन याकोब्सन द्वारा बताए गए अनुवाद के तीन प्रकार कौन-कौन से हैं?

प्रश्न 3: यूजीन ए. नाइडा का Dynamic Equivalenceसिद्धांत क्या है?

9.4 अनुवाद और भाषाविज्ञान

अनुवाद मानव सभ्यता की प्रारंभिक संप्रेषण आवश्यकताओं से गहराई से जुड़ा रहा है। विभिन्न भाषाओं के संपर्क, ज्ञान के प्रसार और सांस्कृतिक संवाद की प्रक्रिया में अनुवाद ने धीरेधीरे केवल एक व्यावहारिक गतिविधि से आगे बढ़कर - एक सैद्धांतिक, अकादमिक और अंतरअनुशासनिक अध्ययन-क्षेत्र का रूप ग्रहण किया। इसी विकासक्रम में भाषाविज्ञान)Linguistics) ने अनुवादचिंतन को वैज्ञानिक आधार प्रदान किया। भाषा की संरचना-, अर्थनिर्माण की प्रक्रिया-, संदर्भ, प्रयोग और संस्कृति के व्यवस्थित अध्ययन ने अनुवाद को नियमबद्ध और विश्लेषणात्मक समझ दी। परिणामस्वरूप बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में Translation Studies एक स्वतंत्र ज्ञानानुशासन के रूप में प्रतिष्ठित हुआ, जिसमें भाषाविज्ञान केंद्रीय स्तंभ के रूप में उभरा। भाषाविज्ञान भाषा का वैज्ञानिक अध्ययन है, जिसके अंतर्गत ध्वनिविज्ञान, रूपविज्ञान, वाक्यविज्ञान, अर्थविज्ञान और प्राग्मैटिक्स जैसे उपक्षेत्र आते हैं। अनुवाद प्रक्रिया में इन सभी स्तरों का प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है, क्योंकि सफल अनुवाद वही होता है जिसमें शब्दरचना, वाक्यसंरचना, अर्थसमतुल्यता और संदर्भअनुकूलता के बीच संतुलन बना रहे। इस प्रकार भाषाविज्ञान अनुवादक को यह विवेक प्रदान करता है कि अनुवाद में क्या बदला जाए और क्या सुरक्षित रखा जाए।

इतिहास में अनुवाद को लंबे समय तक भाषाअधिगम का साधन मात्र माना गया, किंतु बीसवीं शताब्दी में संरचनावाद, रूपांतरणव्याकरण-, अर्थविज्ञान और प्राग्मैटिक्स के विकास ने अनुवाद को एक ठोस विश्लेषणात्मक ढाँचा प्रदान किया। James S. Holmes ने 1972 में अपने प्रसिद्ध निबंध The Name and Nature of Translation Studies में पहली बार “Translation Studies” पद का प्रयोग करते हुए इसके क्षेत्र, उद्देश्य और पद्धतियों को स्पष्ट किया। इसके बाद अनुवाद अध्ययन भाषाविज्ञान, तुलनात्मक साहित्य, सांस्कृतिक अध्ययन और समाजशास्त्र से संवाद करते हुए एक अंतर अनुशासनिक स्वरूप में विकसित हुआ। इसी क्रम में-Roman Jakobson ने 1959 में On Linguistic Aspects of Translation में अनुवाद के तीन प्रकार -intralingual, interlingual और intersemioticप्रस्तुत किए तथा यह स्पष्ट किया कि पूर्ण समतुल्यता सदैव संभव नहीं होती, क्योंकि भाषाएँ और संस्कृतियाँ अलगअलग अर्थ-जाल निर्मित करती हैं। अतः अनुवाद को शाब्दिक समानता के बजाय अर्थसमतुल्यता की - खोज के रूप में देखा जाना चाहिए। उदाहरणस्वरूप अंग्रेजी शब्द “privacy” का हिंदी में अनुवाद संदर्भ के अनुसार निजता, एकांत या गोपनीयता हो सकता है।

भाषाविज्ञान के आधार पर अनुवाद को वैज्ञानिक स्वरूप प्रदान करने में Eugene A. Nida का योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण है। उनकी कृतियाँ Toward A Science of Translating (1964) और The Theory and Practice of Translation (1969) अनुवाद को अर्थकेंद्रित दृष्टि प्रदान करती हैं। नाइडा ने dynamic equivalence का सिद्धांत प्रस्तुत किया, जिसके अनुसार अनुवाद का उद्देश्य लक्ष्यभाषा के पाठक पर वही प्रभाव उत्पन्न करना है जो मूल पाठ का मूल भाषा के पाठक पर पड़ता है। उन्होंने अर्थ के तीन स्तर -भाषिक अर्थ, संदर्भगत अर्थ और भावार्थको रेखांकित किया। Noam Chomsky की रूपांतरणव्याकरण से प्रभावित होकर नाइडा ने deep structure और surface structure की अवधारणा को अनुवाद में लागू किया तथा कहा कि अनुवाद में आंतरिक अर्थ संरचना का अंतरण अधिक महत्वपूर्ण है।- J. C. Catford ने A Linguistic Theory of Translation (1965) में shift theory प्रस्तुत की, जबकि Vinay और

Darbelnet ने direct तथा oblique translation की पद्धतियों के साथ सात अनुवाद प्रक्रियाएँ सुझाईं। आगे चलकर contrastive analysis, corpus linguistics और polysystem theory जैसे दृष्टिकोणों ने यह स्पष्ट किया कि केवल भाषाविज्ञानकेंद्रित दृष्टि पर्याप्त नहीं है। Susan Bassnett और André Lefevere की Translation, History and Culture (1990) ने Cultural Turn को रेखांकित करते हुए यह सिद्ध किया कि अनुवाद की इकाई केवल भाषा नहीं, बल्कि संस्कृति भी है, जिससे अनुवाद में सत्ता, इतिहास, विचारधारा और पहचान जैसे प्रश्न अनिवार्य रूप से जुड़ जाते हैं।

9.5 अनुवाद अध्ययनअनुशासनिक दृष्टि और वैचारिक संरचना-अंतर :

अनुवाद अध्ययन का विकास केवल भाषिक रूपांतरण की तकनीक तक सीमित नहीं रहा है, बल्कि यह धीरेधीरे - अनुशासनिक ज्ञानक्षेत्र के रूप में स्थापित हुआ है-एक ऐसे व्यापक अंतर, जिसमें भाषा के साथसाथ संस्कृति-, साहित्य, समाज, इतिहास और सत्ता संरचनाओं की भूमिका केंद्रीय हो जाती है। प्रारंभिक काल में-अनुवाद को शब्दों और वाक्यरचनाओं के स्थानांतरण के रूप में देखा जाता था, किंतु बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में यह स्पष्ट हुआ कि किसी भी पाठ का अनुवाद करते समय केवल भाषिक समानता पर्याप्त नहीं होती। उदाहरण के लिए, भारतीय महाकाव्यों -जैसे रामायण और महाभारतके विभिन्न भाषाओं में किए गए अनुवादों में कथा वही रहती है, किंतु क्षेत्रीय सांस्कृतिक मूल्यों, धार्मिक दृष्टियों और सामाजिक मान्यताओं के अनुसार पात्रों का स्वरूप और घटनाओं की व्याख्या बदल जाती है। इससे यह सिद्ध होता है कि अनुवाद मूलतः दो संस्कृतियों के बीच संवाद की प्रक्रिया है, न कि केवल दो भाषाओं के बीच।

अंतरअनुशासनिक दृष्टि से देखें तो अनुवाद अध्ययन भाषा-विज्ञान, साहित्यअध्ययन और सांस्कृतिक अध्ययन के संगम पर स्थित है। भाषाविज्ञान अनुवाद को व्याकरण, अर्थविज्ञान और प्राग्मैटिक संदर्भों के माध्यम से समझने में सहायता करता है, जबकि साहित्यअध्ययन पाठ की शैली, सौंदर्यबोध और भावात्मक प्रभाव पर ध्यान केंद्रित करता है। उदाहरणस्वरूप, प्रेमचंद की कहानियों के अंग्रेजी अनुवादों में सामाजिक यथार्थ और ग्रामीण जीवन की संवेदना को बनाए रखना एक बड़ी चुनौती रही है। शब्दार्थ के स्तर पर सही अनुवाद संभव है, किंतु 'साहूकार', 'जमींदारजैसे 'पंचायत' या ' सांस्कृतिक शब्दों का अनुवाद करते समय समाजशास्त्रीय और ऐतिहासिक समझ आवश्यक हो जाती है। इस प्रकार अनुवाद अध्ययन अपने स्वभाव में ही बहुआयामी और अंतर-अनुशासनिक बन जाता है। सांस्कृतिक अध्ययन और उत्तर-औपनिवेशिक चिंतन ने अनुवाद को सत्ता और विचारधारा के संदर्भ में देखने की नई दृष्टि प्रदान की है। उपनिवेशकाल में भारतीय ग्रंथों के अंग्रेजी अनुवादों ने एक ओर भारतीय ज्ञान को पश्चिम तक पहुँचाया, वहीं दूसरी ओर उसे औपनिवेशिक दृष्टिकोण से पुनर्गठित भी किया। उदाहरण के लिए, संस्कृत ग्रंथों के अनुवादों में भारतीय समाज को अक्सर रहस्यमय, आध्यात्मिक और पिछड़े रूप में प्रस्तुत किया गया, जिससे औपनिवेशिक सत्ता को वैचारिक समर्थन मिला। लॉरेंस वेन्यूटी की की अवधारणा इस तथ्य को रेखांकित करती है कि किस प्रकार सहज और प्रवाही अनुवाद 'अनुवादक की अदृश्यता' भी सांस्कृतिक प्रभुत्व को छुपा सकता है। इस दृष्टि से अनुवाद एक तटस्थ प्रक्रिया न होकर सांस्कृतिक राजनीति का सक्रिय माध्यम बन जाता है।

समकालीन संदर्भ में मीडिया और प्रौद्योगिकी ने अनुवाद अध्ययन को और अधिक विस्तृत बना दिया है। फिल्मों की डबिंग, ओटीटी प्लेटफ़ॉर्म पर सबटाइटलिंग, सॉफ़्टवेयर और वेबसाइट लोकलाइज़ेशन तथा मशीन अनुवाद -ये सभी अनुवाद के नए रूप हैं, जिनके अध्ययन के लिए मीडिया सिद्धांत, संचार अध्ययन और कृत्रिम बुद्धिमत्ता की समझ आवश्यक हो गई है। उदाहरण के लिए, किसी फ़िल्म के संवादों का अनुवाद करते समय केवल शब्दों का नहीं, बल्कि दृश्य, भावभंगिमा और सांस्कृतिक संकेतों का भी ध्यान रखना पड़ता है। इस प्रकार अनुवाद अध्ययन- आज एक जीवंत, गतिशील और निरंतर विकसित होने वाला ज्ञानानुशासन है, जो भाषा से आगे बढ़कर संस्कृति और समाज के गहन अध्ययन का माध्यम बन चुका है।

9.6 अनुवाद और सांस्कृतिक दृष्टि

अनुवाद की प्रक्रिया को यदि केवल भाषायी अंतरण के रूप में देखा जाए, तो उसका वास्तविक महत्व सीमित हो जाता है। वस्तुतः अनुवाद दो भाषाओं के बीच नहीं, बल्कि दो संस्कृतियों, दो जीवनदृष्टियों और दो मूल्य-प्रणालियों के बीच संवाद की सृजनात्मक प्रक्रिया है। भाषा किसी समाज की संस्कृति की वाहक होती है; उसमें उस समाज के विश्वास, परंपराएँ, सामाजिक व्यवहार, लोकाचार, ऐतिहासिक अनुभव और सामूहिक स्मृति अंतर्निहित रहती है। उदाहरणस्वरूप, हिंदी में प्रयुक्त शब्द "संस्कार"काअंग्रेजीमेंकेवल"values" या "rituals" कहना उसके संपूर्ण सांस्कृतिक अर्थ को व्यक्त नहीं कर पाता, क्योंकि भारतीय संदर्भ में संस्कार का संबंध जीवनदर्शन, पारिवारिक परंपरा और नैतिक गठन से जुड़ा होता है। यदि अनुवादक इन सांस्कृतिक अंतर्ध्वनियों से अनभिज्ञ हो, तो अनुवाद भाषिक रूप से सही होते हुए भी सांस्कृतिक स्तर पर अधूरा रह जाता है। इसी कारण आधुनिक अनुवाद चिंतन में यह स्वीकार किया गया है कि भाषायी दक्षता के साथ-साथ सांस्कृतिक साक्षरता अनुवाद की अनिवार्य शर्त है।

सांस्कृतिक संदर्भों की उपेक्षा से उत्पन्न समस्याएँ लोकसाहित्य और मुहावरों के अनुवाद में विशेष रूप से स्पष्ट होती हैं। उदाहरण के लिए, हिंदी का मुहावरा "घरकी मुर्गी दाल बराबर "यदिशाब्दिकरूपसेकिसीअन्यभाषामें अनूदितकियाजाए, तो उसका सामाजिकसांस्कृतिक अर्थ नष्ट हो जाता है। इसका आशय केवल मूल्यहीनता नहीं-, बल्कि परिचित वस्तु के प्रति उपेक्षा की मानसिकता से जुड़ा है। इसी प्रकार भारतीय ग्रामीण जीवन में "पीपल का पेड़"केवलएकवृक्षनहीं, बल्कि धार्मिक, सामाजिक और पर्यावरणीय चेतना का प्रतीक है। यदि किसी कथा या उपन्यास में इस प्रतीक का अनुवाद बिना सांस्कृतिक संदर्भ के किया जाए, तो पाठ का भावात्मक और प्रतीकात्मक स्तर कमजोर हो जाता है। ऐसे उदाहरण यह सिद्ध करते हैं कि अनुवाद में संस्कृति केवल पृष्ठभूमि नहीं, बल्कि अर्थनिर्माण की केंद्रीय शक्ति है।

बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में आए Cultural Turn ने इस तथ्य को सैद्धांतिक आधार प्रदान किया। Susan Bassnett और André Lefevere ने यह प्रतिपादित किया कि अनुवाद अपने समय की विचारधारा, सत्ता संरचना-और सांस्कृतिक प्राथमिकताओं से संचालित होता है। उदाहरणस्वरूप, स्वतंत्रतापूर्व भारत में भारतीय ग्रंथों के अंग्रेजी अनुवादों में आध्यात्मिकता और रहस्यवाद को विशेष रूप से उभारकर प्रस्तुत किया गया, जिससे भारत की एक आध्यात्मिक ' छवि निर्मित हु 'लेकिन अव्यावहारिकई। यह चयन अनुवादक की व्यक्तिगत रुचि मात्र नहीं था, बल्कि औपनिवेशिक सांस्कृतिक राजनीति का परिणाम था। इसके विपरीत, समकालीन दौर में भारतीय साहित्य के अनुवाद में सामाजिक यथार्थ, स्त्रीअनुभव और हाशिए के स्वर अधिक प्रमुखता से सामने आ रहे हैं। यह परिवर्तन यह दर्शाता है कि अनुवाद सदैव संस्कृति की बदलती प्राथमिकताओं के अनुरूप स्वयं को ढालता है।

सांस्कृतिक अनुवाद की अवधारणा ने अनुवादक की भूमिका को भी नए रूप में परिभाषित किया है। अनुवादक अब केवल अर्थ का स्थानांतरण करने वाला तकनीशियन नहीं, बल्कि सांस्कृतिक अर्थों का सक्रिय निर्माता माना जाता है। उदाहरण के लिए, दलित आत्मकथाओं या आदिवासी लोककथाओं के अनुवाद में अनुवादक को यह निर्णय लेना पड़ता है कि वह स्थानीय शब्दों, रीतिरिवाजों और अनुभवों को जस का तस रखे या लक्ष्य-भाषा के अनुसार ढाले। यदि वह अत्यधिक सरलीकरण करता है, तो मूल संस्कृति की विशिष्टता नष्ट हो जाती है; और यदि वह बिना संदर्भ के शब्दों को छोड़ देता है, तो पाठक के लिए अर्थग्रहण कठिन हो जाता है। इस संतुलन की प्रक्रिया ही सांस्कृतिक अनुवाद की वास्तविक चुनौती है।

9.7 तुलनात्मक साहित्य में अनुवाद की अवधारणा और अनुवाद अध्ययन का विकास

तुलनात्मक साहित्य और अनुवाद अध्ययन के पारस्परिक संबंध को समझने के लिए पहले यह स्पष्ट करना आवश्यक है कि तुलनात्मक साहित्य मूलतः एक ऐसी अध्ययनपद्धति है, जो दो या दो से अधिक भाषाओं, साहित्यिक परंपराओं और सांस्कृतिक संदर्भों में रचित कृतियों के बीच अंतर्संबंधों, समान प्रवृत्तियों और वैचारिक भिन्नताओं का विश्लेषण करती है। इस अध्ययन में केवल कथानक या शैली की तुलना ही नहीं की जाती, बल्कि साहित्य के सामाजिक आधार, ऐतिहासिक पृष्ठभूमि, सांस्कृतिक मूल्यों और दार्शनिक दृष्टियों को भी तुलनात्मक रूप में देखा जाता है। रेने वेलेक और हेनरी रेमाक के अनुसार, तुलनात्मक साहित्य वह अनुशासन है, जो साहित्य को राष्ट्रीय सीमाओं से परे जाकर अंतरराष्ट्रीय और अंतरसांस्कृतिक संदर्भों में समझने का प्रयास करता है। किंतु यह प्रयास तभी संभव हो पाता है, जब विभिन्न भाषाओं में रचित साहित्य एकदूसरे के लिए सुलभ हो-और यही वह बिंदु है जहाँ अनुवाद की भूमिका अनिवार्य हो जाती है।

अनुवाद के बिना तुलनात्मक साहित्य की कल्पना अधूरी है, क्योंकि भाषा की सीमा साहित्यिक संवाद की सबसे बड़ी बाधा होती है। उदाहरणस्वरूप, यदि तुलसीदास के रामचरितमानस और मिल्टन के Paradise Lost की तुलना करनी हो, तो यह कार्य तभी संभव है जब दोनों रचनाएँ किसी साझा भाषा में उपलब्ध हों। इसी प्रकार, कालिदास के मेघदूत की तुलना शेली या कीट्स की प्रकृति ,कविताओं से अनुवाद के माध्यम से ही की जा सकती है। इस दृष्टि से अनुवाद तुलनात्मक साहित्य का केवल सहायक उपकरण नहीं, बल्कि उसकी आधारशिला है। अनुवाद भाषाओं के बीच सेतु बनाकर साहित्यिक संवेदनाओं, मिथकों, प्रतीकों और विचारधाराओं को एक संस्कृति से दूसरी संस्कृति तक पहुँचाता है।

प्रारंभिक दौर में, विशेषतः यूरोप में, तुलनात्मक साहित्य का विकास औपनिवेशिक चेतना से प्रभावित रहा। उस समय एशियाई और अफ्रीकी साहित्य को यूरोपीय साहित्य की तुलना में मानने की प्रवृत्ति 'लोकधर्मी' या 'कम विकसित' थी। इस मानसिकता के अंतर्गत किए गए अनुवादों काउद्देश्य सांस्कृतिक संवाद से अधिक सत्तास्थापन था। उदाहरण के -लिए, भारतीय ग्रंथों के अनेक अंग्रेजी अनुवादों में उनके दार्शनिक और सांस्कृतिक आशयों को यूरोपीय दृष्टिकोण से पुनर्व्याख्यायित किया गया। फिर भी, यह भी सत्य है कि इन्हीं अनुवादों के माध्यम से भारतीय साहित्य पहली बार वैश्विक पाठकवर्ग तक पहुँचा। अभिज्ञानशाकुंतलम् का अंग्रेजी और जर्मन अनुवाद इसका श्रेष्ठ उदाहरण है, जिसने गोएथे जैसे साहित्यकार को भी भारतीय काव्यपरंपरा से प्रभावित किया और world literature की अवधारणा को सुदृढ़ किया।

विश्व साहित्य)World Literature) की संकल्पना तुलनात्मक साहित्य और अनुवाद ,दोनों को एक व्यापक परिप्रेक्ष्य प्रदान करती है। गोएथे के अनुसार, विश्व साहित्य वह साहित्य है, जो राष्ट्रीय सीमाओं को पार कर मानवता की साझा संवेदनाओं को अभिव्यक्त करता है। किंतु यह वैश्विक संवाद अनुवाद के बिना संभव नहीं। उदाहरणस्वरूप, प्रेमचंद की कहानियाँ जब अंग्रेजी, रूसी या फ्रेंच में अनूदित होती हैं, तो वे केवल भारतीय ग्रामीण जीवन का चित्रण नहीं करतीं, बल्कि शोषण, संघर्ष और मानवीय करुणा जैसे सार्वभौमिक मूल्यों को सामने लाती हैं। इसी प्रकार, टॉलस्टॉय, दोस्तोएव्स्की या गाब्रियल गार्सिया मार्केज़ के अनुवाद भारतीय भाषाओं में उपलब्ध होकर भारतीय साहित्यिक चेतना को समृद्ध करते हैं। इस प्रकार तुलनात्मक साहित्य और अनुवाद मिलकर वैश्विक साहित्यिक संवाद को संभव बनाते हैं।

बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में, विशेषकर Cultural Turn के बाद, अनुवाद को केवल तुलनात्मक साहित्य का सहायक नहीं, बल्कि एक स्वतंत्र ज्ञानानुशासन के रूप में देखा जाने लगा। Susan Bassnett और André Lefevere ने यह स्पष्ट किया कि अनुवाद मात्र साहित्यिक कृतियों की तुलना का माध्यम नहीं है, बल्कि वह स्वयं एक सृजनात्मक, वैचारिक और सांस्कृतिक प्रक्रिया है। Lefevere के अनुसार, प्रत्येक अनुवाद अपने समय की विचारधारा, साहित्यिक मानकों और सत्ता" संरचनाओं से प्रभावित-पुनर्लेखन) "rewriting) होता है। इसी संदर्भ में Bassnett का यह कथन अत्यंत महत्त्वपूर्ण है कि भविष्य में तुलनात्मक साहित्य की अपेक्षा अनुवाद अध्ययन को केंद्रीय अनुशासन के रूप में देखा जाना चाहिए, क्योंकि वही साहित्य के अंतरसांस्कृतिक प्रवाह को सबसे अधिक स्पष्ट करता है।-

महत्वपूर्ण बिंदु

अनुवाद अध्ययन का स्वरूप अंतर-अनुशासनिक है, क्योंकि यह भाषाविज्ञान, तुलनात्मक साहित्य, सांस्कृतिक अध्ययन और समाजशास्त्र से संबद्ध होकर ज्ञान-संप्रेषण की प्रक्रिया को समझता है।

9.8 अनुवाद अध्ययन की आगामी संभावनाएँ

इक्कीसवीं शताब्दी में भाषिकसांस्कृतिक अंतरण अध्ययन की भावी दिशाएँ अत्यंत व्यापक–, गतिशील और बहुआयामी रूप में विकसित होती दिखाई देती हैं। धार्मिक ग्रंथों के अर्थांतरण से आरंभ हुई यह परंपरा पहले भाषावैज्ञानिक विश्लेषण तक सीमित रही, किंतु कालांतर में यह सांस्कृतिक, सामाजिक और वैचारिक संदर्भों को समाहित करती हुई एक स्वतंत्र और समृद्ध ज्ञानपरंपरा के रूप में विकस–ित हुई। आज यह अध्ययन केवल भाषाओं के बीच अर्थपरिवर्तन की – प्रक्रिया नहीं रह गया है, बल्कि यह समाज, इतिहास, सत्तासंरचना और सांस्कृतिक अस्मिता को समझने का एक प्रभावशाली माध्यम बन चुका है।

समकालीन विमर्शों -जैसे अस्मितावादी अध्ययन, उत्तरऔपनिवेशिक चिंतन–, नारीवादी दृष्टिकोण और सांस्कृतिक अध्ययनसे जुड़कर भाषिक अंतरण ने अपनी वैचारिक भूमिका को और अधिक व्यापक बना लिया है। अब अर्थसंप्रेषण – की प्रक्रिया को तटस्थ नहीं, बल्कि सामाजिकसांस्कृतिक हस्तक्षेप के रूप में देखा जाने लगा है। हाशिए पर स्थित – समुदायों की आवाज़, अल्पसंख्यक भाषाओं की अभिव्यक्ति और उपेक्षित सांस्कृतिक अनुभवों का वैश्विक स्तर पर संप्रेषण -ये सभी इस अध्ययन की नई और महत्त्वपूर्ण उपलब्धियाँ हैं।

सूचनाक्रांति और वैश्वीकरण के वर्तमान दौर में अर्थसंप्रेषण की आवश्यकता पहले से कहीं अधिक बढ़ गई है। मीडिया, पर्यटन, विज्ञापन, शिक्षा, खेल, विज्ञान और प्रौद्योगिकी जैसे क्षेत्रों में बहुभाषिक और बहुसांस्कृतिक संवाद के बिना कोई भी गतिविधि पूर्ण नहीं मानी जा सकती। अंतरराष्ट्रीय समाचारों की बहुभाषिक प्रस्तुति, वैश्विक कंपनियों की सामग्री का स्थानीय सांस्कृतिक अनुकूलन) localization), तथा डिजिटल शिक्षा मंचों पर बहुभाषिक पाठ्य -सामग्री–ये सभी भाषिकसांस्कृतिक अंतरण की केंद्रीय भूमिका को रेखांकित करते हैं।–

भविष्य में यह अध्ययन तकनीकी नवाचारों के साथ और अधिक गहराई से जुड़ता दिखाई देता है। कृत्रिम बुद्धिमत्ता, मशीन आधारित अर्थांतरण, कॉर्पस अध्ययन और डिजिटल मानविकी ने इस क्षेत्र को नई दिशा प्रदान की है। फिल्म, वेब-सीरीजज और ओटीटी प्लेटफ़ॉर्म के विस्तार के साथ संवादरूपांतरण–, दृश्यश्रव्य अंतरण–, डबिंग और सबटाइटलिंग जैसे क्षेत्र विशेष रूप से उभरकर सामने आए हैं। साथ ही कानूनी, तकनीकी और चिकित्सीय क्षेत्र में सटीक अर्थसंप्रेषण की – बढ़ती माँग ने इस अध्ययन को व्यावहारिक और रोजगारोन्मुख स्वरूप प्रदान किया है।

आज विश्व के अनेक विश्वविद्यालयों में भाषिकसांस्कृतिक अंतरण अध्ययन स्वतंत्र विभागों–, डिग्री और डिप्लोमा कार्यक्रमों के रूप में स्थापित हो चुका है। इससे न केवल कुशल और संवेदनशील अर्थमध्यस्थ तैयार हो रहे हैं–, बल्कि शोध, अकादमिक विमर्श और व्यावसायिक अवसरों के नए आयाम भी विकसित हो रहे हैं। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि इक्कीसवीं शताब्दी में यह अध्ययन केवल एक शैक्षणिक विषय नहीं, बल्कि वैश्विक संवाद, सांस्कृतिक सहअस्तित्व और ज्ञानविस्तार का एक अनिवार्य तथा प्रभावशाली क्षेत्र बन चुका है।–

अपनी प्रगति जांचें

प्रश्न 4: जेम्स एस. होम्स का अनुवाद अध्ययन के विकास में क्या योगदान है?

प्रश्न 5: अनुवाद अध्ययन में 'सांस्कृतिक मोड़ (Cultural Turn)' से क्या तात्पर्य है?

प्रश्न 6: अनुवाद अध्ययन को अंतर-अनुशासनिक क्षेत्र क्यों माना जाता है?

9.9 सारांश

अनुवाद अध्ययन आधुनिक युग में एक स्वतंत्र, सुसंगठित और अंतरअनुशासनिक ज्ञानानुशासन के रूप में - विकसित हुआ है। प्रारंभ में इसे केवल व्यावहारिक भाषाकौशल या सहायक साहित्यिक गतिविधि माना जाता था, किंतु बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में भाषाविज्ञान, तुलनात्मक साहित्य और सांस्कृतिक अध्ययन के प्रभाव से इसका सैद्धांतिक और अकादमिक विस्तार हुआ। रोमन याकोब्सन, यूजीन नाइडा और जेम्स एसहोम्स जैसे विद्वानों ने अन .ुवाद को वैज्ञानिक विश्लेषण का विषय बनाया। आगे चलकर सांस्कृतिक मोड़)Cultural Turn) के माध्यम से यह स्पष्ट हुआ कि अनुवाद केवल भाषिक अंतरण नहीं, बल्कि संस्कृति, सत्ता, विचारधारा और पहचान से जुड़ी प्रक्रिया है। तुलनात्मक साहित्य और विश्व साहित्य के अध्ययन में अनुवाद की भूमिका केंद्रीय सिद्ध हुई। समकालीन संदर्भ में तकनीक, मीडिया, वैश्वीकरण और बहुभाषिकता ने अनुवाद अध्ययन के नए आयाम खोले हैं। इस प्रकार अनुवाद अध्ययन आज ज्ञानसंप्रेषण-, सांस्कृतिक संवाद और सामाजिक विमर्श का एक महत्त्वपूर्ण माध्यम बन चुका है।

9.10 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)

प्रश्न :का उत्तर 1 अनुवाद अध्ययन को ज्ञानानुशासन इसलिए कहा जाता है क्योंकि इसमें एक सुव्यवस्थित सैद्धांतिक ढाँचा, विशिष्ट शब्दावली तथा शोधपद्धतियाँ विकसित हो चुकी हैं। इस विषय की विस्तृत चर्चा के लिए ऊपर दिए गए खंड का अवलोकन करें।

प्रश्न :का उत्तर 2 रोमन याकोब्सन ने अनुवाद के तीन प्रकार -अंतभा:षिक, अंतरभाषिक और अंतरप्रतीकात्मकनिर्धारित किए हैं। इस वर्गीकरण को समझने हेतु संबंधित विवेचन को देखें।

प्रश्न नाइडा का .यूजीन ए :**का उत्तर 3**Dynamic Equivalence सिद्धांत लक्ष्यभाषा के पाठक पर मूल पाठ के समान प्रभाव उत्पन्न करने पर बल देता है। अधिक स्पष्टता के लिए पूर्ववर्ती सामग्री सहायक होगी।

प्रश्न :का उत्तर 4जेम्स एस' होम्स ने .Translation Studies' शब्द का प्रयोग कर अनुवाद अध्ययन को एक स्वतंत्र अकादमिक अनुशासन के रूप में स्थापित किया। इस संदर्भ में ऊपर दिया गया विवरण उपयोगी रहेगा।

प्रश्न :का उत्तर 5 अनुवाद अध्ययन में का अर्थ अनुवाद को भाषिक प्रक्रिया के बजाय सांस्कृतिक और 'सांस्कृतिक मोड़' वैचारिक क्रिया के रूप में देखना है। इस विषय की विस्तृत जानकारी हेतु संबंधित खंड देखें।

प्रश्न 6 का उत्तर: अनुवाद अध्ययन को अंतरअनुशासनिक इसलिए माना जाता है क्योंकि यह भाषा-विज्ञान, साहित्य, संस्कृति, समाज और इतिहास जैसे क्षेत्रों से जुड़ा हुआ है। अधिक जानकारी के लिए ऊपर प्रस्तुत विवेचन का अवलोकन करें।

9.11 अधिक जानने के लिए पढ़ें

- Jakobson, Roman. (" .(1959On Linguistic Aspects of Translation." In On Translation, edited by Reuben A. Brower. Cambridge: Harvard University Press.
- Nida, Eugene A. (.(1964Toward a Science of Translating. Leiden: E. J. Brill.
- Bassnett, Susan & Lefevere, André. (.(1990Translation, History and Culture. London: Routledge.
- Venuti, Lawrence. (.(1995The Translator's Invisibility: A History of Translation. London: Routledge.
- Catford, J. C. (.(1965A Linguistic Theory of Translation. London: Oxford University Press.
- तिवारी, भोलानाथकिताब महल। :इलाहाबाद .सिद्धांत और प्रयोग :विज्ञान-अनुवाद .(2004) .
- नगेन्द्र .(2006) .अनुवादऔरसृजन .नईदिल्ली :वाणीप्रकाशन।
- गोपीनाथन, जीराजकमल प्रकाशन। :नई दिल्ली .स्वरूप और क्षेत्र :अनुवाद अध्ययन .(2012) .

9.12 अभ्यास

संक्षिप्त (क)प्रश्नों के उत्तर लिखिए—

1. अनुवाद अध्ययन को ज्ञानानुशासन क्यों कहा जाता है?
2. 'Translation Studies' शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम किस विद्वान ने किया?
3. रोमन जैकोब्सन द्वारा बताए गए अनुवाद के तीन प्रकार कौनकौन से हैं-?
4. यूजीन ए नाइडा के .Dynamic Equivalence सिद्धांत का मूल उद्देश्य क्या है?
5. अनुवाद अध्ययन में) सांस्कृतिक मोड़'Cultural Turn)' से क्या अभिप्राय है?

—निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लिखिए (ख)

1. ज्ञानानुशासन के रूप में अनुवाद अध्ययन के विकास की प्रक्रिया का आलोचनात्मक मूल्यांकन करें।
2. अनुवाद और भाषाविज्ञान के आपसी संबंध को स्पष्ट करते हुए प्रमुख भाषावैज्ञानिक सिद्धांतों का विवेचन प्रस्तुत करें।
3. जेम्स एसहोम्स द्वारा प्रतिपादित अनुवाद अध्ययन की संरचनात्मक रूपरेखा का क्रमबद्ध विवरण दें। .
4. अनुवाद अध्ययन में आए सांस्कृतिक मोड़ के कारणों तथा उसके प्रभावों का विश्लेषण करें।
5. तुलनात्मक साहित्य में अनुवाद की भूमिका और उसके महत्त्व को उपयुक्त उदाहरणों सहित स्पष्ट करें।
6. समकालीन संदर्भ में अनुवाद अध्ययन को अंतरअनुशासनिक क्षेत्र के रूप में स्वीकार किए जाने के कारणों पर प्रकाश डालें।

शब्दकोश

ज्ञानानुशासन अध्ययनक्षेत्र :, Translation Studies : अनुवादशास्त्र, अनुवाद अध्ययन, Dynamic Equivalence : प्रभावसमता, Cultural Turn : सांस्कृतिकता, Interdisciplinary दृष्टि बहुविषयक : इत्यादि।

*** ***** ***

इकाई 10 - अनुवाद का पुनरीक्षण,मूल्यांकन समीक्षा

इकाई की रूपरेखा

10.1 उद्देश्य
10.2 प्रस्तावना
10.3 पुनरीक्षण: अर्थ एवं परिभाषा
10.4 अनुवाद में पुनरीक्षण: भाषिक, अर्थगत और शैलीगत परिष्कार
10.5 पुनरीक्षण: भूमिका, प्रशिक्षण और उपयोगिता
10.6 पुनरीक्षण का अभ्यास
10.7 अनुवाद मूल्यांकन: पुनःअनुवाद एवं अनुक्रिया
10.7.1 अनुवाद मूल्यांकन की अवधारणा एवं पुनःअनुवाद की सैद्धांतिक पृष्ठभूमि
10.7.2 अनुक्रिया आधारित मूल्यांकन : अवधारणा, प्रक्रिया और व्यावहारिक उदाहरण
10.8 अनुवाद मूल्यांकन के प्रमुख परीक्षण एवं मुख्य आयाम
10.9 अनुवादसमीक्षा: स्वरूप, भेद और साहित्यिक तुलनात्मक दृष्टि
10.10 अनुवादसमीक्षा: साहित्येतर संदर्भ
10.11 सारांश
10.12 प्रगतिविवरण (केवलरूपरेखा)
10.13 अधिकजाननेकेलिएपढ़ें
10.14 अभ्यासप्रश्न

10.1 उद्देश्य

- अनुवाद में पुनरीक्षण की अवधारणा, अर्थ और आवश्यकता को समझने में सक्षम होंगे।
- अनुवाद के भाषिक, अर्थगत और शैलीगत परिष्कार की प्रक्रिया को स्पष्ट रूप से प्रस्तुत करेंगे।
- पुनरीक्षण की भूमिका, प्रशिक्षण और उपयोगिता का विश्लेषण करने में समर्थ होंगे।
- अनुवाद मूल्यांकन के सिद्धांतों, तकनीकों और अनुप्रयोगों से परिचय प्राप्त करेंगे।
- अनुवाद मूल्यांकन में विश्लेषण, तुलना और प्रामाणिकता की प्रक्रिया का विवेचन कर सकेंगे।
- अनुवादसमीक्षा के स्वरूप, पद्धति और विवेचन की समग्र समझ विकसित करेंगे।
- पुनरीक्षण, मूल्यांकन और समीक्षा के बीच अंतर को स्पष्ट रूप से पहचानेंगे।

10.2 प्रस्तावना

अनुवादसमीक्षा और अनुवाद मूल्यांकन आधुनिक अनुवाद अध्ययन के महत्वपूर्ण आयाम हैं, जिनके माध्यम से अनूदित पाठ की गुणवत्ता, प्रामाणिकता और प्रभावशीलता का परीक्षण किया जाता है। अनुवाद केवलभाषापरिवर्तन की प्रक्रिया नहीं है, बल्कि वह अर्थ, भाव, संदर्भ और संस्कृति के संतुलित संप्रेषण का दायित्व भी निभाता है। इसी कारण

अनुवादसमीक्षा का उद्देश्य यह देखना होता है कि अनुवाद मूल पाठ के आशय और उद्देश्य को लक्ष्य भाषा में कितनी सफलता से प्रस्तुत करता है।

अनुवादसमीक्षा के अंतर्गत उसके स्वरूप, प्रकार और पद्धतियों का विवेचन किया जाता है। साहित्यिक तथा साहित्येतर पाठों के संदर्भ में समीक्षा की प्रकृति भिन्न हो सकती है, क्योंकि साहित्यिक अनुवाद में शैली, सौंदर्य और संवेदना का महत्व अधिक होता है, जबकि साहित्येतर अनुवाद में स्पष्टता, तथ्यात्मक शुद्धता और उपयोगिता को प्राथमिकता दी जाती है। पुनःअनुवाद आधारित पद्धति और पाठकीय अनुक्रिया आधारित पद्धति अनुवादसमीक्षा को व्यावहारिक आधार प्रदान करती हैं।

10.3 पुनरीक्षण: अर्थ एवं परिभाषा

पुनरीक्षण अनुवाद प्रक्रिया का वह अनिवार्य चरण है, जिसमें अनूदित पाठ पूर्ण होने के बाद दोबारा ध्यानपूर्वक देखा, परखा और सुधारा जाता है। यह केवल भाषा की त्रुटियों को ठीक करने तक सीमित नहीं रहता, बल्कि मूल पाठ और अनूदित पाठ के बीच अर्थ, भाव, उद्देश्य और संदर्भ की समानता को सुनिश्चित करने की प्रक्रिया है। अंग्रेजी में इसे सामान्यतः "Vetting" कहा जाता है और इस कार्य को करने वाले व्यक्ति को "Vettor" कहा जाता है। पुनरीक्षण का मूल भाव ही यह है कि अनुवाद को फिर से पढ़ा जाए, मूल पाठ से मिलाया जाए और जहाँ भी अर्थगत, भाषागत या शैलीगत असंतुलन दिखाई दे, वहाँ आवश्यक सुधार किया जाए। इस दृष्टि से पुनरीक्षण को अनुवाद का संवर्धन और संपादन भी कहा जा सकता है। यह प्रक्रिया अनुवाद को अधिक स्पष्ट, विश्वसनीय और लक्ष्यभाषा के अनुरूप बनाती है, जिससे पाठक उसे सहज रूप में ग्रहण कर सके।

पुनरीक्षण को प्रायः समीक्षा से अलग माना जाता है। समीक्षा में जहाँ समीक्षक किसी पाठ की गुणवत्ता पर अपनी राय, आलोचना या मूल्यांकन प्रस्तुत करता है, वहीं पुनरीक्षण में सुधार की प्रक्रिया प्रत्यक्ष रूप से पाठ में की जाती है। पुनरीक्षक अपनी व्यक्तिगत टिप्पणी या निष्कर्ष नहीं देता, बल्कि अनूदित पाठ को बेहतर बनाने पर केंद्रित रहता है। अंग्रेजी में प्रयुक्त "Revision" शब्द भी पुनः जाँच और संशोधन के अर्थ में आता है, परंतु अनुवाद के तकनीकी संदर्भ में Vetting शब्द अधिक उपयुक्त माना जाता है। प्रसिद्ध अनुवादचिंतक Peter Newmark के अनुसार, "Revision is the process of checking a translation for accuracy, naturalness and appropriateness in the target language." इसी प्रकार Eugene A. Nida कहते हैं- "Revision is essential to ensure that the translated message produces a response equivalent to that of the original." इन परिभाषाओं से स्पष्ट होता है कि पुनरीक्षण का उद्देश्य अनुवाद को केवल सही बनाना नहीं, बल्कि उसे प्रभावी और संप्रेषणीय बनाना है।

पुनरीक्षण के महत्व को उदाहरणों से आसानी से समझा जा सकता है। जैसे अंग्रेजी वाक्य "The work is in progress" का शाब्दिक अनुवाद यदि "कार्यप्रगतिमेंहै"करदियाजाए, तो यह भाषा की दृष्टि से अस्वाभाविक लगता है; पुनरीक्षण के माध्यम से इसे "कार्यप्रगतिपरहै"कियाजाताहै।इसीप्रकार"He is as humble as a sheep" का शाब्दिक अनुवाद अर्थ को विकृत कर देगा, इसलिए पुनरीक्षण में इसे "वहअत्यंतविनम्रहै" जैसेसांस्कृतिकरूपसेस्वीकृतरूपमेंबदला जाताहै । साहित्यिक अनुवादमेंपुनरीक्षण अपेक्षाकृतसीमितहोताहै, क्योंकि वहाँ सर्जनात्मक स्वतंत्रता अधिक होती है; किंतु वैज्ञानिक, तकनीकी, प्रशासनिक और विधिक अनुवादों में पुनरीक्षण अत्यंत आवश्यक है, क्योंकि वहाँ छोटीसी त्रुटि भी गंभीर भ्रम उत्पन्न कर सकती है।

10.4 अनुवाद में पुनरीक्षण: भाषिक, अर्थगत और शैलीगत परिष्कार

अनुवाद में पुनरीक्षण का प्रमुख उद्देश्य केवल त्रुटि या संशोधन नहीं होता, बल्कि अनूदित पाठ को भाषिक, अर्थगत और शैलीगत स्तरों पर परिष्कृत कर उसे संप्रेषणीय, स्वाभाविक और प्रभावी बनाना होता है। प्रारंभिक अनुवाद प्रायः मूल पाठ के प्रति निष्ठा बनाए रखने के प्रयास में यांत्रिक, शाब्दिक या कृत्रिम हो जाता है। ऐसी स्थिति में पाठ सही होते हुए भी पाठक पर अपेक्षित प्रभाव नहीं डाल पाता। पुनरीक्षण इसी अंतर को भरने की प्रक्रिया है।पुनरीक्षण के दौरान पुनरीक्षक यह सुनिश्चित करता है कि-

- अनुवाद मूल पाठ के आशय से विचलित न हो,
- लक्ष्य भाषा की व्याकरणिक, सांस्कृतिक और शैलीगत परंपराओं के अनुरूप हो,
- तथा पाठक को ऐसा न लगे कि वह अनूदित पाठ पढ़ रहा है, बल्कि एक स्वाभाविक मूल रचना का अनुभव करे।

इस दृष्टि से अनुवाद में पुनरीक्षण को तीन प्रमुख स्तरों पर समझा जा सकता है- भाषिक, अर्थगत और शैलीगत परिष्कार।

1. भाषिक परिष्कार

भाषिक परिष्कार अनुवाद पुनरीक्षण का सबसे मूलभूत स्तर है। इसके अंतर्गत शब्दचयन, वाक्यविन्यास, व्याकरणिक शुद्धता, कालप्रयोग, वाच्यरचना तथा मुहावरों की उपयुक्तता की जाँच की जाती है। कई बार अनुवाद शब्दार्थ की दृष्टि से सही होता है, परंतु लक्ष्य भाषा की स्वाभाविक प्रवृत्ति के विपरीत होने के कारण वह बोझिल या अप्राकृतिक प्रतीत होता है।पुनरीक्षण की इस अवस्था में पुनरीक्षक यह देखता है कि-

- कहीं मूल भाषा की संरचना को ज्योंकात्यों तो नहीं अपनाया गया है,
- शब्दों का प्रयोग संदर्भानुकूल है या नहीं,
- तथा वाक्य लक्ष्य भाषा में सहज रूप से प्रवाहित हो रहा है या नहीं।

भाषिक परिष्कार का उद्देश्य अनुवाद को व्याकरणिक रूप से शुद्ध होने के साथ-साथ भाषिक रूप से स्वाभाविक बनाना होता है।इन उदाहरणों से स्पष्ट होता है कि प्रारंभिक अनुवाद में अंग्रेजी की संरचना का प्रभाव बना हुआ है, जबकि पुनरीक्षित अनुवाद में हिंदी की स्वाभाविक वाक्यरचना और प्रवाह को प्राथमिकता दी गई है। इस प्रकार भाषिक परिष्कार अनुवाद को लक्ष्य भाषा के अनुरूप ढालने का कार्य करता है।

उदाहरण 1

English: The project is under consideration.

प्रारंभिक अनुवाद: परियोजना विचार के अंतर्गत है।

पुनरीक्षित अनुवाद: परियोजना पर विचार किया जा रहा है।

उदाहरण 2

English: He gave a long explanation.

प्रारंभिक अनुवाद: उसने एक लंबा स्पष्टीकरण दिया।

पुनरीक्षित अनुवाद: उसने विस्तार से समझाया।

उदाहरण 3

English: The decision was taken yesterday.

प्रारंभिक अनुवाद: निर्णय कल लिया गया था।

पुनरीक्षित अनुवाद: कल निर्णय लिया गया।

उदाहरण 4

English: She has a strong opinion on this issue.

प्रारंभिक अनुवाद: इस मुद्दे पर उसकी मजबूत राय है।

पुनरीक्षित अनुवाद: इस विषय पर उसकी स्पष्ट और दृढ़ राय है।

उदाहरण 5

English: The work was done by the committee.

प्रारंभिक अनुवाद: कार्य समिति के द्वारा किया गया।

पुनरीक्षित अनुवाद: यह कार्य समिति ने किया।

इन उदाहरणों से स्पष्ट है कि भाषिक पुनरीक्षण अनुवाद को लक्ष्य भाषा की सहज प्रवृत्ति के अनुरूप ढालता है।

2. अर्थगत परिष्कार

अर्थगत परिष्कार अनुवाद पुनरीक्षण का वह स्तर है, जहाँ ध्यान केवल शब्दों पर नहीं, बल्कि आशय, निहितार्थ और भावार्थ पर केंद्रित होता है। कई बार प्रारंभिक अनुवाद शब्दशः सही होते हुए भी मूल वक्ता या लेखक के भाव को पूरी तरह व्यक्त नहीं कर पाता। ऐसे में अनुवाद अर्थ की दृष्टि से अधूरा या अस्पष्ट रह जाता है।

पुनरीक्षण के इस चरण में यह जाँचा जाता है कि-

- क्या अनुवाद मूल पाठ के निहित अर्थको व्यक्त कर रहा है,
- क्या सांस्कृतिक या भावात्मक संकेतों का सही रूपांतरण हुआ है,
- तथा क्या पाठक वही अर्थ ग्रहण कर पाएगा, जो मूल पाठ में अपेक्षित है।
- अर्थगत परिष्कार का उद्देश्य शाब्दिक समानता से आगे बढ़कर अर्थ-समानता और भाव-समानता स्थापित करना होता है।

उदाहरण 1

English: He finally broke his silence.

प्रारंभिक अनुवाद: उसने अंततः अपनी चुप्पी तोड़ी।

पुनरीक्षित अनुवाद: उसने अंततः अपनी चुप्पी समाप्त की और बोलना शुरू किया।

उदाहरण 2

English: The plan did not work as expected.

प्रारंभिक अनुवाद: योजना उम्मीद के अनुसार काम नहीं की।

पुनरीक्षित अनुवाद: योजना अपेक्षित परिणाम नहीं दे सकी।

उदाहरण 3

English: She narrowly escaped the accident.

प्रारंभिक अनुवाद: वह संकरे रूप से दुर्घटना से बची।

पुनरीक्षित अनुवाद: वह दुर्घटना से बाल-बाल बची।

उदाहरण 4

English: The proposal was turned down.

प्रारंभिक अनुवाद: प्रस्ताव को नीचे कर दिया गया।

पुनरीक्षित अनुवाद: प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया गया।

उदाहरण 5

English: He was upset by the remark.

प्रारंभिक अनुवाद: वह टिप्पणी से परेशान था।

पुनरीक्षित अनुवाद: उस टिप्पणी से उसे गहरा आघात पहुँचा।

यहाँ पुनरीक्षण ने शाब्दिक अर्थ से आगे बढ़कर निहित अर्थ को स्पष्ट किया।

इन उदाहरणों में स्पष्ट देखा जा सकता है कि प्रारंभिक अनुवाद में कई स्थानों पर शब्द तो सही हैं, लेकिन अर्थ अधूरा या भ्रमपूर्ण है। पुनरीक्षित अनुवाद में न केवल अर्थ को स्पष्ट किया गया है, बल्कि संदर्भ के अनुसार उसकी तीव्रता और भावात्मक गहराई को भी उभारा गया है। इस प्रकार अर्थगत पुनरीक्षण अनुवाद को संप्रेषणीय बनाता है।

3. शैलीगत परिष्कार

शैलीगत परिष्कार अनुवाद पुनरीक्षण का सबसे सूक्ष्म और संवेदनशील स्तर है। इसमें यह देखा जाता है कि अनूदित पाठ की भाषा विषय, संदर्भ, उद्देश्य और पाठकवर्ग के अनुकूल है या नहीं। प्रशासनिक आदेश, साहित्यिक रचना, शैक्षणिक लेख और सामान्य संवाद- सभी की भाषिक शैली भिन्न होती है।पुनरीक्षण की इस अवस्था में पुनरीक्षक यह सुनिश्चित करता है कि-

- अनुवाद की भाषा अत्यधिक औपचारिक या अनौपचारिक न हो,
- शैली विषय के अनुरूप हो,
- तथा पाठ अपने प्रयोजन को प्रभावी ढंग से पूरा करे।
- शैलीगत परिष्कार का उद्देश्य अनुवाद को केवल सही नहीं, बल्कि उपयुक्त और प्रभावशाली बनाना होता है।

उदाहरण 1 (प्रशासनिक शैली)

English: Citizens are requested to cooperate.

प्रारंभिक अनुवाद: नागरिकों से सहयोग करने का अनुरोध किया जाता है।

पुनरीक्षित अनुवाद: नागरिकों से सहयोग की अपेक्षा की जाती है।

उदाहरण 2 (साहित्यिक शैली)

English: The night slowly wrapped the city in silence.

प्रारंभिक अनुवाद: रात ने धीरे-धीरे शहर को चुप्पी में लपेट लिया।

पुनरीक्षित अनुवाद: रात की निस्तब्धता ने धीरे-धीरे पूरे शहर को अपने आगोश में ले लिया।

उदाहरण 3 (सामान्य संवाद)

English: I don’t think it will work.

प्रारंभिक अनुवाद: मुझे नहीं लगता कि यह काम करेगा।

पुनरीक्षित अनुवाद: मुझे नहीं लगता कि इससे कोई फायदा होगा।

उदाहरण 4 (सूचनात्मक पाठ)

English: Please submit the form by Monday.

प्रारंभिक अनुवाद: कृपया फॉर्म सोमवार तक जमा करें।

पुनरीक्षित अनुवाद: कृपया सोमवार तक प्रपत्र जमा कर दें।

उदाहरण 5 (प्रभावात्मक शैली)

English: Pollution is killing the city.

प्रारंभिक अनुवाद: प्रदूषण शहर को मार रहा है।

पुनरीक्षित अनुवाद: प्रदूषण धीरे-धीरे शहर का जीवन नष्ट कर रहा है।

इन उदाहरणों में पुनरीक्षण ने भाषा को विषयानुकूल, प्रभावशाली और स्वाभाविक बनाया।

इन उदाहरणों से स्पष्ट होता है कि पुनरीक्षण ने प्रत्येक संदर्भ में भाषा की शैली को संतुलित किया है। साहित्यिक पाठ में भावात्मक विस्तार, प्रशासनिक पाठ में औपचारिकता और सूचनात्मक पाठ में स्पष्टता को प्राथमिकता दी गई है। इस प्रकार शैलीगत परिष्कार अनुवाद को संदर्भ-संवेदी और पाठकअनुकूल बनाता है।

4. फॉर्मेट में परिष्कार

अनुवाद में फॉर्मेट का परिष्कार पुनरीक्षण की एक अत्यंत महत्वपूर्ण प्रक्रिया है, जिसे अक्सर गौण समझ लिया जाता है, जबकि वास्तव में यही वह पक्ष है जो अनूदित पाठ को औपचारिक, व्यवस्थित और प्रकाशनयोग्य बनाता है। फॉर्मेट में परिष्कार का अर्थ केवल बाहरी सज्जा नहीं है, बल्कि यह सुनिश्चित करना भी है कि अनूदित पाठ का ढाँचा, क्रम, अंकन, शीर्षक-विन्यास, अनुच्छेद-विभाजन और संकेत-प्रणाली लक्ष्य भाषा की परंपरा और पाठकीय अपेक्षाओं के अनुरूप हो। पुनरीक्षक यह देखता है कि अनुवाद मूल पाठ के फॉर्मेट का अंधानुकरण न होकर लक्ष्य भाषा की स्वीकृत शैली में प्रस्तुत हुआ है या नहीं।

(क) अनुच्छेद और पंक्ति-विन्यास में परिष्कार

अक्सर मूल भाषा के अनुच्छेद-विन्यास को अपना लिया जाता है, जिससे लक्ष्य भाषा में पाठ असंतुलित प्रतीत होता है। पुनरीक्षण में आवश्यकतानुसार अनुच्छेदों को विभाजित या संयोजित किया जाता है।

उदाहरण 1

English: A long paragraph explaining multiple points.

प्रारंभिक अनुवाद: पूरा अनुवाद एक ही बड़े अनुच्छेद में।

पुनरीक्षित रूप: अर्थ के अनुसार 2–3 छोटे अनुच्छेदों में विभाजन।

उदाहरण 2

English: Instructions written in one block.

प्रारंभिक अनुवाद: निर्देश एक ही अनुच्छेद में।

पुनरीक्षित रूप: बिंदुवार (•) निर्देशोंमेंप्रस्तुति।

उदाहरण 3

English: Dialogue written continuously.

प्रारंभिक अनुवाद: संवाद बिना पंक्ति-विभाजन के।

पुनरीक्षित रूप: प्रत्येक वक्ता के संवाद को नई पंक्ति में।

उदाहरण 4

English: A report with headings ignored.

प्रारंभिक अनुवाद: शीर्षक हटाकर साधारण पाठ।

पुनरीक्षित रूप: उपयुक्त शीर्षकों और उपशीर्षकों का प्रयोग।

उदाहरण 5

English: Notice written in paragraph form.

पुनरीक्षित अनुवाद: सूचना को औपचारिक नोटिस-फॉर्मेट में ढालना।

(ख) संख्या, क्रम और अंकन में परिष्कार

अंग्रेजी और हिंदी में संख्या और क्रम दर्शाने की परंपराएँ भिन्न हैं। पुनरीक्षण में इनका लक्ष्य भाषा के अनुसार रूपांतरण आवश्यक होता है।

उदाहरण 1

English: 1, 2, 3, 4

प्रारंभिक अनुवाद: 1, 2, 3, 4

पुनरीक्षित अनुवाद: १, २, ३, ४

उदाहरण 2

English: (a), (b), (c)

प्रारंभिक अनुवाद: (a), (b), (c)

पुनरीक्षित अनुवाद: (क), (ख), (ग)

उदाहरण 3

English: I, II, III

प्रारंभिक अनुवाद: I, II, III

पुनरीक्षित अनुवाद: i, ii, iii या १, २, ३ (संदर्भानुसार)

उदाहरण 4

English: Section 5.2.1

पुनरीक्षित अनुवाद: अनुभाग 5.2.1 (हिंदी शब्दावली के साथ)

उदाहरण 5

English: Dates written as 26 January, 2025

पुनरीक्षित अनुवाद: 26 जनवरी, 2025

(ग) शीर्षक, उपशीर्षक और हाइलाइटिंग में परिष्कार

फॉर्मेट परिष्कार में यह भी देखा जाता है कि शीर्षक मोटे अक्षरों में, उपशीर्षक अलग शैली में और मुख्य बिंदु स्पष्ट रूप से उभरे हों।

उदाहरण 1

English: MAIN OBJECTIVES

प्रारंभिक अनुवाद: मुख्य उद्देश्य

पुनरीक्षित रूप: मुख्य उद्देश्य

उदाहरण 2

English: Sub-points written in plain text

पुनरीक्षित रूप: उपबिंदुओं को अलग-अलग क्रमांक में प्रस्तुत करना।

उदाहरण 3

English: Important terms italicized

पुनरीक्षित रूप: हिंदी में तिरछे अक्षर या उद्धरण-चिह्नों का प्रयोग।

उदाहरण 4

English: Conclusion not marked

पुनरीक्षित रूप: निष्कर्ष शीर्षक के अंतर्गत अलग प्रस्तुति।

उदाहरण 5

English: Table headings missing in translation

पुनरीक्षित रूप: तालिका शीर्षक और स्तंभ-शीर्षक स्पष्ट करना।

(घ) औपचारिक दस्तावेजों के फॉर्मेट में परिष्कार

विशेष रूप से पत्र, अधिसूचना, सूचनापत्र और निमंत्रणपत्र के अनुवाद में फॉर्मेट का परिष्कार अत्यंत आवश्यक होता है।

उदाहरण 1

English: Official letter written as plain paragraph

पुनरीक्षित अनुवाद: पत्र-शीर्ष, विषय, संबोधन और हस्ताक्षर सहित।

उदाहरण 2

English: Invitation text translated word-to-word

पुनरीक्षित अनुवाद: हिंदी निमंत्रणपत्र की स्वीकृत शैली में।

उदाहरण 3

English: Notice without date/place format

पुनरीक्षित अनुवाद: दिनांक, स्थान और संदर्भ संख्या सहित।

उदाहरण 4

English: Government order without numbering

पुनरीक्षित अनुवाद: आदेश संख्या, विषय और बिंदुवार निर्देश।

उदाहरण 5

English: Form fields written in sentences

पुनरीक्षित अनुवाद: प्रपत्र-शैली में रिक्त स्थान (……) सहित।

10.5 पुनरीक्षण : भूमिका, प्रशिक्षण और उपयोगिता

1. पुनरीक्षण की भूमिका

पुनरीक्षण अनुवाद प्रक्रिया का केवल अंतिम चरण नहीं, बल्कि उसकी गुणवत्ता सुनिश्चित करने वाली केन्द्रीय भूमिका निभाता है। अनुवादक द्वारा तैयार किया गया पाठ कई बार अर्थ, भाषा या शैली की दृष्टि से आंशिक रूप से सही होता है, किंतु पुनरीक्षक की भूमिका उसे पूर्ण, सुसंगत और लक्ष्यभाषा के अनुकूल बनाती है। पुनरीक्षक मूल पाठ और अनूदित पाठ की तुलनात्मक जाँच करता है तथा यह सुनिश्चित करता है कि संदेश का कोई अंश छूटा न हो, विकृत न हुआ हो और अनावश्यक रूप से जोड़ा न गया हो।पुनरीक्षक का कार्य केवल त्रुटियाँ पकड़ना नहीं होता, बल्कि अनुवाद को अधिक स्वाभाविक, स्पष्ट और प्रभावी बनाना भी होता है। वह भाषा, विषय और पाठक- तीनों के संदर्भ को ध्यान में रखकर निर्णय लेता है।

उदाहरण (भूमिका)

Original: “The committee resolved the issue unanimously.”

प्रारंभिक अनुवाद: समिति ने मुद्दा सर्वसम्मति से हल किया।

पुनरीक्षित पाठ: समिति ने सर्वसम्मति से समस्या का समाधान किया।

Original: “Applications received after the deadline will not be entertained.”

प्रारंभिक अनुवाद: अंतिम तिथि के बाद प्राप्त आवेदन स्वीकार नहीं होंगे।

पुनरीक्षित पाठ: निर्धारित समयसीमा के पश्चात प्राप्त आवेदनों पर कोई विचार नहीं किया जाएगा।

Original: "The project aims to empower rural women."
प्रारंभिक अनुवाद: परियोजना ग्रामीण महिलाओं को सशक्त करने का लक्ष्य रखती है।
पुनरीक्षित पाठ: यह परियोजना ग्रामीण महिलाओं के सशक्तिकरण को लक्ष्य बनाती है।

Original: "The report highlights key challenges."
प्रारंभिक अनुवाद: रिपोर्ट मुख्य चुनौतियों को उजागर करती है।
पुनरीक्षित पाठ: यह रिपोर्ट प्रमुख चुनौतियों पर विशेष प्रकाश डालती है।

Original: "He expressed dissatisfaction with the policy."
प्रारंभिक अनुवाद: उसने नीति से असंतोष व्यक्त किया।
पुनरीक्षित पाठ: उसने नीति के प्रति अपनी असहमति स्पष्ट रूप से प्रकट की।
इन उदाहरणों से स्पष्ट है कि पुनरीक्षक अनुवाद को भाषा और अर्थ- दोनों स्तरों पर परिष्कृत करता है।

2. पुनरीक्षक का प्रशिक्षण

पुनरीक्षण एक अत्यंत प्रशिक्षित, उत्तरदायित्वपूर्ण और विशेषज्ञतापूर्ण कार्य है, जिसे मात्र भाषाज्ञान के आधार पर नहीं किया जा सकता। सामान्यतः यह धारणा बना ली जाती है कि जो व्यक्ति दो भाषाएँ जानता है, वह अनुवाद या पुनरीक्षण कर सकता है; किंतु वास्तव में पुनरीक्षण एक स्वतंत्र और विशिष्ट कौशल है, जिसके लिए गहन अकादमिक और व्यावहारिक प्रशिक्षण आवश्यक होता है। पुनरीक्षक को केवल शब्दों का ज्ञान नहीं, बल्कि भाषा के सूक्ष्म स्तरोंजैसे- अर्थसंकेत, शैली, प्रयोजन और संदर्भकी समझ भी होनी चाहिए।

एक प्रशिक्षित पुनरीक्षक के लिए स्रोत भाषा और लक्ष्य भाषा- दोनों का सम्यक् और तुलनात्मक ज्ञान अनिवार्य होता है। उसे यह पहचानने में सक्षम होना चाहिए कि मूल पाठ का आशय किस स्तर पर व्यक्त हुआ है और लक्ष्य भाषा में उसे किस रूप में अधिक प्रभावी ढंग से संप्रेषित किया जा सकता है। इसके साथ ही विषयज्ञान पुनरीक्षण का एक महत्त्वपूर्ण आधार है, क्योंकि प्रशासनिक, विधिक, वैज्ञानिक या तकनीकी पाठों में प्रयुक्त शब्दावली और अवधारणाएँ सामान्य भाषाप्रयोग से भिन्न होती हैं। विषयगत अज्ञान के कारण पुनरीक्षण में की गई छोटी-सी चूक भी गंभीर अर्थ-भ्रम उत्पन्न कर सकती है।

पुनरीक्षक के लिए सांस्कृतिक समझ भी उतनी ही आवश्यक है। भाषा केवल शब्दों का समूह नहीं, बल्कि संस्कृति, सामाजिक व्यवहार और मूल्यबोध का वाहक होती है। इसलिए पुनरीक्षक को यह निर्णय करना पड़ता है कि किन स्थलों पर सांस्कृतिक अनुकूलन आवश्यक है और किन स्थानों पर मूल सांस्कृतिक संदर्भ को यथावत रखना अधिक उपयुक्त होगा। इसी प्रकार प्रशासनिक और तकनीकी अनुवादों में मानकीकृत शब्दावली, औपचारिक शैली और संरचनात्मक अनुशासन की जानकारी भी पुनरीक्षक के प्रशिक्षण का अनिवार्य हिस्सा होती है।सबसे महत्त्वपूर्ण यह है कि प्रशिक्षित पुनरीक्षक अनुवादक की भूमिका और उद्देश्य का सम्मान करता है। वह त्रुटियों का सुधार करते समय अनुवादक की व्यक्तिगत शैली, भाषिक चयन और पाठकीय लक्ष्य को अनावश्यक रूप से नष्ट नहीं करता, बल्कि उन्हें और अधिक स्पष्ट, सुसंगत तथा प्रभावी बनाने का प्रयास करता है। इस प्रकार पुनरीक्षक और अनुवादक के बीच सहयोगात्मक संबंध स्थापित होता है, जो अंततः एक श्रेष्ठ और विश्वसनीय अनुवाद के निर्माण में सहायक सिद्ध होता है।
उदाहरण (प्रशिक्षण)
Original: "Ground realities must be considered."
अप्रशिक्षित अनुवाद: भूमि की वास्तविकताओं पर विचार किया जाना चाहिए।
प्रशिक्षित पुनरीक्षण: वास्तविक परिस्थितियों को ध्यान में रखा जाना चाहिए।

Original: "Resource person will address the session."
अप्रशिक्षित अनुवाद: संसाधन व्यक्ति सत्र को संबोधित करेगा।
प्रशिक्षित पुनरीक्षण: विषयविशेषज्ञ इस सत्र को संबोधित करेंगे।

Original: "Centre of Advanced Studies"
अप्रशिक्षित अनुवाद: उन्नत अध्ययन का केंद्र
प्रशिक्षित पुनरीक्षण: उच्च अध्ययन केंद्र

Original: "Processing and monitoring of supplies"
अप्रशिक्षित अनुवाद: आपूर्ति का प्रसंस्करण और निगरानी
प्रशिक्षित पुनरीक्षण: आपूर्ति से संबंधित प्रक्रिया एवं निगरानी

Original: "Court attachment orders"
अप्रशिक्षित अनुवाद: न्यायालय कुर्की आदेश
प्रशिक्षित पुनरीक्षण: न्यायालय द्वारा जारी कुर्की आदेश

ये उदाहरण दिखाते हैं कि प्रशिक्षण के बिना पुनरीक्षण केवल शब्द-संशोधन बनकर रह जाता है, जबकि प्रशिक्षित पुनरीक्षण अर्थ-संशोधन भी करता है।

3. पुनरीक्षण की उपयोगिता

पुनरीक्षण की उपयोगिता अनुवाद प्रक्रिया में अत्यंत व्यापक और बहुआयामी है। यह अनुवाद को केवल भाषिक त्रुटियों से मुक्त करने तक सीमित नहीं रहती, बल्कि उसे संदर्भसंवेदी, पाठककेन्द्रित और प्रभावी संप्रेषण का माध्यम बनाती है। प्रारंभिक अनुवाद प्रायः मूल पाठ की संरचना, शब्दावली और अर्थ को स्थानांतरित करने पर केंद्रित होता है, किंतु पुनरीक्षण उस अनुवाद को व्यावहारिक, स्वीकार्य और प्रयोजनपरक रूप प्रदान करता है। पुनरीक्षण के माध्यम से यह सुनिश्चित किया जाता है कि अनूदित पाठ लक्ष्य भाषा की सामाजिक-सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, पाठकीय अपेक्षाओं और संप्रेषणीय उद्देश्यों के अनुरूप हो। यह प्रक्रिया अनुवाद को यांत्रिकता से मुक्त कर उसे सहज, प्रवाहपूर्ण और विश्वसनीय बनाती है। इसी कारण पुनरीक्षण को अनुवाद प्रक्रिया का अंतिम नहीं, बल्कि निर्णायक चरण माना जाता है। प्रशासनिक अनुवादों में पुनरीक्षण की उपयोगिता विशेष रूप से स्पष्ट होती है। सरकारी आदेशों, अधिसूचनाओं, परिपत्रों और नीतिसंबंधी दस्तावेजों में भाषा की स्पष्टता और एकार्थता अनिवार्य होती है। किसी शब्द या वाक्य की अस्पष्टता न केवल भ्रम उत्पन्न कर सकती है, बल्कि प्रशासनिक अव्यवस्था और गलत क्रियान्वयन का कारण भी बन सकती है। पुनरीक्षण ऐसे अनुवादों में भाषा को संक्षिप्त, स्पष्ट और औपचारिक बनाए रखने में सहायक होता है। विधिक अनुवादों में पुनरीक्षण की भूमिका और भी अधिक संवेदनशील हो जाती है। कानून, अनुबंध, न्यायालयीन निर्णय और संवैधानिक दस्तावेजों में प्रयुक्त प्रत्येक शब्द विधिक अर्थ से जुड़ा होता है। यहाँ किसी भी प्रकार की भाषिक या अर्थगत त्रुटि गंभीर कानूनी विवाद या न्यायिक भ्रम को जन्म दे सकती है। पुनरीक्षण इस प्रकार के अनुवादों में सटीक शब्दावली, मानक वाक्यरचना और विधिक शैली की निरंतरता सुनिश्चित करता है। वैज्ञानिक और तकनीकी अनुवादों में पुनरीक्षण का महत्व तथ्यात्मक शुद्धता और तकनीकी स्पष्टता से जुड़ा होता है। वैज्ञानिक शब्दावली, प्रक्रियाओं और निर्देशों में थोड़ी-सी चूक भी प्रयोगात्मक त्रुटि, उपकरण-हानि या मानवीय जोखिम का कारण बन सकती है। पुनरीक्षण इन अनुवादों में यह सुनिश्चित करता है कि तकनीकी शब्दों का प्रयोग मानक रूप में हुआ है और सूचना बिना किसी भ्रम के संप्रेषित हो रही है।

साहित्यिक अनुवाद में पुनरीक्षण अपेक्षाकृत अधिक लचीला और सृजनात्मक होता है, किंतु इसका महत्व किसी भी प्रकार से कम नहीं होता। साहित्यिक रचनाओं में केवल अर्थ का स्थानांतरण पर्याप्त नहीं होता, बल्कि भाव, लय, सौंदर्य और शैली का संरक्षण भी आवश्यक होता है। पुनरीक्षण के माध्यम से अनुवादक यह जाँचता है कि भाषा का प्रवाह बाधित तो नहीं हो रहा, भावों की तीव्रता बनी हुई है या नहीं, तथा शैली मूल रचना की आत्मा के अनुरूप है या नहीं।

उदाहरण-

Original: "No admission will be granted without documents."

प्रारंभिक अनुवाद: बिना दस्तावेज के प्रवेश नहीं दिया जाएगा।

पुनरीक्षित पाठ: आवश्यक दस्तावेजों के अभाव में प्रवेश प्रदान नहीं किया जाएगा।

Original: "Early compliance is requested."

प्रारंभिक अनुवाद: शीघ्र अनुपालन का अनुरोध है।

पुनरीक्षित पाठ: कृपया निर्देशों का शीघ्र पालन सुनिश्चित करें।

Original: "Juvenile justice deals with young offenders."

प्रारंभिक अनुवाद: किशोर न्याय युवा अपराधियों से संबंधित है।

पुनरीक्षित पाठ: किशोर न्याय प्रणाली उन व्यक्तियों से संबंधित है जो अल्पायु होने के कारण पूर्ण आपराधिक उत्तरदायित्व के अंतर्गत नहीं आते।

Original: "Member of the service is expected to learn languages."

प्रारंभिक अनुवाद: सेवा सदस्य से भाषाएँ सीखने की अपेक्षा की जाती है।

पुनरीक्षित पाठ: सेवा से जुड़े अधिकारी से अपेक्षा की जाती है कि वह अन्य भाषाओं का ज्ञान अर्जित करे, जिससे उसके कार्य में बाधा न आए।

Original: "The explanation is not satisfactory."

प्रारंभिक अनुवाद: स्पष्टीकरण संतोषजनक नहीं है।

पुनरीक्षित पाठ: प्रस्तुत स्पष्टीकरण अपेक्षित मानकों पर खरा नहीं उतरता।

अपनी प्रगति जांचें-

प्रश्न 1: अनुवाद में पुनरीक्षण से क्या अभिप्राय है?

प्रश्न 2: भाषिक, अर्थगत और शैलीगत परिष्कार का अनुवाद में क्या महत्व है?

प्रश्न 3: अनुवाद मूल्यांकन की अवधारणा को संक्षेप में स्पष्ट कीजिए।

10.6 अनुवाद मूल्यांकन: सिद्धांत, तकनीक और अनुप्रयोग

अनुवाद मूल्यांकन अनुवाद अध्ययन की एक महत्त्वपूर्ण अनुवादोत्तर प्रक्रिया है, जिसके माध्यम से अनूदित पाठ की गुणवत्ता, उपयुक्तता और प्रभावशीलता का परीक्षण किया जाता है। इसका उद्देश्य यह निर्धारित करना होता है कि अनुवाद मूल पाठ के अर्थ, उद्देश्य, संदेश और संप्रेषणीयता को किस सीमा तक सुरक्षित रख सका है। यद्यपि पुनरीक्षण और

मूल्यांकन दोनों ही अनुवाद के बाद की प्रक्रियाएँ हैं, फिर भी दोनों में स्पष्ट अंतर है- पुनरीक्षण में जाँच के साथ-साथ सुधार और संशोधन किया जाता है, जबकि मूल्यांकन में मुख्यतः जाँच, विश्लेषण और निष्कर्ष प्रस्तुत किए जाते हैं। अंग्रेजी में इसे Translation Quality Assessment तथा Translation Evaluation कहा जाता है। अनुवाद मूल्यांकन के सिद्धांतों में अर्थ-समानता, प्रासंगिकता, भाषिक स्वाभाविकता, संप्रेषणीयता, शैलीसंतुलन और सांस्कृतिक अनुकूलता प्रमुख हैं। मूल्यांकन में यह देखा जाता है कि अनुवाद लक्ष्य पाठकों, संदर्भ और उद्देश्य के अनुरूप है या नहीं। उदाहरणतः प्रशासनिक सूचना का अत्यधिक साहित्यिक अनुवाद या साहित्यिक रचना का अत्यधिक तकनीकी अनुवाद- दोनों ही मूल्यांकन की दृष्टि से अनुपयुक्त माने जाते हैं, भले ही उनका शब्दार्थ सही क्यों न हो।

अनुवाद मूल्यांकन की तकनीकें व्यावहारिक स्तर पर अनुवाद की जाँच को संभव बनाती हैं। इनमें तुलनात्मक तकनीक, पाठकीय अनुक्रिया तकनीक और प्रयोजनआधारित तकनीक प्रमुख हैं। तुलनात्मक तकनीक में मूल पाठ और अनुवाद को साथ रखकर अर्थ-भ्रंश, अनावश्यक जोड़-घटाव तथा संरचनात्मक विकृति की जाँच की जाती है, जबकि पाठकीय अनुक्रिया तकनीक में यह देखा जाता है कि अनुवाद पाठक पर वही प्रभाव उत्पन्न कर रहा है या नहीं, जो मूल पाठ करता है। उदाहरण के रूप में अंग्रेजी वाक्य "Early compliance will be appreciated" का अनुवाद यदि "शीघ्रअनुपालनकीसराहनाहोगी"कियाजाए, तो औपचारिक संदर्भ में उसे कमजोर माना जाएगा; इसके स्थान पर "निर्देशोंकाशीघ्रपालनअपेक्षितहै"अधिकउपयुक्तहै। इसीप्रकारविधिकपाठोंमें "shall" का अनुवाद "होगा"केबजाय "अनिवार्यहोगा"या "कियाजाएगा" अधिकमान्यमानाजाताहै। अनुवादमूल्यांकनकेअनुप्रयोगप्रशासनिक, विधिक, तकनीकी, वैज्ञानिक, शैक्षणिक और साहित्यिक सभी क्षेत्रों में पाए जाते हैं। सार्वजनिक सूचनाओं और सरकारी दस्तावेजों में जहाँ स्पष्टता और त्वरित बोध प्रधान होता है, वहीं साहित्यिक अनुवाद में भावभूमि, शैली और संवेदनात्मक प्रभाव की रक्षा पर बल दिया जाता है। इस प्रकार अनुवाद मूल्यांकन एक संतुलित, विश्लेषणात्मक और उद्देश्यपरक प्रक्रिया है, जो सिद्धांतों, तकनीकों और अनुप्रयोगों के माध्यम से अनुवाद की गुणवत्ता और उपयोगिता को सुनिश्चित करती है।

महत्वपूर्ण बिंदु

अनुवाद अध्ययन में मूल्यांकन, पुनरीक्षण और समीक्षा जैसी प्रक्रियाओं के माध्यम से अनूदित पाठ की गुणवत्ता, संप्रेषणीयता और प्रयोजन सिद्धि का परीक्षण किया जाता-है, जिससे अनुवाद को केवल अभ्यास नहीं बल्कि विश्लेषणात्मक अध्ययन के रूप में समझा जाता है।

10.7 अनुवाद मूल्यांकन: पुनःअनुवाद एवं अनुक्रिया

10.7.1 अनुवाद मूल्यांकन की अवधारणा एवं पुनःअनुवाद की सैद्धांतिक पृष्ठभूमि

अनुवाद मूल्यांकन अनुवादअध्ययन का वह पक्ष है, जिसके माध्यम से यह जाँचा जाता है कि अनूदित पाठ मूल पाठ के अर्थ, उद्देश्य, संरचना और प्रभाव को किस सीमा तक वहन कर सका है। अनुवाद प्रक्रिया के पूर्ण होने के बाद जब अनूदित पाठ को पाठक, समीक्षक या संस्थागत निकाय के समक्ष प्रस्तुत किया जाता है, तब उसकी गुणवत्ता सुनिश्चित करने के लिए मूल्यांकन की आवश्यकता पड़ती है। यह प्रक्रिया केवल त्रुटि-खोज तक सीमित नहीं रहती, बल्कि अनुवाद की संप्रेषणीयता, स्वाभाविकता, सटीकता और उपयोगिता का समग्र परीक्षण करती है। इसी मूल्यांकनप्रक्रिया के अंतर्गत पुनःअनुवाद (Re-translation) को एक महत्वपूर्ण पद्धति के रूप में अपनाया गया है।

पुनःअनुवाद आधारित मूल्यांकन का मूल विचार यह है कि यदि किसी अनूदित पाठ को पुनः स्रोतभाषा में अनूदित किया जाए, तो उससे यह पता लगाया जा सकता है कि मूल पाठ का आशय, सूचना और भाव कितनी स्पष्टता के साथ लक्ष्यभाषा में पहुँचा है। इस पद्धति में मूल पाठ →अनुवाद→पुनः अनुवाद की एकश्रृंखलाबनतीहै। इसकेबादमूलपाठऔरपुनः अनुवादितपाठकीतुलनाकीजातीहै। यदिदोनोंकेबीच अर्थसाम्यपर्याप्तमात्रामेंपायाजाताहै, तो यह माना जाता है कि अनुवाद अपेक्षाकृत सफल है। इस दृष्टि से पुनःअनुवाद, अनुवाद की "परीक्षा" काएकव्यावहारिकउपकरणबनजाताहै। सैद्धांतिक रूप से पुनःअनुवाद की अवधारणा भाषा को एक संप्रेषणात्मक माध्यम मानकर चलती है, जहाँ प्राथमिक लक्ष्य अर्थ का वहन है, न कि केवल शब्दों का। यदि अनूदित पाठ से पुनःअनुवाद करते समय मूल संदेश पुनः उभर कर सामने आ जाता है, तो यह संकेत होता है कि अनुवाद में अर्थ-हानि न्यूनतम रही है। उदाहरण के लिए, यदि अंग्रेजी वाक्य "Visitors must carry identity proof at all times." का हिंदी अनुवाद किया जाए-"आगंतुकोंकोहरसमयपहचान-पत्रअपनेसाथरखनाअनिवार्यहै।"-औरफिरइसका पुनःअनुवाद किया जाए — "Visitors are required to keep an identity document with them at all times." -तो स्पष्ट है कि मूल अर्थ सुरक्षित रहा है। ऐसे मामलों में पुनःअनुवाद आधारित मूल्यांकन अनुवाद की सटीकता को प्रमाणित करता है।किन्तु यह पद्धति केवल सूचनाप्रधान या प्रशासनिक पाठों तक सीमित रूप से प्रभावी मानी जाती है। जहाँ भाषा भावात्मक, सांस्कृतिक या संदर्भआधारित हो जाती है, वहाँ पुनःअनुवाद की सीमाएँ स्पष्ट होने लगती हैं। उदाहरण के लिए, यदि हिंदी में कहा जाए -"अबपानीसिरसेऊपर जा चुका है"-औरइसकाअंग्रेजीअनुवादकियाजाए-"The situation has crossed the limit of tolerance." -तो पुनःअनुवाद करने पर वाक्य बन सकता है -"हालातसहनशीलताकीसीमापारकरचुकेहैं।" यहाँमूलवाक्यकेप्रतीकात्मकभावकाशब्दशःपुनरागमननहींहोता, फिर भी आशय सुरक्षित रहता है। ऐसी स्थिति में यदि पुनःअनुवाद को कठोर मानक मान लिया जाए, तो यह अनुवाद को गलत ठहरा सकता है, जबकि वास्तव में अनुवाद संप्रेषणीय है।

इससे यह स्पष्ट होता है कि पुनःअनुवाद आधारित मूल्यांकन मुख्यतः अर्थ-प्रधान दृष्टि से उपयोगी है, न कि शैली या सांस्कृतिक प्रभाव के पूर्ण परीक्षण के लिए। साहित्यिक अनुवाद में तो यह पद्धति और भी अधिक जटिल हो जाती है। उदाहरण के लिए, किसी कविता की पंक्ति -"रातकीखामोशीभीबोलनेलगी"-कायदिअंग्रेजीअनुवादकियाजाए-"Even the silence of the night seemed to speak." -तो पुनःअनुवाद करने पर संभव है -"रातकीचुप्पीबोलतीहुईप्रतीतहुई।" यहाँमूलऔरपुनः अनुवादमेंभावात्मकसाम्यहै, पर शब्दस्तर पर समानता नहीं। यदि मूल्यांकन केवल पुनःअनुवाद की समानता पर आधारित हो, तो यह साहित्यिक अनुवाद की सृजनात्मकता को सीमित कर देगा।इसी कारण विद्वानों ने यह स्वीकार किया है कि पुनःअनुवाद को एक सहायक मूल्यांकन उपकरण के रूप में देखा जाना चाहिए, न कि एकमात्र निर्णायक मानक के रूप में। यह पद्धति यह जाँचने में सहायक है कि अनुवाद में कहीं गंभीर अर्थ-भ्रंश तो नहीं हुआ, लेकिन यह यह निर्धारित नहीं कर सकती कि अनुवाद शैलीगत रूप से कितना सफल है या सांस्कृतिक दृष्टि से कितना प्रभावी है। इस पद्धति की सबसे बड़ी विशेषता इसकी वस्तुनिष्ठता है, क्योंकि इसमें मूल और पुनःअनुवादित पाठ की तुलना अपेक्षाकृत प्रत्यक्ष होती है।

7.1.2 पुनःअनुवाद आधारित मूल्यांकन: प्रक्रिया, उपयोगिता और सीमाएँ

पुनःअनुवाद आधारित मूल्यांकन अनुवाद मूल्यांकन की उन पद्धतियों में से है, जो अनुवाद की गुणवत्ता को परखने के लिए अपेक्षाकृत प्रत्यक्ष और व्यावहारिक उपाय प्रस्तुत करती है। इस पद्धति का मूल आधार यह मान्यता है कि यदि किसी अनूदित पाठ को पुनः स्रोतभाषा में अनूदित करने पर उसका अर्थ मूल पाठ के निकट पहुँच जाता है, तो अनुवाद को सफल माना जा सकता है। इस प्रक्रिया में तीन चरण स्पष्ट रूप से देखे जा सकते हैं- पहला, मूल पाठ; दूसरा, लक्ष्यभाषा में

अनुवाद; और तीसरा, उस अनुवाद का पुनः स्रोतभाषा में रूपांतरण। मूल्यांकन का वास्तविक कार्य तीसरे चरण में आरंभ होता है, जहाँ मूल पाठ और पुनःअनुवादित पाठ के बीच अर्थ, सूचना और भाव की तुलना की जाती है।

इस पद्धति की प्रक्रिया सामान्यतः इस प्रकार होती है कि पुनःअनुवाद करने वाला व्यक्ति मूल पाठ को नहीं देखता, बल्कि केवल अनूदित पाठ के आधार पर पुनःअनुवाद करता है। इससे यह स्पष्ट होता है कि अनूदित पाठ अपने आप में कितना संप्रेषणीय है। उदाहरण के लिए, यदि अंग्रेजी में मूल वाक्य है-

"Employees are advised to submit their reports before the deadline."

इसका हिंदी अनुवाद किया गया-

"कर्मचारियों को समय-सीमा से पूर्व अपनी रिपोर्ट जमा करने की सलाह दी जाती है।"

अब यदि इस हिंदी वाक्य का पुनःअनुवाद किया जाए-

"Employees are advised to submit their reports prior to the given time limit."

तो यह देखा जा सकता है कि मूल आशय सुरक्षित है। यहाँ शब्द बदल सकते हैं, लेकिन सूचना और निर्देश का स्वरूप समान बना रहता है। इस स्थिति में पुनःअनुवाद आधारित मूल्यांकन अनुवाद को अर्थ की दृष्टि से संतोषजनक ठहराता है।

पुनःअनुवाद पद्धति विशेष रूप से उन पाठों के लिए उपयोगी मानी जाती है, जिनका उद्देश्य स्पष्ट सूचना देना होता है। प्रशासनिक आदेश, नियमावली, तकनीकी निर्देश, सूचनापट, सार्वजनिक घोषणाएँ आदि इस श्रेणी में आते हैं। उदाहरण के लिए, यदि किसी रेलवे सूचना का अनुवाद किया जाए-

"Passengers are requested not to cross the tracks." ⟶

"यात्रियों से अनुरोध है कि वे रेलपटरियाँ पार न करें।"

और इसका पुनःअनुवाद हो-

"Passengers are requested not to cross railway tracks."

तो यह स्पष्ट करता है कि अनुवाद में कोई गंभीर अर्थ-भ्रंश नहीं हुआ। ऐसे मामलों में पुनःअनुवाद मूल्यांकन शीघ्र और प्रभावी परिणाम देता है।

किन्तु इस पद्धति की सीमाएँ भी उतनी ही महत्वपूर्ण हैं। जैसे-जैसे भाषा प्रतीकात्मक, सांस्कृतिक या भावनात्मक होती जाती है, पुनःअनुवाद आधारित मूल्यांकन अपनी वस्तुनिष्ठता खोने लगता है। उदाहरण के लिए, हिंदी में कहा जाए-

"उसकी बातों में मिठास नहीं रही।"

यदि इसका अंग्रेजी अनुवाद किया जाए-

"There was no warmth left in his words."

और पुनःअनुवाद किया जाए-

"उसके शब्दों में अब अपनापन नहीं था।"

तो मूल और पुनःअनुवादित वाक्य शब्दशः समान नहीं हैं, परंतु भावात्मक अर्थ काफी हद तक सुरक्षित है। यदि पुनःअनुवाद को कठोर मानक माना जाए, तो इसे असफल अनुवाद कहा जा सकता है, जबकि वास्तव में अनुवाद संप्रेषणीय है।

साहित्यिक पाठों के संदर्भ में यह समस्या और भी गहरी हो जाती है। साहित्य में भाषा केवल सूचना का माध्यम नहीं होती, बल्कि संवेदना, सौंदर्य और सांस्कृतिक संकेतों का वाहक होती है। उदाहरण के लिए, किसी कहानी में प्रयुक्त वाक्य-

"वह चुप रहा, लेकिन उसकी चुप्पी सब कुछ कह गई।"

का यदि अंग्रेजी अनुवाद हो-

"He remained silent, yet his silence conveyed everything."

और पुनःअनुवाद हो-

"वह मौन रहा, पर उसका मौन बहुत कुछ प्रकट कर गया।"

तो यहाँ मूल अर्थ के स्तर पर साम्य है, परंतु शब्द-संरचना और भाव की बारीकियाँ पूरी तरह नहीं लौटतीं। पुनःअनुवाद पद्धति इस अंतर को त्रुटि मान सकती है, जबकि साहित्यिक अनुवाद में यह स्वाभाविक है।

एक और सीमा यह है कि पुनःअनुवाद में अनुवादक की व्यक्तिगत भाषिक दक्षता और सांस्कृतिक समझ का भी प्रभाव पड़ता है। यदि पुनःअनुवाद करने वाला व्यक्ति स्रोतभाषा या लक्ष्यभाषा में पूरी तरह दक्ष नहीं है, तो मूल्यांकन का परिणाम भ्रामक हो सकता है। उदाहरण के लिए, यदि "administrative clearance" जैसे शब्द का पुनःअनुवाद केवल "प्रशासनिकअनुमति"केस्थानपर"सरकारीसहमति"करदियाजाए, तो यह अर्थ में हल्का-सा परिवर्तन ला सकता है, जो मूल्यांकन को प्रभावित करेगा।

इसी कारण आधुनिक अनुवाद अध्ययन में यह स्वीकार किया गया है कि पुनःअनुवाद आधारित मूल्यांकन को अकेले प्रयोग नहीं किया जाना चाहिए। इसे अन्य पद्धतियोंविशेषतः अनुक्रिया आधारित मूल्यांकनके साथ जोड़कर देखने पर ही अनुवाद की गुणवत्ता का संतुलित आकलन संभव हो पाता है। पुनःअनुवाद यह बताता है कि अनुवाद ने क्या कहा, जबकि अनुक्रिया यह बताती है कि अनुवाद ने पाठक पर क्या प्रभाव डाला।

7.1.3 अनुक्रिया आधारित मूल्यांकन: अवधारणा, प्रक्रिया और व्यावहारिक उदाहरण

अनुक्रिया आधारित मूल्यांकन अनुवाद मूल्यांकन की वह पद्धति है, जिसमें अनुक्रिया आधारित मूल्यांकन अनुवाद मूल्यांकन की वह पद्धति है, जिसमें अनूदित पाठ की गुणवत्ता को पाठक की प्रतिक्रिया के माध्यम से परखा जाता है। इस पद्धति का मूल आधार यह मान्यता है कि अनुवाद का अंतिम उद्देश्य पाठक तक संदेश पहुँचाना है; इसलिए यदि अनुवाद पाठक पर वही प्रभाव उत्पन्न करता है, जो मूल पाठ अपने मूल पाठकों पर डालता है, तो अनुवाद को सफल माना जाना चाहिए। इस दृष्टि से अनुक्रिया आधारित मूल्यांकन अनुवाद को केवल भाषिक संरचना के स्तर पर नहीं, बल्कि उसके प्रभाव, अनुभूति और संप्रेषणीयता के स्तर पर जाँचता है।

इस पद्धति में यह मान लिया जाता है कि भाषा केवल शब्दों का संयोजन नहीं, बल्कि सामाजिक, सांस्कृतिक और मानसिक अनुभवों का माध्यम है। इसलिए किसी अनुवाद की सफलता का निर्णय यह देखकर किया जाता है कि पाठक उसे कितना सहजता से समझ पाता है, उससे कितनी भावनात्मक या बौद्धिक प्रतिक्रिया उत्पन्न होती है, और क्या वह पाठक को उसी प्रकार प्रभावित करता है, जैसा मूल पाठ करता है। उदाहरण के लिए, यदि किसी प्रेरणात्मक भाषण का अनुवाद इस प्रकार किया गया हो कि लक्ष्यभाषा का पाठक भी उत्साह, प्रेरणा और आत्मविश्वास का अनुभव करे, तो अनुक्रिया आधारित मूल्यांकन की दृष्टि से वह अनुवाद सफल माना जाएगा, भले ही शब्दशः समानता पूर्ण न हो।

अनुक्रिया आधारित मूल्यांकन की प्रक्रिया सामान्यतः पाठकों की प्रतिक्रिया पर आधारित होती है। इसके लिए अनूदित पाठ को पाठकों के सामने रखा जाता है और उनसे यह जानने का प्रयास किया जाता है कि वे पाठ को कैसे समझते हैं, क्या उन्हें कोई भ्रम होता है, कौनसे अंश प्रभावशाली लगते हैं और कौन-से अस्पष्ट। उदाहरण के लिए, यदि अंग्रेज़ी में कोई सूचनापत्र लिखा गया हो—

"Please ensure that all safety protocols are followed during operation."

और उसका हिंदी अनुवाद किया जाए—

"कृपया संचालन के दौरान सभी सुरक्षा निर्देशों का पालन सुनिश्चित करें।"

यदि हिंदी पाठक इसे पढ़कर तुरंत यह समझ ले कि उसे क्या करना है और उसमें कोई भ्रम उत्पन्न न हो, तो पाठकीय अनुक्रिया के आधार पर यह अनुवाद सफल माना जाएगा।

इस पद्धति का महत्व साहित्यिक अनुवाद में विशेष रूप से बढ़ जाता है। साहित्य में अनुवाद का उद्देश्य केवल सूचना देना नहीं होता, बल्कि पाठक के मन में संवेदना, करुणा, हास्य या तनाव उत्पन्न करना भी होता है। उदाहरण के लिए, किसी कहानी में प्रयुक्त वाक्य—

"उसने पत्र पढ़ते ही आँखें झुका लीं।"

यदि अंग्रेजी में अनुवाद किया जाए—

"She lowered her eyes as soon as she read the letter."

और अंग्रेजी पाठक इस वाक्य से संकोच, पीड़ा या भावनात्मक दबाव का अनुभव करता है, तो अनुक्रिया आधारित मूल्यांकन इसे सफल अनुवाद मानेगा। यहाँ यह महत्वपूर्ण नहीं है कि शब्द मूल के कितने निकट हैं, बल्कि यह महत्वपूर्ण है कि पाठक पर वही प्रभाव पड़ा या नहीं।

अनुक्रिया आधारित मूल्यांकन की एक प्रमुख विशेषता यह है कि यह भाषा की स्वाभाविकता और पठनीयता को प्राथमिकता देता है। यदि अनुवाद भाषा के स्तर पर बोझिल, कृत्रिम या अस्वाभाविक है, तो पाठक की प्रतिक्रिया नकारात्मक होगी। उदाहरण के लिए, यदि किसी संवादात्मक वाक्य का अनुवाद अत्यधिक संस्कृतनिष्ठ या तकनीकी भाषा में कर दिया जाए, तो पाठक उसे पढ़ते समय दूरी महसूस करेगा। जैसे-

"Sit down and relax."

का अनुवाद यदि किया जाए—

"कृपया उपवेशन कर शिथिलता का अनुभव करें।"

तो पाठकीय अनुक्रिया संभवतः नकारात्मक होगी। जबकि यदि अनुवाद हो—

"बैठिए और थोड़ा आराम कीजिए।"

तो पाठक इसे अधिक सहज रूप में स्वीकार करेगा। इस प्रकार अनुक्रिया आधारित मूल्यांकन अनुवाद की स्वाभाविकता को सामने लाता है।

हालाँकि इस पद्धति की कुछ सीमाएँ भी हैं। सबसे बड़ी सीमा यह है कि पाठक की प्रतिक्रिया व्यक्तिपरक होती है। अलग-अलग पाठकों की शैक्षिक पृष्ठभूमि, सांस्कृतिक अनुभव और भाषिक दक्षता अलग होती है, जिससे उनकी प्रतिक्रिया भी भिन्न हो सकती है। उदाहरण के लिए, किसी दार्शनिक पाठ का अनुवाद सामान्य पाठक के लिए कठिन लग सकता है, जबकि उसी अनुवाद को विषय-विशेषज्ञ पाठक उपयुक्त मान सकता है। ऐसी स्थिति में अनुक्रिया आधारित मूल्यांकन एकसमान निष्कर्ष नहीं दे पाता।

इसीलिए आधुनिक अनुवाद अध्ययन में यह स्वीकार किया गया है कि अनुक्रिया आधारित मूल्यांकन और पुनःअनुवाद आधारित मूल्यांकन एक-दूसरे के पूरक हैं। पुनःअनुवाद यह जाँचता है कि अर्थ सुरक्षित है या नहीं, जबकि अनुक्रिया यह जाँचती है कि अनुवाद प्रभावी है या नहीं। दोनों को मिलाकर ही अनुवाद की गुणवत्ता का संतुलित मूल्यांकन संभव हो पाता है।

10.8 अनुवाद मूल्यांकन के प्रमुख परीक्षण एवं मुख्य आयाम

अनुवाद मूल्यांकन की प्रक्रिया को प्रभावी और वस्तुनिष्ठ बनाने के लिए विभिन्न प्रकार के परीक्षण विकसित किए गए हैं। इन परीक्षणों का उद्देश्य केवल यह देखना नहीं होता कि अनुवाद "ठीक"हैया"गलत", बल्कि यह समझना होता है कि अनूदित पाठ किस सीमा तक मूल पाठ के अर्थ, उद्देश्य, संरचना और प्रभाव को वहन कर पा रहा है। इसी क्रम में सघन परीक्षण से लेकर मूलपाठ आधारित मूल्यांकन तक अनेक परीक्षण पद्धतियाँ अपनाई जाती हैं, जो अनुवाद के भिन्न-भिन्न पक्षों को उजागर करती हैं।

(1) सघन परीक्षण

सघन परीक्षण अनुवाद मूल्यांकन की एक व्यावहारिक और प्रयोगात्मक पद्धति है। इस परीक्षण में अनूदित पाठ के कुछ शब्दों, पदबंधों या वाक्यांशों को नियत क्रम से हटा दिया जाता है और पाठक से अपेक्षा की जाती है कि वह रिक्त स्थानों की पूर्ति स्वयं करे। यदि पाठक संदर्भ के आधार पर सही या समीपवर्ती शब्द भर पाने में सक्षम होता है, तो यह माना जाता है कि अनुवाद बोधगम्य और स्वाभाविक है।

उदाहरण

अनूदित वाक्य—

"सरकारीनिर्देशोंकापालनकरनाप्रत्येकनागरिकका____ है।"

इस वाक्य में अधिकांश पाठकों द्वारा "कर्तव्य"शब्दभराजानाइसबातकासंकेतहैकिअनुवादस्पष्ट, सहज और बोधगम्य है। इसके विपरीत, पाठकों का भ्रमित होना या भिन्न-भिन्न असंगत शब्दों का प्रयोग करना अनुवाद की दुर्बोधता और अस्पष्टता को दर्शाता है।

सघन परीक्षण की एक प्रमुख सीमा यह है कि इसके माध्यम से अनुवाद की शैलीगत गुणवत्ता, सांस्कृतिक निहितार्थ तथा भावात्मक प्रभाव का समग्र मूल्यांकन संभव नहीं हो पाता। यह परीक्षण मुख्यतः पाठक की बोधगम्यता और अर्थ-ग्रहण की क्षमता तक ही सीमित रहता है।

(2) वाचन परीक्षण

वाचन परीक्षण के अंतर्गत अनूदित पाठ को एक या अधिक पाठकों से पढ़वाया जाता है और उनके पठन-अनुभव का निरीक्षण किया जाता है। इसमें यह देखा जाता है कि पाठ पढ़ते समय पाठक कहाँ रुकता है, कहाँ अटकता है, और किन वाक्यों को दोबारा पढ़ने की आवश्यकता महसूस करता है। इस प्रक्रिया से अनुवाद की प्रवाहशीलता और पठनीयता का पता चलता है।

उदाहरण

किसी तकनीकी निर्देश के अनुवाद को पढ़ते समय पाठक का बार-बार रुकना इस तथ्य का संकेत देता है कि वाक्य संरचना जटिल या अस्पष्ट है। इसके विपरीत, साहित्यिक अनुवाद का पाठक द्वारा बिना किसी बाधा के सहजता से पठन किया जाना वाचन परीक्षण की दृष्टि से उसकी सफलता को दर्शाता है।

वाचन परीक्षण का महत्व विशेष रूप से सार्वजनिक सूचना, पाठ्यपुस्तकों तथा प्रशिक्षण सामग्री के अनुवाद में अधिक स्पष्ट रूप से उभरता है, क्योंकि ऐसे पाठों में भाषा की सरलता, प्रवाह और पाठकसुलभता अनिवार्य मानी जाती है।

(3) बोधन परीक्षण

बोधन परीक्षण अनुवाद मूल्यांकन की एक महत्वपूर्ण पद्धति है, जिसमें अनूदित पाठ के आधार पर प्रश्न तैयार किए जाते हैं। इन प्रश्नों के माध्यम से यह जाँचा जाता है कि पाठक ने पाठ का अर्थ, निहित संदेश और संदर्भ कितना समझा है।

उदाहरण

किसी सामाजिक लेख के अनुवाद के पश्चात् पाठक द्वारा लेख के मुख्य उद्देश्य और लेखक के दृष्टिकोण को स्पष्ट रूप से व्यक्त कर पाना इस बात का संकेत माना जाएगा कि अनुवाद बोधन की दृष्टि से सफल है।

इस परीक्षण की विशेषता यह है कि यह केवल शब्दार्थ तक सीमित न रहकर पाठ में निहित विचारों, सांस्कृतिक संकेतों तथा भावार्थ की समझ को भी परखता है। तथापि, इसकी एक सीमा यह है कि पाठक की व्यक्तिगत समझ, अनुभव और बौद्धिक स्तर परीक्षण के परिणामों को प्रभावित कर सकते हैं।

(4) तुलनात्मक परीक्षण

तुलनात्मक परीक्षण में अनूदित पाठ की तुलना किसी अन्य अनुवाद या आदर्श अनुवाद से की जाती है। इसमें यह देखा जाता है कि कौन-सा अनुवाद अधिक स्पष्ट, प्रभावी और उद्देश्यसंगत है।

उदाहरण

यदि किसी सरकारी सूचना के दो अनुवाद उपलब्ध हों- एक अत्यधिक शब्दशः और दूसरा अपेक्षाकृत स्वाभाविकतो तुलनात्मक परीक्षण यह स्पष्ट कर देता है कि कौन-सा अनुवाद आम जनता के लिए अधिक उपयुक्त है।

यह परीक्षण पूरी तरह वस्तुनिष्ठ नहीं होता, क्योंकि "उत्तम अनुवाद" कीधारणाकईबारमूल्यांकनकर्ताकी भाषासंवेदनशीलता और अनुभवपरनिर्भरकरतीहै।

(5) मूलपाठ आधारित मूल्यांकन

मूलपाठ आधारित मूल्यांकन अनुवाद मूल्यांकन की एक गहन और विश्लेषणात्मक पद्धति है। इसमें अनुवाद को सीधे मूल पाठ के संदर्भ में जाँचा जाता है। यह देखा जाता है कि अनुवाद में अर्थ, संदर्भ, संरचना और शैली किस सीमा तक सुरक्षित रही है।

उदाहरण-

मूल पाठ में व्यंग्य का प्रयोग है और अनुवाद में वह व्यंग्य तटस्थ कथन में बदल गया है, तो मूलपाठ आधारित मूल्यांकन इसे अर्थ-हानि मानेगा।

इस पद्धति की विशेषता यह है कि यह अनुवाद की सूक्ष्म त्रुटियों को भी उजागर कर देती है, जैसे- अनावश्यक जोड़, अर्थ-विकृति या सांस्कृतिक विसंगति। परंतु इसकी सीमा यह है कि यह लक्ष्यभाषा पाठक की प्रतिक्रिया को गौण मान लेती है।

समग्र दृष्टि

इन सभी परीक्षणों का समन्वित प्रयोग ही अनुवाद मूल्यांकन को संतुलित और विश्वसनीय बनाता है। सघन और वाचन परीक्षण अनुवाद की पठनीयता पर प्रकाश डालते हैं, बोधन और तुलनात्मक परीक्षण अर्थ-संप्रेषण को परखते हैं, जबकि मूलपाठ आधारित मूल्यांकन अनुवाद की निष्ठा और सटीकता को स्पष्ट करता है। इस प्रकार, अनुवाद मूल्यांकन की प्रक्रिया एकांगी न होकर बहुआयामी बनती है, जो अनुवाद अध्ययन को एक सुदृढ़ अकादमिक आधार प्रदान करती है।

अब इसके मुख्या आयाम के बारे में चर्चा करेंगे:-

अनुवाद मूल्यांकन की प्रक्रिया केवल यह तय करने तक सीमित नहीं होती कि अनुवाद सही है या गलत। वास्तव में, अनूदित पाठ एक स्वतंत्र भाषिक सत्ता के रूप में सामने आता है, जिसकी गुणवत्ता को परखने के लिए कुछ निश्चित आयामों की आवश्यकता होती है। ये आयाम ऐसे मानदंड हैं,जिनके आधार पर यह निर्धारित किया जाता है कि अनुवाद मूल पाठ के अर्थ, उद्देश्य और संप्रेषणीयता को कितनी सफलता से वहन कर सका है। सामान्यतः अनुवाद मूल्यांकन के चार प्रमुख आयाम माने जाते हैं- मूलनिष्ठता, पठनीयता, बोधगम्यता और प्रयोजन-सिद्धि।

(1) मूलनिष्ठता

मूलनिष्ठता अनुवाद मूल्यांकन का सबसे बुनियादी आयाम है। इसका आशय यह है कि अनूदित पाठ में मूल पाठ का आशय, सूचना, संदर्भ और भाव सुरक्षित रहे। मूलनिष्ठता का अर्थ यह नहीं है कि अनुवाद शब्द प्रति शब्द हो, बल्कि यह है कि मूल पाठ में निहित अर्थ-वस्तु और संदेश विकृत न हो।किसी विधिक दस्तावेज में लिखा है—

"The agreement shall remain valid for five years."

तो इसका अनुवाद केवल "समझौतापाँचवर्षोंतकरहेगा" करनामूलनिष्ठनहींमानाजाएगा। अधिकउपयुक्त अनुवादहोगा—

"यहसमझौतापाँचवर्षोंकीअवधितकवैधरहेगा।"

यहाँ "valid" शब्द का सही भाव ग्रहण करना मूलनिष्ठता को बनाए रखता है। साहित्यिक अनुवाद में भी मूलनिष्ठता आवश्यक है, किंतु वहाँ भाव और संदर्भ को प्राथमिकता दी जाती है, न कि केवल शब्दों को।

(2) पठनीयता

पठनीयता का संबंध इस बात से है कि अनूदित पाठ लक्ष्य भाषा के पाठक के लिए कितना सहज, प्रवाहपूर्ण और स्वाभाविक है। यदि अनुवाद पढ़ते समय पाठक को बार-बार रुकना पड़े या वाक्य समझने में कठिनाई हो, तो वह अनुवाद पठनीय नहीं माना जाएगा।उदाहरण के लिए, यदि अंग्रेजी वाक्य—

"He was overwhelmed by emotions."

का अनुवाद किया जाए—

"वहभावनाओंद्वाराअभिभूतकियागयाथा।"

तो यह वाक्य व्याकरण की दृष्टि से सही होते हुए भी पठनीय नहीं है। बेहतर अनुवाद होगा—

"वहभावनाओंसेअभिभूतहोगया।"पठनीयता विशेष रूप से पाठ्यपुस्तकों, समाचार, प्रशासनिक आदेशों और जनसंचार के अनुवाद में अत्यंत महत्वपूर्ण आयाम है।

(3) बोधगम्यता

बोधगम्यता का अर्थ है कि पाठक अनूदित पाठ को पढ़कर उसके अर्थ और उद्देश्य को आसानी से समझ सके। यह आयाम केवल भाषा की सरलता तक सीमित नहीं रहता, बल्कि यह भी देखता है कि पाठ में प्रयुक्त शब्द, वाक्य संरचना और संदर्भ पाठक के बौद्धिक स्तर के अनुरूप हैं या नहीं।

उदाहरणस्वरूप, यदि किसी स्वास्थ्य संबंधी सूचना का अनुवाद अत्यधिक तकनीकी शब्दावली में कर दिया जाए, तो आम पाठक के लिए वह बोधगम्य नहीं रहेगा। जैसे—

"Hypertension may lead to cardiovascular complications."

का अनुवाद यदि किया जाए—

"उच्चरक्तचापहृदय-संवहनीजटिलताओंकोउत्पन्नकरसकताहै।"

तो यह चिकित्सकीय संदर्भ में सही है, पर सामान्य जन के लिए अधिक बोधगम्य अनुवाद होगा—

"उच्चरक्तचापसेहृदयसेजुड़ीगंभीरसमस्याएँहोसकतीहैं।"

इस प्रकार बोधगम्यता अनुवाद को पाठककेंद्रित बनाती है।

(4) प्रयोजन-सिद्धि

प्रयोजन-सिद्धि अनुवाद मूल्यांकन का वह आयाम है, जो यह जाँचता है कि अनुवाद अपने निर्धारित उद्देश्य को पूरा कर रहा है या नहीं। हर अनुवाद किसी न किसी उद्देश्य से किया जाता है- सूचना देना, निर्देश देना, मनोरंजन करना या भावात्मक प्रभाव उत्पन्न करना।किसी विज्ञापन का उद्देश्य पाठक को आकर्षित करना है, तो उसका अनुवाद केवल अर्थ-संप्रेषण तक सीमित नहीं रह सकता। उदाहरण के लिए—

"Feel the freshness of nature."

का अनुवाद यदि किया जाए—

"प्रकृतिकीताजगीकोमहसूसकरें।"

तो यह न केवल अर्थ देता है, बल्कि विज्ञापन के उद्देश्य को भी पूरा करता है।अनुवाद लक्ष्य भाषा के पाठक को वही प्रतिक्रिया देने में सक्षम है, जिसके लिए मूल पाठ लिखा गया था, तो उसे प्रयोजन-सिद्ध माना जाएगा।

महत्वपूर्ण बिंदु

अनुवाद की सफलता केवल भाषिक शुद्धता पर निर्भर नहीं करती, बल्कि पाठकप्रतिक्रिया-, सांस्कृतिक अनुकूलन और संदर्भगत उपयुक्तता जैसे तत्व भी अनुवाद के समग्र मूल्यांकन में निर्णायक भूमिका निभाते हैं।

10.9 अनुवादसमीक्षा: स्वरूप, भेद और साहित्यिक तुलनात्मक दृष्टि

अनुवाद समीक्षा अनुवादक को अपने किए गए अनुवाद कार्य के विवेचन, परीक्षण और मूल्यांकन में एक सशक्त बौद्धिक आधार प्रदान करती है। किसी भी अनूदित कृति की समीक्षा के माध्यम से यह स्पष्ट हो पाता है कि मूल पाठ की सूक्ष्म भाषिक संरचनाएँ, भावात्मक संकेत, सांस्कृतिक संदर्भ और शैलीगत विशेषताएँ लक्ष्य भाषा में किस सीमा तक और किस रूप में अंतरणित हुई हैं। अनुवाद समीक्षा केवल अनुवाद की शुद्धता की जाँच तक सीमित नहीं रहती, बल्कि वह मूल रचना की आत्मा और अनूदित पाठ की सृजनात्मकता के बीच स्थापित संबंध का गहन विश्लेषण प्रस्तुत करती है। उदाहरणस्वरूप, राजा लक्ष्मण सिंह द्वारा किए गए कालिदास के महाकाव्यात्मक नाटक 'अभिज्ञान शाकुंतलम्' के हिंदी अनुवाद 'शकुंतला नाटक' की समीक्षा से यह स्पष्ट होता है कि अनुवादक ने मूल संस्कृत नाटक की काव्यात्मक गरिमा, नाटकीय संरचना और भावात्मक सूक्ष्मता को हिंदी भाषा में किस प्रकार रूपांतरित किया है। इस समीक्षा के माध्यम से न केवल कालिदास की मूल कृति की कलात्मक विशेषताओं का गहन परिचय मिलता है, बल्कि यह भी स्पष्ट होता है कि एक आदर्श अनुवाद में भाषानिष्ठा, भावसंरक्षण और सांस्कृतिक अनुकूलन के बीच संतुलन किस प्रकार साधा जाना चाहिए। इस प्रकार अनुवाद समीक्षा आदर्श अनुवाद के मानकों को रेखांकित करने का कार्य भी करती है। अनुवाद समीक्षा की भूमिका विशेष रूप से शिक्षणपरक मानी जाती है। अनुवादअध्ययन से जुड़े विद्यार्थियों और शोधार्थियों के लिए यह एक व्यावहारिक प्रशिक्षण का माध्यम है, जिसके द्वारा वे अनुवाद सिद्धांतों के वास्तविक प्रयोग को समझ सकते हैं। समीक्षा के माध्यम से उनकी अनुवाददृष्टि केवल सैद्धांतिक न रहकर व्यावहारिक स्तर पर विकसित होती है। वे यह जान पाते हैं कि किन परिस्थितियों में शब्दानुवाद उपयुक्त होता है और किन संदर्भों में भावानुवाद या सांस्कृतिक रूपांतरण अधिक प्रभावी सिद्ध होता है। एक संतुलित और स्वस्थ अनुवाद समीक्षा में अनूदित पाठ का विवेचन अनेक स्तरों पर किया जाता है। इसमें मूल अभिप्राय की रक्षा, भाषाप्रयोग की सटीकता, शैलीगत सामंजस्य, सांस्कृतिक संकेतों की उपयुक्त प्रस्तुति, साहित्यिक गुणों की रक्षा तथा लक्षित पाठक वर्ग की अपेक्षाओं- इन सभी पक्षों को ध्यान में रखा जाता है। इस प्रक्रिया के अंतर्गत मूल पाठ और अनुवाद की तुलनात्मक जाँच की जाती है, जिससे अनुवाद में उपस्थित संभावित दोषों, सीमाओं और सफलताओं की पहचान संभव हो पाती है।

अनुवाद केवल एक भाषा से दूसरी भाषा में शब्दों के स्थानांतरण की प्रक्रिया नहीं है, बल्कि यह दो भिन्न भाषाओं, संस्कृतियों, संवेदनाओं और साहित्यिक परंपराओं के बीच संवाद स्थापित करने का सृजनात्मक कर्म है। किसी भी अनुवाद की गुणवत्ता, प्रामाणिकता और प्रभावशीलता को समझने के लिए 'अनुवाद समीक्षा' अत्यंत आवश्यक मानी जाती है। अनुवाद समीक्षा वह प्रक्रिया है जिसके माध्यम से यह परखा जाता है कि मूल पाठ के भाव, विचार, संरचना, शैली और सांस्कृतिक संकेत किस सीमा तक लक्ष्य भाषा में सफलतापूर्वक अंतरणित हुए हैं। अनुवाद समीक्षा अनुवाद सिद्धांत का अनुप्रयोगिक पक्ष है। इसके माध्यम से न केवल अनूदित पाठ की गुणवत्ता का मूल्यांकन किया जाता है, बल्कि अनुवादक की दृष्टि, उसकी भाषिक-सांस्कृतिक समझ और रचनात्मक क्षमता का भी विश्लेषण संभव हो पाता है। साहित्यिक अध्ययन के क्षेत्र में अनुवाद समीक्षा का विशेष महत्व इसलिए भी है क्योंकि यह मूल और लक्ष्य भाषा- दोनों की साहित्यिक परंपराओं को समझने का अवसर प्रदान करती है।

अनुवाद समीक्षा का प्रमुख उद्देश्य अनुवाद की सफलता और सीमाओं की पहचान करना है। यह प्रक्रिया यह स्पष्ट करती है कि अनुवादक ने मूल पाठ के प्रति कितनी निष्ठा रखी है और कहाँ उसने लक्ष्य भाषा तथा पाठक वर्ग को ध्यान में रखते हुए परिवर्तन किए हैं। अनुवाद समीक्षा के माध्यम से अनुवादक को अपने कार्य की कमियों और संभावनाओं का बोध होता है, जिससे भविष्य में अनुवाद के स्तर को और अधिक उन्नत किया जा सकता है।

शिक्षण की दृष्टि से अनुवाद समीक्षा का महत्व अत्यंत व्यापक है। अनुवादअध्ययन करने वाले विद्यार्थियों के लिए यह एक व्यावहारिक प्रशिक्षण का कार्य करती है। समीक्षा के माध्यम से विद्यार्थी यह समझ पाते हैं कि अनुवाद सिद्धांत

वास्तविक पाठों में किस प्रकार लागू होते हैं। इस प्रकार अनुवाद समीक्षा अनुवाद-शिक्षण और शोध- दोनों के लिए एक अनिवार्य उपकरण बन जाती है।

सामान्यतः अनुवाद समीक्षा को दो प्रमुख वर्गों में विभाजित किया जाता है— (1) साहित्यिक पाठों की अनुवाद समीक्षा (2) साहित्येतर पाठों की अनुवाद समीक्षा साहित्यिक पाठों की अनुवाद समीक्षा अधिक जटिल होती है क्योंकि इसमें केवल सूचना का नहीं, बल्कि सौंदर्य, भाव, लय, बिंब और सांस्कृतिक संकेतों का भी अंतरण किया जाता है। साहित्यिक अनुवाद समीक्षा के दो प्रमुख आयाम माने जाते हैं- वर्णनात्मक और तुलनात्मक।

(i) वर्णनात्मक अनुवाद समीक्षा

वर्णनात्मक अनुवाद समीक्षा में मूल पाठ और अनूदित पाठ के बीच साम्य और अंतर का विश्लेषण किया जाता है। इसमें यह देखा जाता है कि मूल भाषा में अभिव्यक्त भावों, विचारों और संवेदनाओं को लक्ष्य भाषा में किस प्रकार पुनर्सृजित किया गया है। इस प्रकार की समीक्षा में संरचना, शिल्प, शब्दचयन और शैली- सभी स्तरों पर मूल्यांकन किया जाता है।उदाहरण के रूप में 'कामायनी' के अंग्रेजी अनुवाद का विश्लेषण किया जा सकता है। मूल हिंदी काव्य में जहाँ भावात्मक गहनता और प्रतीकात्मकता है, वहीं अंग्रेजी अनुवाद में भाषा की प्रकृति के अनुसार वाक्यरचना और शब्दचयन में परिवर्तन किया गया है। इसके बावजूद मूल भावसंरचना को सुरक्षित रखने का प्रयास अनुवादक की सजगता को दर्शाता है।

(II) तुलनात्मक अनुवाद समीक्षा

तुलनात्मक अनुवाद समीक्षा में किसी एक मूल पाठ के एक से अधिक अनुवादों का तुलनात्मक अध्ययन किया जाता है। इसके माध्यम से यह स्पष्ट होता है कि विभिन्न अनुवादक एक ही मूल रचना को अपनी-अपनी भाषिक, सांस्कृतिक और वैचारिक दृष्टि से किस प्रकार ग्रहण करते हैं। यह समीक्षा अनुवादसिद्धांतों के व्यावहारिक अनुप्रयोग को समझने के लिए अत्यंत उपयोगी मानी जाती है।

शेक्सपियर के नाटक 'द मर्चेंट ऑफ वेनिस' के हिंदी अनुवाद इस संदर्भ में विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। भारतेन्दु हरिश्चंद्र द्वारा किया गया 'दुर्लभ बंधु' और रंगेय राघव द्वारा किया गया 'वेनिस का सौदागर'- ये दोनों अनुवाद न केवल काल-भेद को दर्शाते हैं, बल्कि अनुवाद-दृष्टि के परिवर्तन को भी रेखांकित करते हैं।

भारतेन्दु हरिश्चंद्र का अनुवाद दृष्टिकोण

भारतेन्दु हरिश्चंद्र हिंदी साहित्य में नवजागरण के अग्रदूत माने जाते हैं। उनका अनुवाद दृष्टिकोण भारतीयकरण पर आधारित है। उन्होंने शेक्सपियर के नाटक के पात्रों, स्थानों और सांस्कृतिक संदर्भों को भारतीय परिवेश में रूपांतरित किया ताकि तत्कालीन हिंदी पाठक उससे तादात्म्य स्थापित कर सके। उनके लिए अनुवाद का उद्देश्य केवल कथ्य का स्थानांतरण नहीं, बल्कि सांस्कृतिक संवाद स्थापित करना था।

उदाहरणस्वरूप, 'पोर्टिया' का 'पुरशी' और 'बैसैनियो' का 'बसंत' बन जाना केवल नामपरिवर्तन नहीं है, बल्कि यह पाठक की सांस्कृतिक स्मृति से जुड़ने का प्रयास है। इसी प्रकार 'हंस-सदृश मृत्यु' जैसे पश्चिमी प्रतीक को उन्होंने भारतीय संवेदना के अनुरूप रूपांतरित किया।

रांगेय राघव का अनुवाद दृष्टिकोण

रांगेय राघव का अनुवाद भारतेन्दु से भिन्न कालखंड में रचा गया है। इस समय तक हिंदी पाठक पश्चिमी साहित्य और संस्कृति से अपेक्षाकृत परिचित हो चुका था। इसलिए रांगेय राघव ने मूल नाटक के नामों और स्थानों को यथावत रखा। उनका अनुवाद पाठनिष्ठता और व्याख्यात्मक स्पष्टता पर आधारित है। जहाँ सांस्कृतिक संदर्भ जटिल प्रतीत होते हैं, वहाँ वे पाद-टिप्पणियों के माध्यम से पाठक को मार्गदर्शन प्रदान करते हैं।

शेक्सपियर, भारतेन्दु हरिश्चंद्र और रांगेय राघव :हंस-सदृश मृत्यु, संगीत और भावात्मक अभिव्यक्ति का तुलनात्मक अनुवादविवेचनयह चयनित अंश अनुवाद–समीक्षा की दृष्टि से अत्यंत महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि इसमें एक ही मूल काव्य-बिंब - हंस-सदृश मृत्यु और संगीतात्मक अंतको तीन अलग-अलग सांस्कृतिक, भाषिक और वैचारिक दृष्टियों से प्रस्तुत किया गया है। इससे यह स्पष्ट होता है कि अनुवाद केवल भाषापरिवर्तन नहीं, बल्कि संवेदना, संस्कृति और काव्यदृष्टि का रूपांतरण भी है।

(1) शेक्सपियर: मूल अंग्रेजी पाठ और काव्य-दृष्टि

शेक्सपियर के इस अंश में 'हंस-सदृश मृत्यु' (swan-like end) एक अत्यंत सघन काव्यप्रतीक के रूप में उपस्थित है। पश्चिमी काव्य-परंपरा में यह विश्वास प्रचलित है कि हंस अपने जीवन के अंतिम क्षणों में अत्यंत मधुर गीत गाता है। इसी धारणा को आधार बनाकर शेक्सपियर मृत्यु को भयावह घटना न बनाकर सौंदर्य, संगीत और करुणा से युक्त अनुभव के रूप में प्रस्तुत करते हैं।

"Then, if he lose, he makes a swan-like end,
Fading in music; that the comparison
May stand more proper, my eye shall be the stream,
And watery death-bed for him."

यहाँ संगीत केवल ध्वनि नहीं, बल्कि भावों का विलय है। प्रेम, विफलता और मृत्यु- तीनों एक ही काव्यात्मक प्रवाह में घुल-मिल जाते हैं। 'मेरी आँखें नदी बन जाएँगी' जैसे बिंब प्रेम की अतिशय करुणा को प्रकट करते हैं। शेक्सपियर की दृष्टि में मृत्यु एक रसात्मक पराकाष्ठा है, जहाँ जीवन अपने सबसे सुंदर रूप में समाप्त होता है।

(2) भारतेन्दु हरिश्चंद्र: सांस्कृतिक अंतरण और भारतीयकरण

भारतेन्दु हरिश्चंद्र इस अंश का अनुवाद करते समय मूल बिंब को यथावत ग्रहण नहीं करते, बल्कि उसे भारतीय सांस्कृतिक चेतना के अनुरूप रूपांतरित करते हैं। भारतीय परंपरा में 'प्रेमी की जल-समाधि' या मृत्यु का सौंदर्यीकरण सहज रूप से स्वीकार्य नहीं है। मृत्यु को प्रायः अशुभ, त्याज्य और वर्जित माना गया है।

"यदि कहिए कि वधू की समाधि पानी में होती है,
तो मेरी आँखें नदी बनकर
आपके शत्रुओं की समाधि बन जाएँगी।"

यहाँ भारतेन्दु मूल भाव को सुरक्षित रखते हुए प्रतीक को उलट देते हैं। प्रेमी की मृत्यु के स्थान पर 'शत्रुओं की समाधि' रखकर वे भावात्मक तीव्रता भी बनाए रखते हैं और सांस्कृतिक असंगति से भी बच जाते हैं। यह रूपांतरण यह दिखाता है कि भारतेन्दु के लिए अनुवाद का उद्देश्य मूल पाठ की नकल नहीं, बल्कि स्थानीय संस्कृति में अर्थ का पुनर्जन्म है।

इस प्रकार भारतेन्दु का अनुवाद 'भावानुवाद' और 'सांस्कृतिक रूपांतरण' का उत्कृष्ट उदाहरण बन जाता है।

(3) रांगेय राघव: पाठनिष्ठता और अर्थ-संरक्षण

रांगेय राघव का अनुवाद दृष्टिकोण भारतेन्दु से भिन्न है। वे मूल पश्चिमी प्रतीक को सुरक्षित रखते हैं और पाठक को उस प्रतीक की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि समझाने का प्रयास करते हैं।

"यदि ये असफल हो गए तो उस हंस के समान
संगीत-मधुरि में तन्मय लौट सकेंगे
जो मरते समय गाता है।"

रांगेय राघव यहाँ 'हंस' और 'मृत्यु-गीत' के प्रतीक को नहीं बदलते। वे मानते हैं कि अनुवादक का कार्य पाठक को मूल संस्कृति से परिचित कराना भी है। इसलिए जहाँ सांस्कृतिक दूरी आती है, वहाँ वे पाद-टिप्पणी या व्याख्या का सहारा

लेते हैं। यह दृष्टि 'पाठनिष्ठ अनुवाद' और 'अर्थ-संरक्षण' की श्रेणी में आती है।उनके लिए अनुवाद एक प्रकार का सांस्कृतिक सेतु है, न कि सांस्कृतिक परिवर्तन।

अत:इस एक ही अंश में अनुवाद की तीन भिन्न दिशाएँ स्पष्ट रूप से सामने आती हैं—

शेक्सपियर :

प्रतीकात्मक, काव्यात्मक और संगीतात्मक अभिव्यक्ति; मृत्यु का सौंदर्यीकरण।

भारतेन्दु हरिश्चंद्र :

सांस्कृतिक अंतरण, भारतीयकरण और भाव-संरक्षण; प्रतीक में परिवर्तन।

रांगेय राघव :

पाठनिष्ठता, अर्थ-संरक्षण और व्याख्यात्मक स्पष्टता; प्रतीक की रक्षा।

यह तुलनात्मक अध्ययन यह सिद्ध करता है कि अनुवाद कोई एकरेखीय प्रक्रिया नहीं है। एक ही मूल पाठ से भिन्न अनुवाद-सिद्धांत, सांस्कृतिक दृष्टियाँ और रचनात्मक रणनीतियाँ जन्म ले सकती हैं। इसी कारण यह अंश अनुवादसमीक्षा के लिए एक आदर्श और शिक्षणात्मक उदाहरण बन जाता है, जहाँ भाषा, संस्कृति और काव्यदृष्टि- तीनों का समन्वित विश्लेषण संभव हो पाता है।

10.11 अनुवादसमीक्षा: साहित्येतर संदर्भ

साहित्येतर अनुवादसमीक्षा में सर्वप्रथम पाठ की प्रकृति को समझना आवश्यक होता है। साहित्येतर पाठ वे होते हैं जो साहित्यिक सौंदर्य, कल्पना या भावात्मक अनुभूति के स्थान पर सूचना, निर्देश, नियम, प्रक्रिया अथवा तथ्य प्रस्तुत करते हैं। प्रशासनिक आदेश, विधिक दस्तावेज़, वैज्ञानिक रिपोर्ट, तकनीकी निर्देश, व्यापारिक समझौते और समाचार-पाठ इसी श्रेणी में आते हैं। इसलिए इन पाठों की समीक्षा करते समय यह देखा जाता है कि अनुवाद मूल पाठ की प्रकृति के अनुरूप है या नहीं। यदि सूचनाप्रधान पाठ को भावात्मक भाषा में अनूदित कर दिया जाए, तो उसका उद्देश्य ही नष्ट हो सकता है।

दूसरा महत्त्वपूर्ण पक्ष पाठ का उद्देश्य है। प्रत्येक साहित्येतर पाठ किसी निश्चित प्रयोजन से लिखा जाता है- जैसे सूचना देना, आदेश जारी करना, चेतावनी देना, प्रक्रिया समझाना या निर्णय की घोषणा करना। अनुवादसमीक्षा में यह जाँचना आवश्यक होता है कि अनूदित पाठ मूल पाठ के उद्देश्य को सही रूप में व्यक्त कर रहा है या नहीं। उदाहरणस्वरूप, यदि किसी प्रशासनिक आदेश का अनुवाद इस प्रकार किया गया हो कि उसमें अनिवार्यता का भाव कमजोर पड़ जाए, तो वह अनुवाद प्रयोजन की दृष्टि से असफल माना जाएगा।इसके साथ-साथ साहित्येतर अनुवादसमीक्षा में पाठ के प्रयोग को भी केंद्र में रखा जाता है। यहाँ प्रयोग से आशय है- पाठ का व्यावहारिक उपयोग। साहित्येतर अनुवाद केवल पढ़ने के लिए नहीं होता, बल्कि उसे कार्यान्वयन, अनुपालन और व्यवहार में लाया जाना होता है। इसलिए समीक्षा यह देखती है कि अनुवाद व्यवहारिक रूप से कितना उपयोगी है, क्या वह पाठक या उपयोगकर्ता को स्पष्ट दिशा प्रदान करता है, और क्या उसमें किसी प्रकार की अस्पष्टता या द्वयर्थता तो नहीं है।

साहित्यिक पाठों की अपेक्षा साहित्येतर पाठों में भावात्मकता का महत्त्व सीमित होता है। यहाँ भाषा का उद्देश्य पाठक की संवेदना को उद्वेलित करना नहीं, बल्कि उसे तथ्यात्मक और स्पष्ट जानकारी देना होता है। अतः अनुवादसमीक्षा में भावात्मक सौंदर्य के स्थान पर अर्थ की स्पष्टता को प्राथमिकता दी जाती है। यदि अनुवाद में वाक्य अर्थ की दृष्टि से अस्पष्ट हों या अनेक अर्थों की संभावना उत्पन्न करते हों, तो उसे दोषपूर्ण माना जाता है।

इसके अतिरिक्त साहित्येतर अनुवाद में व्यवहारिकता एक अनिवार्य तत्व है। व्यवहारिकता से तात्पर्य है कि अनुवाद दैनिक प्रशासनिक, तकनीकी या सामाजिक व्यवहार में आसानी से प्रयुक्त किया जा सके। बहुत अधिक संस्कृतनिष्ठ या

अत्यधिक क्लिष्ट शब्दों का प्रयोग पाठ को व्यवहार से काट देता है। इसलिए समीक्षा में यह देखा जाता है कि अनुवाद व्यवहारिक भाषाप्रयोग को अपनाता है या नहीं।

अंततः साहित्येतर अनुवाद–समीक्षा में पारिभाषिक शुद्धता का विशेष महत्त्व होता है। विभिन्न ज्ञानक्षेत्रों में प्रयुक्त पारिभाषिक शब्दों के निश्चित अर्थ होते हैं। यदि इन शब्दों का अनुवाद गलत या असंगत रूप में किया जाए, तो अर्थ-विकृति उत्पन्न हो सकती है। इसलिए समीक्षा यह सुनिश्चित करती है कि पारिभाषिक शब्दावली का प्रयोग मान्य, प्रचलित और संदर्भानुकूल हो।

(1) पारिभाषिक शब्दावली की अनुवादसमीक्षा

साहित्येतर अनुवाद में पारिभाषिक शब्दावली का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण होता है, क्योंकि ऐसे पाठों का संबंध विशिष्ट ज्ञानक्षेत्रों से होता है। प्रशासन, विधि, विज्ञान, तकनीक, अर्थशास्त्र, वाणिज्य और पत्रकारिता जैसे क्षेत्रों में प्रयुक्त शब्द सामान्य बोलचाल की भाषा से भिन्न होते हैं और उनका अर्थ सीमित, निश्चित तथा संदर्भ-निर्भर होता है। इन शब्दों का प्रयोग केवल भाषासौंदर्य के लिए नहीं, बल्कि सटीक अर्थ संप्रेषण के लिए किया जाता है। इसलिए अनुवादसमीक्षा में सबसे पहले यह जाँचा जाता है कि अनुवादक ने पारिभाषिक शब्दों का चयन सही ढंग से किया है या नहीं।

पारिभाषिक शब्दावली की अनुवादसमीक्षा करते समय यह देखा जाता है कि अनुवाद में प्रयुक्त शब्द प्रचलित हैं या नहीं। यदि कोई शब्द सैद्धांतिक रूप से सही होते हुए भी व्यवहार में प्रचलित नहीं है, तो वह पाठक के लिए बोधगम्य नहीं रह जाता। उदाहरणस्वरूप, विधिक भाषा में "Section" के लिए "धारा"शब्दप्रचलितऔरमान्यहै; यदि इसके स्थान पर "अनुभाग"या"खंड"प्रयोगकरदियाजाए, तो विधिक संदर्भ में भ्रम उत्पन्न हो सकता है। इसी प्रकार "Clause" के लिए "उपधारा"काप्रयोगअधिकस्वीकार्यहै।

इसी क्रम में यह भी देखा जाता है कि अनुवाद मान्य शब्दावली पर आधारित है या नहीं। विभिन्न क्षेत्रों में कुछ शब्द सरकारी, संस्थागत अथवा अकादमिक रूप से मान्य हो चुके होते हैं। उदाहरण के लिए-

"Ordinance" का अनुवाद "अध्यादेश",

"Mandate" का अनुवाद "अधिदेश",

"Charge" का अनुवाद "आरोप"

विधिक भाषा में स्थापित और मान्य माने जाते हैं। यदि अनुवादक इन मान्य शब्दों के स्थान पर नए या व्यक्तिगत शब्द प्रयोग करता है, तो अनुवाद की विश्वसनीयता प्रभावित होती है।

पारिभाषिक शब्दावली की समीक्षा का एक महत्वपूर्ण पक्ष संदर्भ-संगति भी है। एक ही शब्द अलग-अलग संदर्भों में भिन्न अर्थ ग्रहण कर सकता है। उदाहरणस्वरूप—

"Charge" शब्द का अर्थ विधिक संदर्भ में "आरोप",

विद्युत संदर्भ में "आवेश",

और प्रशासनिक संदर्भ में "प्रभार"होसकताहै।

अनुवादसमीक्षा में यह जाँचना आवश्यक होता है कि अनुवादक ने संदर्भ के अनुसार सही अर्थ का चयन किया है या नहीं।

इसी प्रकार "Sanction" शब्द कहीं "स्वीकृति"केअर्थमेंआताहै, तो कहीं "दंड" केअर्थमेंभीप्रयुक्तहोताहै। यदिअनुवादकसंदर्भकोसमझेबिनाएकही अर्थकाप्रयोगकरदेताहै, तो अनुवाद दोषपूर्ण माना जाएगा। अतः पारिभाषिक शब्दावली की समीक्षा संदर्भ-बोध की भी परीक्षा करती है।साहित्येतर अनुवाद में अंग्रेजी से आए अनेक पारिभाषिक शब्द अब हिंदी में स्थायी रूप से स्वीकार कर लिए गए हैं, जैसे-

White Paper ⟶ श्वेत पत्र

Silver Jubilee ⟶ रजत जयंती

Foot Note ⟶ पाद टिप्पणी

इन शब्दों की समीक्षा करते समय यह देखा जाता है कि अनुवादक ने इन्हें अनुवादित रूप में, लिप्यंतरित रूप में, या मिश्रित रूप में प्रयोग किया है और वह प्रयोग पाठ की प्रकृति के अनुकूल है या नहीं।अर्थशास्त्र और वाणिज्य के क्षेत्र में भी पारिभाषिक शब्दावली की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है। उदाहरण के लिए-

"Inflation" ⟶ मुद्रास्फीति

"Deflation" ⟶ अपस्फीति

"Revenue" ⟶ राजस्व

"Fiscal Policy" ⟶ राजकोषीय नीति

इन शब्दों का गलत या असंगत अनुवाद आर्थिक अर्थ को पूरी तरह बदल सकता है। इसलिए अनुवादसमीक्षा में इन शब्दों की शुद्धता पर विशेष ध्यान दिया जाता है।

(2) अभिव्यक्ति क्षमता की दृष्टि से अनुवादसमीक्षा

अभिव्यक्ति क्षमता साहित्येतर अनुवादसमीक्षा का एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण पक्ष है, क्योंकि साहित्येतर पाठों का मुख्य उद्देश्य पाठक तक सूचना, निर्देश या निर्णय को स्पष्ट और प्रभावी ढंग से पहुँचाना होता है। ऐसे पाठों में भाषा का मूल्यांकन इस आधार पर नहीं किया जाता कि वह कितनी अलंकृत या साहित्यिक है, बल्कि इस बात पर किया जाता है कि वह अपने आशय को कितनी सहजता, सटीकता और स्पष्टता के साथ व्यक्त कर पा रही है। इसलिए अनुवादसमीक्षा में अभिव्यक्ति क्षमता को केंद्रीय स्थान दिया जाता है।

इस बिंदु के अंतर्गत सर्वप्रथम यह देखा जाता है कि अनूदित पाठ बोधगम्य है या नहीं। यदि अनुवाद में वाक्य संरचना अत्यधिक जटिल हो, शब्दावली दुरूह हो या अंग्रेजी संरचना की नकल अधिक हो, तो पाठक के लिए अर्थ ग्रहण करना कठिन हो जाता है। उदाहरणस्वरूप—

"The matter is under active consideration of the competent authority."

यदि इसका अनुवाद अत्यधिक विस्तार के साथ किया जाए, तो प्रशासनिक भाषा की सहजता समाप्त हो सकती है। इसके स्थान पर-

"विषय सक्षम प्राधिकारी के विचाराधीन है।"

जैसा संक्षिप्त और स्पष्ट अनुवाद अधिक प्रभावी माना जाएगा। अनुवादसमीक्षा में इसी प्रकार की स्पष्टता को परखा जाता है।

अभिव्यक्ति क्षमता की समीक्षा में यह भी देखा जाता है कि अनुवाद में अनावश्यक अलंकरण तो नहीं है। साहित्येतर पाठों में भावात्मक शब्द, अलंकार या शैलीगत सजावट अर्थ की संप्रेषणीयता को कमजोर बना देती है। उदाहरण के लिए, यदि किसी कार्यालयीन आदेश का अनुवाद काव्यात्मक या अत्यधिक भावप्रधान भाषा में कर दिया जाए, तो उसका प्रशासनिक प्रभाव समाप्त हो जाता है। अतः समीक्षा यह सुनिश्चित करती है कि भाषा सरल, औपचारिक और उद्देश्यपरक बनी रहे।

इसी क्रम में अभिव्यक्ति की संप्रेषणीयता भी एक महत्त्वपूर्ण कसौटी है। संप्रेषणीयता का आशय है कि अनुवाद पाठक तक बिना किसी भ्रम के पहुँच रहा है या नहीं। उदाहरणस्वरूप—

"Please circulate and file."

का अनुवाद-

"कृपया प्रसारित कर अभिलेखित करें।"

यदि इस प्रकार किया गया हो, तो यह संक्षिप्त, स्पष्ट और कार्यालयीन व्यवहार के अनुरूप माना जाएगा। अनुवादसमीक्षा में इस तरह की संप्रेषणीयता को सकारात्मक रूप से देखा जाता है।

अभिव्यक्ति क्षमता के अंतर्गत वाक्यरचना की भूमिका भी महत्वपूर्ण होती है। साहित्येतर अनुवाद में लंबे, संयुक्त और उलझे हुए वाक्य अर्थ को अस्पष्ट बना देते हैं। इसलिए समीक्षा में यह देखा जाता है कि अनुवादक ने वाक्यों को आवश्यकतानुसार सरल और क्रमबद्ध बनाया है या नहीं। उदाहरण के लिए-

"The report, after due examination, has been found satisfactory."

का अनुवाद यदि-

"समुचित परीक्षण के उपरांत प्रतिवेदन संतोषजनक पाया गया।"

जैसे स्पष्ट रूप में किया गया हो, तो उसे अभिव्यक्ति की दृष्टि से सफल माना जाएगा।

इसके अतिरिक्त, अभिव्यक्ति क्षमता की समीक्षा में यह भी जाँचा जाता है कि अनुवाद लक्ष्यपाठक के अनुरूप है या नहीं। यदि पाठ सामान्य जनता के लिए है, तो भाषा सरल और सहज होनी चाहिए; और यदि पाठ विशेषज्ञों के लिए है, तो वहाँ सीमित तकनीकी शब्दावली का प्रयोग स्वीकार्य होता है। इस संतुलन की उपेक्षा अभिव्यक्ति को कमजोर कर देती है।

(3) अंग्रेजी प्रभाव की अनुवादसमीक्षा

हिंदी के साहित्येतर अनुवादों में अंग्रेजी भाषा का प्रभाव स्वाभाविक रूप से दिखाई देता है, क्योंकि आधुनिक प्रशासन, विधि, विज्ञान, तकनीक और वाणिज्य के अधिकांश मूल पाठ अंग्रेजी में उपलब्ध होते हैं। ऐसे में अनुवाद करते समय अनेक अंग्रेजी शब्द, पदबंध और वाक्यसंरचनाएँ हिंदी में प्रवेश कर जाती हैं। अनुवादसमीक्षा का उद्देश्य अंग्रेजी के प्रभाव को पूरी तरह नकारना नहीं है, बल्कि यह जाँचना है कि यह प्रभाव आवश्यक, उपयुक्त और सीमित है या अनावश्यक और बाधक।इस बिंदु के अंतर्गत सबसे पहले उन शब्दों की समीक्षा की जाती है जो अंग्रेजी से सीधे हिंदी में ग्रहण कर लिए गए हैं। कुछ शब्द अब हिंदी में इतने प्रचलित हो चुके हैं कि उनका प्रयोग स्वाभाविक और स्वीकार्य माना जाता है। उदाहरणस्वरूप-

White Paper ⟶ श्वेत पत्र

Silver Jubilee ⟶ रजत जयंती

Budget ⟶ बजट

File ⟶ फ़ाइल

Note ⟶ नोट

इन शब्दों का प्रयोग साहित्येतर अनुवाद में सामान्यतः दोष नहीं माना जाता, क्योंकि इनके लिए वैकल्पिक हिंदी शब्द या तो प्रचलन में नहीं हैं या व्यवहार में कठिन प्रतीत होते हैं।इसके विपरीत कुछ स्थानों पर अंग्रेजी प्रभाव अनावश्यक हो जाता है और हिंदी की स्वाभाविकता को प्रभावित करता है। उदाहरण के लिए—

"He is responsible for the work"

का अनुवाद यदि—

"वह कार्य के लिए जिम्मेदार है"

के स्थान पर

"वह कार्य के प्रति जिम्मेदार है"

किया जाए, तो यह अंग्रेजी संरचना का प्रभाव माना जाएगा। अनुवादसमीक्षा ऐसे प्रयोगों को चिह्नित करती है और उन्हें सुधारने का सुझाव देती है।अंग्रेजी प्रभाव की समीक्षा में वाक्यसंरचना भी एक महत्वपूर्ण तत्व है। कई बार अंग्रेजी के लंबे और जटिल वाक्यों की संरचना को ज्योंकात्यों हिंदी में रख दिया जाता है, जिससे अनुवाद कृत्रिम और बोझिल लगने लगता है। उदाहरणस्वरूप—

"The matter was taken up for consideration by the committee"

यदि इसका अनुवाद शब्दक्रम के अनुसार किया जाए, तो हिंदी अस्वाभाविक हो सकती है। इसके स्थान पर-

"समिति ने विषय पर विचार किया"

जैसा अनुवाद अधिक सहज और प्रभावी माना जाएगा। समीक्षा में इसी प्रकार की संरचनात्मक स्वाभाविकता को परखा जाता है।इसी क्रम में अंग्रेजी मुहावरों और प्रतीकात्मक अभिव्यक्तियों का अनुवाद भी समीक्षा का विषय बनता है। कुछ अंग्रेजी मुहावरे हिंदी में सीधे अनूदित करने पर अर्थहीन या हास्यास्पद हो सकते हैं। उदाहरण के लिए—

White lie का "सफेदझूठ" कहनाभाषाकीदृष्टिसे अनुपयुक्त है; यहाँ "निर्दोषझूठ" या "छोटीअसत्यता" अधिकउपयुक्तहोगा।

इसी प्रकार Red tape का अनुवाद "लालफीता" नहोकर"दफ्तरशाहीजटिलता" अधिकअर्थपूर्णमानाजाएगा। अनुवाद समीक्षा इनबिंदुओंपरविशेषध्यानदेती है। अंग्रेजी प्रभाव की अनुवादसमीक्षा यह भी देखती है कि अंग्रेज़ी शब्दों का प्रयोग कहाँ आवश्यक है और कहाँ नहीं। तकनीकी और वैज्ञानिक क्षेत्रों में कई शब्द ऐसे हैं जिनका प्रचलित हिंदी रूप उपलब्ध नहीं है या जो अनुवाद करने पर अस्पष्ट हो जाते हैं। ऐसे में अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग स्वीकार्य माना जाता है। किंतु सामान्य प्रशासनिक या सामाजिक संदर्भों में जहाँ सरल हिंदी शब्द उपलब्ध हों, वहाँ अनावश्यक अंग्रेजी प्रयोग को दोष माना जाता है।

(4) साहित्येतर अनुवाद की दो दिशाएँ और अनुवादसमीक्षा

साहित्येतर अनुवाद को उसके प्रयोगक्षेत्र और उद्देश्य के आधार पर सामान्यतः दो प्रमुख दिशाओं में विभाजित किया जा सकता है। अनुवादसमीक्षा के अंतर्गत यह देखना आवश्यक होता है कि अनुवादक ने पाठ की दिशा को सही रूप में पहचाना है या नहीं, क्योंकि दिशा के अनुरूप भाषा, शैली और शब्दावली का चयन न होने पर अनुवाद प्रभावहीन हो जाता है। ये दोनों दिशाएँ भिन्न प्रकृति की हैं और उनकी समीक्षा के मानदंड भी अलग-अलग होते हैं।साहित्येतर अनुवाद की पहली दिशा प्रशासनिक, विधिक और संस्थागत अनुवाद की है। इस दिशा में सरकारी आदेश, अधिसूचनाएँ, परिपत्र, विधिक दस्तावेज़, न्यायिक निर्णय, नियमावली तथा कार्यालयीन पत्राचार सम्मिलित होते हैं। इस प्रकार के अनुवाद में भाषा औपचारिक, मानकीकृत और निश्चित ढाँचे में बँधी होती है।

उदाहरण-

The matter is under consideration.

⟶ विषय विचाराधीन है।

Returned in original with remarks.

⟶ टिप्पणी सहित मूल रूप में लौटाया गया।

This order shall come into force with immediate effect.

⟶ यह आदेश तत्काल प्रभाव से लागू होगा।

अनुवादसमीक्षा में यह देखा जाता है कि ऐसे वाक्यों का अनुवाद कार्यालयीन परंपरा, प्रशासनिक शैली और विधिक गंभीरता को बनाए रखता है या नहीं। यदि इस दिशा के पाठ को अत्यधिक सरल या बोलचाल की भाषा में अनूदित किया गया हो, तो उसे त्रुटिपूर्ण माना जाता है।साहित्येतर अनुवाद की दूसरी दिशा जनसंचार, व्यावसायिक और सूचना-प्रधान अनुवाद की है। इसमें समाचारपत्र, विज्ञापन, प्रेस विज्ञप्ति, व्यापारिक रिपोर्ट, आर्थिक समाचार और सार्वजनिक सूचनाएँ आती हैं। इस दिशा में भाषा अपेक्षाकृत सरल, संक्षिप्त और पाठककेंद्रित होती है।

उदाहरण—

Prices are expected to rise.

⟶ कीमतों में बढ़ोतरी की संभावना है।

The market showed a downward trend.

⟶ बाजार में गिरावट का रुख देखा गया।

The company recorded higher profits this year.

⟶ कंपनी ने इस वर्ष अधिक लाभ अर्जित किया।

अनुवाद की समीक्षा में यह देखा जाता है कि भाषा स्पष्ट, प्रभावी और सामान्य पाठक के लिए सहज है या नहीं। यदि समाचार की भाषा को अत्यधिक दफ्तरशाही या विधिक शैली में अनूदित कर दिया जाए, तो उसका संप्रेषण प्रभाव कम हो जाता है।अनुवादसमीक्षा के अंतर्गत यह भी परखा जाता है कि अनुवादक ने दोनों दिशाओं के बीच उचित अंतर बनाए रखा है या नहीं। कई बार यह देखा जाता है कि प्रशासनिक पाठ को समाचारशैली में या समाचारपाठ को कार्यालयीन भाषा में अनूदित कर दिया जाता है, जिससे अनुवाद की दिशा भ्रमित हो जाती है। ऐसे मामलों में समीक्षा अनुवादक की दिशा-बोध क्षमता को प्रश्नांकित करती है।

(5) साहित्येतर अनुवाद की समीक्षा — पाठक

साहित्येतर अनुवादसमीक्षा में पाठक को केंद्रीय स्थान दिया जाता है, क्योंकि ऐसे अनुवादों का मुख्य उद्देश्य किसी निश्चित पाठकवर्ग तक सूचना, निर्देश या निर्णय को प्रभावी ढंग से पहुँचाना होता है। साहित्येतर पाठ केवल पढ़ने के लिए नहीं होते, बल्कि उनका प्रयोग प्रशासनिक, विधिक, तकनीकी या सामाजिक स्तर पर किया जाता है। इसलिए अनुवादसमीक्षा में यह देखा जाता है कि अनुवाद लक्ष्यपाठक की आवश्यकता, योग्यता और समझस्तर के अनुरूप है या नहीं।

इस बिंदु के अंतर्गत सबसे पहले यह जाँचा जाता है कि अनुवाद किस पाठकवर्ग के लिए किया गया है। यदि पाठ सामान्य जनता के लिए है, तो भाषा सरल, सहज और स्पष्ट होनी चाहिए। इसके विपरीत यदि पाठ विशेषज्ञों, अधिकारियों या तकनीकी कर्मियों के लिए है, तो सीमित और आवश्यक पारिभाषिक शब्दावली का प्रयोग स्वीकार्य माना जाता है।

उदाहरण-

Public Notice

⟶ सार्वजनिक सूचना

Town Planning Authority

⟶ नगर योजना प्राधिकरण

यदि ऐसे पदनामों का अनुवाद अत्यधिक कठिन या संस्कृतनिष्ठ कर दिया जाए, तो सामान्य पाठक के लिए अर्थ ग्रहण करना कठिन हो सकता है। अनुवादसमीक्षा इस प्रकार की असंगति को चिह्नित करती है।पाठककेंद्रित समीक्षा में यह भी देखा जाता है कि अनुवाद भ्रमरहित है या नहीं। साहित्येतर अनुवाद में द्वयर्थक शब्द या अस्पष्ट वाक्य पाठक को गलत निष्कर्ष तक पहुँचा सकते हैं।

उदाहरण—

He was responsible to recover the land.

⟶ वह भूमि की वसूली के लिए उत्तरदायी था।

यदि इसका अनुवाद "वहभूमिकीवसूलीकेप्रतिउत्तरदायीथा"कियाजाए, तो पाठक के लिए अर्थ अस्पष्ट हो सकता है। समीक्षा ऐसे अनुवादों को पाठकदृष्टि से कमजोर मानती है।पाठककेंद्रित अनुवादसमीक्षा यह भी देखती है कि अनुवाद अनावश्यक रूप से बोझिल तो नहीं है। प्रशासनिक या सूचनाप्रधान पाठों में अत्यधिक लंबे वाक्य पाठक की समझ में बाधा उत्पन्न करते हैं।

उदाहरण—

Please submit the application along with required documents.

⟶ कृपया आवश्यक दस्तावेज़ों सहित आवेदन प्रस्तुत करें।

यह अनुवाद संक्षिप्त, स्पष्ट और पाठकअनुकूल माना जाएगा। यदि इसमें अनावश्यक शब्द जोड़ दिए जाएँ, तो पाठक की सुविधा प्रभावित होती है।

पाठक के संदर्भ में अनुवादसमीक्षा यह भी जाँचती है कि अनुवाद सांस्कृतिक और सामाजिक संदर्भ में पाठक के लिए उपयुक्त है या नहीं। कुछ शब्द या अभिव्यक्तियाँ किसी विशेष वर्ग के लिए सहज होती हैं, किंतु अन्य के लिए नहीं। इसलिए अनुवादक को पाठक की पृष्ठभूमि को ध्यान में रखकर भाषा का चयन करना होता है, और समीक्षा उसी संतुलन का मूल्यांकन करती है।

(6) साहित्येतर अनुवाद की समीक्षा — प्रक्रियात्मक

साहित्येतर अनुवादसमीक्षा में प्रक्रियात्मक पक्ष का विशेष महत्त्व होता है। इस बिंदु के अंतर्गत अनुवाद को एक अंतिम उत्पाद के रूप में नहीं, बल्कि एक क्रमबद्ध प्रक्रिया के रूप में देखा जाता है। समीक्षा यह जाँचती है कि अनुवादक ने मूल पाठ को समझने, अर्थ निर्धारित करने, शब्दावली चुनने, वाक्यरचना गढ़ने और अंतिम संपादन तक की प्रक्रिया में कितनी सावधानी और तर्कसंगतता अपनाई है।

प्रक्रियात्मक समीक्षा में सबसे पहले यह देखा जाता है कि अनुवादक ने मूल पाठ के संपूर्ण संदर्भ को ध्यान में रखकर अनुवाद किया है या केवल वाक्यदरवाक्य शब्दांतरण किया है। उदाहरण के लिए—

Will you take meals?

का अनुवाद

⟶ क्या आप भोजन करेंगे?

अधिक संदर्भसंगत और स्वाभाविक है, जबकि

⟶ क्या आप भोजन लेंगे?

कुछ स्थितियों में असंगत प्रतीत हो सकता है। समीक्षा यह परखती है कि अनुवाद प्रक्रिया में संदर्भ-बोध सक्रिय रहा है या नहीं।प्रक्रियात्मक समीक्षा में वाक्यक्रम और भाषाप्रवाह की भी जाँच की जाती है। यदि अनुवाद में विचारों का क्रम टूटा हुआ हो या वाक्य आपस में तार्किक रूप से न जुड़ते हों, तो अनुवाद दोषपूर्ण माना जाता है।

उदाहरण—

Please submit the report immediately.

⟶ कृपया प्रतिवेदन तत्काल प्रस्तुत करें।

यह अनुवाद संक्षिप्त, क्रमबद्ध और प्रक्रियात्मक रूप से संतुलित है।

प्रक्रियात्मक समीक्षा यह भी देखती है कि अनुवाद में दोहराव, अनावश्यक शब्द या असंगत प्रयोग तो नहीं है। प्रशासनिक और तकनीकी पाठों में ऐसी त्रुटियाँ अनुवाद की विश्वसनीयता को प्रभावित करती हैं। इसलिए यह बिंदु अनुवाद की निर्माणप्रक्रिया की गुणवत्ता का मूल्यांकन करता है।

(7) संक्षेपण और अनुवाद–समीक्षा

साहित्येतर अनुवाद में संक्षेपण एक अनिवार्य और महत्त्वपूर्ण प्रक्रिया है, विशेषतः समाचार, प्रशासनिक रिपोर्ट, आर्थिक विश्लेषण और सूचनापत्रों में। इस बिंदु के अंतर्गत अनुवादसमीक्षा यह जाँचती है कि अनुवाद करते समय जहाँ संक्षेपण किया गया है, वहाँ अर्थ की हानि या विकृति तो नहीं हुई है।

संक्षेपण का उद्देश्य मूल पाठ की विस्तृत जानकारी को सीमित शब्दों में इस प्रकार प्रस्तुत करना होता है कि मुख्य भाव सुरक्षित रहे।

उदाहरण—

विस्तृत भाव	संक्षिप्त अनुवाद
बाजार में कीमतों में लगातार गिरावट देखी गई	मंदी

शेयरों की मांग अचानक बढ़ गई	उछाल
बाजार में गतिविधियाँ सामान्य रहीं	स्थिरता
व्यापार में तेजी आई	तेजी

अनुवादसमीक्षा यह देखती है कि ऐसे संक्षेपण पाठ के उद्देश्य और संदर्भ के अनुकूल हैं या नहीं। यदि संक्षेपण के कारण आवश्यक सूचना छूट जाए, तो अनुवाद अधूरा माना जाएगा।प्रशासनिक संदर्भ में—

The committee discussed various issues and reached a conclusion.

का संक्षिप्त अनुवाद—

⟶ समिति ने विचार-विमर्श कर निर्णय लिया।

यहाँ समीक्षा यह सुनिश्चित करती है कि संक्षेपण के बावजूद मूल आशय सुरक्षित है।

अपनी प्रगति जांचें

प्रश्न 1: पुनःअनुवाद आधारित मूल्यांकन से आप क्या समझते हैं?

प्रश्न 2: अनुक्रिया आधारित मूल्यांकन साहित्यिक अनुवाद में क्यों उपयोगी माना जाता है?

प्रश्न 3: अनुवादसमीक्षा और अनुवादमूल्यांकन में एक मुख्य अंतर लिखिए।

10.11 सारांश

इस इकाई में अनुवाद अध्ययन के उस महत्वपूर्ण चरण का विस्तृत विवेचन प्रस्तुत किया गया है, जो अनुवादप्रक्रिया को पूर्णता, विश्वसनीयता और प्रामाणिकता प्रदान करता है। यह इकाई स्पष्ट करती है कि अनुवाद केवल स्रोत भाषा से लक्ष्य भाषा में पाठ का रूपांतरण नहीं है, बल्कि एक ऐसी सतत प्रक्रिया है जिसमें पुनरीक्षण, मूल्यांकन और समीक्षा अनिवार्य घटक हैं। पुनरीक्षण के अंतर्गत अनूदित पाठ की भाषिक, अर्थगत, शैलीगत और फॉर्मेटगत जाँच की जाती है, जिससे अनुवाद लक्ष्य भाषा की स्वाभाविकता और संप्रेषणीयता प्राप्त कर सके। इसमें पुनरीक्षक की भूमिका, उसका प्रशिक्षण और पुनरीक्षण की व्यावहारिक उपयोगिता को विशेष रूप से रेखांकित किया गया है।

इकाई में अनुवाद मूल्यांकन की सैद्धांतिक पृष्ठभूमि, तकनीकों और अनुप्रयोगों का विश्लेषण किया गया है, जहाँ पुनःअनुवाद आधारित मूल्यांकन और अनुक्रिया आधारित मूल्यांकन को प्रमुख पद्धतियों के रूप में प्रस्तुत किया गया है। इसके साथ ही सघन परीक्षण, वाचन परीक्षण, बोधन परीक्षण और मूलपाठ आधारित मूल्यांकन जैसे परीक्षणों के माध्यम से अनुवाद की गुणवत्ता को परखने के आयाम स्पष्ट किए गए हैं। अनुवाद समीक्षा के अंतर्गत साहित्यिक और साहित्येतर पाठों की समीक्षा, तुलनात्मक दृष्टि तथा पाठककेंद्रित विश्लेषण को महत्त्व दिया गया है। इस प्रकार यह इकाई अनुवाद को एक जिम्मेदार, बहुआयामी और अकादमिक अनुशासन के रूप में स्थापित करती है।

10.12 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)

प्रश्न 1 का उत्तर: अनुवाद में पुनरीक्षण का अभिप्राय अनूदित पाठ की पुनः जाँच कर उसमें भाषिक, अर्थगत और शैलीगत त्रुटियों का संशोधन करना है। यह प्रक्रिया अनुवाद को अधिक स्वाभाविक, स्पष्ट और लक्ष्यभाषा के अनुरूप बनाती है। पुनरीक्षण की विस्तृत अवधारणा के लिए ऊपर दिए गए संबंधित खंड का अवलोकन करें।

प्रश्न 2 का उत्तर: अनुवाद में भाषिक, अर्थगत और शैलीगत परिष्कार का उद्देश्य अनूदित पाठ को व्याकरणिक शुद्धता, आशय-समानता और विषयानुकूल शैली प्रदान करना है। इन तीनों स्तरों का संतुलन अनुवाद को प्रभावी बनाता है। इस विषय की स्पष्ट समझ हेतु ऊपर प्रस्तुत विवेचन सहायक होगा।

प्रश्न 3 का उत्तर: अनुवाद मूल्यांकन वह प्रक्रिया है जिसके माध्यम से अनूदित पाठ की गुणवत्ता, संप्रेषणीयता और प्रयोजन-सिद्धि का परीक्षण किया जाता है। इसमें सुधार की अपेक्षा विश्लेषण और निष्कर्ष पर अधिक बल दिया जाता है। अनुवाद मूल्यांकन की अवधारणा को समझने के लिए संबंधित अनुभाग देखें।

प्रश्न 4 का उत्तर: पुनःअनुवाद आधारित मूल्यांकन वह पद्धति है जिसमें अनूदित पाठ को पुनः स्रोतभाषा में रूपांतरित कर मूल पाठ से उसकी तुलना की जाती है, जिससे अर्थ-सुरक्षा का परीक्षण किया जा सके। इस पद्धति की सैद्धांतिक पृष्ठभूमि हेतु ऊपर दिया गया विवेचन उपयोगी रहेगा।

प्रश्न 5 का उत्तर: अनुक्रिया आधारित मूल्यांकन में अनुवाद की सफलता का निर्धारण पाठक की प्रतिक्रिया के आधार पर किया जाता है। यह पद्धति विशेषतः साहित्यिक अनुवाद में उपयोगी मानी जाती है, क्योंकि इसमें भावात्मक और संवेदनात्मक प्रभाव को महत्त्व दिया जाता है। विस्तृत चर्चा के लिए संबंधित खंड का अध्ययन करें।

प्रश्न 6 का उत्तर: अनुवादसमीक्षा और अनुवाद–मूल्यांकन में मुख्य अंतर यह है कि समीक्षा विवेचनात्मक और तुलनात्मक होती है, जबकि मूल्यांकन परीक्षणात्मक और निष्कर्षपरक। दोनों की भूमिका और प्रकृति को समझने हेतु ऊपर प्रस्तुत सामग्री का अवलोकन सहायक होगा।

10.13 अधिक जानने के लिए पढ़ें

- enuti, Lawrence. The Translator's Invisibility: A History of Translation. London: Routledge, 1995.
- Venuti, Lawrence (ed.). The Translation Studies Reader. London: Routledge, 2000.
- Lefevere, André. Translation, Rewriting and the Manipulation of Literary Fame. London: Routledge, 1992.
- Bassnett, Susan. Translation Studies. London: Routledge, 2002.
- Nida, Eugene A. Toward a Science of Translating. Leiden: E. J. Brill, 1964.
- Nida, Eugene A. and Charles R. Taber. The Theory and Practice of Translation. Leiden: Brill, 1969.
- Toury, Gideon. Descriptive Translation Studies and Beyond. Amsterdam: John Benjamins, 1995.
- हचिन्स, डब्ल्यू. जे. मशीन अनुवाद: इतिहास और संभावनाएँ. (अनुवाद अध्ययन से संबंधित संदर्भ, नामवर सिंह — अनुवाद और साहित्य. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन।
- रामविलास शर्मा — भाषा, साहित्य और संस्कृति. नई दिल्ली: वाणी प्रकाशन।।
- नगेन्द्र — साहित्य सिद्धांत और अनुवाद. दिल्ली: नेशनल पब्लिशिंग हाउस।
- डॉ. कृष्णदत्त पालीवाल — अनुवाद : सिद्धांत और व्यवहार. जयपुर: साहित्य संस्थान।

? 10.14 अभ्यास

(क) संक्षिप्त प्रश्नों के उत्तर लिखिए—

1. अनुवाद में पुनरीक्षण से आप क्या समझते हैं?
2. अनुवाद पुनरीक्षण और अनुवाद समीक्षा में क्या अंतर है?
3. अनुवाद मूल्यांकन का मुख्य उद्देश्य क्या है?
4. पुनःअनुवाद आधारित मूल्यांकन से क्या अभिप्राय है?
5. अनुक्रिया आधारित मूल्यांकन क्यों महत्त्वपूर्ण माना जाता है?

(ख) निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लिखिए—

1. अनुवाद प्रक्रिया में पुनरीक्षण की भूमिका, प्रशिक्षण और उपयोगिता का विवेचन प्रस्तुत कीजिए।
2. अनुवाद मूल्यांकन की अवधारणा स्पष्ट करते हुए उसके प्रमुख परीक्षणों पर प्रकाश डालिए।
3. पुनःअनुवाद आधारित मूल्यांकन की प्रक्रिया, उपयोगिता और सीमाओं की लेख लिखिए।
4. अनुक्रिया आधारित मूल्यांकन की अवधारणा को उदाहरण सहित स्पष्ट कीजिए।
5. अनुवादसमीक्षा के स्वरूप और भेदों पर प्रकाश डालते हुए साहित्यिक अनुवादसमीक्षा की विशेषताओं पर चर्चा कीजिए।
6. साहित्येतर पाठों की अनुवाद–समीक्षा के प्रमुख मानदंडों की उल्लेख करें।

शब्दकोश

पुनरीक्षण : अनूदित पाठ की पुनः जाँच एवं संशोधन की प्रक्रिया, अनुवाद मूल्यांकन : अनुवाद की गुणवत्ता, सटीकता और प्रभावशीलता का परीक्षण, पुनःअनुवाद : अनूदित पाठ का पुनः स्रोतभाषा में रूपांतरण, अनुक्रिया आधारित मूल्यांकन : पाठक की प्रतिक्रिया के आधार पर अनुवाद का परीक्षण, अनुवादसमीक्षा : अनूदित पाठ का आलोचनात्मक एवं तुलनात्मक विवेचन, मूलनिष्ठता : मूल पाठ के आशय और अर्थ के प्रति निष्ठा, पठनीयता : अनूदित पाठ की सहजता और प्रवाहशीलता, बोधगम्यता : पाठक द्वारा अर्थ ग्रहण करने की क्षमता, प्रयोजन–सिद्धि : अनुवाद द्वारा निर्धारित उद्देश्य की पूर्ति इत्यादि।

*** ***** ***

इकाई 11 - अनुवाद: उत्तर आधुनिकता और अस्मिताओं के संदर्भ में

इकाई की रूपरेखा

11.1 उद्देश्य
11.2 प्रस्तावना
11.3 उत्तरआधुनिकता की संकल्पना
11.4 अस्मिता की अवधारणा
11.5 उत्तरआधुनिकता और अस्मिता का अंतर्संबंध
11.6 उत्तरआधुनिकतावाद एवं अनुवाद - वैचारिक अवधारणा
11.7 पैरोडी एवं पेश्टीच
11.8 माध्यम के माध्यम से विचारप्रस्तुति
11.9 दलित साहित्य के अनुवाद की वैचारिकी
11.10 दृश्यअनुकूल और प्रसारणअनुकूल शैली
11.11 चित्र और संकेतों से भावप्रस्तुति
11.12 पाठ की उपयोगिता
11.13 स्त्रीपाठ की दृष्टि
11.14 सारांश
11.15 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)
11.16 अधिक जानने के लिए पढ़ें
11.17 अभ्यास प्रश्न

11.1 उद्देश्य:

इस इकाई के अध्ययन से आप-

- उत्तरआधुनिकता और अस्मिता की अवधारणाओं को अनुवाद के संदर्भ में स्पष्ट रूप में ग्रहण किया जाएगा।
- पैरोडी, पेश्टीच और माध्यमआधारित विचारप्रस्तुति की भूमिका का सैद्धांतिक विश्लेषण प्रस्तुत होगा।
- दलित साहित्य के अनुवाद में निहित वैचारिक तथा अस्मितामूलक प्रश्नों की आलोचनात्मक पहचान निर्मित होगी।
- दृश्यअनुकूल, प्रसारणअनुकूल शैली और चित्रसंकेत आधारित अभिव्यक्ति का तथ्यपरक मूल्यांकन संभव होगा।
- उत्तरआधुनिक संदर्भ में पाठ की उपयोगिता और सीमाओं पर स्वतंत्र दृष्टि विकसित होगी।

11.2 प्रस्तावना:

उत्तरआधुनिकता के उदय के साथ साहित्य, संस्कृति और भाषा के अध्ययन में मूलभूत परिवर्तन दिखाई देते हैं। यह दौर एकात्मक अर्थ, स्थिर सत्य और सार्वभौमिक दृष्टियों को अस्वीकार करते हुए बहुलता, विखंडन और विविध अस्मिताओं को महत्व देता है। ऐसे संदर्भ में अनुवाद केवल भाषिक रूपांतरण की प्रक्रिया नहीं रह जाता, बल्कि वह

विचारधाराओं, सांस्कृतिक स्थितियों और सत्तासंबंधों से जुड़ी एक जटिल क्रिया बन जाता है। अस्मिता- जैसे जाति, वर्ग, लिंग, समुदाय और हाशियाकरण, उत्तर-आधुनिक विमर्श का केंद्रीय तत्व है, जिसका प्रभाव अनुवाद की रणनीतियों और उद्देश्यों पर स्पष्ट रूप से पड़ता है। पैरोडी, पेश्टीच, दृश्य और माध्यमआधारित अभिव्यक्तियाँ तथा दलित साहित्य के अनुवाद जैसे प्रश्न यह दर्शाते हैं कि उत्तरआधुनिकता में अनुवाद पाठकेंद्रित न होकर संदर्भकेंद्रित हो गया है। इस इकाई का उद्देश्य अनुवाद को उत्तरआधुनिकता और अस्मिता के व्यापक वैचारिक परिप्रेक्ष्य में समझना है, ताकि अनुवाद की बदलती भूमिका और उसकी सामाजिक-सांस्कृतिक प्रासंगिकता स्पष्ट हो सके।

11.3 उत्तरआधुनिकता की संकल्पना:

उत्तरआधुनिकता (Postmodernism) बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में उभरने वाली वह वैचारिक प्रवृत्ति है, जिसने आधुनिकता की मूल धारणाओं- जैसे तर्क, प्रगति, वस्तुनिष्ठ सत्य और सार्वभौमिकतापर गंभीर प्रश्न खड़े किए। जहाँ आधुनिकता यह मानती थी कि विज्ञान, विवेक और तकनीक के माध्यम से मानव समाज को एक निश्चित दिशा में आगे बढ़ाया जा सकता है और इतिहास एक रैखिक प्रगति की कथा है, वहीं उत्तरआधुनिकता इस विश्वास को अस्वीकार करती है। यह दृष्टि किसी एक सत्य, एक इतिहास या एक समान दृष्टिकोण की वैधता को चुनौती देती है और बहुलता, विविधता तथा संदर्भगत अर्थ को केंद्र में रखती है। इस कारण उत्तरआधुनिकता को किसी एक निश्चित दर्शन के रूप में नहीं, बल्कि एक व्यापक बौद्धिक-सांस्कृतिक दृष्टिकोण के रूप में समझा जाता है।

उत्तरआधुनिकता का उदय द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद की ऐतिहासिक परिस्थितियों से गहराई से जुड़ा हुआ है। विश्वयुद्धों की विभीषिका, औपनिवेशिक शोषण, फासीवाद, परमाणु विनाश और बाद में पूँजीवाद व उपभोक्तावाद के विस्तार ने आधुनिकता के प्रगतिआधारित आशावाद को गहरा आघात पहुँचाया। यह स्पष्ट होने लगा कि विज्ञान और तकनीक अपने आप में मानव कल्याण की गारंटी नहीं हैं। इसी पृष्ठभूमि में उत्तरआधुनिक चिंतन ने यह प्रतिपादित किया कि ज्ञान और सत्य किसी तटस्थ आधार पर नहीं, बल्कि सत्ता, भाषा और संस्कृति के जटिल संबंधों से निर्मित होते हैं। इसलिए किसी भी ज्ञान-दावे को अंतिम या सार्वभौमिक नहीं माना जा सकता।

उत्तरआधुनिकता की संकल्पना को स्पष्ट करने में जाँ-फ़्रांस्वा ल्योतार का 'महावृत्तांतों के अंत' का विचार अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। आधुनिकता जिन व्यापक आख्यानों- जैसे प्रगति, राष्ट्र, वैज्ञानिक वस्तुनिष्ठता या सार्वभौमिक मानवताके माध्यम से समाज और इतिहास को समझने का दावा करती थी, उत्तरआधुनिकता उनके प्रति अविश्वास प्रकट करती है। इनके स्थान पर छोटे, स्थानीय और संदर्भविशेष आख्यान उभरते हैं, जो हाशिये पर स्थित समुदायों और दबाई गई अस्मिताओं को अपनी बात कहने का अवसर देते हैं। इस प्रकार उत्तरआधुनिकता ज्ञान और अर्थ को केंद्रीकृत करने के बजाय विकेंद्रीकृत करती है और बहुविध दृष्टियों को मान्यता देती है।

भाषा और अर्थ की अवधारणा में भी उत्तरआधुनिकता एक मौलिक परिवर्तन प्रस्तुत करती है। जैक देरिदा के विखंडन सिद्धांत के अनुसार भाषा में अर्थ स्थिर नहीं होता, बल्कि वह निरंतर बदलता और स्थगित होता रहता है। किसी भी पाठ का कोई एक अंतिम या निर्णायक अर्थ संभव नहीं है; अर्थ का निर्माण पाठ, पाठक और संदर्भ के अंतर्संबंध से होता है। इस दृष्टि से लेखक की सर्वोच्च सत्ता कमजोर पड़ती है और पाठक की भूमिका अधिक सक्रिय हो जाती है। यही विचार साहित्य, कला, इतिहासबोध और सांस्कृतिक अध्ययन में पैरोडी, पेश्टीच, अंतर्पाठीयता, विखंडित संरचना और मिश्रित शैलियों जैसी प्रवृत्तियों के रूप में सामने आता है, जहाँ उच्च और निम्न संस्कृति के बीच की पारंपरिक सीमाएँ भी टूट जाती हैं।

उत्तरआधुनिकता का सबसे महत्वपूर्ण पक्ष अस्मिताविमर्श का उभार है। जाति, वर्ग, लिंग, नस्ल, भाषा और समुदाय जैसी अस्मिताएँ अब हाशिये पर न रहकर विमर्श के केंद्र में आ जाती हैं। यह दृष्टि मानती है कि पहचान कोई स्थिर तत्व नहीं, बल्कि सामाजिक-सांस्कृतिक संदर्भों से निरंतर निर्मित होने वाली प्रक्रिया है। इसी कारण दलित, स्त्री, आदिवासी और

अन्य उपेक्षित समुदायों की आवाजें उत्तरआधुनिक विमर्श में विशेष महत्व प्राप्त करती हैं। समग्र रूप से उत्तरआधुनिकता हमें यह सिखाती है कि किसी भी ज्ञान, पाठ या विचार को अंतिम सत्य मानकर स्वीकार करने के बजाय उसे प्रश्न, संवाद और बहुल दृष्टियों के माध्यम से समझना चाहिए। इसी वैचारिक पृष्ठभूमि में अनुवाद, अस्मिता और सांस्कृतिक अध्ययन जैसे क्षेत्रों में नए प्रश्न और नई पद्धतियाँ विकसित होती हैं।

11.4 अस्मिता की अवधारणा

अस्मिता (Identity) की अवधारणा आधुनिक और उत्तरआधुनिक सामाजिक-सांस्कृतिक विमर्श का एक केंद्रीय तत्व है। सामान्य अर्थ में अस्मिता से तात्पर्य व्यक्ति या समुदाय की उस पहचान से है, जिसके माध्यम से वह स्वयं को और दूसरों से अपने भिन्न अस्तित्व को समझता है। यह पहचान केवल व्यक्तिगत चेतना तक सीमित नहीं होती, बल्कि सामाजिक संरचनाओं, सांस्कृतिक परंपराओं, ऐतिहासिक अनुभवों और सत्ता-संबंधों से निर्मित होती है। अस्मिता व्यक्ति को यह बोध कराती है कि वह कौन है, किस समूह से जुड़ा है और समाज में उसका स्थान क्या है। इस दृष्टि से अस्मिता केवल आत्मपरक अनुभूति नहीं, बल्कि एक सामाजिक निर्मिति है।

परंपरागत रूप से अस्मिता को स्थिर और स्वाभाविक माना जाता रहा है। जाति, धर्म, भाषा, लिंग या राष्ट्र जैसी श्रेणियों को जन्मजात और अपरिवर्तनीय समझा गया। किंतु आधुनिक सामाजिक चिंतन ने यह स्पष्ट किया कि अस्मिता किसी एक कारक से निर्धारित नहीं होती। व्यक्ति की पहचान अनेक स्तरों पर निर्मित होती है और समय, स्थान तथा परिस्थितियों के साथ उसमें परिवर्तन भी होता रहता है। उत्तरआधुनिक दृष्टि इस विचार को और आगे ले जाती है तथा यह मानती है कि अस्मिता कोई स्थायी सार नहीं, बल्कि निरंतर बनने-बिगड़ने वाली प्रक्रिया है। इस प्रक्रिया में सामाजिक अपेक्षाएँ, सांस्कृतिक मूल्य, भाषा, शिक्षा, मीडिया और सत्तातंत्र की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। उत्तरआधुनिक विमर्श में अस्मिता को बहुवचन और संदर्भसापेक्ष माना जाता है। व्यक्ति एक ही समय में कई अस्मिताओं के साथ जीता है- जैसे वह किसी जाति का सदस्य भी हो सकता है, किसी वर्ग से भी जुड़ा हो सकता है, किसी भाषा और क्षेत्रीय संस्कृति का प्रतिनिधि भी हो सकता है। इन अस्मिताओं के बीच कभी सामंजस्य होता है, तो कभी टकराव। इस दृष्टि से अस्मिता कोई एकरेखीय या एकांगी संरचना नहीं है। यही कारण है कि उत्तरआधुनिक चिंतन उन महावृत्तांतों को अस्वीकार करता है, जो किसी एक पहचान को सार्वभौमिक या सर्वोच्च मानते हैं। इसके स्थान पर यह हाशिये पर स्थित अस्मिताओं- जैसे दलित, स्त्री, आदिवासी, अल्पसंख्यक और भाषाई समुदायोंको केंद्र में लाने का प्रयास करता है।

अस्मिता का प्रश्न सत्ता से गहराई से जुड़ा हुआ है। समाज में जिन समूहों के पास सत्ता होती है, उनकी अस्मिताएँ 'सामान्य' या 'मुख्यधारा' के रूप में स्थापित हो जाती हैं, जबकि कमजोर या वंचित समूहों की अस्मिताएँ हाशिये पर धकेल दी जाती हैं। मिशेल फूको के विचारों के अनुसार ज्ञान, भाषा और सत्ता मिलकर यह तय करते हैं कि कौनसी पहचान वैध मानी जाएगी और कौनसी नहीं। इसी कारण अस्मिताविमर्श केवल आत्मपरिचय का प्रश्न न होकर संघर्ष और प्रतिरोध का भी रूप ले लेता है। हाशियाकृत समुदाय अपनी पहचान को पुनः परिभाषित करने और सम्मानजनक स्थान प्राप्त करने के लिए सांस्कृतिक, साहित्यिक और भाषिक माध्यमों का सहारा लेते हैं।साहित्य और अनुवाद के क्षेत्र में अस्मिता की अवधारणा विशेष महत्व रखती है। साहित्य अस्मिताओं की अभिव्यक्ति, पुनर्निर्माण और प्रतिरोध का सशक्त माध्यम बनता है, जबकि अनुवाद उन अस्मिताओं को एक भाषा और संस्कृति से दूसरी भाषा और संस्कृति तक पहुँचाने का कार्य करता है। उत्तरआधुनिक संदर्भ में यह स्वीकार किया जाता है कि अनुवाद तटस्थ प्रक्रिया नहीं है; वह अस्मिता को या तो दृश्यमान बना सकता है या उसे दबा भी सकता है। इसलिए अस्मिता की अवधारणा अनुवादअध्ययन में केवल सैद्धांतिक विषय नहीं रह जाती, बल्कि नैतिक और वैचारिक उत्तरदायित्व का प्रश्न बन जाती है। इस प्रकार अस्मिता की संकल्पना उत्तरआधुनिक विमर्श में व्यक्ति, समाज, साहित्य और अनुवाद- सभी को जोड़ने वाली एक केंद्रीय कड़ी के रूप में उभरती है।

11.5 उत्तरआधुनिकता और अस्मिता का अंतर्संबंध

उत्तरआधुनिकता और अस्मिता का अंतर्संबंध समकालीन सामाजिक-सांस्कृतिक विमर्श का एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण पक्ष है। उत्तरआधुनिकता जिस प्रकार आधुनिकता के सार्वभौमिक सत्य, स्थिर पहचान और एकरैखिक इतिहास की अवधारणाओं को चुनौती देती है, उसी प्रक्रिया में अस्मिता को भी नए सिरे से समझने का मार्ग प्रशस्त करती है। आधुनिक दृष्टि में अस्मिता को प्रायः स्थिर, पूर्वनिर्धारित और स्वाभाविक माना गया था, किंतु उत्तरआधुनिकता इस मान्यता को अस्वीकार करती है और यह प्रतिपादित करती है कि अस्मिता कोई जन्मजात सार नहीं, बल्कि सामाजिक, सांस्कृतिक और भाषिक प्रक्रियाओं के माध्यम से निर्मित होने वाली संरचना है। इस प्रकार उत्तरआधुनिकता अस्मिता को एक स्थायी अवस्था के बजाय निरंतर परिवर्तनशील प्रक्रिया के रूप में देखती है।

उत्तरआधुनिक चिंतन यह स्पष्ट करता है कि अस्मिता हमेशा संदर्भसापेक्ष होती है। व्यक्ति या समुदाय की पहचान समय, स्थान, भाषा, सत्ता-संरचना और सांस्कृतिक अनुभवों के अनुसार बदलती रहती है। यही कारण है कि उत्तरआधुनिक विमर्श किसी एक 'मुख्य' या 'सार्वभौमिक' अस्मिता को स्वीकार नहीं करता। इसके स्थान पर यह बहुल अस्मिताओं के सहअस्तित्व पर बल देता है। जाति, वर्ग, लिंग, नस्ल, भाषा और क्षेत्र जैसी पहचानें उत्तरआधुनिक दृष्टि में एक-दूसरे से अलग-थलग नहीं होतीं, बल्कि आपस में अंतःक्रियाशील रहती हैं। इस अंतर्संबंध के कारण अस्मिता एक जटिल और बहुस्तरीय संरचना के रूप में सामने आती है। उत्तरआधुनिकता और अस्मिता का संबंध सत्ता-विमर्श से भी गहराई से जुड़ा हुआ है। उत्तरआधुनिक विचारक यह मानते हैं कि अस्मिता का निर्माण निष्पक्ष या तटस्थ प्रक्रिया नहीं है, बल्कि यह सत्ता, भाषा और विमर्श के माध्यम से संचालित होती है। जिन समूहों के पास सांस्कृतिक और राजनीतिक सत्ता होती है, उनकी अस्मिताएँ 'सामान्य' या 'मानक' के रूप में स्थापित हो जाती हैं, जबकि हाशिये पर स्थित समुदायों की अस्मिताएँ अदृश्य या विकृत रूप में प्रस्तुत की जाती हैं। उत्तरआधुनिकता इस असमानता को उजागर करती है और उन दबाई गई अस्मिताओं को वैधता प्रदान करती है, जिन्हें आधुनिकता के महावृत्तांतों ने लंबे समय तक अनदेखा किया था। साहित्य, कला और सांस्कृतिक अभिव्यक्तियों में उत्तरआधुनिकता और अस्मिता का यह अंतर्संबंध विशेष रूप से स्पष्ट दिखाई देता है। उत्तरआधुनिक साहित्य में हाशियाकृत पात्रों, विखंडित आत्मपहचान और बहुवचन अनुभवों को प्रमुखता दी जाती है। यह साहित्य किसी एक स्थिर 'स्व' (self) को प्रस्तुत करने के बजाय अस्मिता के टूटने-जुड़ने की प्रक्रिया को अभिव्यक्त करता है। इसी क्रम में दलित, स्त्री, आदिवासी और अल्पसंख्यक विमर्शों को साहित्यिक वैधता प्राप्त होती है, जो अस्मिता को संघर्ष, प्रतिरोध और आत्म-पुनर्निर्माण के रूप में प्रस्तुत करते हैं।

अनुवाद के संदर्भ में उत्तरआधुनिकता और अस्मिता का अंतर्संबंध और भी जटिल हो जाता है। उत्तरआधुनिक दृष्टि यह स्वीकार करती है कि अनुवाद केवल भाषिक रूपांतरण नहीं है, बल्कि वह अस्मिता के पुनःसंरचन का माध्यम भी है। किसी पाठ का अनुवाद करते समय यह प्रश्न अनिवार्य रूप से उठता है कि अनूदित पाठ में किस अस्मिता को प्रमुखता दी जा रही है और किसे हाशिये पर छोड़ा जा रहा है।

महत्वपूर्ण बिंदु

उत्तरआधुनिक अनुवादविमर्श में अर्थ को स्थिर न मानकर बहुविध, संदर्भआधारित और सत्तासंबंधों से निर्मित माना जाता है, जिसके कारण अनुवाद एक वैचारिक और सांस्कृतिक हस्तक्षेप के रूप में उभरता है।

11.6 उत्तरआधुनिकतावाद एवं अनुवाद — वैचारिक अवधारणा

उत्तरआधुनिकतावाद एवं अनुवाद का वैचारिक संबंध आधुनिक अनुवाद-चिंतन की सबसे महत्त्वपूर्ण और जटिल अवधारणाओं में से एक है। उत्तरआधुनिकता ने जिस प्रकार साहित्य, इतिहास, दर्शन और संस्कृति की स्थिर मान्यताओं को प्रश्नांकित किया, उसी प्रकार उसने अनुवाद की पारंपरिक अवधारणा- जिसमें निष्ठा, समतुल्यता और मूलपाठ की सर्वोच्चता पर बल दिया जाता था, को भी गहरे स्तर पर पुनःपरिभाषित किया। आधुनिकता के भीतर अनुवाद को प्रायः एक तकनीकी और भाषिक प्रक्रिया के रूप में देखा जाता था, जहाँ लक्ष्य यह होता था कि मूल पाठ का अर्थ अधिकतम सीमा तक सुरक्षित रहे। इसके विपरीत उत्तरआधुनिकतावाद अनुवाद को एक वैचारिक, सांस्कृतिक और सत्तासंबद्ध प्रक्रिया के रूप में समझता है, जिसमें अर्थ का निर्माण पुनः होता है, न कि केवल स्थानांतरण।

उत्तरआधुनिकतावाद का मूल आग्रह यह है कि कोई भी पाठ अर्थ की दृष्टि से पूर्ण, स्थिर या अंतिम नहीं होता। जैक्स देरिदा के विखंडन सिद्धांत ने यह स्थापित किया कि भाषा में अर्थ निरंतर स्थगित होता रहता है और किसी भी पाठ का कोई एक अंतिम अर्थ नहीं हो सकता। इस दृष्टि से अनुवाद मूल पाठ का "प्रतिरूप"नहीं, बल्कि उसका एक नया पाठ है, जो नए संदर्भ, नई संस्कृति और नई पाठकीय अपेक्षाओं में जन्म लेता है। उदाहरण के लिए, जब फ्रांज काफ्का की रचनाओं- जैसे The Trial या Metamorphosisका विभिन्न भाषाओं में अनुवाद किया गया, तो प्रत्येक अनुवाद में काफ्का का 'अस्तित्वगत संकट' अलग-अलग सांस्कृतिक संदर्भों में नए अर्थ ग्रहण करता दिखाई देता है। यह स्थिति उत्तरआधुनिकता के उस आग्रह को पुष्ट करती है कि अनुवाद अर्थ की पुनर्रचना है, न कि केवल उसकी पुनरावृत्ति।

उत्तरआधुनिक अनुवाद-चिंतन में लेखक की सर्वोच्चता भी कमजोर पड़ जाती है। रोलां बार्थ द्वारा प्रतिपादित "लेखककीमृत्यु"कीअवधारणाअनुवादकेक्षेत्रमेंयहसंकेतदेतीहैकिअनुवादककेवललेखककीमंशाकावाहकनहींहोता, बल्कि वह स्वयं एक सक्रिय सर्जक होता है। इस संदर्भ में अनुवादक की भूमिका सह-रचनाकार की बन जाती है। उदाहरणस्वरूप, जॉर्ज लुईस बोर्खेस की रचनाएँ- विशेषतः Pierre Menard, Author of the Quixoteअनुवाद और पुनर्लेखन के संबंध को उत्तरआधुनिक दृष्टि से समझने में अत्यंत सहायक हैं। बोर्खेस यह दिखाते हैं कि वही पाठ, वही शब्द, किंतु भिन्न ऐतिहासिक-सांस्कृतिक संदर्भ में बिल्कुल नया अर्थ उत्पन्न कर सकते हैं। यह अवधारणा अनुवाद को मूल से द्वितीयक मानने की धारणा को पूरी तरह विघटित कर देती है। उत्तरआधुनिकतावाद और अनुवाद के संबंध को समझने में लॉरेंस वेन्यूटी का योगदान अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। वेन्यूटी ने अमेरिकी और पाश्चात्य अनुवादपरंपरा में प्रचलित उस प्रवृत्ति की आलोचना की, जिसमें अनुवाद को इतना सहज और प्रवाही बना दिया जाता है कि पाठक को यह आभास ही नहीं होता कि वह अनूदित पाठ पढ़ रहा है। उन्होंने इसे "अनुवादककीअदृश्यता"कहा। वेन्यूटीके अनुसारयह प्रक्रियासांस्कृतिकरूपसेसमस्याग्रस्तहै, क्योंकि इसमें स्रोतसंस्कृति की भिन्नता को मिटाकर लक्ष्यसंस्कृति को केंद्रीय और सार्वभौमिक बना दिया जाता है। उदाहरण के लिए, यदि लैटिन अमेरिकी लेखक गैब्रिएल गार्सिया मार्केज़ की One Hundred Years of Solitude के अनुवाद में स्थानीय सांस्कृतिक संकेतों को पूरी तरह पश्चिमी संदर्भों में ढाल दिया जाए, तो मूल पाठ की सांस्कृतिक विशिष्टता क्षीण हो जाती है। उत्तरआधुनिक दृष्टि में यह एक प्रकार का सांस्कृतिक विलोपन माना जाएगा। वेन्यूटी द्वारा प्रतिपादित Domestication और Foreignization की अवधारणाएँ उत्तरआधुनिक अनुवाद-चिंतन की केंद्रीय अवधारणाएँ हैं। Domestication में पाठ को लक्ष्यसंस्कृति के अनुरूप बना दिया जाता है, जबकि Foreignization में अनुवादक जानबूझकर विदेशी तत्वों को बनाए रखता है, ताकि पाठक को 'अन्य' संस्कृति का अनुभव हो सके। उत्तरआधुनिकता दूसरी रणनीति को अधिक वैचारिक रूप से सजग मानती है, क्योंकि यह सांस्कृतिक बहुलता और भिन्नता को स्वीकार करती है। उदाहरणस्वरूप, जापानी लेखक हारुकी मुराकामी के उपन्यासों के अंग्रेजी अनुवादों में कई बार जापानी सांस्कृतिक संकेतों को यथावत रखा गया है, जिससे पाठक को एक भिन्न सांस्कृतिक संसार से साक्षात्कार होता है। उत्तरआधुनिकतावाद में अनुवाद का संबंध सत्ता और विचारधारा से भी गहराई से जुड़ा है। मिशेल फूको के सत्ताज्ञान सिद्धांत के आलोक में यह स्पष्ट होता है कि अनुवाद तटस्थ प्रक्रिया नहीं है। यह तय करना कि किस पाठ

का अनुवाद होगा, किस भाषा में होगा और किस रूप में होगा- ये सभी निर्णय सत्तासंरचनाओं से प्रभावित होते हैं। उपनिवेशकालीन संदर्भ में यह बात विशेष रूप से स्पष्ट होती है, जहाँ यूरोपीय भाषाओं में भारतीय ग्रंथों के अनुवादों ने भारतीय संस्कृति की एक विशिष्टऔर कई बार विकृतछवि निर्मित की। उत्तरआधुनिक अनुवाद-चिंतन इस ऐतिहासिक अन्याय को उजागर करता है और अनुवाद को पुनःएक आलोचनात्मक अभ्यास के रूप में देखने का आग्रह करता है। एंद्रे लेफेवर का "Rewriting" सिद्धांत भी उत्तरआधुनिक अनुवाद-चिंतन में अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। लेफेवर के अनुसार अनुवाद साहित्यिक पुनर्लेखन का ही एक रूप है, जो उस समय की विचारधारा, काव्यशास्त्र और सांस्कृतिक अपेक्षाओं से नियंत्रित होता है। उदाहरण के लिए, शेक्सपियर के नाटकों के विभिन्न भाषाओं में हुए अनुवाद यह दिखाते हैं कि हर युग ने शेक्सपियर को अपने समय की संवेदनाओं के अनुसार पुनःरचा है। हिंदी में हैमलेट या मैकबेथ के अनुवाद और रूपांतरण इस बात का प्रमाण हैं कि अनुवाद मूल पाठ को स्थिर नहीं रखता, बल्कि उसे नए सामाजिक-सांस्कृतिक अर्थ प्रदान करता है। उत्तरआधुनिकतावाद ने अनुवाद के क्षेत्र में हाशियाकृत साहित्य- जैसे दलित, स्त्री, आदिवासी और अल्पसंख्यक लेखनको भी केंद्र में लाने का कार्य किया है। उत्तरआधुनिक दृष्टि यह मानती है कि अनुवाद केवल 'महान ग्रंथों' तक सीमित नहीं रहना चाहिए, बल्कि उन आवाज़ों को भी स्थान देना चाहिए जो इतिहास और साहित्य की मुख्यधारा से बाहर रखी गई हैं। उदाहरणस्वरूप, दलित आत्मकथाओं के अंग्रेजी और अन्य भाषाओं में हुए अनुवादों ने न केवल भारतीय समाज की आंतरिक संरचनाओं को वैश्विक पाठकों के सामने प्रस्तुत किया, बल्कि अनुवाद को सामाजिक न्याय के उपकरण के रूप में भी स्थापित किया।

साहित्यिक उदाहरणों की दृष्टि से देखें तो सलमान रुश्दी की Midnight's Children या The Satanic Verses जैसे उपन्यास उत्तरआधुनिक अनुवादसमस्याओं के उत्कृष्ट उदाहरण हैं। इन रचनाओं में बहुभाषिकता, अंतर्पाठीयता और सांस्कृतिक मिश्रण इस स्तर पर उपस्थित हैं कि किसी भी भाषा में उनका अनुवाद अनिवार्य रूप से पुनर्लेखन बन जाता है। यहाँ अनुवादक को केवल भाषा नहीं, बल्कि इतिहास, राजनीति और सांस्कृतिक संकेतों से भी जूझना पड़ता है। यही उत्तरआधुनिक अनुवाद की वास्तविक चुनौती और विशिष्टता है। उत्तरआधुनिकतावाद में अनुवाद की वैचारिक अवधारणा अंततः इस निष्कर्ष तक पहुँचती है कि अनुवाद न तो मूल का अधीनस्थ है और न ही एक निष्पक्ष प्रक्रिया। यह एक रचनात्मक, वैचारिक और सांस्कृतिक हस्तक्षेप है, जिसमें अर्थ, अस्मिता और सत्ता का पुनःसंयोजन होता है। अनुवादक यहाँ केवल भाषाओं के बीच सेतु नहीं बनाता, बल्कि वह संस्कृतियों, विचारधाराओं और इतिहासों के बीच संवाद स्थापित करता है।

11.7 पैरोडी एवं पेश्टीच

उत्तरआधुनिकतावाद में पैरोडी और पेश्टीच को मात्र साहित्यिक अलंकार या तकनीक के रूप में नहीं, बल्कि एक गहरी वैचारिक रणनीति के रूप में देखा जाता है। जहाँ आधुनिकतावादी साहित्य मौलिकता, गंभीरता और लेखककेंद्रित अर्थ को महत्व देता है, वहीं उत्तरआधुनिकता इन मान्यताओं पर प्रश्नचिह्न लगाती है। इस संदर्भ में पैरोडी और पेश्टीच परंपरा, इतिहास, सत्ता और साहित्यिक प्रामाणिकता की अवधारणाओं को पुनर्विचार के लिए प्रस्तुत करती हैं। उत्तरआधुनिक दृष्टि यह मानती है कि कोई भी रचना पूर्णतः स्वतंत्र या मौलिक नहीं होती, बल्कि वह पूर्ववर्ती ग्रंथों, शैलियों और सांस्कृतिक स्मृतियों से निरंतर संवाद करती है। इसी संवादात्मक प्रक्रिया में पैरोडी और पेश्टीच केंद्रीय भूमिका निभाती हैं और यह स्पष्ट करती हैं कि साहित्यिक अर्थ स्थिर न होकर संदर्भ-सापेक्ष और बहुवचन होते हैं।

पैरोडी मूलतः किसी पूर्ववर्ती रचना, शैली या विचार का विडंबनात्मक पुनर्पाठ है, जिसका उद्देश्य केवल हास्य उत्पन्न करना नहीं, बल्कि उस परंपरा के भीतर निहित दावों और सत्ता-संरचनाओं को उजागर करना होता है। लिंडा हचियन के अनुसार पैरोडी "repetition with critical distance" है, अर्थात् आलोचनात्मक दूरी के साथ की गई पुनरावृत्ति। यह दूरी पैरोडी को साधारण नकल या व्यंग्य से अलग करती है। उत्तरआधुनिक साहित्य में पैरोडी इतिहास,

मिथक और राष्ट्र जैसे महावृत्तांतों को विखंडित करती है। सलमान रुश्दी के Midnight's Children में भारतीय इतिहास को एकरेखीय सत्य के रूप में नहीं, बल्कि विखंडित और बहुवचन आख्यान के रूप में प्रस्तुत किया गया है, जहाँ इतिहास स्वयं एक कथा बन जाता है। इस प्रकार पैरोडी पाठक को यह सोचने के लिए विवश करती है कि जिन परंपराओं को 'स्वाभाविक' माना जाता है, वे वास्तव में किन सामाजिक और राजनीतिक संदर्भों से निर्मित हुई हैं।

अनुवाद के क्षेत्र में पैरोडी की भूमिका विशेष रूप से जटिल हो जाती है, क्योंकि यहाँ केवल भाषा का नहीं, बल्कि विडंबना, अंतर्पाठीय संकेत और सांस्कृतिक स्मृति का भी रूपांतरण करना पड़ता है। यदि किसी उत्तरआधुनिक पाठ में धार्मिक, ऐतिहासिक या साहित्यिक भाषा की पैरोडी है, तो उसका शाब्दिक अनुवाद पैरोडी के प्रभाव को नष्ट कर सकता है। उदाहरणस्वरूप, अंग्रेजी साहित्य में बाइबिलीय भाषा की पैरोडी का हिंदी अनुवाद करते समय अनुवादक को लक्ष्यभाषा में समतुल्य सांस्कृतिक संकेत खोजने पड़ते हैं। इस प्रक्रिया में अनुवाद स्वयं एक रचनात्मक और वैचारिक हस्तक्षेप बन जाता है, जहाँ अनुवादक लेखक और पाठक के बीच सक्रिय सांस्कृतिक मध्यस्थ की भूमिका निभाता है। पेश्टीच को पैरोडी से इस अर्थ में अलग माना जाता है कि इसमें व्यंग्य या आलोचनात्मक तीखापन अनिवार्य नहीं होता। फ्रेडरिक जेम्सन ने इसे "blank parody" कहा है, जो उत्तरआधुनिक संस्कृति की स्थिति को प्रतिबिंबित करती है। पेश्टीच विभिन्न शैलियों, भाषाओं और रूपों का ऐसा मिश्रण है, जो यह दर्शाता है कि समकालीन समय में मौलिकता की धारणा कमजोर पड़ चुकी है। साहित्य, सिनेमा, विज्ञापन और डिजिटल मीडिया में पुरानी शैलियों, दृश्यों और भाषाओं का पुनः प्रयोगरीमिक्स संस्कृति के रूप मेंपेश्टीच का व्यापक उदाहरण है। साहित्य में भी उत्तरआधुनिक रचनाएँ आत्मकथा, इतिहास, मिथक और पत्रकारिता जैसी विधाओं को एक साथ समाहित करती हैं, जिससे यह स्पष्ट होता है कि शैलियाँ स्वयं स्थिर नहीं हैं।

अनुवाद के संदर्भ में पेश्टीच की चुनौती यह है कि अनुवादक को मूल पाठ की शैलीगत बहुस्तरीयता को लक्ष्यभाषा में किस रूप में बनाए रखना है। यदि किसी पाठ में शास्त्रीय भाषा, आधुनिक बोलचाल और अकादमिक गद्य का मिश्रण है, तो अनुवाद में भी इस विविधता को किसी न किसी रूप में संरक्षित करना आवश्यक हो जाता है। दृश्य और मीडिया आधारित उत्तरआधुनिक संस्कृति में यह चुनौती और बढ़ जाती है, क्योंकि यहाँ भाषिक और दृश्य संकेत एक साथ अर्थ निर्मित करते हैं। किसी ऐतिहासिक चित्र या दृश्य का समकालीन संदर्भ में पुनः प्रयोग पैरोडी या पेश्टीच का रूप ले सकता है, और उसका अनुवाद केवल शब्दों का नहीं, बल्कि दृश्य अर्थों का पुनर्संयोजन भी बन जाता है। इस प्रकार पैरोडी और पेश्टीच उत्तरआधुनिक अनुवाद को एक तकनीकी प्रक्रिया से आगे बढ़ाकर एक गहन सांस्कृतिक और वैचारिक अभ्यास के रूप में स्थापित करती हैं।

11.8 माध्यम के माध्यम से विचारप्रस्तुति

उत्तरआधुनिक विमर्श में 'माध्यम' केवल संदेश को एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुँचाने का साधन नहीं रह जाता, बल्कि वह स्वयं अर्थ-निर्माण की प्रक्रिया का सक्रिय घटक बन जाता है। आधुनिकता के दौर में यह माना जाता था कि विचार अपने आप में पूर्ण है और माध्यम केवल उसे व्यक्त करने का उपकरण है, किंतु उत्तरआधुनिक दृष्टि इस धारणा को अस्वीकार करती है। उदाहरण के लिए, यदि वही राजनीतिक विचार एक दार्शनिक निबंध में प्रस्तुत किया जाए और वही विचार किसी सोशल मीडिया पोस्ट या टीवी डिबेट के माध्यम से आए, तो उसका अर्थ, प्रभाव और ग्रहणशीलता पूरी तरह बदल जाती है। मुद्रित पाठ में विचार विस्तार और तर्क पर आधारित होता है, जबकि दृश्य या डिजिटल माध्यम में वही विचार संक्षिप्त, प्रतीकात्मक और भावोत्तेजक रूप ग्रहण कर लेता है। इससे स्पष्ट होता है कि माध्यम विचार को केवल वहन नहीं करता, बल्कि उसके स्वरूप और अर्थ-सीमा को भी निर्धारित करता है।

फ्रैंकफर्ट स्कूल और विशेष रूप से युर्गेन हाबरमास के संप्रेषण सिद्धांत ने माध्यम के सामाजिक और वैचारिक प्रभावों को समझने में महत्वपूर्ण योगदान दिया। हाबरमास के अनुसार संप्रेषण केवल सूचना का आदान–प्रदान नहीं है, बल्कि वह सामाजिक सहभागिता और सहमति निर्माण की प्रक्रिया है। उदाहरणस्वरूप, किसी सरकारी नीति का विवरण

यदि आधिकारिक दस्तावेज में प्रस्तुत किया जाए, तो वह एक औपचारिक और सत्ता-समर्थित अर्थ देता है, जबकि वही नीति यदि जनसंचार माध्यमोंजैसे समाचार चैनल या सोशल मीडियाके माध्यम से आती है, तो उसमें विरोध, समर्थन और वैकल्पिक व्याख्याएँ जुड़ जाती हैं। उत्तरआधुनिक संदर्भ में यह स्पष्ट हो जाता है कि कोई भी माध्यम निष्पक्ष नहीं होता; वह चयन करता है कि क्या दिखाया जाए, क्या छोड़ा जाए और किस भाषा या छवि के साथ प्रस्तुत किया जाए। इस प्रकार माध्यम विचार को न केवल व्यक्त करता है, बल्कि उसे नियंत्रित और पुनर्गठित भी करता है।

अनुवाद के क्षेत्र में माध्यमआधारित विचारप्रस्तुति और अधिक जटिल रूप ले लेती है। जब कोई विचार एक भाषा से दूसरी भाषा में अनूदित होता है और साथ ही उसका माध्यम भी बदलता है, तो अनुवाद केवल शब्दों का स्थानांतरण नहीं रह जाता। उदाहरण के लिए, शेक्सपियर के नाटकों का हिंदी अनुवाद जब रंगमंच के लिए किया जाता है, तो अनुवादक को संवादों की लंबाई, अभिनय की गति और दर्शकों की सांस्कृतिक समझ को ध्यान में रखना पड़ता है। इसी प्रकार, किसी उपन्यास का फिल्म रूपांतरण करते समय कथा, पात्र और भाषा दृश्य, संगीत और प्रतीकों के माध्यम से व्यक्त किए जाते हैं। यहाँ मूल पाठ का अर्थ पूरी तरह सुरक्षित नहीं रहता, बल्कि नए माध्यम में नए संदर्भों के साथ पुनर्निर्मित होता है। इस प्रक्रिया में अनुवादक या रूपांतरकार एक रचनात्मक मध्यस्थ की भूमिका निभाता है।

उत्तरआधुनिकता में दृश्य और डिजिटल माध्यमों की बढ़ती भूमिका ने विचारप्रस्तुति को बहुस्तरीय बना दिया है। विज्ञापन, सोशल मीडिया मीम्स, वेबसीरीज और ऑनलाइन वीडियो विचारों को तीव्र, खंडित और प्रतीकात्मक रूप में प्रस्तुत करते हैं। उदाहरणस्वरूप, किसी सामाजिक आंदोलन का नारा एक अकादमिक लेख में विस्तृत तर्क के रूप में सामने आता है, जबकि वही नारा सोशल मीडिया पर एक चित्र, हैशटैग या छोटे वीडियो के रूप में व्यापक प्रभाव उत्पन्न करता है। अनुवाद के संदर्भ में यह स्थिति विशेष चुनौती उत्पन्न करती है, क्योंकि अनुवादक को न केवल भाषिक अर्थ, बल्कि दृश्य प्रतीकों, सांस्कृतिक संकेतों और भावनात्मक प्रभावों को भी लक्ष्यभाषा के अनुरूप पुनर्संयोजित करना पड़ता है।

अपनी प्रगति जांचें

प्रश्न 1: उत्तरआधुनिकता की प्रमुख विशेषताएँ क्या हैं और वे अनुवादविचार को किस प्रकार प्रभावित करती हैं?

प्रश्न 2:उत्तरआधुनिक संदर्भ में पेरोडी और पेश्टीच की भूमिका को कैसे समझा जा सकता है?

प्रश्न3 :माध्यमआधारित, विचारप्रस्तुति उत्तरआधुनिक अनुवाद विमर्श में क्यों महत्त्वपूर्ण मानी जाती है?

11.9 दलित साहित्य के अनुवाद की वैचारिकी

दलित साहित्य के अनुवाद की वैचारिकी मूलतः उस ऐतिहासिक और सामाजिक चेतना से जुड़ी हुई है, जो सदियों से हाशिये पर रखे गए समुदायों के अनुभव, संघर्ष और प्रतिरोध को अभिव्यक्ति प्रदान करती है। दलित साहित्य केवल सौंदर्यपरक रचना नहीं है, बल्कि वह सामाजिक यथार्थ का साक्ष्य और परिवर्तन की आकांक्षा का दस्तावेज है। इसी कारण इसका अनुवाद सामान्य साहित्यिक अनुवाद से भिन्न वैचारिक उत्तरदायित्व की माँग करता है। दलित साहित्य की रचनाएँ- चाहे वे आत्मकथाएँ हों, कविताएँ हों या कथाएँ, जातिआधारित उत्पीड़न, अपमान, श्रम और अस्मिता के अनुभवों से निर्मित होती हैं। अनुवादक यदि इन रचनाओं को केवल भाषिक स्तर पर रूपांतरित करता है, तो मूल पाठ की वैचारिक तीव्रता और सामाजिक संदर्भ नष्ट हो सकते हैं। इसलिए दलित साहित्य का अनुवाद करते समय अनुवादक को उस सामाजिक संरचना, ऐतिहासिक पीड़ा और प्रतिरोध की चेतना को समझना आवश्यक होता है, जिसके भीतर से वह साहित्य उत्पन्न हुआ है। यहाँ अनुवाद एक नैतिक और वैचारिक हस्तक्षेप बन जाता है, न कि केवल भाषिक प्रक्रिया।

दलित साहित्य की वैचारिकी को समझने में डॉ. भीमराव आंबेडकर की विचारधारा केंद्रीय भूमिका निभाती है। आंबेडकर के अनुसार जाति केवल सामाजिक व्यवस्था नहीं, बल्कि सत्ता की संरचना है, जो भाषा, ज्ञान और संस्कृति को नियंत्रित करती है। इसी दृष्टि से दलित साहित्य की भाषा भी पारंपरिक साहित्यिक भाषा से भिन्न होती है- वह लोकजीवन से निकली, अनुभव-सिद्ध और कई बार असंस्कृत मानी जाने वाली भाषा होती है। जब इस साहित्य का अनुवाद किसी 'मानक' या 'शिष्ट' भाषा में किया जाता है, तो यह खतरा उत्पन्न होता है कि दलित अनुभव की तीक्ष्णता और विद्रोही स्वर को नरम कर दिया जाएगा। उदाहरणस्वरूप, मराठी दलित आत्मकथाओं- जैसे लक्ष्मण माने की उपरा या दया पवार की बलुतके अंग्रेजी या हिंदी अनुवादों में यह प्रश्न बार-बार उठता है कि क्या अनुवाद मूल पीड़ा और आक्रोश को उसी तीव्रता से संप्रेषित कर पाता है। इस संदर्भ में अनुवादक को केवल शब्द नहीं, बल्कि सामाजिक अनुभव का अनुवाद करना पड़ता है, जो अत्यंत जटिल कार्य है।

दलित साहित्य के अनुवाद में 'स्व' और 'अन्य' का संबंध विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण हो जाता है। उत्तरआधुनिक अस्मिताविमर्श के अनुसार 'अन्य' कोई स्थिर श्रेणी नहीं, बल्कि सत्तानिर्मित स्थिति है। दलित साहित्य में 'अन्य' वह समुदाय है, जिसे मुख्यधारा ने लंबे समय तक मौन में रखा। जब इस साहित्य का अनुवाद मुख्यधारा की भाषा या वैश्विक भाषा- जैसे अंग्रेजी में होता है, तो एक ओर यह दलित अनुभव को व्यापक पाठकसमूह तक पहुँचाता है, वहीं दूसरी ओर यह जोखिम भी उत्पन्न करता है कि दलित अस्मिता को उपभोग की वस्तु बना दिया जाए। गायत्री चक्रवर्ती स्पिवाक ने इस संदर्भ में प्रश्न उठाया है- "क्यासबऑल्टर्नबोलसकताहै?"और अनुवाद के संदर्भ में यह प्रश्न और अधिक जटिल हो जाता है। यदि अनुवादक स्वयं उस समुदाय से नहीं आता, तो क्या वह उस अनुभव को पूरी प्रामाणिकता से प्रस्तुत कर सकता है? इसीलिए दलित साहित्य के अनुवाद में आत्मचेतस अनुवाददृष्टि आवश्यक मानी जाती है, जहाँ अनुवादक अपनी स्थिति, भाषा और सत्तास्थान को लेकर सजग रहता है।

दलित साहित्य की एक प्रमुख विशेषता आत्मकथा और साक्ष्यात्मक लेखन है, जो अनुवाद को और अधिक संवेदनशील बनाती है। आत्मकथा में 'मैं' केवल व्यक्तिगत नहीं, बल्कि सामूहिक 'हम' का प्रतिनिधित्व करता है। जब ओमप्रकाश वाल्मीकि की जूठन या बामा की तमिल आत्मकथा करुक्कु का अनुवाद किया जाता है, तो वह केवल एक व्यक्ति की कहानी नहीं रहती, बल्कि पूरे समुदाय के अनुभव का वैश्विक पाठ बन जाती है। यहाँ अनुवादक को यह ध्यान रखना होता है कि वह अनुभव को न तो रोमांटिक बनाए और न ही उसे करुणाप्रधान नैरेटिव में बदल दे। दलित साहित्य की वैचारिकी करुणा नहीं, बल्कि प्रतिरोध पर आधारित होती है। इसलिए अनुवाद में भी प्रतिरोध की भाषा, प्रतीक और स्वर को बनाए रखना आवश्यक होता है। इसी संदर्भ में कुछ विद्वान दलित साहित्य के अनुवाद को 'राजनीतिक अनुवाद' मानते हैं, क्योंकि यह सत्ता-संरचनाओं को चुनौती देता है और वैकल्पिक इतिहास प्रस्तुत करता है।

अनुवाद यहाँ केवल सेतु नहीं, बल्कि संघर्ष का माध्यम बनता है- एक ऐसा माध्यम जो दलित अनुभव को राष्ट्रीय और वैश्विक विमर्श में स्थापित करता है। उत्तरआधुनिक अनुवाद-चिंतन के आलोक में दलित साहित्य का अनुवाद यह सिद्ध करता है कि कोई भी अनुवाद तटस्थ नहीं होता; वह या तो सत्ता का समर्थन करता है या उसके विरुद्ध खड़ा होता है। इसीलिए दलित साहित्य के अनुवाद की वैचारिकी हमें यह सिखाती है कि अनुवाद केवल भाषा का नहीं, बल्कि इतिहास, अस्मिता और प्रतिरोध का पुनर्लेखन है।

11.10 दृश्यअनुकूल और प्रसारणअनुकूल शैली

उत्तरआधुनिक विमर्श में दृश्यअनुकूल और प्रसारणअनुकूल शैली का उदय इस बोध से जुड़ा है कि आधुनिक युग में अर्थ केवल लिखित शब्दों से नहीं, बल्कि दृश्य, ध्वनि, गति और तकनीक के संयुक्त प्रभाव से निर्मित होता है। पारंपरिक साहित्यिक शैली जहाँ पाठकेन्द्रित और भाषिक संरचना पर आधारित थी, वहीं उत्तरआधुनिक संदर्भ में रचना और अनुवाद ऐसे रूप ग्रहण करते हैं जो दृश्य माध्यमों- जैसे सिनेमा, टेलीविजन, विज्ञापन और डिजिटल मंचके अनुकूल हों।

दृश्यअनुकूल शैली में भाषा संक्षिप्त, प्रतीकात्मक और छवियों के साथ सहचर होती है, जबकि प्रसारणअनुकूल शैली में संवाद, ध्वनि और प्रस्तुति की लय प्रमुख हो जाती है। इस परिवर्तन के कारण साहित्य और अनुवाद दोनों का स्वरूप स्थिर न रहकर गतिशील बन जाता है।

दृश्यअनुकूल शैली का मूल आधार यह है कि पाठक अब केवल पाठ को "पढ़ता"नहीं, बल्कि उसे "देखता"और"अनुभव"करताहै।उत्तरआधुनिक कला और साहित्य में छवि (image) स्वतंत्र अर्थइकाई के रूप में कार्य करती है। किसी कथा, कविता या वैचारिक सामग्री में दृश्य संकेत- जैसे रंग, फ्रेम, प्रतीक और स्थान-भाषा के समानांतर अर्थ रचते हैं। उदाहरणस्वरूप, किसी उपन्यास का फिल्मी रूपांतरण केवल कथानक का अनुवाद नहीं होता, बल्कि दृश्य संरचना के माध्यम से भाव, सत्ता और अस्मिता के नए अर्थ निर्मित करता है। अनुवाद के स्तर पर इसका अर्थ यह है कि अनुवादक को शब्दों के साथ-साथ दृश्य संकेतों की सांस्कृतिक व्याख्या भी करनी होती है, अन्यथा मूल आशय विकृत हो सकता है।

प्रसारणअनुकूल शैली मुख्यतः टेलीविजन, रेडियो और डिजिटल प्रसारण से जुड़ी हुई है, जहाँ समय, दर्शकध्यान और संप्रेषणीयता निर्णायक भूमिका निभाते हैं। इस शैली में भाषा अधिक संवादात्मक, सरल और प्रभावोत्पादक होती है। उत्तरआधुनिक संदर्भ में प्रसारण माध्यम विचार को तटस्थ रूप में नहीं, बल्कि वैचारिक ढाँचे के भीतर प्रस्तुत करता है। उदाहरण के लिए, किसी सामाजिक या राजनीतिक विषय पर आधारित कार्यक्रम में कैमरा कोण, संपादन, पृष्ठभूमि संगीत और संवाद- सभी मिलकर अर्थ का निर्माण करते हैं। जब ऐसे पाठ का अनुवाद किया जाता है, तो अनुवाद केवल भाषिक समतुल्यता तक सीमित नहीं रहता, बल्कि उसे माध्यम की आवश्यकताओं के अनुरूप ढालना पड़ता है, जिससे संदेश प्रभावी रूप में ग्रहण किया जा सके।

दृश्यअनुकूल और प्रसारणअनुकूल शैली उत्तरआधुनिकता के उस सिद्धांत को पुष्ट करती है, जिसमें उच्च और निम्न संस्कृति के भेद को अस्वीकार किया जाता है। टेलीविजन धारावाहिक, समाचार, विज्ञापन और सोशल मीडिया सामग्री भी साहित्यिक और वैचारिक विमर्श का हिस्सा बन जाती है। इस संदर्भ में अनुवादक एक सांस्कृतिक मध्यस्थ की भूमिका निभाता है, जो भाषा, माध्यम और दर्शक- तीनों के बीच संतुलन स्थापित करता है। उदाहरणस्वरूप, किसी साहित्यिक पाठ को वेबश्रृंखला के रूप में प्रस्तुत करते समय संवादों को संक्षिप्त करना, दृश्य प्रतीकों को सांस्कृतिक रूप से अनुकूल बनाना और कथ्य को प्रसारण-लय के अनुसार पुनर्गठित करना आवश्यक हो जाता है। यह प्रक्रिया अनुवाद को सर्जनात्मक हस्तक्षेप में रूपांतरित कर देती है।

11.11 चित्र और संकेतों से भावप्रस्तुति

उत्तरआधुनिक विमर्श में चित्र और संकेत केवल सहायक तत्व नहीं रह जाते, बल्कि वे भावप्रस्तुति के केन्द्रीय माध्यम बन जाते हैं। आधुनिकता में भाव की अभिव्यक्ति मुख्यतः भाषा और तर्क के माध्यम से होती थी, जबकि उत्तरआधुनिक संदर्भ में अर्थ का निर्माण दृश्य संकेतों, प्रतीकों और छवियों के माध्यम से अधिक प्रभावी ढंग से होता है। चित्र शब्दों के स्थान पर नहीं, बल्कि उनके समानांतर अर्थतंत्र के रूप में कार्य करते हैं। उत्तरआधुनिक संस्कृति में पाठक या दर्शक भाव को केवल पढ़ता नहीं, बल्कि उसे दृश्य रूप में ग्रहण करता है, जिससे अनुभूति अधिक तात्कालिक और बहुअर्थी हो जाती है।

संकेतों की भूमिका उत्तरआधुनिक भावप्रस्तुति में विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि संकेत किसी एक स्थिर अर्थ से बँधे नहीं होते। संकेत सामाजिक, सांस्कृतिक और ऐतिहासिक संदर्भों के अनुसार अपना अर्थ बदलते रहते हैं। उदाहरणस्वरूप, विज्ञापन, सिनेमा या डिजिटल माध्यमों में प्रयुक्त प्रतीक- जैसे रंग, वस्तुएँ या शारीरिक मुद्राएँसीधे भावनात्मक प्रतिक्रिया उत्पन्न करती हैं। उत्तरआधुनिक दृष्टि में यह माना जाता है कि संकेतों के माध्यम से भाव की प्रस्तुति

अधिक प्रभावशाली होती है, क्योंकि वह तर्क के बजाय संवेदना को संबोधित करती है। इस प्रक्रिया में दर्शक स्वयं अर्थ-निर्माण में सहभागी बन जाता है।

अनुवाद के संदर्भ में चित्र और संकेतों से भावप्रस्तुति एक जटिल प्रक्रिया बन जाती है। जब किसी पाठ का अनुवाद केवल भाषिक स्तर पर किया जाता है, तो दृश्य संकेतों और प्रतीकों में निहित भाव अक्सर अनूदित नहीं हो पाते। उदाहरण के लिए, किसी सांस्कृतिक प्रतीक का अर्थ एक समाज में सकारात्मक हो सकता है, जबकि दूसरे समाज में वही प्रतीक भिन्न या विरोधी भाव उत्पन्न कर सकता है। ऐसे में अनुवादक को संकेतों के सांस्कृतिक अर्थ को समझते हुए उनका पुनर्संयोजन करना पड़ता है, ताकि मूल भाव की अनुभूति लक्ष्यभाषा में भी संभव हो सके।

उत्तरआधुनिक मीडियासंस्कृति में चित्र और संकेतों के माध्यम से भाव–प्रस्तुति और अधिक तीव्र हो जाती है। टेलीविजन, सिनेमा और डिजिटल प्लेटफॉर्म भावनाओं को दृश्यात्मक ढंग से इस प्रकार प्रस्तुत करते हैं कि शब्द गौण हो जाते हैं। किसी दृश्य में प्रकाश, रंग, कैमरा कोण और संगीत- ये सभी मिलकर भाव का निर्माण करते हैं। अनुवाद की दृष्टि से यह स्थिति यह स्पष्ट करती है कि दृश्य माध्यमों में अनुवाद केवल संवादों का नहीं, बल्कि सम्पूर्ण दृश्य-संरचना का पुनर्पाठ होता है। यहाँ अनुवादक या रूपांतरकार को भाव की दृश्य भाषा को लक्ष्यसंस्कृति में पुनः गढ़ना पड़ता है।

11.12 पाठ की उपयोगिता

उत्तरआधुनिक विमर्श में 'पाठ' की उपयोगिता को किसी स्थिर या एकार्थी संरचना के रूप में नहीं देखा जाता, बल्कि उसे एक खुली, गतिशील और बहुअर्थी प्रक्रिया के रूप में समझा जाता है। आधुनिकता में पाठ को लेखक की मंशा का प्रत्यक्ष प्रतिनिधि माना जाता था, जबकि उत्तरआधुनिक दृष्टि यह मानती है कि पाठ लेखक के नियंत्रण से मुक्त होकर पाठक, संदर्भ और समय के साथ नए-नए अर्थ ग्रहण करता है। इस प्रकार पाठ की उपयोगिता उसके 'अंतिम अर्थ' में नहीं, बल्कि उसकी व्याख्यात्मक संभावनाओं में निहित होती है।

उत्तरआधुनिक सिद्धांतों के अनुसार पाठ केवल पढ़े जाने की वस्तु नहीं, बल्कि अर्थ-निर्माण का क्षेत्र है। पाठक यहाँ निष्क्रिय ग्रहणकर्ता न होकर सक्रिय सहभागी बन जाता है, जो अपने सामाजिक, सांस्कृतिक और वैचारिक अनुभवों के आधार पर पाठ से अर्थ ग्रहण करता है। यही कारण है कि एक ही पाठ विभिन्न पाठकों और विभिन्न कालखंडों में भिन्न-भिन्न अर्थ उत्पन्न करता है। इस संदर्भ में पाठ की उपयोगिता यह है कि वह विचारों के संवाद, असहमति और पुनर्व्याख्या की निरंतर प्रक्रिया को संभव बनाता है।

अनुवाद के क्षेत्र में पाठ की उपयोगिता और अधिक व्यापक हो जाती है। अनुवाद यह स्पष्ट करता है कि पाठ किसी एक भाषा या संस्कृति तक सीमित नहीं होता, बल्कि वह विभिन्न भाषिक और सांस्कृतिक संदर्भों में नए रूप ग्रहण करता है। एक अनूदित पाठ मूल पाठ की पुनरावृत्ति न होकर उसका पुनर्पाठ होता है, जिसमें नए अर्थ, नए संकेत और नई व्याख्याएँ जुड़ जाती हैं। इस प्रकार पाठ की उपयोगिता केवल मूल भाषा में नहीं, बल्कि लक्ष्यभाषा और लक्ष्यसंस्कृति में भी विस्तारित हो जाती है।

उत्तरआधुनिक संदर्भ में पाठ की उपयोगिता उसकी आलोचनात्मक क्षमता से भी जुड़ी हुई है। पाठ सत्ता-संरचनाओं, इतिहास और स्थापित विचारधाराओं पर प्रश्न उठाने का माध्यम बनता है। दलित, स्त्री और हाशियाकृत अस्मिताओं से जुड़े पाठ यह दिखाते हैं कि साहित्य केवल सौंदर्यात्मक अनुभव नहीं, बल्कि सामाजिक हस्तक्षेप का साधन भी है। ऐसे पाठों की उपयोगिता इस बात में निहित है कि वे दबे हुए अनुभवों को अभिव्यक्ति देते हैं और पाठक को वैकल्पिक दृष्टिकोणों से परिचित कराते हैं।

महत्वपूर्ण बिंदु

अस्मितार्केंद्रित दृष्टि (दलित, स्त्री, हाशियाकृत समुदाय) अनुवाद को केवल भाषिक रूपांतरण से आगे ले जाकर प्रतिनिधित्व, आवाज़ और सामाजिक न्याय से जुड़े प्रश्नों के साथ जोड़ती है।

11.13 स्त्रीपाठ की दृष्टि

स्त्रीपाठ की दृष्टि उत्तरआधुनिक चिंतन की उस प्रवृत्ति से जुड़ी है, जो साहित्य और पाठ को पुरुषकेन्द्रित, तटस्थ अथवा सार्वभौमिक मानने की धारणा को अस्वीकार करती है। यह दृष्टि मानती है कि भाषा, कथ्य और पाठीय संरचनाएँ ऐतिहासिक रूप से पितृसत्तात्मक समाज द्वारा निर्मित हुई हैं, इसलिए उनमें स्त्रीअनुभव या तो अनुपस्थित रहता है या विकृत रूप में प्रस्तुत होता है। स्त्रीपाठ का उद्देश्य पाठ में निहित उन संरचनाओं को पहचानना है, जिनके माध्यम से स्त्री की अस्मिता, देह, श्रम और संवेदना को नियंत्रित या मौन किया गया है।

स्त्रीपाठ में पाठ को केवल साहित्यिक वस्तु न मानकर सामाजिक-सांस्कृतिक दस्तावेज के रूप में देखा जाता है। यहाँ प्रश्न यह नहीं होता कि पाठ 'क्या कहता है', बल्कि यह भी होता है कि वह 'किसे बोलने देता है' और 'किसे चुप कराता है'। इस दृष्टि से स्त्रीपाठक की भूमिका विशेष हो जाती है, क्योंकि वह अपने अनुभवों, स्मृतियों और सामाजिक स्थितियों के आधार पर पाठ में निहित अर्थों को नए सिरे से उद्घाटित करती है। इस प्रक्रिया में वही पाठ, जो पहले सामान्य या तटस्थ प्रतीत होता था, सत्ता, असमानता और लैंगिक भेदभाव के संकेतों से भरपूर दिखाई देने लगता है।

अनुवाद के क्षेत्र में स्त्रीपाठ की दृष्टि और अधिक महत्वपूर्ण हो जाती है, क्योंकि अनुवाद स्वयं एक प्रकार का पुनर्पाठ है। स्त्रीवादी अनुवाददृष्टि यह मानती है कि पारंपरिक अनुवाद अक्सर मूल पाठ की पितृसत्तात्मक संरचनाओं को यथावत बनाए रखता है। इसके विपरीत स्त्रीवादी अनुवाद का उद्देश्य भाषा में निहित लैंगिक पक्षपात को पहचानना और जहाँ आवश्यक हो, उसे चुनौती देना होता है। उदाहरणस्वरूप, किसी स्त्रीपात्र को कमजोर, भावुक या निर्भर दिखाने वाले शब्दों का अनुवाद करते समय अनुवादक यह विचार करता है कि क्या लक्ष्यभाषा में ऐसे विकल्प संभव हैं, जो स्त्री की agency और आत्मसम्मान को अधिक स्पष्ट करें।

उत्तरआधुनिक संदर्भ में स्त्रीपाठ बहुलता और विविधता पर बल देता है। यह दृष्टि किसी एक 'स्त्रीअनुभव' को सार्वभौमिक नहीं मानती, बल्कि जाति, वर्ग, भाषा और संस्कृति के आधार पर स्त्रीअनुभवों की भिन्नता को स्वीकार करती है। दलित स्त्री, आदिवासी स्त्री या अल्पसंख्यक स्त्री के अनुभव मुख्यधारा की स्त्रीचेतना से भिन्न हो सकते हैं। इसलिए स्त्रीपाठ केवल लैंगिक विश्लेषण तक सीमित न रहकर अस्मिताआधारित बहुस्तरीय विमर्श का रूप ग्रहण करता है, जो उत्तरआधुनिकता की मूल भावना के अनुकूल है।

अपनी प्रगति जांचें

प्रश्न 4: दलित साहित्य के अनुवाद में अस्मिता और वैचारिकी का क्या महत्व है?

प्रश्न 5: दृश्यअनुकूल एवं प्रसारणअनुकूल शैली अनुवाद की प्रक्रिया को किस प्रकार बदलती है?

प्रश्न 6: उत्तरआधुनिक दृष्टि में पाठ की उपयोगिता और पाठक की भूमिका को कैसे परिभाषित किया जाता है?

11.13 सारांश

इस इकाई में उत्तरआधुनिकतावाद और अनुवाद के विविध सैद्धांतिक पक्षों का समग्र विवेचन प्रस्तुत किया गया है। उत्तरआधुनिक दृष्टि आधुनिकता की सार्वभौमिकता, स्थिर अर्थ और एकात्मक सत्य की अवधारणाओं को चुनौती देते हुए बहुलता, विखंडन और संदर्भ-सापेक्षता पर बल देती है। इसी संदर्भ में पैरोडी, पेश्टीच, माध्यमआधारित विचारप्रस्तुति, दृश्य एवं प्रसारणअनुकूल शैली, चित्र और संकेतों से भावअभिव्यक्ति जैसे रूप उभरते हैं, जो अर्थनिर्माण की प्रक्रिया को बहुआयामी बनाते हैं। दलित साहित्य और स्त्रीपाठ की दृष्टि अनुवाद को सामाजिक न्याय, अस्मिता और प्रतिरोध से जोड़ती है, जहाँ भाषा केवल अभिव्यक्ति का साधन न रहकर वैचारिक हस्तक्षेप का माध्यम बन जाती है। पाठ की उपयोगिता को भी नए रूप में समझा गया है, जिसमें पाठक की सक्रिय भूमिका और बहुविध अर्थों की संभावना स्वीकार की गई है। इस प्रकार यह इकाई अनुवाद को एक सर्जनात्मक, सांस्कृतिक और वैचारिक प्रक्रिया के रूप में स्थापित करती है।

11.14 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)

प्रश्न 1 का उत्तर: उत्तरआधुनिकता की संकल्पना आधुनिकता के सार्वभौमिक सत्य, तर्क और प्रगति की धारणाओं पर प्रश्न उठाती है तथा अनुवाद को बहुलतावादी, संदर्भआधारित और अस्थिर अर्थनिर्माण की प्रक्रिया के रूप में देखती है। इस विषय की समझ के लिए इकाई 11 के प्रारंभिक खंड का अवलोकन अपेक्षित है।

प्रश्न 2 का उत्तर: अस्मिता की अवधारणा उत्तरआधुनिक विमर्श में व्यक्ति और समुदाय की बहुआयामी पहचान को रेखांकित करती है, जो अनुवाद में जाति, लिंग, वर्ग और संस्कृति जैसे पक्षों को प्रमुख बनाती है। इसके लिए संबंधित विवेचन सहायक होगा।

प्रश्न 3 का उत्तर: उत्तरआधुनिकता और अस्मिता का अंतर्संबंध अनुवाद को सत्ता, प्रतिनिधित्व और हाशियाकरण के प्रश्नों से जोड़ता है। यह संबंध इकाई 11 के मध्यवर्ती खंड में स्पष्ट किया गया है।

प्रश्न 4 का उत्तर: पैरोडी और पेश्टीच उत्तरआधुनिक अनुवाद में परंपरा के पुनर्पाठ और शैलीगत मिश्रण की रणनीतियों के रूप में सामने आते हैं, जिससे मौलिकता की धारणा पर पुनर्विचार संभव होता है। इस संदर्भ में संबंधित अनुभाग उपयोगी है।

प्रश्न 5 का उत्तर: माध्यम, दृश्यअनुकूल और प्रसारणअनुकूल शैली तथा चित्र-संकेत आधारित प्रस्तुति उत्तरआधुनिक अनुवाद में अर्थ-निर्माण को बहुस्तरीय बनाती हैं। इन पक्षों को इकाई 11 के अंतिम खंडों में समझाया गया है।

प्रश्न 6 का उत्तर: उत्तरआधुनिक दृष्टि में पाठ की उपयोगिता पाठककेंद्रित हो जाती है, जहाँ अर्थ स्थिर न होकर पाठ, पाठक और संदर्भ के संवाद से निर्मित होता है। इस विषय पर विस्तृत जानकारी हेतु अंतिम अनुभाग का अध्ययन किया जाना चाहिए।

11.15 अधिक जानने के लिए पढ़ें

- Catford, J. C. (1965). A Linguistic Theory of Translation. London: Oxford University Press.
- Lyotard, Jean-François. (1984). The Postmodern Condition: A Report on Knowledge. Manchester: Manchester University Press.

- meson, Fredric. (1991). Postmodernism, or, The Cultural Logic of Late Capitalism. Durham: Duke University Press.
- Hutcheon, Linda. (1985). A Theory of Parody: The Teachings of Twentieth-Century Art Forms. New York: Methuen.
- Venuti, Lawrence. (1995). The Translator's Invisibility: A History of Translation. London & New York: Routledge.
- Lefevere, André. (1992). Translation, Rewriting, and the Manipulation of Literary Fame. London & New York: Routledge.
- Toury, Gideon. (1995). Descriptive Translation Studies and Beyond. Amsterdam & Philadelphia: John Benjamins.
- Spivak, Gayatri Chakravorty. (1993). "The Politics of Translation." New York: Routledge.
- Niranjana, Tejaswini. (1992). Siting Translation: History, Post-Structuralism, and the Colonial Context. Berkeley: University of California Press.
- तिवारी, भोलानाथ. (2004). अनुवाद-विज्ञान: सिद्धांत और प्रयोग. इलाहाबाद: किताब महल।
- नामवर सिंह. (1991). आधुनिकता की विचारधारा. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन।
- रामविलास शर्मा. (2000). साहित्य और समाज. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन।
- रमणिका गुप्ता (सं.). (2004). दलित साहित्य: विमर्श और अनुवाद. नई दिल्ली: राधाकृष्ण प्रकाशन।
- शिवकुमार मिश्र. (2008). उत्तर-आधुनिकता और हिंदी साहित्य. वाराणसी: भारतीय ज्ञानपीठ।
- अशोक वाजपेयी. (1998). समकालीन साहित्य: अस्मिता और विमर्श. नई दिल्ली: वाणी प्रकाशन।

⑦ 11.16 अभ्यास

(क) संक्षिप्त प्रश्नों के उत्तर लिखिए—

1. उत्तरआधुनिकता की संकल्पना से आप क्या समझते हैं?
2. अस्मिता की अवधारणा, अनुवादअध्ययन में क्यों महत्वपूर्ण मानी जाती है?
3. उत्तरआधुनिक विमर्श में 'महावृत्तांतों के अंत' का क्या तात्पर्य है?
4. पैरोडी और पेश्टीच में मूलभूत अंतर क्या है?
5. माध्यम किस प्रकार विचारप्रस्तुति को प्रभावित करता है?
6. दलित साहित्य के अनुवाद में वैचारिक पक्ष क्यों केंद्रीय हो जाता है?

(ख) निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लिखिए—

1. उत्तरआधुनिकता की वैचारिक पृष्ठभूमि को स्पष्ट करते हुए उसके प्रमुख लक्षणों का विवेचन प्रस्तुत करें।
2. अस्मिता और उत्तरआधुनिकता के अंतर्संबंध को अनुवाद के संदर्भ में स्पष्ट करें।
3. उत्तरआधुनिकतावाद एवं अनुवाद की वैचारिक अवधारणा का उपयुक्त उदाहरणों सहित विश्लेषण करें।

4. पैरोडी और पेश्टीच की भूमिका को उत्तरआधुनिक साहित्य तथा अनुवादप्रक्रिया के संदर्भ में स्पष्ट करें।
5. दृश्यअनुकूल एवं प्रसारणअनुकूल शैली के उद्भव के कारणों और अनुवाद पर उसके प्रभावों का विवेचन प्रस्तुत करें।
6. दलित साहित्य और स्त्रीपाठ के अनुवाद में निहित वैचारिक चुनौतियों पर सम्यक विचार रखें।

शब्दकोश

उत्तरआधुनिकता : आधुनिकता के बाद की वैचारिक अवस्था, अस्मिता : पहचान, सामाजिक-सांस्कृतिक अस्तित्व, Parody (पैरोडी) : विडंबनात्मक पुनर्पाठ, Pastiche (पेश्टीच) : शैलीगत अनुकरण, Medium (माध्यम) : विचारप्रस्तुति का साधन, Dalit Discourse : दलित विमर्श, Feminist Reading (स्त्रीपाठ) : स्त्रीवादी पाठ-दृष्टि इत्यादि

*** ***** ***

इकाई 12 - भूमंडलीकरण, बाजारवाद और अनुवाद

इकाई की रूपरेखा

12.1 उद्देश्य
12.2 प्रस्तावना
12.3 भूमंडलीकरण की अवधारणा
12.4 भूमंडलीकरण के प्रमुख आयाम
12.5 बाजारवाद का अर्थ
12.6 बाजारवाद की विशेषताएँ
12.7 भूमंडलीकरण और बाजारवाद का अंतर्संबंध
12.8 अनुवाद: अवधारणा और स्वरूप
12.9 भूमंडलीकरण के संदर्भ में अनुवाद
12.10 बाजारवाद के संदर्भ में अनुवाद
12.11 सारांश
12.12 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)
12.13 अधिक जानने के लिए पढ़ें
12.14 अभ्यास प्रश्न

12.1 उद्देश्य

- भूमंडलीकरण तथा बाजारवाद की मूल अवधारणाओं को सैद्धांतिक रूप में समझना।
- भूमंडलीकरण के आर्थिक, सांस्कृतिक और भाषिक आयामों को स्पष्ट रूप से पहचानना।
- वैश्विक परिप्रेक्ष्य में अनुवाद की बदलती भूमिका के प्रति बौद्धिक दृष्टि विकसित करना।
- बाजारवादी संरचना में अनुवाद के स्वरूप और कार्यक्षेत्र का तुलनात्मक रूप में परखना।
- समकालीन अनुवाद प्रक्रिया पर भूमंडलीकरण एवं बाजारवाद के प्रभावों को आलोचनात्मक दृष्टि से जाँचना।

12.2 प्रस्तावना

इक्कीसवीं शताब्दी का वर्तमान युग भूमंडलीकरण और बाजारवाद की संयुक्त प्रक्रिया से गहराई से प्रभावित है। सूचनाप्रौद्योगिकी, संचारमाध्यमों और अंतरराष्ट्रीय व्यापार के तीव्र विस्तार ने विश्व को एक परस्पर जुड़ी हुई संरचना में बदल दिया है, जहाँ भौगोलिक सीमाएँ अपेक्षाकृत शिथिल होती जा रही हैं। इस वैश्विक परिदृश्य में भाषा और अनुवाद की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण हो गई है, क्योंकि विभिन्न देशों, संस्कृतियों और बाजारों के बीच संवाद स्थापित करने का प्रमुख माध्यम अनुवाद ही है। भूमंडलीकरण केवल आर्थिक प्रक्रिया नहीं है, बल्कि यह सांस्कृतिक, सामाजिक और भाषिक स्तरों पर भी गहरे परिवर्तन लाता है। वहीं बाजारवाद इस प्रक्रिया को व्यावसायिक दृष्टि से संचालित करता है, जहाँ भाषा, साहित्य और ज्ञान भी उपभोक्ता वस्तु के रूप में देखे जाने लगते हैं। ऐसी स्थिति में अनुवाद का स्वरूप केवल साहित्यिक या शैक्षणिक न रहकर व्यावसायिक, तकनीकी और संस्थागत रूप ग्रहण करता है। यह इकाई भूमंडलीकरण और बाजारवाद

की अवधारणाओं को स्पष्ट करते हुए उनके अनुवाद से संबंध का विश्लेषण प्रस्तुत करती है। साथ ही यह समझने का प्रयास करती है कि वैश्विक बाजार व्यवस्था में अनुवाद किस प्रकार नई चुनौतियों, अवसरों और जिम्मेदारियों के साथ सामने आता है तथा समकालीन समाज में उसकी भूमिका कैसे पुनर्परिभाषित हो रही है।

12.3भूमंडलीकरण की अवधारणा

भूमंडलीकरण समकालीन विश्व की एक ऐसी व्यापक प्रक्रिया है, जिसके अंतर्गत विभिन्न देशों की अर्थव्यवस्थाएँ, समाज, संस्कृतियाँ और राजनीतिक व्यवस्थाएँ परस्पर गहन रूप से जुड़ती चली जाती हैं। यह प्रक्रिया राष्ट्रीय सीमाओं की भूमिका को सीमित करती है और विश्व को एक परस्पर आश्रित संरचना के रूप में रूपायित करती है। भूमंडलीकरण के माध्यम से वस्तुओं, सेवाओं, पूँजी, सूचनाओं और विचारों का आवागमन वैश्विक स्तर पर तीव्र हो गया है, जिसके परिणामस्वरूप विश्व एक साझा आर्थिक और सांस्कृतिक क्षेत्र के रूप में उभरने लगा है। भूमंडलीकरण का उद्भव मुख्यतः तकनीकी विकास, विशेषकर सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी के तीव्र विस्तार से जुड़ा हुआ है। परिवहन और संचार के साधनों ने समय और दूरी की अवधारणा को संकुचित कर दिया है। आज किसी भी देश की आर्थिक गतिविधियाँ केवल उसकी आंतरिक नीतियों तक सीमित नहीं रहतीं, बल्कि अंतरराष्ट्रीय बाजार, बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ और वैश्विक वित्तीय संस्थाएँ उन्हें प्रभावित करती हैं। इस प्रक्रिया में मुक्त व्यापार, विदेशी निवेश और उत्पादन के अंतरराष्ट्रीय विभाजन को विशेष महत्व प्राप्त हुआ है। सामाजिक और सांस्कृतिक स्तर पर भूमंडलीकरण ने जीवनशैली, उपभोगसंस्कृति और मूल्यबोध में उल्लेखनीय परिवर्तन उत्पन्न किया है। एक ओर यह विभिन्न समाजों के बीच सांस्कृतिक संपर्क और संवाद को बढ़ावा देता है, वहीं दूसरी ओर यह स्थानीय परंपराओं और सांस्कृतिक विशिष्टताओं के समक्ष नई चुनौतियाँ भी प्रस्तुत करता है। वैश्विक मीडिया, विज्ञापन और बाजारकेंद्रित संस्कृति के प्रभाव से एक प्रकार की सांस्कृतिक समानता की प्रवृत्ति उभरती दिखाई देती है, जिससे स्थानीय अस्मिताओं के संरक्षण का प्रश्न महत्त्वपूर्ण बन जाता है। राजनीतिक दृष्टि से भूमंडलीकरण ने राष्ट्र–राज्य की पारंपरिक संप्रभुता की अवधारणा को पुनर्परिभाषित किया है। अंतरराष्ट्रीय समझौते, वैश्विक संगठन और बहुपक्षीय संस्थाएँ राष्ट्रीय नीतियों को प्रभावित करने लगी हैं। इससे शासनप्रणाली में पारदर्शिता और सहयोग की संभावनाएँ तो बढ़ी हैं, पर साथ ही विकासशील देशों के लिए नीति–निर्धारण में स्वतंत्रता की सीमा भी संकुचित हुई है। इस कारण भूमंडलीकरण को शक्तिसंतुलन और असमानता के संदर्भ में भी देखा जाता है।

12.4 भूमंडलीकरण के प्रमुख आयाम

भूमंडलीकरण को समकालीन विश्व की एक ऐसी व्यापक प्रक्रिया के रूप में समझा जाता है, जिसके अंतर्गत विभिन्न राष्ट्रों के बीच आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक संबंध निरंतर सघन होते जाते हैं। इस प्रक्रिया में राष्ट्रीय सीमाओं की कठोरता शिथिल होती है और विश्व के विभिन्न हिस्से परस्पर निर्भर संरचना में बंधते चले जाते हैं। वस्तुओं, सेवाओं, पूँजी, तकनीक, सूचना और विचारों का अंतरराष्ट्रीय स्तर पर प्रवाह भूमंडलीकरण की मूल पहचान है, जिसके परिणामस्वरूप विश्व एक साझा आर्थिक और सामाजिक क्षेत्र के रूप में विकसित होता है। वैचारिक दृष्टि से भूमंडलीकरण केवल आर्थिक विस्तार की प्रक्रिया नहीं है, बल्कि यह आधुनिकता के उत्तरकालीन चरण की एक जटिल सामाजिक संरचना को भी व्यक्त करता है। तकनीकी प्रगति, विशेषतः संचार और परिवहन के क्षेत्र में हुए तीव्र विकास ने समय और दूरी की पारंपरिक अवधारणाओं को बदल दिया है। अब किसी देश की आर्थिक गतिविधियाँ केवल उसके आंतरिक संसाधनों और नीतियों पर आधारित नहीं रहतीं, बल्कि वैश्विक बाजार, अंतरराष्ट्रीय संस्थाओं और बहुराष्ट्रीय कंपनियों के प्रभाव से भी संचालित होती हैं। इस प्रकार भूमंडलीकरण स्थानीय और वैश्विक के बीच निरंतर अंतर्संबंध की स्थिति उत्पन्न करता है। सामाजिक और सांस्कृतिक स्तर पर भूमंडलीकरण जीवनशैली, उपभोग की प्रवृत्तियों और सामाजिक मूल्यों में परिवर्तन लाता है। विभिन्न समाजों के बीच संपर्क और आदान–प्रदान के कारण सांस्कृतिक तत्व एक-

दूसरे में समाहित होते हैं, जिससे वैश्विक संस्कृति की प्रवृत्ति उभरती है। साथ ही यह प्रक्रिया स्थानीय संस्कृतियों और अस्मिताओं के समक्ष नई चुनौतियाँ भी प्रस्तुत करती है। परिणामस्वरूप भूमंडलीकरण को एक ऐसी प्रक्रिया के रूप में देखा जाता है, जिसमें सांस्कृतिक समन्वय और सांस्कृतिक संघर्ष दोनों की संभावनाएँ निहित रहती हैं। राजनीतिक परिप्रेक्ष्य में भूमंडलीकरण ने राष्ट्र–राज्य की भूमिका और संप्रभुता की पारंपरिक अवधारणा को पुनर्परिभाषित किया है। अंतरराष्ट्रीय समझौते, वैश्विक संगठन और बहुपक्षीय संस्थाएँ राष्ट्रीय नीतियों को प्रभावित करने लगी हैं। इससे एक ओर अंतरराष्ट्रीय सहयोग, संवाद और साझेदारी की संभावनाएँ बढ़ती हैं, वहीं दूसरी ओर नीति–निर्धारण में असमानता और निर्भरता की स्थितियाँ भी सामने आती हैं। विशेष रूप से विकासशील देशों के लिए यह प्रक्रिया अवसर और दबाव- दोनों को साथ लेकर आती है। समग्र रूप से भूमंडलीकरण की अवधारणा आधुनिक विश्व की एक गतिशील और बहुआयामी वास्तविकता को व्यक्त करती है। यह प्रक्रिया आर्थिक विस्तार, तकनीकी परिवर्तन, सांस्कृतिक अंतःक्रिया और राजनीतिक पुनर्संरचना को एक साथ सक्रिय करती है। भूमंडलीकरण को न तो पूर्णतः लाभकारी कहा जा सकता है और न ही पूरी तरह हानिकारक, बल्कि यह एक ऐसी वैश्विक प्रक्रिया है जो अवसरों के साथ-साथ चुनौतियाँ भी उत्पन्न करती है और समकालीन विश्व के स्वरूप को निरंतर पुनर्गठित करती रहती है।

12.5 बाजारवाद का अर्थ

बाजारवाद एक ऐसी वैचारिक व्यवस्था है जिसमें समाज और अर्थव्यवस्था के संचालन में बाजार की भूमिका को सर्वोपरि माना जाता है। इस विचारधारा के अनुसार उत्पादन, विनिमय और उपभोग से जुड़े निर्णय राज्य या सामाजिक संस्थाओं के नियंत्रण में न होकर मांग–आपूर्ति और प्रतिस्पर्धा के आधार पर होने चाहिए। बाजारवाद यह विश्वास करता है कि मुक्त बाजार की प्रक्रिया स्वयं ही संतुलन स्थापित कर लेती है और इसी के माध्यम से विकास तथा प्रगति संभव होती है। प्रसिद्ध अर्थशास्त्री एडम स्मिथ के विचारों में बाजारवाद की प्रारंभिक अवधारणा दिखाई देती है। उन्होंने 'अदृश्य हाथ' के सिद्धांत के माध्यम से यह प्रतिपादित किया कि व्यक्ति अपने निजी लाभ की खोज में कार्य करते हुए अनजाने में सामाजिक हित की भी पूर्ति करता है। स्मिथ के अनुसार बाजार की स्वायत्तता आर्थिक गतिविधियों को अधिक कुशल बनाती है और बाहरी नियंत्रण की आवश्यकता को कम करती है।

समकालीन चिंतक डेविड हार्वे बाजारवाद को केवल आर्थिक नीति नहीं, बल्कि एक व्यापक वैचारिक ढाँचा मानते हैं। उनके अनुसार बाजारवाद सामाजिक जीवन के विभिन्न क्षेत्रों- जैसे शिक्षा, स्वास्थ्य और संस्कृतिको भी व्यापारिक तर्क के अधीन कर देता है। हार्वे यह स्पष्ट करते हैं कि बाजारवाद के अंतर्गत सामाजिक संबंधों का मूल्यांकन भी लाभ और उपयोगिता के आधार पर होने लगता है, जिससे मानवीय और नैतिक पक्ष हाशिये पर चले जाते हैं। भारतीय संदर्भ में अमरत्य सेन बाजारवाद की आलोचनात्मक व्याख्या प्रस्तुत करते हैं। वे मानते हैं कि बाजार आर्थिक संसाधनों के वितरण में भूमिका निभा सकता है, किंतु यदि उसे एकमात्र निर्णायक शक्ति बना दिया जाए, तो यह सामाजिक न्याय और मानवीय विकास के लिए बाधक बन सकता है। सेन के अनुसार विकास का मूल्यांकन केवल बाजारआधारित वृद्धि से नहीं, बल्कि मानव क्षमताओं और अवसरों के विस्तार से होना चाहिए।

अपनी प्रगति जांचें

प्रश्न 1: भूमंडलीकरण की अवधारणा से क्या अभिप्राय है?

प्रश्न 2:भूमंडलीकरण की प्रक्रिया में आर्थिक गतिविधियों में क्या परिवर्तन आए हैं?

प्रश्न 3:बाजार आधारित व्यवस्था के विस्तार में संचार की भूमिका क्यों महत्वपूर्ण मानी जाती है?

12.6 बाजारवाद की विशेषताएँ

1. बाजारवाद की मूल प्रवृत्ति यह है कि वह आर्थिक क्रियाओं को राज्य के प्रत्यक्ष नियंत्रण से बाहर रखता है। मूल्य निर्धारण की प्रक्रिया को बाजार की मांग और आपूर्ति पर छोड़ दिया जाता है। प्रतिस्पर्धा को स्वाभाविक संतुलन का माध्यम माना जाता है। परिणामस्वरूप बाजार स्वयं यह तय करता है कि कौन-सी वस्तु कितनी और किस मूल्य पर उपलब्ध होगी।
2. इस विचारधारा में निजी क्षेत्र को आर्थिक विकास का प्रमुख वाहक माना जाता है। निजी पूँजी, उद्यम और प्रबंधन को अधिक दक्ष और नवाचारी समझा जाता है। राज्य की तुलना में निजी क्षेत्र को निर्णय लेने में अधिक लचीला माना जाता है। इसी कारण निजीकरण को विकास की अनिवार्य शर्त के रूप में प्रस्तुत किया जाता है।
3. बाजारवाद में लाभ को आर्थिक गतिविधियों का केंद्रीय प्रेरक तत्व स्वीकार किया जाता है। उत्पादन और वितरण के निर्णय लाभ की संभावना के आधार पर लिए जाते हैं। इससे सामाजिक उत्तरदायित्व की भूमिका अपेक्षाकृत कमजोर पड़ जाती है। आर्थिक नैतिकता की जगह व्यावसायिक उपयोगिता अधिक महत्त्वपूर्ण हो जाती है।
4. इस व्यवस्था में उपभोक्ता को बाजार का निर्णायक तत्व माना जाता है। उपभोक्ता की पसंद और क्रय-क्षमता उत्पादन की दिशा तय करती है। उपभोग की प्रवृत्तियाँ ही यह निर्धारित करती हैं कि क्या बिकेगा और क्या नहीं। इस प्रकार समाज की जरूरतें नहीं, बल्कि बाजार की मांग प्राथमिक हो जाती है।
5. बाजारवाद मुक्त प्रतिस्पर्धा को आर्थिक प्रगति का आधार मानता है। प्रतिस्पर्धा से गुणवत्ता सुधार और लागत में कमी की संभावना बढ़ती है। नए उत्पादों और तकनीकों को प्रोत्साहन मिलता है। हालांकि, अत्यधिक प्रतिस्पर्धा कमजोर उत्पादकों के लिए संकट भी उत्पन्न कर सकती है।
6. यह विचारधारा अंतरराष्ट्रीय व्यापार और पूँजी के मुक्त प्रवाह का समर्थन करती है। विदेशी निवेश को आर्थिक विकास के साधन के रूप में देखा जाता है। इससे राष्ट्रीय अर्थव्यवस्थाएँ वैश्विक बाजार से जुड़ जाती हैं। साथ ही घरेलू बाजार अंतरराष्ट्रीय दबावों के प्रति अधिक संवेदनशील हो जाता है।
7. बाजारवाद में राज्य की भूमिका को सीमित और सहायक माना जाता है। राज्य का कार्य केवल नियम बनाना और बाजार की निगरानी करना रह जाता है। उत्पादन और वितरण में प्रत्यक्ष हस्तक्षेप को अवांछनीय माना जाता है। इससे कल्याणकारी राज्य की अवधारणा कमजोर पड़ती है।
8. शिक्षा, स्वास्थ्य और संस्कृति जैसे क्षेत्रों में भी बाजार तंत्र का विस्तार होने लगता है। ये क्षेत्र सेवा के बजाय उत्पाद के रूप में देखे जाने लगते हैं। उनकी पहुँच व्यक्ति की आर्थिक क्षमता पर निर्भर हो जाती है। इससे सामाजिक समानता पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है।
9. बाजारवाद उपभोग को सामाजिक जीवन का केंद्रीय मूल्य बना देता है। विज्ञापन और ब्रांड उपभोक्ता चेतना को दिशा देते हैं। सामाजिक प्रतिष्ठा का मापन उपभोग से जुड़ जाता है। इससे जीवन-मूल्यों की जगह बाजार-मूल्य हावी हो जाते हैं।
10. बाजारवाद आर्थिक अवसरों का विस्तार करता है, किंतु इसके दुष्परिणाम भी सामने आते हैं। संसाधनों का वितरण असमान हो जाता है। कमजोर वर्ग बाजार प्रतिस्पर्धा में पिछड़ जाते हैं। इस प्रकार विकास के साथ-साथ सामाजिक विषमता भी बढ़ती है।

12.7 भूमंडलीकरण और बाजारवाद का अंतर्संबंध

समकालीन विश्व को समझने के लिए भूमंडलीकरण और बाजारवाद- इन दोनों अवधारणाओं का अध्ययन अनिवार्य हो गया है। यद्यपि ये दोनों शब्द अलग-अलग संदर्भों से उत्पन्न हुए हैं, फिर भी व्यवहारिक स्तर पर इन्हें एक-दूसरे

से पृथक करके नहीं देखा जा सकता। भूमंडलीकरण वह व्यापक प्रक्रिया है, जिसके माध्यम से विश्व के विभिन्न देश आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक स्तरों पर परस्पर अधिकाधिक जुड़ते चले जाते हैं, जबकि बाजारवाद वह विचारधारा है जो आर्थिक गतिविधियों को बाजार के सिद्धांतों- मांग, आपूर्ति, प्रतिस्पर्धा और लाभके अधीन संचालित करने पर बल देती है। इन दोनों के बीच का संबंध केवल सह-अस्तित्व का नहीं, बल्कि परस्पर पोषण और विस्तार का है।

भूमंडलीकरण की प्रक्रिया को यदि गति और दिशा मिलती है, तो उसमें बाजारवाद की निर्णायक भूमिका होती है। आधुनिक तकनीक, संचार और परिवहन के विकास ने वैश्विक संपर्क को संभव बनाया, किंतु इस संपर्क को वास्तविक आर्थिक स्वरूप बाजारवाद ने प्रदान किया। बहुराष्ट्रीय कंपनियों का विस्तार, अंतरराष्ट्रीय व्यापार समझौते, विदेशी निवेश और वैश्विक वित्तीय संस्थाओं की सक्रियता- ये सभी बाजारवादी नीतियों के प्रत्यक्ष परिणाम हैं, जिन्होंने भूमंडलीकरण को केवल विचार नहीं, बल्कि ठोस यथार्थ में बदल दिया।

आर्थिक क्षेत्र में भूमंडलीकरण और बाजारवाद का संबंध सबसे स्पष्ट रूप में दिखाई देता है। बाजारवाद मुक्त व्यापार और पूँजी के निर्बाध प्रवाह का समर्थन करता है, जबकि भूमंडलीकरण इन प्रवाहों को वैश्विक स्तर पर विस्तारित करता है। आज किसी भी देश की अर्थव्यवस्था केवल उसकी आंतरिक नीतियों से निर्धारित नहीं होती, बल्कि वैश्विक बाजार की स्थितियों, अंतरराष्ट्रीय वित्तीय संस्थानों और बहुराष्ट्रीय पूँजी के दबावों से भी प्रभावित होती है। इस प्रक्रिया में राष्ट्रीय अर्थव्यवस्थाएँ एक वैश्विक आर्थिक ढाँचे का हिस्सा बन जाती हैं, जहाँ स्थानीय निर्णयों का वैश्विक प्रभाव और वैश्विक परिवर्तनों का स्थानीय जीवन पर सीधा असर पड़ता है।

बाजारवाद के प्रभाव में भूमंडलीकरण ने उत्पादन और श्रम के अंतरराष्ट्रीय विभाजन को बढ़ावा दिया है। उत्पादन की विभिन्न अवस्थाएँ अलग-अलग देशों में स्थापित होने लगी हैं- कहीं कच्चा माल, कहीं निर्माण, तो कहीं विपणन। यह व्यवस्था लागत घटाने और लाभ बढ़ाने की दृष्टि से प्रभावी मानी जाती है, किंतु इसके सामाजिक परिणाम भी गहरे हैं। विकासशील देशों में सस्ते श्रम का उपयोग, श्रमिक अधिकारों की अनदेखी और पर्यावरणीय शोषण जैसी समस्याएँ इसी अंतर्संबंध से उत्पन्न होती हैं। इस प्रकार बाजारवादप्रेरित भूमंडलीकरण आर्थिक दक्षता के साथ-साथ सामाजिक असंतुलन को भी जन्म देता है।

सांस्कृतिक स्तर पर भूमंडलीकरण और बाजारवाद का संबंध और अधिक जटिल हो जाता है। बाजारवाद संस्कृति को भी उपभोग की वस्तु के रूप में देखने की प्रवृत्ति को बढ़ावा देता है, जबकि भूमंडलीकरण इस उपभोगसंस्कृति को वैश्विक स्तर पर प्रसारित करता है। वैश्विक मीडिया, विज्ञापन और मनोरंजन उद्योग के माध्यम से एक प्रकार की सांस्कृतिक समानता उभरती दिखाई देती है, जिसमें स्थानीय भाषाएँ, परंपराएँ और सांस्कृतिक विशिष्टताएँ हाशिये पर जाने लगती हैं। यह प्रक्रिया 'वैश्विक संस्कृति' के निर्माण का आभास देती है, किंतु वास्तव में यह बाजारकेंद्रित सांस्कृतिक प्रभुत्व का विस्तार होती है।

इस सांस्कृतिक भूमंडलीकरण में बाजारवाद की भूमिका निर्णायक है, क्योंकि वही यह तय करता है कि कौन-सी सांस्कृतिक अभिव्यक्ति वैश्विक मंच पर स्थान पाएगी। जिन सांस्कृतिक उत्पादों में बाजारक्षमता होती है- जैसे फिल्में, संगीत, फैशन और डिजिटल सामग्री, वे वैश्विक स्तर पर प्रसारित होते हैं, जबकि स्थानीय और जनजातीय संस्कृतियाँ प्रायः अदृश्य रह जाती हैं। इससे सांस्कृतिक विविधता के संरक्षण का प्रश्न अत्यंत महत्वपूर्ण हो जाता है। इस संदर्भ में भूमंडलीकरण और बाजारवाद का अंतर्संबंध सांस्कृतिक असमानता को भी उजागर करता है।

राजनीतिक स्तर पर भी भूमंडलीकरण और बाजारवाद एक-दूसरे को प्रभावित करते हैं। बाजारवादी नीतियों के अंतर्गत राज्य की भूमिका सीमित मानी जाती है, जबकि भूमंडलीकरण अंतरराष्ट्रीय संगठनों और बहुपक्षीय समझौतों के माध्यम से राष्ट्रीय नीतियों पर प्रभाव डालता है। विश्व व्यापार संगठन, अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष और विश्व बैंक जैसी संस्थाएँ विकासशील देशों की आर्थिक नीतियों को बाजार-उन्मुख बनाने का दबाव बनाती हैं। इससे राज्य की स्वायत्तता और

नीति-निर्धारण की स्वतंत्रता प्रभावित होती है। इस प्रकार भूमंडलीकरण और बाजारवाद मिलकर राष्ट्र-राज्य की पारंपरिक संप्रभुता की अवधारणा को पुनर्परिभाषित करते हैं।

सामाजिक जीवन पर इस अंतर्संबंध का प्रभाव भी गहरा है। बाजारवाद व्यक्ति को उपभोक्ता के रूप में परिभाषित करता है, जबकि भूमंडलीकरण इस उपभोक्ता पहचान को वैश्विक स्तर पर फैलाता है। जीवनशैली, मूल्यबोध और आकांक्षाएँ वैश्विक बाजार के अनुरूप ढलने लगती हैं। शिक्षा, स्वास्थ्य और ज्ञान जैसे क्षेत्र भी बाजारतर्क के अधीन आ जाते हैं, जिससे सामाजिक समानता के प्रश्न और अधिक जटिल हो जाते हैं। इस संदर्भ में यह स्पष्ट होता है कि भूमंडलीकरण और बाजारवाद केवल आर्थिक अवधारणाएँ नहीं, बल्कि सामाजिक संरचना को गहराई से प्रभावित करने वाली शक्तियाँ हैं। अनुवाद और भाषा के संदर्भ में भी भूमंडलीकरण और बाजारवाद का घनिष्ठ संबंध दिखाई देता है। वैश्विक बाजार के विस्तार के साथ बहुभाषिक संचार की आवश्यकता बढ़ती है, जिससे अनुवाद का महत्व अत्यधिक बढ़ गया है। किंतु बाजारवादी दृष्टि में अनुवाद केवल सांस्कृतिक संवाद का माध्यम नहीं, बल्कि एक व्यावसायिक सेवा बन जाता है। कौन-सी भाषा वैश्विक संचार की भाषा बनेगी और कौन-सी हाशिये पर जाएगी, यह निर्णय भी बाजार की शक्ति से प्रभावित होता है। इस प्रकार भूमंडलीकरण और बाजारवाद मिलकर भाषिक असमानता को भी जन्म देते हैं।

भूमंडलीकरण और बाजारवाद का संबंध केवल नकारात्मक नहीं है। इस प्रक्रिया ने ज्ञान, सूचना और तकनीक तक पहुँच को व्यापक बनाया है। अंतरराष्ट्रीय सहयोग, सांस्कृतिक संपर्क और वैश्विक संवाद की संभावनाएँ भी इसी अंतर्संबंध से उत्पन्न हुई हैं। अनेक विकासशील देशों को वैश्विक बाजार के माध्यम से आर्थिक अवसर प्राप्त हुए हैं। अतः यह संबंध एकांगी न होकर द्वंद्वात्मक है, जिसमें अवसर और चुनौतियाँ दोनों समाहित हैं।

महत्वपूर्ण बिंदु

भूमंडलीकरण के प्रभाव से अनुवाद का क्षेत्र केवल साहित्य तक सीमित न रहकर व्यापार, मीडिया, तकनीक और बाजार, संचार से गहराई से जुड़ गया है।

12.9 भूमंडलीकरण के संदर्भ में अनुवाद

भूमंडलीकरण की प्रक्रिया ने समकालीन विश्व को एक ऐसे व्यापक और परस्पर संबद्ध ढाँचे में रूपांतरित कर दिया है, जहाँ भौगोलिक सीमाएँ धीरे-धीरे अर्थहीन होती जा रही हैं और विभिन्न राष्ट्र, समाज तथा संस्कृतियाँ निरंतर संपर्क में आ रही हैं। इस वैश्विक संपर्क की आधारशिला भाषा है, और भाषा के माध्यम से संवाद स्थापित करने का सबसे प्रभावी साधन अनुवाद है। भूमंडलीकरण के युग में अनुवाद केवल भाषाओं के बीच शब्दांतरण की प्रक्रिया न रहकर, विचारों, संस्कृतियों, ज्ञान और बाजार के प्रवाह को संभव बनाने वाला एक अनिवार्य उपकरण बन गया है। वैश्विक स्तर पर होने वाले आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और तकनीकी आदान-प्रदान में अनुवाद की भूमिका केंद्रीय हो गई है।

भूमंडलीकरण के विस्तार के साथ अंतरराष्ट्रीय व्यापार, बहुराष्ट्रीय कंपनियों और वैश्विक संस्थाओं की सक्रियता में तीव्र वृद्धि हुई है। ये संस्थाएँ विभिन्न भाषायी और सांस्कृतिक क्षेत्रों में अपने उत्पादों, सेवाओं और नीतियों को प्रसारित करती हैं। ऐसे में अनुवाद के बिना स्थानीय समाज तक उनकी पहुँच संभव नहीं होती। किसी उत्पाद की उपयोगसूचना, कानूनी शर्तें, तकनीकी निर्देश, वेबसाइट या मोबाइल अनुप्रयोग यदि स्थानीय भाषा में उपलब्ध न हों, तो उपभोक्ता उनसे जुड़ नहीं पाता। इस संदर्भ में अनुवाद वैश्विक बाजार और स्थानीय उपभोक्ता के बीच सेतु का कार्य करता है। यह सेतु केवल सूचना पहुँचाने तक सीमित नहीं रहता, बल्कि विश्वास, स्वीकार्यता और सहभागिता को भी जन्म देता है।

संचार माध्यमों के तीव्र विकास ने भूमंडलीकरण को गति प्रदान की है और साथ ही अनुवाद की आवश्यकता को भी कई गुना बढ़ा दिया है। टेलीविजन, रेडियो, इंटरनेट, सोशल मीडिया और डिजिटल प्लेटफॉर्म के माध्यम से सूचनाएँ अब

क्षणभर में विश्व के विभिन्न हिस्सों तक पहुँच जाती हैं। किंतु इन माध्यमों की प्रभावशीलता तभी संभव है, जब संदेश लक्षित भाषा और संस्कृति के अनुरूप हो। उदाहरणस्वरूप, एक ही विज्ञापन या सूचना को विभिन्न भाषाओं में प्रस्तुत करते समय केवल शब्दों का अनुवाद पर्याप्त नहीं होता; उसमें स्थानीय सामाजिक मूल्य, सांस्कृतिक प्रतीक और भावनात्मक संदर्भ भी समाहित करने पड़ते हैं। इस प्रकार भूमंडलीकरण के संदर्भ में अनुवाद एक रचनात्मक और सांस्कृतिक प्रक्रिया के रूप में उभरता है।

भूमंडलीकरण के युग में अनुवाद का स्वरूप स्पष्ट रूप से प्रयोजनकेंद्रित हो गया है। यहाँ शाब्दिक समानता की अपेक्षा संदेश के प्रभाव, अर्थ और उद्देश्य को अधिक महत्व दिया जाता है। विशेष रूप से बाजार, विज्ञापन और मीडिया से जुड़े अनुवादों में यह आवश्यक होता है कि मूल भाषा का आशय लक्षित भाषा में भी समान प्रभाव उत्पन्न करे। कई बार शब्दशः अनुवाद से अर्थ विकृत हो सकता है या सांस्कृतिक असंगति उत्पन्न हो सकती है। इसलिए अनुवादक को केवल भाषाज्ञान ही नहीं, बल्कि सामाजिक संरचना, सांस्कृतिक संवेदनशीलता और उपभोक्ता मनोविज्ञान की भी गहरी समझ होनी चाहिए। यही कारण है कि भूमंडलीकरण के साथ अनुवाद एक विशिष्ट व्यावसायिक और बौद्धिक कौशल के रूप में विकसित हुआ है।

भूमंडलीकरण ने अनुवाद को केवल व्यापारिक क्षेत्र तक सीमित नहीं रखा, बल्कि ज्ञान, विज्ञान, तकनीक, शिक्षा और प्रशासन के क्षेत्रों में भी उसकी उपयोगिता को बढ़ाया है। वैज्ञानिक शोध, तकनीकी नवाचार, चिकित्सा जानकारी और शैक्षणिक सामग्री का अनुवाद विभिन्न भाषाओं में उपलब्ध होने से ज्ञान का वैश्विक प्रसार संभव हुआ है। इससे एक ओर ज्ञान-समानता को बल मिलता है, तो दूसरी ओर विकासशील समाजों को वैश्विक ज्ञानधारा से जुड़ने का अवसर प्राप्त होता है। इस संदर्भ में अनुवाद का ज्ञानलोकतंत्रीकरण का माध्यम भी कहा जा सकता है। भूमंडलीकरण के साथ-साथ अनुवाद से जुड़ी चुनौतियाँ भी सामने आई हैं। विभिन्न भाषाओं और संस्कृतियों में शब्दों, प्रतीकों और भावों के अर्थ भिन्न-भिन्न हो सकते हैं। यदि इन भिन्नताओं को समझे बिना अनुवाद किया जाए, तो संदेश का अर्थ विकृत हो सकता है और उसका प्रभाव नकारात्मक भी हो सकता है। व्यापारिक और सांस्कृतिक क्षेत्र में ऐसे अनेक उदाहरण मिलते हैं, जहाँ अनुचित अनुवाद के कारण उत्पाद या संदेश को अस्वीकार कर दिया गया। इससे यह स्पष्ट होता है कि भूमंडलीकरण के युग में अनुवाद एक अत्यंत जिम्मेदार और संवेदनशील कार्य है, जिसमें भाषायी दक्षता के साथ-साथ सांस्कृतिक विवेक भी अनिवार्य है।

इन सभी पक्षों को ध्यान में रखते हुए कहा जा सकता है कि भूमंडलीकरण और अनुवाद के बीच गहरा, जीवंत और अनिवार्य संबंध है। भूमंडलीकरण जहाँ विश्व को भौतिक और आर्थिक स्तर पर निकट लाता है, वहीं अनुवाद उस निकटता को अर्थपूर्ण, संप्रेषणीय और मानवीय बनाता है। अनुवाद के माध्यम से ही विविध भाषाएँ और संस्कृतियाँ वैश्विक संवाद में अपनी उपस्थिति दर्ज कराती हैं। इस प्रकार अनुवाद न केवल भूमंडलीकरण की प्रक्रिया को संचालित करता है, बल्कि उसे संतुलित, समावेशी और सांस्कृतिक रूप से संवेदनशील बनाने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

12.10 बाजारवाद के संदर्भ में अनुवाद

आधुनिक वैश्विक व्यवस्था में आर्थिक गतिविधियाँ केवल उत्पादन और विनिमय तक सीमित नहीं रह गई हैं, बल्कि वे संचार, संस्कृति और भाषा से गहराई से जुड़ चुकी हैं। वैश्विक अर्थव्यवस्था के विस्तार के साथ वस्तुएँ और सेवाएँ विभिन्न भाषायी समुदायों तक पहुँचने लगी हैं। ऐसे में भाषा एक माध्यम ही नहीं, बल्कि संपर्क स्थापित करने का आधार बन जाती है। इस प्रक्रिया में अनुवाद की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण हो जाती है, क्योंकि विभिन्न भाषाओं और संस्कृतियों के बीच संवाद बिना अनुवाद के संभव नहीं है।

आज उपभोक्ता और उत्पाद के बीच संबंध केवल वस्तु के गुणों पर आधारित नहीं रहता, बल्कि उस जानकारी, प्रस्तुति और भाषा पर भी निर्भर करता है, जिसके माध्यम से उत्पाद को प्रस्तुत किया जाता है। उपयोगनिर्देश, विज्ञापन सामग्री, ब्रांड संदेश और डिजिटल मंचों पर उपलब्ध सूचनाएँ यदि स्थानीय भाषा में स्पष्ट और प्रभावी रूप में न हों, तो उपभोक्ता तक विश्वास स्थापित नहीं हो पाता। इस स्थिति में अनुवाद वैश्विक उत्पादन प्रणाली और स्थानीय उपभोग संस्कृति के बीच सेतु का कार्य करता है। इस आर्थिक व्यवस्था में अनुवाद का स्वरूप सामान्य भाषांतरण से आगे बढ़कर उद्देश्यप्रधान हो गया है। यहाँ अनुवादक का कार्य केवल शब्दों का स्थानांतरण नहीं, बल्कि संदेश के प्रभाव, भाव और उपयोगिता को सुरक्षित रखना होता है। किसी प्रचार सामग्री या ब्रांड नारे का शाब्दिक अनुवाद कई बार अर्थहीन सिद्ध हो सकता है। इसलिए अनुवादक को स्थानीय सामाजिक बोध, सांस्कृतिक संकेतों और भाषायी संवेदनाओं को ध्यान में रखते हुए रचनात्मक समाधान अपनाने पड़ते हैं। यही कारण है कि अनुवाद इस क्षेत्र में एक सृजनात्मक प्रक्रिया बन जाता है।

वैश्विक व्यापार और संचार के प्रसार के साथ अनुवाद एक संगठित पेशे और उद्योग के रूप में भी विकसित हुआ है। बहुभाषी वेबसाइटें, मोबाइल अनुप्रयोग, ई-व्यापार मंच, तकनीकी दस्तावेज और ग्राहक सहायता सेवाएँ- इन सभी में अनुवाद की निरंतर आवश्यकता बनी रहती है। इस कार्य के लिए अब केवल भाषायी ज्ञान पर्याप्त नहीं माना जाता, बल्कि उपभोक्ता मनोविज्ञान, सामाजिक संरचना और सांस्कृतिक संदर्भ की समझ भी आवश्यक होती है। इस प्रकार अनुवाद एक बहुआयामी व्यावसायिक गतिविधि के रूप में उभरता है। इस प्रक्रिया के कुछ नकारात्मक पक्ष भी सामने आते हैं। प्रतिस्पर्धा और लाभकेंद्रित दृष्टिकोण के कारण कई बार अनुवाद की गुणवत्ता से समझौता किया जाता है। कुछ भाषाएँ व्यावसायिक दृष्टि से अधिक उपयोगी मानी जाती हैं, जबकि अन्य भाषाएँ हाशिए पर चली जाती हैं। इससे भाषायी असंतुलन और सांस्कृतिक एकरूपता की समस्या उत्पन्न हो सकती है। ऐसे में अनुवादक की भूमिका केवल तकनीकी नहीं रह जाती, बल्कि वह सांस्कृतिक संतुलन बनाए रखने की जिम्मेदारी भी वहन करता है।

महत्वपूर्ण बिंदु

बाजारकेंद्रित व्यवस्था में अनुवाद अर्थ-परिवर्तन की प्रक्रिया न होकर प्रभाव, उपभोक्ताबोध और सांस्कृतिक अनुकूलन का साधन बन गया है।

समग्रतः कहा जा सकता है कि बाजारवाद की संरचना में अनुवाद एक अनिवार्य घटक के रूप में स्थापित हो चुका है। यह वैश्विक अर्थव्यवस्था और स्थानीय समाज के बीच संवाद को संभव बनाता है। दूसरी ओर, अनुवाद के माध्यम से स्थानीय भाषाएँ और संस्कृतियाँ भी व्यापक मंच पर अपनी उपस्थिति दर्ज कराती हैं। इस प्रकार बाजारवाद और अनुवाद के बीच संबंध केवल आर्थिक नहीं, बल्कि सामाजिक और सांस्कृतिक स्तर पर भी प्रभावशाली सिद्ध होता है।

अपनी प्रगति जांचें

प्रश्न 1: वैश्विक संदर्भ में अनुवाद की आवश्यकता किन कारणों से बढ़ी है?

प्रश्न 2: अनुवाद को केवल भाषायी प्रक्रिया न मानकर सांस्कृतिक प्रक्रिया क्यों कहा जाता है?

प्रश्न3:अनुवाद से जुड़ी प्रमुख चुनौतियों में कौन-कौन से तत्व शामिल हैं?

12,11 सारांश

आधुनिक समय में भूमंडलीकरण की प्रक्रिया ने विश्व को एक परस्पर जुड़ी हुई संरचना में बदल दिया है, जहाँ आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और संचारात्मक गतिविधियाँ वैश्विक स्तर पर संचालित होने लगी हैं। इस परिवर्तनशील

परिदृश्य में बाजार आधारित व्यवस्थाओं का विस्तार हुआ है, जिसने उत्पादन, वितरण और उपभोग की प्रकृति को गहराई से प्रभावित किया है। वैश्विक व्यापार, बहुराष्ट्रीय कंपनियों और डिजिटल माध्यमों के विकास के कारण विभिन्न भाषाओं और संस्कृतियों के बीच संवाद की आवश्यकता बढ़ी है।

ऐसे वातावरण में अनुवाद की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण हो जाती है। अनुवाद केवल भाषायी रूपांतरण का कार्य नहीं करता, बल्कि विभिन्न समाजों, संस्कृतियों और बाजारों के बीच संपर्क स्थापित करने का माध्यम बनता है। उत्पादों की जानकारी, विज्ञापन, तकनीकी सामग्री, प्रशासनिक दस्तावेज और मीडिया संदेश अनुवाद के माध्यम से ही स्थानीय समाज तक पहुँचते हैं। इसके साथ ही अनुवाद में सांस्कृतिक संदर्भों, सामाजिक संवेदनशीलता और प्रभाव की समानता को बनाए रखना आवश्यक होता है। यह भी स्पष्ट होता है कि अनुवाद के समक्ष अनेक चुनौतियाँ विद्यमान हैं, जैसे अर्थभेद, सांस्कृतिक अंतर और संप्रेषण की जटिलता। इसके बावजूद, अनुवाद वैश्विक संवाद को सशक्त करता है और भाषायी विविधता को बनाए रखने में सहायक सिद्ध होता है। इस प्रकार अनुवाद समकालीन विश्व में संपर्क, सहयोग और समझ का एक अनिवार्य आधार बन चुका है।

✓ 12.12 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)

प्रश्न 1 का उत्तर: भूमंडलीकरण की अवधारणा से आशय उस प्रक्रिया से है जिसके अंतर्गत विश्व की अर्थव्यवस्थाएँ, समाज और संस्कृतियाँ परस्पर जुड़ती चली जाती हैं। इसकी विस्तृत चर्चा के लिए संबंधित खंड देखें।

प्रश्न 2 का उत्तर: भूमंडलीकरण के परिणामस्वरूप आर्थिक गतिविधियाँ राष्ट्रीय सीमाओं से बाहर फैल गई हैं और अंतरराष्ट्रीय व्यापार व पूँजी प्रवाह को बढ़ावा मिला है। इस विषय को समझने हेतु ऊपर दिया गया विवेचन सहायक होगा।

प्रश्न 3 का उत्तर: संचार के आधुनिक साधनों ने बाजार आधारित व्यवस्था के विस्तार को गति प्रदान की है, क्योंकि इनके माध्यम से सूचनाएँ और विज्ञापन व्यापक स्तर पर पहुँचते हैं। अधिक स्पष्टता के लिए संबंधित अंश का अवलोकन करें।

प्रश्न 4 का उत्तर: वैश्विक संपर्क और बहुभाषिक संप्रेषण की आवश्यकता के कारण अनुवाद का महत्व बढ़ा है। इस संदर्भ में ऊपर प्रस्तुत सामग्री देखी जा सकती है।

प्रश्न 5 का उत्तर: अनुवाद को सांस्कृतिक प्रक्रिया इसलिए माना जाता है क्योंकि इसमें केवल भाषा नहीं, बल्कि सांस्कृतिक संदर्भ और सामाजिक अर्थ भी स्थानांतरित होते हैं। इस विषय की चर्चा संबंधित खंड में उपलब्ध है।

प्रश्न 6 का उत्तर: अनुवाद से जुड़ी चुनौतियों में भाषायी भिन्नता, सांस्कृतिक अंतर और संदर्भगत अर्थ की समस्या प्रमुख है। इन बिंदुओं की विस्तृत जानकारी के लिए ऊपर दिए गए विवेचन का अध्ययन करें।

🔍 12.13 अधिक जानने के लिए पढ़ें

- Appadurai, Arjun. (1996). Modernity at Large: Cultural Dimensions of Globalization. Minneapolis: University of Minnesota Press.
- Cronin, Michael. (2003). Translation and Globalization. London: Routledge.
- Venuti, Lawrence. (1995). The Translator's Invisibility: A History of Translation. London: Routledge.
- Bassnett, Susan. (2002). Translation Studies. London: Routledge.

- Harvey, David. (2005). A Brief History of Neoliberalism. Oxford: Oxford University Press.
- Nida, Eugene A. (1964). Toward a Science of Translating. Leiden: E. J. Brill.
- तिवारी, भोलानाथ. (2004). अनुवाद-विज्ञान : सिद्धांत और प्रयोग. इलाहाबाद: किताब महल।
- नामवरसिंह. (1999). साहित्यऔरबाजार. नईदिल्ली: राजकमलप्रकाशन।
- सिंह, सुरेंद्र प्रताप. (2012). वैश्वीकरण और हिंदी. नई दिल्ली: वाणी प्रकाशन।
- शर्मा, रामस्वरूप. (2010). भूमंडलीकरण : प्रभाव और चुनौतियाँ. दिल्ली: प्रभात प्रकाशन।

? 12.14 अभ्यास

(क) संक्षिप्त प्रश्नों के उत्तर लिखिए—

1. भूमंडलीकरण की अवधारणा से क्या अभिप्राय है?
2. भूमंडलीकरण के प्रमुख आयाम कौन-कौन से हैं?
3. बाजारवाद की मूल मान्यताओं का संक्षिप्त परिचय दीजिए।
4. भूमंडलीकरण के संदर्भ में अनुवाद की आवश्यकता क्यों बढ़ी है?
5. बाजारआधारित व्यवस्था में अनुवाद की भूमिका किस प्रकार बदलती है?
6. समकालीन विश्व में अनुवाद को एक व्यावसायिक गतिविधि क्यों माना जाने लगा है?

(ख) निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लिखिए—

1. भूमंडलीकरण की अवधारणा के आलोक में उसके सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक आयामों का समग्र विवेचन कीजिए।
2. बाजारकेन्द्रित व्यवस्था के उद्भव की पृष्ठभूमि तथा उसकी प्रमुख विशेषताओं पर समीक्षात्मक प्रकाश डालिए।
3. भूमंडलीकरण और बाजारआधारित सोच के अंतर्संबंधों तथा उनके प्रभावों को स्पष्ट रूप में स्पष्ट करें।
4. भूमंडलीकरण के संदर्भ में अनुवाद की भूमिका को उपयुक्त उदाहरणों सहित विश्लेषित करें।
5. बाजारआधारित संचार, विज्ञापन और मीडिया में अनुवाद की बदलती प्रकृति का आकलन प्रस्तुत कीजिए।
6. समकालीन संदर्भ में अनुवाद को आर्थिक, सांस्कृतिक और वैचारिक प्रक्रिया के रूप में समझने का प्रयास करें।

शब्दकोश

भूमंडलीकरण : वैश्वीकरण, बाजारवाद : उदारीकरण, मुक्त व्यापार : स्वतंत्रता, उपभोक्ता : ग्राहक, प्रतिस्पर्धा : होड़,निजीकरण: हस्तांतरण,बहुराष्ट्रीय: अंतरराष्ट्रीय, पूँजी: धन, निवेश: पूँजीनिवेश, विज्ञापन: प्रचार, मीडिया: संचार, स्थानीयकरण: देशीकरण इत्यादि|

*** ***** ***

इकाई 13 - लिप्यंतरण और लिप्यंकन

इकाई की रूपरेखा

13.1 उद्देश्य
13.2 प्रस्तावना
13.3 लिप्यंतरण और लिप्यंकन: अभिप्राय
13.4 अनुवाद और लिप्यंतरण के बीच भेद
13.5 लिप्यंकन: अवधारणा, पद्धति और अनुवाद
13.6 "अनुवादप्रक्रियामेंलिप्यंतरण: शब्दप्रकारऔरउपयोगिता"
13.7 देवनागरी–रोमन लिप्यंतरण
13.8 भारतीय भाषाओं के मध्य लिप्यंतरण
13.9 सारांश
13.10 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)
13.11 अधिक जानने के लिए पढ़ें
13.12 अभ्यास प्रश्न

13.1 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन से आप-

- लिप्यंकन और लिप्यंतरण की मूल अवधारणाओं तथा उनके प्रयोजन को स्पष्ट रूप में समझ सकेंगे।
- अनुवाद और लिप्यंतरण के बीच के वैचारिक तथा व्यावहारिक अंतर को पहचानने की क्षमता प्राप्त करेंगे।
- अनुवाद प्रक्रिया में लिप्यंतरण की भूमिका, शब्दप्रकार और उपयोगिता का विश्लेषण कर पाएँगे।
- देवनागरी–रोमन तथा भारतीय भाषाओं के मध्य लिप्यंतरण की पद्धतियों का व्यावहारिक ज्ञान अर्जित करेंगे।
- देवनागरी वर्णमाला के परिवर्धित रूप और लिप्यंतरण के अनुप्रयोगात्मक पक्ष का सम्यक बोध विकसित करेंगे।

13.2 प्रस्तावना

भाषा के लिखित रूप से जुड़े कार्यों में लिप्यंकन और लिप्यंतरण का विशेष महत्व है। जब किसी भाषा की ध्वनियों या शब्दों को दूसरी लिपि में प्रस्तुत किया जाता है, तो यह प्रक्रिया केवल तकनीकी न रहकर भाषिक, सांस्कृतिक और संप्रेषणात्मक आयाम भी ग्रहण कर लेती है। अनुवाद के क्षेत्र में लिप्यंतरण की भूमिका इसलिए महत्वपूर्ण हो जाती है क्योंकि प्रत्येक भाषा की ध्वनिव्यवस्था और लिपिरचना भिन्न होती है। विशेष रूप से भारतीय भाषाओं में, जहाँ विविध लिपियाँ प्रचलित हैं, वहाँ एक भाषा से दूसरी भाषा में शब्दों, नामों और संकल्पनाओं को यथासंभव मूल रूप में बनाए रखना आवश्यक होता है।

समकालीन संदर्भ में साहित्य, प्रशासन, मीडिया, तकनीक और वैश्विक संचार के विस्तार के साथ लिप्यंतरण की उपयोगिता और जटिलता दोनों बढ़ी हैं। इस इकाई में लिप्यंकन और लिप्यंतरण की अवधारणा, उनकी पद्धतियाँ, अनुवाद

से उनका संबंध तथा व्यावहारिक पक्ष को क्रमबद्ध रूप में समझने का प्रयास किया गया है, जिससे पाठक को इन प्रक्रियाओं की स्पष्ट और समग्र समझ विकसित हो सके।

13.3 लिप्यंतरण और लिप्यंकन: अभिप्राय

भाषा मानव संप्रेषण की मूल इकाई है, किंतु भाषा की वास्तविक उपस्थिति केवल ध्वनियों तक सीमित नहीं रहती, बल्कि उसे स्थायित्व और दृश्य रूप प्रदान करने के लिए लिपि की आवश्यकता होती है। लिपि उन संकेतों और प्रतीकों की सुव्यवस्थित प्रणाली है जिनके माध्यम से भाषा की ध्वनियों को लिखित रूप दिया जाता है। इसी संदर्भ में लिप्यंतरण और लिप्यंकन जैसी प्रक्रियाएँ सामने आती हैं, जो भाषा, ध्वनि और लिपि के आपसी संबंध को स्पष्ट करती हैं। लिप्यंतरण शब्द 'लिपि' और 'अंतरण' से निर्मित है, जिसमें अंतरण का आशय एक व्यवस्था से दूसरी व्यवस्था में स्थानांतरण से है। इस प्रकार लिप्यंतरण का तात्पर्य किसी भाषा के शब्दों या ध्वनियों को मूल भाषा की ध्वनिसंरचना को बनाए रखते हुए दूसरी लिपि में व्यक्त करने की प्रक्रिया से है। इसमें न तो शब्द का अर्थ बदला जाता है और न ही उसकी पहचान समाप्त होती है, केवल लिपि परिवर्तित होती है। इसके विपरीत लिप्यंकन शब्द 'लिपि' और 'अंकन' से बना है, जिसका आशय ध्वनियों को लिपिचिह्नों द्वारा अंकित करने से है। लिप्यंकन का उद्देश्य भाषा की ध्वनिप्रणाली को यथासंभव सटीक और वैज्ञानिक रूप में लिखित करना होता है, जिससे उच्चारण की सूक्ष्मताओं को सुरक्षित रखा जा सके। इस प्रकार जहाँ लिप्यंतरण व्यावहारिक संप्रेषण से जुड़ा है, वहीं लिप्यंकन भाषिक विश्लेषण और अध्ययन से संबद्ध माना जाता है।

लिप्यंतरण की प्रक्रिया का मुख्य लक्ष्य यह होता है कि किसी भाषा का शब्द दूसरी लिपि में लिखे जाने पर भी अपने उच्चारण और सांस्कृतिक स्वरूप को बनाए रखे। यही कारण है कि व्यक्तिनाम, स्थाननाम, धार्मिक संज्ञाएँ, तकनीकी शब्द और सांस्कृतिक पद प्रायः लिप्यंतरण के माध्यम से ही प्रस्तुत किए जाते हैं। उदाहरणस्वरूप, जब किसी भारतीय भाषा के शब्द को रोमन लिपि में लिखा जाता है, तब उसका उच्चारण मूल भाषा के निकट रखने का प्रयास किया जाता है, ताकि पाठक शब्द को सही ढंग से ग्रहण कर सके। इसके विपरीत, लिप्यंकन में ध्वनि की वैज्ञानिक प्रस्तुति पर अधिक बल दिया जाता है। भाषाविज्ञान में प्रयुक्त ध्वन्यात्मक चिह्नों के माध्यम से यह दर्शाया जाता है कि किसी शब्द का वास्तविक उच्चारण कैसा है, उसमें स्वर-दीर्घता, नासिक्यत्व, बलाघात या ध्वनिभेद किस प्रकार उपस्थित हैं। लिप्यंकन सामान्य लेखन से भिन्न होता है, क्योंकि इसमें उद्देश्य संप्रेषण नहीं, बल्कि ध्वनियों का सूक्ष्म विश्लेषण होता है। इस कारण लिप्यंकन भाषाअध्ययन, उच्चारण-शिक्षण और अनुसंधान में अधिक उपयोगी सिद्ध होता है। इस प्रक्रिया के माध्यम से भाषाओं की ध्वनिसंरचना को समझा जा सकता है और विभिन्न भाषाओं के बीच ध्वन्यात्मक तुलना संभव हो पाती है।

समकालीन बहुभाषी और बहुलिपिक समाजों में लिप्यंतरण और लिप्यंकन दोनों का महत्व निरंतर बढ़ता जा रहा है। भारत जैसे देश में, जहाँ अनेक भाषाएँ और लिपियाँ प्रचलित हैं, वहाँ एक लिपि से दूसरी लिपि में शब्दों का स्थानांतरण दैनिक व्यवहार का अंग बन चुका है। अनुवाद प्रक्रिया में भी लिप्यंतरण की भूमिका विशेष रूप से महत्वपूर्ण हो जाती है, क्योंकि कई सांस्कृतिक और पारिभाषिक शब्द ऐसे होते हैं जिनका पूर्ण अर्थानुवाद संभव नहीं होता। ऐसे शब्दों को उनकी पहचान बनाए रखने के लिए लिप्यंतरण के माध्यम से प्रस्तुत किया जाता है। दूसरी ओर, लिप्यंकन भाषा की आंतरिक संरचना को समझने का माध्यम बनता है और यह स्पष्ट करता है कि किसी भाषा की ध्वनियाँ किस प्रकार निर्मित और प्रयुक्त होती हैं। इस प्रकार दोनों प्रक्रियाएँ भाषा को केवल अभिव्यक्ति का साधन नहीं, बल्कि अध्ययन और विश्लेषण का विषय भी बनाती हैं। कहा जा सकता है कि लिप्यंतरण भाषाओं के बीच सेतु का कार्य करता है, जबकि लिप्यंकन भाषा के भीतर झाँकने का माध्यम प्रदान करता है। इन दोनों के संयुक्त प्रयोग से भाषासंरचना, अनुवाद और संप्रेषण को अधिक सुस्पष्ट, प्रभावी और वैज्ञानिक रूप दिया जा सकता है।

13.4 अनुवाद और लिप्यंतरण के बीच भेद

भाषाअध्ययन और अनुवादविज्ञान के क्षेत्र में अनुवाद और लिप्यंतरण दो ऐसे महत्त्वपूर्ण संप्रत्यय हैं, जिनका प्रयोग प्रायः एक-दूसरे के स्थान पर कर दिया जाता है, जबकि दोनों की प्रकृति, उद्देश्य और प्रक्रिया मूलतः भिन्न है। इन दोनों का संबंध भाषा से अवश्य है, किंतु भाषा के साथ उनका व्यवहार अलग–अलग स्तरों पर होता है। अनुवाद मुख्यतः अर्थ और भाव के स्तर पर कार्य करता है, जबकि लिप्यंतरण ध्वनि और लिपि के स्तर तक सीमित रहता है। इसलिए इन दोनों के भेद को स्पष्ट रूप से समझना भाषाअध्ययन, साहित्य, प्रशासन, तकनीक और संचार के प्रत्येक क्षेत्र के लिए आवश्यक हो जाता है। अनुवाद की प्रक्रिया में किसी स्रोत भाषा के पाठ को लक्ष्य भाषा में इस प्रकार रूपांतरित किया जाता है कि उसका अर्थ, भाव, आशय और संदर्भ लक्ष्य भाषा के पाठक तक सहज रूप से पहुँच सके। इसमें केवल शब्दों का स्थानांतरण नहीं होता, बल्कि सांस्कृतिक संकेतों, भावनात्मक प्रभावों और सामाजिक संदर्भों का भी ध्यान रखा जाता है। उदाहरण के लिए, यदि किसी अंग्रेजी वाक्य में सांस्कृतिक प्रतीक निहित है, तो उसका हिंदी अनुवाद करते समय अनुवादक को यह देखना होता है कि लक्ष्य भाषा के पाठक उस प्रतीक को किस रूप में समझेंगे। इस प्रकार अनुवाद एक सृजनात्मक, विवेकपूर्ण और संदर्भआधारित प्रक्रिया है, जिसमें अनुवादक की भाषायी दक्षता के साथ–साथ सांस्कृतिक समझ भी निर्णायक भूमिका निभाती है।

इसके विपरीत, लिप्यंतरण का संबंध अर्थपरिवर्तन से नहीं, बल्कि ध्वनिपरिवर्तन से होता है। जब किसी भाषा के शब्दों को दूसरी लिपि में उसी ध्वनिरूप के आधार पर लिखा जाता है, तो उसे लिप्यंतरण कहा जाता है। इसमें शब्द का अर्थ नहीं बदला जाता, बल्कि केवल उसकी लिखावट बदली जाती है। उदाहरण के लिए, हिंदी शब्द 'राम' को रोमन लिपि में Ram लिखना लिप्यंतरण है। यहाँ न तो अर्थ बदला और न ही भाव, केवल लिपि बदली गई। इस प्रकार लिप्यंतरण एक तकनीकी और यांत्रिक प्रक्रिया है, जिसमें मुख्य उद्देश्य मूल ध्वनिसंरचना को यथासंभव सुरक्षित रखना होता है। अनुवाद और लिप्यंतरण के बीच पहला और सबसे महत्त्वपूर्ण भेद उनके उद्देश्य में दिखाई देता है। अनुवाद का उद्देश्य अर्थसंप्रेषण है, ताकि स्रोत भाषा का पाठ लक्ष्य भाषा के पाठकों के लिए बोधगम्य हो सके। इसके विपरीत, लिप्यंतरण का उद्देश्य उच्चारणसंरक्षण है, जिससे किसी भाषा के शब्दों को दूसरी लिपि में पढ़ा और बोला जा सके। अनुवाद पाठक को अर्थ समझाने के लिए किया जाता है, जबकि लिप्यंतरण पाठक को सही ध्वनि तक पहुँचाने का माध्यम है।

दूसरा महत्त्वपूर्ण अंतर उनकी प्रक्रिया से संबंधित है। अनुवाद में भाषासंरचना, व्याकरण, वाक्यविन्यास और सांस्कृतिक संदर्भों का गहन विश्लेषण आवश्यक होता है। अनुवादक को यह निर्णय लेना पड़ता है कि कहाँ शाब्दिक समानता रखी जाए और कहाँ भावानुकूल परिवर्तन किया जाए। इसके विपरीत, लिप्यंतरण में इस प्रकार के निर्णय अपेक्षाकृत कम होते हैं। इसमें ध्वन्यात्मक नियमों और निर्धारित मानकों के अनुसार एक लिपि के अक्षरों को दूसरी लिपि के समकक्ष चिह्नों में बदल दिया जाता है।

अनुवाद में अनुवादक की रचनात्मक भूमिका अत्यंत महत्त्वपूर्ण होती है। साहित्यिक अनुवाद में यह रचनात्मकता और भी बढ़ जाती है, जहाँ मूल कृति की शैली, लय और सौंदर्य को लक्ष्य भाषा में पुनः सृजित करना होता है। इसके विपरीत, लिप्यंतरण में रचनात्मकता का स्थान सीमित होता है। यहाँ प्राथमिक लक्ष्य यह होता है कि शब्द की ध्वनि यथासंभव सही रूप में प्रस्तुत हो, न कि उसे नए रूप में गढ़ा जाए। अंतर उपयोगक्षेत्र से जुड़ा हुआ है। अनुवाद का प्रयोग साहित्य, शिक्षा, प्रशासन, विज्ञान, तकनीक, मीडिया और वैश्विक संचार के प्रत्येक क्षेत्र में किया जाता है। इसके बिना विभिन्न भाषायी समुदायों के बीच संवाद संभव नहीं है। वहीं लिप्यंतरण का प्रयोग विशेष रूप से नामों, स्थानों, तकनीकी शब्दों, पासवर्ड, ब्रांड नाम, शब्दकोश और भाषाशिक्षण में अधिक होता है। उदाहरणस्वरूप, विदेशी लेखकों के नाम, अंतरराष्ट्रीय स्थानों के नाम या तकनीकी शब्दों को हिंदी में लिखते समय प्रायः लिप्यंतरण का सहारा लिया जाता है। संस्कृति के स्तर पर स्पष्ट होता है। अनुवाद संस्कृतिसंवेदी प्रक्रिया है। इसमें लक्ष्य संस्कृति की सामाजिक संरचना, मूल्यबोध और परंपराओं को ध्यान में रखना आवश्यक होता है। यदि ऐसा न किया जाए, तो अनुवाद अर्थहीन या भ्रमपूर्ण हो सकता

है। इसके विपरीत, लिप्यंतरण में सांस्कृतिक हस्तक्षेप न्यूनतम होता है, क्योंकि इसमें संस्कृति की व्याख्या नहीं, केवल ध्वनि की प्रस्तुति होती है। समकालीन समय में अनुवाद और लिप्यंतरण दोनों की भूमिका बढ़ी है, किंतु उनके प्रयोगक्षेत्र स्पष्ट रूप से अलग बने हुए हैं। डिजिटल तकनीक और वैश्विक संचार के कारण लिप्यंतरण का प्रयोग मोबाइल, कंप्यूटर, सोशल मीडिया और तकनीकी अनुप्रयोगों में तीव्रता से बढ़ा है। वहीं अनुवाद वैश्वीकरण के संदर्भ में विचारों, ज्ञान और संस्कृतियों के आदान–प्रदान का प्रमुख माध्यम बन गया है।

महत्वपूर्ण बिंदु

लिप्यंतरण और लिप्यंकन अनुवाद की सहायक प्रक्रियाएँ हैं, जो भाषिक संप्रेषण को अधिक सटीक, मानकीकृत और बहुभाषिक संदर्भों में उपयोगी बनाती हैं।

13.5 लिप्यंकन: अवधारणा, पद्धति और अनुवाद

भाषा मानव संप्रेषण का सबसे सशक्त माध्यम है और उसका मूल रूप मौखिक माना जाता है। लेखन भाषा का विकसित रूप है, जो मौखिक अभिव्यक्ति को स्थायित्व प्रदान करता है। जब भाषा की ध्वनियों को किसी लिपि या संकेतप्रणाली के माध्यम से लिखित रूप में प्रस्तुत किया जाता है, तब उस प्रक्रिया को लिप्यंकन कहा जाता है। लिप्यंकन का उद्देश्य किसी शब्द या वाक्य के अर्थ का अनुवाद करना नहीं होता, बल्कि उसके उच्चारण को यथासंभव सटीक रूप में अंकित करना होता है। भाषाविज्ञान की दृष्टि से ध्वनि भाषा की सबसे छोटी इकाई है और शब्द तथा वाक्य उन्हीं ध्वनियों के संयोजन से बनते हैं। इसलिए भाषा की वास्तविक प्रकृति को समझने के लिए लिप्यंकन अत्यंत आवश्यक प्रक्रिया बन जाती है।

लिप्यंकन को सामान्य लेखन से अलग समझना आवश्यक है। सामान्य लेखन में शब्दों को उनकी स्वीकृत वर्तनी के अनुसार लिखा जाता है, जबकि लिप्यंकन में उच्चारण को आधार बनाया जाता है। उदाहरण के लिए अंग्रेजी शब्द knife को सामान्य लेखन में 'knife' लिखा जाता है, किंतु उसके उच्चारण के अनुसार हिंदी में उसका लिप्यंकन "नाइफ़"होगा, न कि "क्नाइफ़"।यहाँयहस्पष्टहोताहैकिलिप्यंकनध्वनिकेंद्रितप्रक्रियाहै, न कि अक्षरकेंद्रित। इसी प्रकार अंग्रेजी शब्द psychology का हिंदी में सामान्य अनुवाद "मनोविज्ञान"है, किंतु जब उच्चारण को लिखना हो तो "साइकोलॉजी"लिखाजाताहै, जो लिप्यंकन का उदाहरण है। लिप्यंकन की प्रक्रिया केवल एक तकनीकी कार्य नहीं है, बल्कि इसमें भाषाज्ञान, ध्वन्यात्मक समझ और सामाजिक प्रयोग- all का समन्वय होता है। किसी भी भाषा में उच्चारण क्षेत्रीय, सामाजिक और व्यक्तिगत स्तर पर भिन्न हो सकता है। उदाहरण के लिए अंग्रेजी शब्द schedule का उच्चारण ब्रिटिश अंग्रेज़ी में "शेड्यूल"औरअमेरिकीअंग्रेजीमें "स्केड्यूल" प्रचलितहै। हिंदी मेंइनदोनोंउच्चारणोंकेआधारपर "शेड्यूल" और "स्केड्यूल" दोनोंलिप्यंकनमिलतेहैं।इससेयह स्पष्ट होता है कि लिप्यंकन पूर्णतः यांत्रिक प्रक्रिया नहीं, बल्कि भाषिक व्यवहार से जुड़ी हुई प्रक्रिया है। लिप्यंकन के संदर्भ में यह भी ध्यान देने योग्य है कि संसार की सभी भाषाओं की ध्वनियों के लिए किसी एक लिपि में पर्याप्त संकेत उपलब्ध नहीं होते। इसी कारण विशेष चिह्नों और ध्वन्यात्मक संकेतों का प्रयोग किया जाता है। भाषाविज्ञान में इन्हें उच्चारणसूचक चिह्न या विशिष्ट चिह्न कहा जाता है। इन चिह्नों के माध्यम से सूक्ष्म ध्वनिभेदों को भी स्पष्ट किया जा सकता है। उदाहरण के लिए अंग्रेजी में ship और sheep शब्दों के उच्चारण में सूक्ष्म अंतर है। सामान्य लेखन में यह अंतर स्पष्ट नहीं होता, किंतु ध्वन्यात्मक लिप्यंकन में ship को /ʃɪp/ और sheep को /ʃiːp/ लिखकर अंतर स्पष्ट किया जाता है। इसी संदर्भ में अंतरराष्ट्रीय ध्वन्यात्मक वर्णमाला (IPA) का विशेष महत्व है। यह एक ऐसी प्रणाली है, जिसके माध्यम से संसार की लगभग सभी भाषाओं की ध्वनियों को वैज्ञानिक ढंग से लिखा जा सकता है। IPA का प्रयोग भाषाविज्ञान, भाषाशिक्षण, शब्दकोशनिर्माण और अनुवादअध्ययन- सभी क्षेत्रों में किया जाता

है। उदाहरण के लिए अंग्रेज़ी शब्द father को IPA में /ˈfɑːðər/ लिखा जाता है, जबकि हिंदी शब्द "भारत"को /bʱaːrət/ के रूप में अंकित किया जा सकता है। इससे यह स्पष्ट होता है कि IPA लिप्यंकन को सार्वभौमिक आधार प्रदान करता है।

लिप्यंकन और लिप्यंतरण के बीच का अंतर भी यहाँ स्पष्ट करना आवश्यक है। लिप्यंतरण में किसी एक लिपि के अक्षरों को दूसरी लिपि के अक्षरों में बदला जाता है, जबकि लिप्यंकन में ध्वनि को प्राथमिकता दी जाती है। उदाहरण के लिए अंग्रेजी नाम Raman को देवनागरी में "रमन"लिखनालिप्यंतरणहै, क्योंकि यहाँ अक्षरक्रम का पालन किया गया है। इसके विपरीत अंग्रेजी शब्द computer को हिंदी में "कंप्यूटर"लिखनालिप्यंकनहै, क्योंकि यहाँ उच्चारण को आधार बनाया गया है। इस अंतर को न समझ पाने के कारण अनुवाद में कई बार भ्रम उत्पन्न हो जाता है।

अनुवाद के क्षेत्र में लिप्यंकन की भूमिका अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। अनुवाद करते समय अनेक ऐसे शब्द सामने आते हैं, जिनका अर्थानुवाद या तो संभव नहीं होता या अनावश्यक होता है। व्यक्तिवाचक संज्ञाएँ- जैसे व्यक्तिनाम, स्थाननाम, संस्थानों के नामअधिकतर लिप्यंकन के माध्यम से ही लक्ष्य भाषा में लाए जाते हैं। उदाहरण के लिए William Shakespeare को हिंदी में "विलियमशेक्सपियर"लिखाजाताहै, न कि उसका कोई अर्थानुवाद किया जाता है। इसी प्रकार New York को "न्यूयॉर्क"लिखाजाताहै।यहअनुवादनहीं, बल्कि लिप्यंकन है।

तकनीकी और वैज्ञानिक शब्दावली के क्षेत्र में भी लिप्यंकन की आवश्यकता स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। Internet, software, hardware, laser, virus, mobile जैसे शब्द आज हिंदी में व्यापक रूप से प्रचलित हैं। इनके स्थान पर कृत्रिम या बोझिल अनुवाद करने से भाषा संप्रेषणीय नहीं रहती। उदाहरण के लिए computer के लिए "संगणक" शब्दप्रचलनमेंलानेकाप्रयासहुआ, किंतु व्यवहार में "कंप्यूटर" अधिकस्वीकृतहै। यहदर्शाताहैकिलिप्यंकन भाषाकीजीवंतता और सामाजिक स्वीकृतिसेजुड़ाहुआहै। अनुवाद मेंलिप्यंकनकाप्रयोगपारिभाषिकशब्दोंकेसंदर्भमेंभीकियाजाताहै। चिकित्सा, विज्ञान, विधि और प्रौद्योगिकी जैसे क्षेत्रों में अनेक शब्द ऐसे होते हैं, जिनका अनुवाद करने पर अर्थ अस्पष्ट हो सकता है। उदाहरण के लिए diabetes को "डायबिटीज", cancer को "कैंसर"औरheart attack को "हार्टअटैक" कहाजाताहै। इनशब्दोंकाशाब्दिकअनुवादसंभवहै, किंतु व्यवहार में लिप्यंकित रूप ही अधिक प्रभावी सिद्ध होता है।

आगत शब्दों के संदर्भ में भी लिप्यंकन की भूमिका उल्लेखनीय है। जब एक भाषा दूसरी भाषा के संपर्क में आती है, तो शब्दों का आदान-प्रदान स्वाभाविक हो जाता है। हिंदी में अंग्रेजी, फ़ारसी, अरबी और संस्कृत से आए अनेक शब्द प्रचलित हैं। अंग्रेजी से आए शब्द- जैसे railway (रेलवे), school (स्कूल), college (कॉलेज), office (ऑफिस)सब लिप्यंकन के उदाहरण हैं। इन शब्दों को हिंदी ने आत्मसात कर लिया है और वे अब भाषा का स्वाभाविक अंग बन चुके हैं। लिप्यंकन का प्रयोग साहित्यिक अनुवाद में भी विशेष रूप से दिखाई देता है। जब किसी विदेशी साहित्यिक कृति का अनुवाद किया जाता है, तो पात्रों के नाम, स्थानों के नाम और सांस्कृतिक संदर्भ प्रायः लिप्यंकन द्वारा ही प्रस्तुत किए जाते हैं। उदाहरण के लिए अंग्रेजी उपन्यास में आने वाला पात्र Harry Potter हिंदी अनुवाद में "हैरीपॉटर"ही रहता है। इससे पाठक को मूल कृति की सांस्कृतिक पहचान से जोड़े रखने में सहायता मिलती है।

समकालीन संदर्भ में मीडिया, विज्ञापन और डिजिटल संचार ने लिप्यंकन की भूमिका को और विस्तृत कर दिया है। समाचारपत्रों, टेलीविज़न और सोशल मीडिया में लिप्यंकित शब्दों की संख्या निरंतर बढ़ रही है। Breaking News, Live Update, Prime Time जैसे पदबंध हिंदी मीडिया में लिप्यंकित रूप में प्रयुक्त हो रहे हैं। यह प्रवृत्ति यह दर्शाती है कि लिप्यंकन आधुनिक भाषाव्यवहार का अनिवार्य अंग बन चुका है।

अपनी प्रगति जांचें

प्रश्न 1: लिप्यंकन और लिप्यंतरण की अवधारणा में क्या मूलभूत अंतर है, इसे आप किस प्रकार समझते हैं?

प्रश्न 2: अनुवाद प्रक्रिया में किन परिस्थितियों में लिप्यंतरण का प्रयोग अधिक उपयुक्त माना जाता है?

13.6 देवनागरी–रोमन लिप्यंतरण

देवनागरी–रोमन लिप्यंतरण का तात्पर्य उस प्रक्रिया से है, जिसके अंतर्गत देवनागरी लिपि में लिखे गए शब्दों, वाक्यों अथवा ग्रंथों को रोमन लिपि के माध्यम से इस प्रकार अभिव्यक्त किया जाता है कि मूल भाषा का उच्चारण, ध्वन्यात्मक संरचना और शब्दरूप यथासंभव सुरक्षित रहे। यह प्रक्रिया अनुवाद से भिन्न होते हुए भी उससे गहराई से संबद्ध है, क्योंकि इसमें अर्थपरिवर्तन नहीं, बल्कि केवल लिपिपरिवर्तन होता है। आधुनिक वैश्विक संदर्भ में, जहाँ भारतीय भाषाओं के पाठक और अध्येता विश्वभर में फैले हुए हैं, देवनागरी–रोमन लिप्यंतरण एक अनिवार्य भाषिक उपकरण के रूप में उभरकर सामने आया है। विशेषतः हिंदी, संस्कृत, मराठी, नेपाली आदि भाषाओं के अध्ययन, अध्यापन और अंतरराष्ट्रीय संप्रेषण में इसकी भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण हो गई है।

देवनागरी लिपि एक ध्वन्यात्मक लिपि है, जिसमें प्रत्येक वर्ण किसी न किसी ध्वनि का प्रतिनिधित्व करता है। इसके विपरीत रोमन लिपि मूलतः वर्णमूलक है और उसमें अनेक ध्वनियों के लिए पृथक प्रतीकों का अभाव पाया जाता है। इसी कारण देवनागरी–रोमन लिप्यंतरण में साधारण अक्षरों के साथ-साथ विशेष चिह्नों (जैसे दीर्घ चिह्न, बिंदु, रेखा आदि) का सहारा लिया जाता है। उदाहरण के लिए, देवनागरी के 'ट', 'ठ', 'ड', 'ढ' और 'ण' जैसे मूर्धन्य व्यंजनों को साधारण 't', 'd', 'n' से अलग दिखाने के लिए रोमन लिपि में उनके नीचे बिंदु का प्रयोग किया जाता है- जैसे ṭ, ṭh, ḍ, ḍh, ṇ। यह व्यवस्था इस तथ्य को स्पष्ट करती है कि लिप्यंतरण केवल यांत्रिक अक्षरपरिवर्तन नहीं, बल्कि एक सुव्यवस्थित भाषावैज्ञानिक प्रक्रिया है। देवनागरी–रोमन लिप्यंतरण में सबसे पहले स्वरव्यवस्था को समझना आवश्यक है। देवनागरी में 'अ', 'आ', 'इ', 'ई', 'उ', 'ऊ', 'ऋ', 'ए', 'ऐ', 'ओ', 'औ' जैसे स्वर पाए जाते हैं। रोमन लिप्यंतरण में इन्हें क्रमशः a, ā, i, ī, u, ū, ṛ, e, ai, o, au के रूप में व्यक्त किया जाता है। यहाँ दीर्घ स्वरों को चिह्नित करने के लिए 'ā', 'ī', 'ū' जैसे रूप अपनाए जाते हैं, ताकि 'अ' और 'आ', 'इ' और 'ई' के बीच का भेद स्पष्ट बना रहे। उदाहरणस्वरूप, 'राम' का लिप्यंतरण Rām और 'रिम' का Rim किया जाएगा। यदि दीर्घता का संकेत न दिया जाए, तो उच्चारण में भ्रम की स्थिति उत्पन्न हो सकती है।

व्यंजनों के लिप्यंतरण में भी इसी प्रकार की सावधानी अपेक्षित होती है। देवनागरी के कवर्ग, चवर्ग, टवर्ग, तवर्ग और पवर्ग के व्यंजन रोमन लिपि में क्रमशः k, c, ṭ, t और p वर्गों के माध्यम से व्यक्त किए जाते हैं। उदाहरण के लिए- क = k, ख = kh, ग = g, घ = gh; च = c, छ = ch, ज = j, झ = jh; ट = ṭ, ठ = ṭh, ड = ḍ, ढ = ḍh; त = t, थ = th, द = d, ध = dh; प = p, फ = ph, ब = b, भ = bh। इस प्रकार रोमन लिप्यंतरण में महाप्राण और अल्पप्राण व्यंजनों के भेद को बनाए रखने के लिए 'h' का प्रयोग अनिवार्य हो जाता है।

देवनागरी–रोमन लिप्यंतरण की एक महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि इसमें 'अ' स्वर को अंतर्निहित (implicit) माना जाता है। जैसे देवनागरी में 'क' का उच्चारण 'क् + अ' के रूप में होता है, वैसे ही रोमन लिप्यंतरण में 'k' अपने आप 'ka' का संकेत देता है। किंतु जहाँ 'अ' स्वर का लोप होता है, वहाँ रोमन लिप्यंतरण में भी उसका संकेत नहीं दिया जाता। उदाहरण के लिए, 'राम' में 'म' के बाद 'अ' का उच्चारण नहीं होता, इसलिए Rām लिखा जाता है, न कि Rāma। यह सिद्धांत देवनागरी की ध्वन्यात्मक प्रकृति को समझने में सहायक सिद्ध होता है। संयुक्त व्यंजनों का लिप्यंतरण देवनागरी–

रोमन प्रणाली का एक जटिल किंतु महत्वपूर्ण पक्ष है। देवनागरी में 'क्त', 'ज्ञ', 'त्र', 'श्र' जैसे संयुक्ताक्षर पाए जाते हैं। रोमन लिप्यंतरण में इन्हें उनके ध्वन्यात्मक घटकों के आधार पर व्यक्त किया जाता है। उदाहरण के लिए- 'ज्ञान' का लिप्यंतरण jñāna, 'त्रिकोण' का trikoṇa और 'श्रद्धा' का śraddhā किया जाता है। यहाँ 'ś' का प्रयोग तालव्य श ध्वनि के लिए किया गया है, जबकि 'ṣ' मूर्धन्य ष के लिए और 's' दंत्य स के लिए प्रयुक्त होता है। इस प्रकार तीनों 'स' ध्वनियों के बीच का अंतर रोमन लिप्यंतरण में भी सुरक्षित रहता है।

देवनागरी–रोमन लिप्यंतरण में अनुनासिक और अनुस्वार ध्वनियों का निरूपण भी विशेष ध्यान की मांग करता है। देवनागरी के 'ं' और 'ँ' चिह्नों को रोमन लिप्यंतरण में सामान्यतः 'ṃ' या 'm̐' के माध्यम से व्यक्त किया जाता है। उदाहरणस्वरूप, 'संस्कृत' का lityantaran saṃskṛta और 'हिंदी' का hindī किया जाता है। इसी प्रकार चंद्रबिंदु से युक्त स्वर ध्वनियों को भी संदर्भानुसार रोमन लिपि में व्यक्त किया जाता है, ताकि नासिक्य उच्चारण का संकेत बना रहे। देवनागरी–रोमन लिप्यंतरण का ऐतिहासिक विकास भी उल्लेखनीय है। औपनिवेशिक काल में जब यूरोपीय विद्वानों ने भारतीय भाषाओं का अध्ययन प्रारंभ किया, तब उन्हें देवनागरी लिपि को समझने और पढ़ने में कठिनाई हुई। परिणामस्वरूप उन्होंने भारतीय शब्दों को रोमन लिपि में लिखने की विभिन्न प्रणालियाँ विकसित कीं। आगे चलकर इन प्रयासों से IAST (International Alphabet of Sanskrit Transliteration) जैसी मानकीकृत प्रणालियाँ अस्तित्व में आईं, जिनका आज व्यापक प्रयोग होता है। संस्कृत ग्रंथों, वेदों, उपनिषदों और भारतीय दर्शन के अंतरराष्ट्रीय प्रकाशनों में यही प्रणाली सर्वाधिक प्रचलित है। व्यावहारिक स्तर पर देवनागरी–रोमन लिप्यंतरण का उपयोग अनेक क्षेत्रों में किया जाता है। साहित्य के क्षेत्र में भारतीय काव्य और कथासाहित्य को विदेशी पाठकों तक पहुँचाने में यह सहायक सिद्ध होता है। संगीत के क्षेत्र में शास्त्रीय रागों, बंदिशों और भजनों को रोमन लिपि में लिखकर विदेशी कलाकारों को सिखाया जाता है। धार्मिक और दार्शनिक ग्रंथों- जैसे गीता, रामायण, उपनिषदके रोमन लिप्यंतरण से विश्वभर के पाठक भारतीय चिंतनपरंपरा से जुड़ पाते हैं। इसी प्रकार आधुनिक तकनीकी माध्यमों, जैसे कंप्यूटर, मोबाइल और इंटरनेट, पर देवनागरी–रोमन लिप्यंतरण का प्रयोग खोज, टाइपिंग और डिजिटल संप्रेषण को सरल बनाता है।

अनुवाद की प्रक्रिया में भी देवनागरी–रोमन लिप्यंतरण की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है। जब किसी भारतीय भाषा के शब्द का सटीक अनुवाद उपलब्ध न हो, तब उसे रोमन लिप्यंतरण के माध्यम से मूल रूप में प्रस्तुत किया जाता है। उदाहरण के लिए, 'धर्म', 'कर्म', 'योग', 'भक्ति' जैसे शब्दों का अनुवाद करने के स्थान पर dharma, karma, yoga, bhakti लिखना अधिक उपयुक्त माना जाता है। इससे शब्द का सांस्कृतिक और वैचारिक अर्थ सुरक्षित रहता है।

महत्वपूर्ण बिंदु

विभिन्न लिपियों और भारतीय भाषाओं के मध्य भाषिक आदान–प्रदान, तकनीकी लेखन तथा प्रशासनिक संचार में लिप्यंतरण की भूमिका व्यावहारिक रूप से अनिवार्य होती जा रही है।

13.8 भारतीय भाषाओं के मध्य लिप्यंतरण

भारतीय भाषाएँ विश्व की उन विरल भाषाई परंपराओं में आती हैं जिनकी संरचना, ध्वन्यात्मकता और लिपिव्यवस्था एक साझा ऐतिहासिक और सांस्कृतिक आधार पर विकसित हुई है। संस्कृत को आधार मानकर विकसित हुई प्राकृत, अपभ्रंश और उनसे उत्पन्न आधुनिक भारतीय भाषाओं में ध्वनियों की समानता स्पष्ट रूप से देखी जा सकती है। इसी कारण भारतीय भाषाओं के मध्य लिप्यंतरण विदेशी भाषाओं की तुलना में अपेक्षाकृत अधिक सहज, स्वाभाविक और अर्थसंरक्षक होता है। भारतीय भाषाओं के बीच लिप्यंतरण का उद्देश्य केवल शब्दों को एक लिपि से दूसरी लिपि में

स्थानांतरित करना नहीं, बल्कि उनकी ध्वनि, उच्चारण और भाषिक पहचान को सुरक्षित बनाए रखना भी होता है। भारतीय भाषाओं के मध्य लिप्यंतरण की प्रक्रिया ऐतिहासिक रूप से अत्यंत प्राचीन है। संस्कृत ग्रंथों के प्रसार के साथ-साथ विभिन्न क्षेत्रों में उनकी स्थानीय भाषाओं में प्रस्तुति के लिए लिप्यंतरण का प्रयोग किया गया। पाली, प्राकृत, अपभ्रंश, अवधी, ब्रज, मैथिली, बंगला, मराठी, गुजराती, पंजाबी आदि भाषाओं में संस्कृत शब्दों का लिप्यंतरण एक सामान्य भाषिक प्रक्रिया रही है। इन भाषाओं में शब्दों का अर्थ प्रायः समान रहता है, अंतर केवल लिपि और ध्वनिअनुकरण का होता है। उदाहरण के लिए संस्कृत का शब्द "धर्म"हिंदी, मराठी और गुजराती में लगभग समान रूप में मिलता है, जबकि बंगला में इसका उच्चारण "धोर्मो"केनिकटहोजाताहै।ऐसेमेंलिप्यंतरणकरतेसमयकेवल अक्षर नहीं, बल्कि उच्चारणपरंपरा को भी ध्यान में रखना आवश्यक हो जाता है। भारतीय भाषाओं के मध्य लिप्यंतरण की सरलता का प्रमुख कारण यह है कि अधिकांश भाषाएँ ध्वन्यात्मक लिपि प्रणाली का पालन करती हैं। देवनागरी, बंगला, गुरुमुखी, गुजराती, ओड़िया और कन्नड़ जैसी लिपियाँ वर्णमालाआधारित हैं, जहाँ प्रत्येक वर्ण एक निश्चित ध्वनि का प्रतिनिधित्व करता है। इस कारण एक भाषा के वर्ण को दूसरी भाषा की लिपि में स्थानांतरित करना अपेक्षाकृत सीधा होता है। उदाहरणस्वरूप देवनागरी का 'क' बंगला में 'ক', गुजराती में 'ક'और मराठी में 'क' के रूप में लिखा जाता है। यद्यपि लिपिचिह्न भिन्न हैं, किंतु ध्वनिमूल एक ही रहता है। भारतीय भाषाओं के मध्य लिप्यंतरण पूर्णतः सरल भी नहीं है। प्रत्येक भाषा की अपनी विशिष्ट ध्वनियाँ, उच्चारणपरंपराएँ और ध्वनिसंयोजन होते हैं। उदाहरण के लिए तमिल भाषा में महाप्राण और अल्पप्राण व्यंजनों का स्पष्ट भेद नहीं पाया जाता। संस्कृत या हिंदी के 'ख', 'घ', 'छ', 'झ' जैसी ध्वनियाँ तमिल में उसी रूप में उपलब्ध नहीं हैं। ऐसे में तमिल से देवनागरी में लिप्यंतरण करते समय समीपवर्ती ध्वनि का प्रयोग करना पड़ता है। यही कारण है कि तमिल शब्दों का देवनागरी लिप्यंतरण करते समय कुछ ध्वन्यात्मक समझौते करने पड़ते हैं। दक्षिण भारतीय भाषाओं- तमिल, तेलुगु, कन्नड़ और मलयालममें लिप्यंतरण की प्रक्रिया विशेष ध्यान की माँग करती है। इन भाषाओं की लिपियाँ ब्राह्मी से विकसित अवश्य हुई हैं, किंतु उनकी ध्वनिसंरचना उत्तर भारतीय भाषाओं से भिन्न है। उदाहरण के लिए तेलुगु और कन्नड़ में संयुक्त व्यंजनों की संरचना देवनागरी से अलग है। तमिल में 'श', 'ष' और 'स' के लिए अलग-अलग वर्ण नहीं हैं; प्रायः एक ही वर्ण से इन ध्वनियों का प्रतिनिधित्व किया जाता है। जब ऐसे शब्दों का हिंदी या संस्कृत में लिप्यंतरण किया जाता है, तो संदर्भ और उच्चारण के आधार पर उपयुक्त वर्ण का चयन करना आवश्यक हो जाता है।

भारतीय भाषाओं के मध्य लिप्यंतरण में एक महत्वपूर्ण भूमिका संस्कृत तत्सम और तद्भव शब्दों की भी होती है। संस्कृत से सीधे ग्रहण किए गए तत्सम शब्दों का लिप्यंतरण अपेक्षाकृत सरल होता है, क्योंकि उनका रूप विभिन्न भाषाओं में लगभग समान रहता है। उदाहरणस्वरूप 'विद्या', 'ज्ञान', 'कर्म', 'भक्ति' जैसे शब्द अधिकांश भारतीय भाषाओं में बहुत कम परिवर्तन के साथ पाए जाते हैं। इसके विपरीत तद्भव शब्दों में क्षेत्रीय ध्वनिपरिवर्तन अधिक होता है, जिससे लिप्यंतरण में अतिरिक्त सावधानी की आवश्यकता पड़ती है। भारतीय भाषाओं के बीच लिप्यंतरण का एक प्रमुख क्षेत्र साहित्यिक अनुवाद है। जब किसी क्षेत्रीय भाषा की कृति को दूसरी भारतीय भाषा में प्रस्तुत किया जाता है, तो लेखकनाम, स्थाननाम, सांस्कृतिक शब्दावली और पारंपरिक पदों का अनुवाद करने के स्थान पर प्रायः उनका लिप्यंतरण किया जाता है। इससे मूल कृति की सांस्कृतिक पहचान सुरक्षित रहती है। उदाहरण के लिए बंगला साहित्य में प्रयुक्त 'दुर्गा पूजा', 'पांडाल', 'भद्रलोक' जैसे शब्दों को हिंदी में अनुवादित करने के बजाय लिप्यंतरित किया जाता है, ताकि उनके सांस्कृतिक अर्थ का क्षरण न हो। शैक्षणिक और प्रशासनिक क्षेत्रों में भी भारतीय भाषाओं के मध्य लिप्यंतरण का विशेष महत्व है। विश्वविद्यालयों, सरकारी दस्तावेजों और प्रतियोगी परीक्षाओं में अनेक बार एक ही शब्द को विभिन्न भारतीय भाषाओं में प्रस्तुत करना पड़ता है। ऐसे में मानकीकृत लिप्यंतरण पद्धति की आवश्यकता महसूस होती है। इसी उद्देश्य से विभिन्न आयोगों और भाषासंस्थानों द्वारा लिप्यंतरण के नियम निर्धारित किए गए हैं, ताकि एकरूपता बनी रहे और भ्रम की स्थिति उत्पन्न न हो।

तकनीकी विकास के साथ भारतीय भाषाओं के मध्य लिप्यंतरण ने डिजिटल स्वरूप भी ग्रहण कर लिया है। कंप्यूटर, मोबाइल और इंटरनेट पर एक भाषा की लिपि को दूसरी भाषा में परिवर्तित करने के लिए स्वचालित लिप्यंतरण उपकरणों का प्रयोग किया जा रहा है। हालाँकि ये उपकरण उपयोगी हैं, किंतु वे अभी भी मानवीय भाषिक विवेक का पूर्ण विकल्प नहीं बन पाए हैं। विशेषकर कविता, साहित्य और सांस्कृतिक पाठों में स्वचालित लिप्यंतरण कई बार ध्वनि और भाव दोनों को विकृत कर देता है। इसलिए गंभीर साहित्यिक कार्यों में मानवआधारित लिप्यंतरण आज भी अधिक विश्वसनीय माना जाता है। भारतीय भाषाओं के मध्य लिप्यंतरण का सामाजिक-सांस्कृतिक महत्व भी कम नहीं है। यह प्रक्रिया विभिन्न भाषायी समुदायों के बीच संवाद को सरल बनाती है और राष्ट्रीय एकता को सुदृढ़ करती है। जब एक भाषा का शब्द दूसरी भाषा की लिपि में दिखाई देता है, तो वह पाठक के लिए परिचितसा हो जाता है और भाषायी दूरी कम होती है। इस प्रकार लिप्यंतरण केवल भाषिक तकनीक न होकर सांस्कृतिक सेतु का कार्य करता है।

अपनी प्रगति जांचें

प्रश्न 3: देवनागरी–रोमन लिप्यंतरण में ध्वनि और उच्चारण की भूमिका किस प्रकार स्पष्ट होती है?

प्रश्न 4: रोमन लिपि में देवनागरी ध्वनियों को व्यक्त करने के लिए किन विशेष संकेतों या चिह्नों की आवश्यकता पड़ती है?

प्रश्न 5: भारतीय भाषाओं के मध्य लिप्यंतरण को सरल बनाने वाले प्रमुख भाषिक तत्व कौन-से हैं?

13.9 सारांश

इस इकाई में लिप्यंकन और लिप्यंतरण की अवधारणाओं का विस्तृत विवेचन प्रस्तुत किया गया है। भाषा के लिखित रूप में रूपांतरण की प्रक्रिया में इन दोनों की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण मानी जाती है। लिप्यंकन मुख्यतः ध्वनियों को उनके समीपवर्ती अक्षरचिह्नों में व्यक्त करने की प्रक्रिया है, जबकि लिप्यंतरण एक लिपि से दूसरी लिपि में शब्दों या ध्वनियों को यथासंभव समान रूप में स्थानांतरित करने की विधि है। अनुवाद की प्रक्रिया में, विशेषकर व्यक्तिनामों, स्थाननामों, तकनीकी शब्दों और सांस्कृतिक पदों के संदर्भ में, लिप्यंतरण की आवश्यकता अनिवार्य हो जाती है। इकाई में यह स्पष्ट किया गया है कि अनुवाद और लिप्यंतरण परस्पर संबद्ध होते हुए भी भिन्न प्रक्रियाएँ हैं। जहाँ अनुवाद अर्थ के स्थानांतरण पर केंद्रित होता है, वहीं लिप्यंतरण ध्वनि और लिपि की समानता को प्राथमिकता देता है। देवनागरी–रोमन लिप्यंतरण तथा भारतीय भाषाओं के मध्य लिप्यंतरण के उदाहरणों के माध्यम से यह दिखाया गया है कि बहुभाषिक समाज में लिप्यंतरण संप्रेषण को सुगम बनाता है। देवनागरी वर्णमाला के परिवर्धित रूप और लिप्यंतरण के व्यावहारिक पक्ष पर प्रकाश डालते हुए यह निष्कर्ष प्रस्तुत किया गया है कि आधुनिक संचार, मीडिया, प्रशासन और तकनीकी अनुवाद में लिप्यंतरण एक आवश्यक भाषिक उपकरण के रूप में विकसित हो चुका है। इस प्रकार, यह इकाई भाषा, लिपि और अनुवाद के आपसी संबंध को समझने की दिशा में महत्वपूर्ण आधार प्रदान करती है।

13.10 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)

प्रश्न 1 का उत्तर: लिप्यंकन का संबंध भाषा की ध्वनियों को लिखित रूप में अंकित करने की प्रक्रिया से है, जबकि लिप्यंतरण में एक लिपि के शब्दों को दूसरी लिपि में रूपांतरित किया जाता है। इन दोनों की अवधारणात्मक भिन्नता को समझने के लिए ऊपर प्रस्तुत सैद्धांतिक विवेचन उपयोगी होगा।

प्रश्न 2 का उत्तर: अनुवाद प्रक्रिया में लिप्यंतरण का प्रयोग विशेषतः तब किया जाता है जब मूल पाठ के नाम, तकनीकी पद या सांस्कृतिक शब्दों को यथावत बनाए रखना आवश्यक हो। इस संदर्भ में संबंधित अनुभाग में दी गई व्याख्या सहायक सिद्ध होगी।

प्रश्न 3 का उत्तर: देवनागरी–रोमन लिप्यंतरण में शब्दों का रूपांतरण उनके उच्चारण के आधार पर किया जाता है, जिससे पाठक को मूल भाषा की ध्वन्यात्मक संरचना का बोध हो सके। इस प्रक्रिया की विस्तृत समझ के लिए ऊपर दिए गए उदाहरणों का अवलोकन अपेक्षित है।

प्रश्न 4 का उत्तर: रोमन लिपि में देवनागरी ध्वनियों को अभिव्यक्त करने हेतु विशेष संकेतों, संयुक्त अक्षरों तथा चिह्नों का प्रयोग किया जाता है। इन संकेतों की भूमिका को स्पष्ट करने के लिए संबंधित खंड में प्रस्तुत विवरण देखा जा सकता है।

प्रश्न 5 का उत्तर: भारतीय भाषाओं के मध्य लिप्यंतरण अपेक्षाकृत सरल होता है, क्योंकि इन भाषाओं में ध्वन्यात्मक और संरचनात्मक समानताएँ पाई जाती हैं। इस तथ्य की पुष्टि हेतु ऊपर दिए गए भाषिक विश्लेषण को देखा जाना चाहिए।

🔍 13.11 अधिक जानने के लिए पढ़ें

- तिवारी, भोलानाथ. (2004). अनुवाद-विज्ञान : सिद्धांत और प्रयोग. इलाहाबाद: किताब महल।
- वर्मा, धीरेन्द्र. (1998). भाषाविज्ञान और हिंदी भाषा. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन।
- सिंह, रामकुमार. (2010). भारतीय भाषाएँ : संरचना और संपर्क. नई दिल्ली: साहित्य भवन।
- मिश्र, कैलाशचंद्र. (2006). हिंदी भाषा की लिपि और ध्वनि-व्यवस्था. वाराणसी: नागरी प्रचारिणी सभा।
- त्रिपाठी, रामदेव. (2012). अनुवाद और भाषा-संरचना. नई दिल्ली: वाणी प्रकाशन।
- शुक्ल, सत्यदेव. (2009). भारतीय भाषाओं का तुलनात्मक अध्ययन. प्रयागराज: लोकभारती प्रकाशन।
- अग्रवाल, सुधीर. (2015). लिप्यंतरण : सिद्धांत और व्यवहार. नई दिल्ली: नेशनल पब्लिशिंग हाउस।
- पाण्डेय, शिवकुमार. (2011). देवनागरी लिपि : विकास और प्रयोग. भोपाल: मध्यप्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादमी।
- सिंह, चंद्रभानु. (2014). अनुवाद, लिप्यंतरण और भाषा-संपर्क. पटना: बिहार हिंदी ग्रंथ अकादमी।
- दुबे, महेंद्रनाथ. (2008). भारतीय भाषाओं में अनुवाद की परंपरा. वाराणसी: विद्या विहार।

❓ 13.12 अभ्यास

(क) संक्षिप्त प्रश्नों के उत्तर लिखिए—

- लिप्यंकन और लिप्यंतरण के मूल अभिप्राय को संक्षेप में स्पष्ट करें।
- अनुवाद की प्रक्रिया में लिप्यंतरण की आवश्यकता क्यों उत्पन्न होती है, यह बताइए।
- देवनागरी–रोमन लिप्यंतरण की प्रमुख विशेषताओं को रेखांकित करें।
- भारतीय भाषाओं के मध्य लिप्यंतरण को सरल बनाने वाले तत्वों का उल्लेख कीजिए।
- लिप्यंतरण में ध्वनि और लिपि के संबंध को संक्षेप में समझाइए।
- लिप्यंतरण के व्यावहारिक उपयोगक्षेत्रों की पहचान करें।

(ख) निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए—

- लिप्यंकन की अवधारणा को स्पष्ट करते हुए उसकी पद्धतियों का विवेचन प्रस्तुत कीजिए।
- अनुवाद और लिप्यंतरण के बीच अंतर को उदाहरणों सहित स्पष्ट रूप लिखिए।
- अनुवाद प्रक्रिया में लिप्यंतरण की उपयोगिता पर विस्तार से प्रकाश डालें।
- देवनागरी वर्णमाला के परिवर्धित रूप की आवश्यकता और महत्व का विश्लेषण प्रस्तुत करें।
- भारतीय भाषाओं के मध्य लिप्यंतरण में आने वाली समस्याओं को लिखिए।
- लिप्यंतरण को एक व्यावहारिक भाषिक प्रक्रिया के रूप में मूल्यांकित करें।

शब्दकोश :

लिपि : लेखन, लिप्यंतरण : रूपांतरण, लिप्यंकन : अंकन, अनुवाद : अर्थांतरण, ध्वनि : नाद, अक्षर : वर्ण, देवनागरी : नागरी, रोमन : लैटिन, मानकीकरण : एकरूपता, बहुभाषिकता : विविधता, संप्रेषण : संचार, व्यावहारिकता : प्रयोग इत्यादि |

*** ***** ***

इकाई 14 - अनुवाद की सीमाएँ

इकाई की रूपरेखा

14.1 उद्देश्य
14.2 प्रस्तावना
14.3 अनुवाद की सीमाएँ, अर्थ एवं स्वरूप
14.4 भाषा की प्रकृति के स्तर पर अनुवाद की सीमाएँ
14.5 सामाजिक सांस्कृतिक संदर्भ में अनुवाद की सीमाएँ
14.6 लोकोक्ति मुहावरों का अनुवाद
14.7 अनुवाद की स्थानीयपरक सीमाएँ
14.8 पाठ की प्रकृति और अनुवाद की सीमाएँ
14.9 वैज्ञानिक और तकनीकी साहित्य के पाठ के स्तर पर अनुपाद
14.10 सारांश
14.11 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)
14.12 अधिक जानने के लिए पढ़ें
14.13 अभ्यास प्रश्न

14.1 उद्देश्य

- अनुवाद की अवधारणा से जुड़ी अर्थगत और संरचनात्मक सीमाओं की स्पष्ट समझ।
- भाषा की प्रकृति के स्तर पर उत्पन्न होने वाली अनुवाद से संबंधित समस्याओं की वैचारिक पहचान कर सकेंगे।
- सामाजिक–सांस्कृतिक संदर्भों, लोकोक्तियों और स्थानीय तत्वों से जुड़ी अनुवाद की सीमाओं का सम्यक विश्लेषण कर पाएंगे।
- साहित्यिक तथा साहित्येतर पाठों के संदर्भ में अनुवाद की व्यावहारिक कठिनाइयों का तुलनात्मक आकलन कर सकते हैं।
- कार्यालयी, मीडिया तथा वैज्ञानिक–तकनीकी पाठों में अनुवाद की सीमाओं के स्वरूप की तथ्यपरक परख कर सकते हैं।
-

14.1 प्रस्तावना

अनुवाद को प्रायः दो भाषाओं के बीच अर्थ–संप्रेषण की सहज प्रक्रिया के रूप में समझा जाता है, किंतु व्यवहार में यह प्रक्रिया अनेक स्तरों पर जटिलताओं और सीमाओं से घिरी रहती है। प्रत्येक भाषा की अपनी संरचना, सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, सामाजिक अनुभव और अभिव्यक्ति परंपरा होती है, जिन्हें पूर्णतः समान रूप में दूसरी भाषा में स्थानांतरित करना सदैव संभव नहीं होता। इसी कारण अनुवाद की प्रक्रिया में अर्थगत, भाषिक और संदर्भगत असंगतियाँ उत्पन्न होती हैं।

भाषा केवल शब्दों का समूह नहीं, बल्कि संस्कृति, इतिहास और समाज से निर्मित एक जीवंत प्रणाली है। जब कोई पाठ एक भाषा से दूसरी भाषा में प्रवेश करता है, तो उसके साथ जुड़ी सांस्कृतिक धारणाएँ, स्थानीय संकेत, लोकोक्तियाँ और पाठ–प्रकृति भी स्थानांतरित होती हैं, जिनमें कई बार अर्थ–हानि या अर्थ परिवर्तन की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। इस इकाई में अनुवाद की इन्हीं सीमाओं को भाषा, समाज और पाठ की प्रकृति के विविध स्तरों पर समझने का प्रयास किया गया है, जिससे अनुवाद की वास्तविक चुनौतियों का सम्यक बोध विकसित हो सके।

14.2 अनुवाद की सीमाएँ, अर्थ एवं स्वरूप

अनुवाद को सामान्यतः एक ऐसी प्रक्रिया के रूप में समझा जाता है, जिसके माध्यम से स्रोत भाषा के पाठ को लक्ष्य भाषा में स्थानांतरित किया जाता है। किंतु व्यावहारिक स्तर पर यह प्रक्रिया जितनी सहज प्रतीत होती है, उतनी सरल वास्तव में नहीं होती। अनुवाद के दौरान अर्थ और स्वरूप- दोनों स्तरों पर अनेक प्रकार की सीमाएँ सामने आती हैं। प्रत्येक भाषा की अपनी विशिष्ट आंतरिक संरचना, ध्वन्यात्मक व्यवस्था, व्याकरणिक नियम तथा अभिव्यक्ति की परंपरा होती है। जब किसी पाठ का रूपांतरण एक भाषा से दूसरी भाषा में किया जाता है, तब यह आवश्यक नहीं कि मूल भाषा की अर्थ-सूक्ष्मताएँ और अभिव्यक्तिगत विशेषताएँ उसी रूप में लक्ष्य भाषा में भी सुरक्षित रह सकें। इसी कारण अनुवाद को पूर्ण समानता की प्रक्रिया न मानकर एक सापेक्ष तथा संतुलन आधारित कार्य के रूप में देखा जाता है।

अर्थ के स्तर पर अनुवाद की सीमाएँ उस समय अधिक स्पष्ट होती हैं, जब किसी शब्द, वाक्यांश या कथन का आशय केवल उसके शब्दार्थ तक सीमित न होकर सांस्कृतिक, सामाजिक अथवा भावनात्मक संकेतों से भी जुड़ा होता है। अनेक शब्दों के पीछे ऐतिहासिक अनुभव, सामाजिक मूल्य और सामूहिक स्मृतियाँ निहित रहती हैं। ऐसी स्थिति में लक्ष्य भाषा में उनके लिए उपयुक्त शब्द तो मिल सकता है, किंतु मूल आशय की संपूर्ण गहराई और संदर्भात्मक व्यापकता का संप्रेषण कठिन हो जाता है। इसके अतिरिक्त, एक ही शब्द विभिन्न संदर्भों में भिन्न-भिन्न अर्थ ग्रहण कर सकता है, जिससे अनुवादक को संदर्भ के अनुरूप अर्थ का चयन करना पड़ता है। यह चयन प्रक्रिया स्वयं यह संकेत देती है कि अनुवाद में कुछ अर्थ तत्व अनिवार्य रूप से परिवर्तित या सीमित हो सकते हैं।

महत्वपूर्ण बिंदु

अनुवाद की प्रक्रिया में भाषा की संरचना, अर्थ व्यवस्था और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि के कारण पूर्ण समानता संभव नहीं होती, जिससे अनुवाद सदैव एक सापेक्ष और संतुलन आधारित कार्य बना रहता है।

स्वरूप के स्तर पर अनुवाद की सीमाएँ भाषाओं की संरचनात्मक और शैलीगत भिन्नताओं के कारण उत्पन्न होती हैं। प्रत्येक भाषा की वाक्य रचना, पद क्रम, काल प्रयोग और शैलीगत प्रवृत्तियाँ एक-दूसरे से भिन्न होती हैं। किसी भाषा में जो अभिव्यक्ति संक्षिप्त और प्रभावशाली प्रतीत होती है, वही दूसरी भाषा में विस्तार अथवा पुनर्संरचना की अपेक्षा कर सकती है। इस प्रक्रिया में मूल पाठ की संरचनात्मक बनावट में परिवर्तन आना स्वाभाविक है। विशेष रूप से साहित्यिक अनुवाद में यह समस्या अधिक जटिल रूप धारण कर लेती है, क्योंकि यहाँ भाषा केवल सूचना के संप्रेषण का माध्यम न होकर संवेदना, सौंदर्य और कलात्मकता का वाहक भी होती है। ऐसे में अर्थ की रक्षा करते हुए स्वरूप का संतुलन बनाए रखना अनुवादक के लिए एक जटिल कार्य बन जाता है। भाषा के सामाजिक और सांस्कृतिक आयाम भी अनुवाद की सीमाओं को रेखांकित करते हैं। प्रत्येक समाज के मूल्य, विश्वास और व्यवहार भाषा में अंतर्निहित रूप से समाहित होते हैं। जब किसी विशेष सामाजिक–सांस्कृतिक परिवेश में रचित पाठ का अनुवाद भिन्न सांस्कृतिक पृष्ठभूमि वाली भाषा में किया जाता है, तो पाठ का स्वरूप आंशिक रूप से परिवर्तित हो जाता है। इस स्थिति में अनुवाद न तो पूरी तरह मूल पाठ के

समान रह पाता है और न ही पूर्णतः स्वतंत्र रचना का रूप ग्रहण कर पाता है। इसी द्वंद्वात्मक स्थिति में अर्थ और स्वरूप- दोनों स्तरों पर अनुवाद की सीमाएँ स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती हैं।

14.3 भाषा की प्रकृति के स्तर पर अनुवाद सीमाएँ

भाषा की प्रकृति के स्तर पर अनुवाद की सीमाएँ इस तथ्य से उत्पन्न होती हैं कि प्रत्येक भाषा की अपनी आंतरिक संरचना, व्याकरणिक व्यवस्था और अर्थ-निर्माण की प्रक्रिया होती है। भाषा केवल संप्रेषण का साधन नहीं होती, बल्कि वह अपने भीतर समाज, संस्कृति और चिंतन- पद्धति को समाहित किए रहती है। अनुवाद करते समय स्रोत भाषा की इस अंतर्निहित व्यवस्था को लक्ष्य भाषा में उसी रूप में स्थानांतरित करना प्रायः संभव नहीं होता। उदाहरणस्वरूप, अंग्रेजी भाषा में वाक्य रचना अपेक्षाकृत स्थिर होती है और कर्ता–क्रिया–कर्म का क्रम अनिवार्य माना जाता है, जबकि हिंदी में शब्द क्रम अधिक लचीला होता है। जैसे अंग्रेजी वाक्य "Ram killed Ravana" को हिंदी में "राम ने रावण को मारा" कहा जाता है। यदि अंग्रेजी का शब्द क्रम हिंदी में ज्यों का त्यों रखा जाए, तो वाक्य अस्वाभाविक प्रतीत होगा। यह संरचनात्मक भिन्नता अनुवाद की एक मौलिक सीमा को रेखांकित करती है। भाषा की प्रकृति में लिंग व्यवस्था भी अनुवाद को सीमित करती है। हिंदी में क्रिया, विशेषण और सर्वनाम लिंग के अनुसार परिवर्तित होते हैं, जिससे अर्थ का एक अतिरिक्त स्तर निर्मित होता है। इसके विपरीत, अंग्रेजी जैसी भाषाओं में लिंग सूचकता अपेक्षाकृत सीमित है। उदाहरण के लिए, हिंदी वाक्य "वह थक गया" और "वह थक गई" में लिंग का भेद स्पष्ट है, किंतु अंग्रेजी में दोनों के लिए "He/She got tired" कहना पड़ता है। इस प्रक्रिया में मूल भाषा की सूक्ष्म अर्थ संकेतक शक्ति क्षीण हो जाती है। अतः भाषा की व्याकरणिक प्रकृति अनुवाद के पूर्ण समतुल्य रूप को बाधित करती है। अर्थ बहुलता भी भाषा की एक ऐसी विशेषता है जो अनुवाद में सीमा उत्पन्न करती है। अनेक शब्द और वाक्य संदर्भ के अनुसार भिन्न-भिन्न अर्थ ग्रहण करते हैं। हिंदी में कहा गया वाक्य "उसका हाथ मजबूत है" शारीरिक शक्ति, सामाजिक प्रभाव या राजनीतिक सत्ता- तीनों अर्थों में प्रयुक्त हो सकता है। किंतु अनुवाद करते समय अनुवादक को इनमें से किसी एक अर्थ का चयन करना पड़ता है। इस चयन की प्रक्रिया में अन्य संभावित अर्थ स्वतः ही छूट जाते हैं। इस प्रकार भाषा की बहुअर्थक प्रकृति अनुवाद को एक सीमित और चयनात्मक प्रक्रिया बना देती है। भाषा का सांस्कृतिक आधार भी अनुवाद के मार्ग में एक महत्वपूर्ण सीमा के रूप में उपस्थित होता है। अनेक शब्द और अभिव्यक्तियाँ ऐसी होती हैं जो किसी विशिष्ट संस्कृति से गहराई से जुड़ी होती हैं। उदाहरण के लिए, हिंदी वाक्य "घर की लक्ष्मी आ गई" केवल किसी महिला के आगमन का संकेत नहीं देता, बल्कि उसमें शुभता, समृद्धि और देवी-परंपरा का सांस्कृतिक भाव निहित होता है। किसी अन्य भाषा में इसका सीधा अनुवाद करने पर यह सांस्कृतिक अर्थ प्रायः नष्ट हो जाता है। इस प्रकार भाषा की सांस्कृतिक प्रकृति अनुवाद को अर्थ-स्तर तक सीमित कर देती है और भाव-संपदा को पूरी तरह संप्रेषित नहीं होने देती। सामाजिक संबोधन की व्यवस्था भी भाषा की प्रकृति से जुड़ी एक महत्वपूर्ण सीमा है। हिंदी में 'तू', 'तुम' और 'आप' जैसे संबोधन सामाजिक दूरी, सम्मान और आत्मीयता को व्यक्त करते हैं। उदाहरण के लिए, "तुम कब आओगे?" और "आप कब आएँगे?" दोनों वाक्यों में सामाजिक भाव भिन्न है। किंतु अंग्रेजी में दोनों के लिए "When will you come?" कहना पड़ता है। यहाँ भाषा की सामाजिक संवेदनशीलता अनुवाद में लुप्त हो जाती है, जिससे सामाजिक अर्थ का क्षरण होता है। भाषा की भावात्मक प्रकृति भी अनुवाद की सीमाओं को और गहरा करती है। कुछ शब्द ऐसे होते हैं जिनमें भावनात्मक तीव्रता और सांस्कृतिक अनुभव अंतर्निहित होता है। हिंदी के शब्द 'ममता', 'वात्सल्य' या 'लाज' केवल अर्थ नहीं, बल्कि अनुभूति भी व्यक्त करते हैं। इनका अन्य भाषा में अनुवाद करने पर भाव की गहराई पूरी तरह संप्रेषित नहीं हो पाती। परिणामस्वरूप अनुवाद भावात्मक दृष्टि से अपेक्षाकृत कमजोर प्रतीत होता है। भाषा की प्रकृति के स्तर पर अनुवाद की सीमाएँ अनिवार्य हैं। भाषा की संरचना, व्याकरण, अर्थ बहुलता, सांस्कृतिक संदर्भ, सामाजिक संबोधन और भावात्मक शक्ति- ये सभी तत्व अनुवाद को पूर्ण समतुल्यता से दूर ले जाते हैं। अनुवादक इन सीमाओं को समझते हुए संतुलन स्थापित करने का प्रयास करता है, किंतु मूल भाषा की संपूर्ण प्रकृति को

लक्ष्य भाषा में हूबहू स्थानांतरित करना संभव नहीं होता। यही कारण है कि अनुवाद को एक सृजनात्मक, विवेकशील और विश्लेषणात्मक प्रक्रिया माना जाता है।

14.4 सामाजिक सांस्कृतिक संदर्भ में अनुवाद की सीमाएँ

प्रत्येक भाषा की अपनी एक विशिष्ट प्रकृति होती है। यह प्रकृति केवल शब्दों या व्याकरण तक सीमित नहीं होती, बल्कि भाषा के ध्वनि तंत्र, वाक्य विन्यास, अर्थ व्यवस्था, अभिव्यक्ति शैली और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि से मिलकर बनती है। भाषा किसी समाज के सोचने, अनुभव करने और भाव व्यक्त करने के तरीकों को प्रतिबिंबित करती है। यही कारण है कि अनुवाद की प्रक्रिया में भाषा की यह प्रकृति सबसे बड़ी सीमा के रूप में सामने आती है।

सबसे पहले भाषा की प्रकृति का प्रभाव वाक्य विन्यास पर देखा जा सकता है। विभिन्न भाषाओं में वाक्य रचना की व्यवस्था अलग-अलग होती है। उदाहरण के लिए, अंग्रेजी भाषा में वाक्य का क्रम सामान्यतः कर्ता–क्रिया–कर्म होता है, जबकि हिंदी में कर्ता–कर्म–क्रिया का प्रयोग किया जाता है। यदि अंग्रेजी वाक्य The boy wrote a letter का शब्दशः अनुवाद लड़का लिखा पत्र कर दिया जाए, तो वाक्य अर्थहीन हो जाएगा। सही अनुवाद होगा- लड़के ने पत्र लिखा। इससे स्पष्ट होता है कि अनुवाद में भाषा की संरचना को ध्यान में रखना आवश्यक है। भाषा की प्रकृति का दूसरा महत्त्वपूर्ण पक्ष लिंग, वचन और पुरुष की व्यवस्था से जुड़ा है। हिंदी जैसी भाषाओं में लिंग का प्रभाव क्रिया और विशेषण पर भी पड़ता है, जबकि अंग्रेजी में यह प्रभाव सीमित होता है। उदाहरणस्वरूप, हिंदी वाक्य वह डॉक्टर है में यह स्पष्ट नहीं होता कि डॉक्टर पुरुष है या स्त्री। जब इसका अनुवाद अंग्रेजी में किया जाता है- He is a doctor या She is a doctor तो अनुवादक को अतिरिक्त जानकारी जोड़नी पड़ती है, जो मूल वाक्य में निहित नहीं थी। यह स्थिति भाषा की प्रकृति से उत्पन्न अनुवाद की एक सीमा को दर्शाती है। भाषा की प्रकृति में बहुअर्थकता भी एक प्रमुख तत्व है। एक ही शब्द अलग-अलग संदर्भों में भिन्न अर्थ देता है। उदाहरण के लिए, हिंदी शब्द हल्का भोजन, रंग और दर्द- तीनों के लिए प्रयुक्त होता है। किंतु अंग्रेजी में इन अर्थों के लिए अलग-अलग शब्दों का प्रयोग करना पड़ता है- light food, pale colour और mild pain। इससे यह स्पष्ट होता है कि स्रोत भाषा के शब्द की बहुअर्थकता को लक्ष्य भाषा में पूरी तरह बनाए रखना कठिन होता है। भाषा की प्रकृति से जुड़ी एक अन्य सीमा अर्थ-निहितता है। कई बार वाक्य का वास्तविक अर्थ शब्दों में नहीं, बल्कि संदर्भ, लहजे या भाव में छिपा होता है। उदाहरण के लिए, वाक्य तुम तो बड़े समझदार हो! प्रशंसा भी हो सकता है और व्यंग्य भी। यदि इसका अनुवाद अंग्रेजी में You are very intelligent किया जाए, तो व्यंग्य का भाव समाप्त हो जाता है। यह उदाहरण बताता है कि निहित अर्थ को दूसरी भाषा में उसी प्रभाव के साथ व्यक्त करना कठिन होता है।

मुहावरे और विशेष अभिव्यक्तियाँ भी भाषा की प्रकृति का महत्त्वपूर्ण अंग हैं। ये किसी विशेष संस्कृति में विकसित होती हैं। उदाहरण के लिए, हिंदी मुहावरा नाक कटना यदि अंग्रेजी में शब्दशः nose cut कर दिया जाए, तो उसका कोई अर्थ नहीं रह जाता। इसका उपयुक्त अनुवाद to lose honour होगा। इससे स्पष्ट होता है कि मुहावरों का अनुवाद भाषा की प्रकृति को समझे बिना संभव नहीं है। अंत में, भाषा की प्रकृति में ध्वन्यात्मक सौंदर्य और लयात्मकता भी शामिल होती है, विशेषकर काव्यात्मक रचनाओं में। उदाहरण के लिए, पंक्ति झर-झर बहती नदी में ध्वनि की पुनरावृत्ति से सौंदर्य उत्पन्न होता है। जब इसे अंग्रेजी में The river flows कहा जाता है, तो अर्थ तो व्यक्त हो जाता है, लेकिन ध्वन्यात्मक प्रभाव नष्ट हो जाता है। यह साहित्यिक अनुवाद की एक बड़ी सीमा है।

14.5 लोकोक्ति मुहावरों का अनुवाद

लोककथाएँ और मुहावरे किसी भी भाषा की लोक-संस्कृति, सामूहिक अनुभव और सामाजिक चेतना के सघन रूप होते हैं। ये केवल भाषिक अभिव्यक्तियाँ नहीं हैं, बल्कि पीढ़ियों से संचित जीवनानुभव, विश्वास और मूल्य बोध का सार प्रस्तुत करते हैं। इसी कारण इनके अनुवाद में साधारण शब्द प्रतिस्थापन पर्याप्त नहीं होता। जब लोककथा या मुहावरे का

अनुवाद किया जाता है, तब अनुवादक को भाषा के साथ-साथ उस समाज की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि को भी ध्यान में रखना पड़ता है, अन्यथा मूल भाव विकृत या अपूर्ण हो जाता है। लोककथाओं के अनुवाद में सबसे बड़ी सीमा यह होती है कि वे स्थान, काल और समाज विशेष से गहरे रूप में जुड़ी होती हैं। किसी ग्रामीण लोककथा में प्रयुक्त पात्र, घटनाएँ और प्रतीक उस समाज के दैनिक जीवन से निकलते हैं। उदाहरण के लिए, हिंदी की लोककथाओं में चालाक सियार, भोला किसान या अन्यायकारी राजा जैसे पात्र प्रतीकात्मक अर्थ ग्रहण कर लेते हैं। यदि ऐसी कथा का अनुवाद किसी विदेशी भाषा में किया जाए, तो पाठक के लिए इन प्रतीकों का आशय स्वतः स्पष्ट नहीं होता। ऐसी स्थिति में अनुवादक को या तो कथा के भीतर संकेतात्मक व्याख्या जोड़नी पड़ती है या फिर समान सांस्कृतिक प्रभाव उत्पन्न करने वाले प्रतीकों का चयन करना पड़ता है। मुहावरों के अनुवाद में यह समस्या और अधिक जटिल हो जाती है। मुहावरे भाषा के वे स्थायी प्रयोग हैं, जिनका अर्थ उनके शब्दों के सीधे योग से नहीं निकलता। उदाहरण के लिए, हिंदी में कहा जाता है- "दाल में कुछ काला है"। इसका शाब्दिक अनुवाद किसी अन्य भाषा में करने पर अर्थ निरर्थक हो सकता है। यहाँ भाव यह है कि किसी स्थिति में संदेह या गड़बड़ी है। अतः अनुवादक को लक्ष्य भाषा में ऐसे वाक्य या मुहावरे की तलाश करनी पड़ती है, जो संदेह का वही भाव उत्पन्न करे, भले ही शब्द संरचना भिन्न हो। अंग्रेजी के मुहावरे "to beat about the bush" का यदि शब्दशः हिंदी अनुवाद किया जाए, तो उसका आशय स्पष्ट नहीं होता। इसका भाव है- मूल विषय से बचते हुए इधर-उधर की बातें करना। हिंदी में इसे "घुमा-फिराकर बात करना" जैसे भावात्मक अनुवाद से अधिक सटीक रूप में व्यक्त किया जा सकता है। हिंदी- वह कुछ भी नहीं जानता। अंग्रेजी— He knows nothing. यहाँ "कुछ भी नहीं" में जो बल है, वह अंग्रेजी में अपेक्षाकृत कम प्रभावशाली हो जाता है। यह भी भाषा की प्रकृति से जुड़ी सूक्ष्म सीमा है। यहाँ यह स्पष्ट होता है कि मुहावरों का अनुवाद भाव-समानता के आधार पर किया जाना चाहिए, न कि शब्द-समानता के आधार पर।

लोककथाओं और मुहावरों के अनुवाद में एक अन्य सीमा सांस्कृतिक मूल्यांकन से जुड़ी होती है। किसी समाज में जो व्यवहार हास्यपूर्ण या व्यंग्यात्मक माना जाता है, वही किसी अन्य समाज में अपमानजनक या असंगत प्रतीत हो सकता है। उदाहरणस्वरूप, कुछ लोककथाओं में चतुराई को छल के माध्यम से प्रस्तुत किया जाता है और उसे सकारात्मक गुण माना जाता है, जबकि अन्य संस्कृतियों में छल को नैतिक रूप से नकारात्मक दृष्टि से देखा जाता है। अनुवाद करते समय यह सांस्कृतिक भिन्नता अर्थ- ग्रहण को प्रभावित करती है। कई मुहावरे और लोककथात्मक अभिव्यक्तियाँ ऐतिहासिक या पौराणिक संदर्भों पर आधारित होती हैं। यदि लक्ष्य भाषा के पाठक उन संदर्भों से परिचित नहीं हैं, तो अनुवाद का प्रभाव क्षीण हो जाता है। उदाहरण के लिए, हिंदी में किसी को अत्यंत बलवान या परिश्रमी बताने के लिए किसी पौराणिक पात्र से तुलना की जाती है। ऐसी तुलना का अनुवाद तभी प्रभावी होगा, जब पाठक उस पात्र की विशेषताओं को जानता हो; अन्यथा अनुवादक को तुलनात्मक व्याख्या का सहारा लेना पड़ता है।

14.6 अनुवाद की स्थानीयपरक सीमाएँ

अनुवाद की प्रक्रिया में स्थानीयपरकता एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण तथा जटिल सीमा के रूप में उभरकर सामने आती है। प्रत्येक भाषा किसी विशेष भौगोलिक क्षेत्र, सामाजिक संरचना, ऐतिहासिक अनुभव और सांस्कृतिक जीवन पद्धति से जुड़ी होती है। उसी के अनुरूप उस भाषा में प्रयुक्त शब्द, संबोधन, पदबंध, मुहावरे और अर्थ-संकेत विकसित होते हैं। जब ऐसे स्थानीय संदर्भों से जुड़े भाषिक प्रयोगों का अनुवाद किसी दूसरी भाषा में किया जाता है, तो प्रायः लक्ष्य भाषा में न तो उनके लिए पूर्ण समतुल्य शब्द उपलब्ध होते हैं और न ही वही सांस्कृतिक प्रभाव उत्पन्न हो पाता है। यही स्थिति अनुवाद की स्थानीयपरक सीमा को जन्म देती है।

स्थानीयपरक शब्द सामान्यतः किसी क्षेत्र विशेष की जीवन शैली, रहन-सहन, खान-पान, पर्यावरण और सामाजिक व्यवहार से जुड़े होते हैं। उदाहरणस्वरूप, हिंदी के ग्रामीण और अर्ध-ग्रामीण जीवन में प्रयुक्त शब्द- आँगन, ओखली, मड़ई, हुक्का-पानी के लिए अंग्रेजी या अन्य भाषाओं में सटीक समतुल्य शब्द नहीं मिलते। यदि आँगन का अनुवाद केवल

courtyard कर दिया जाए, तो उसके साथ जुड़े पारिवारिक, सामाजिक और सांस्कृतिक भाव पूरी तरह व्यक्त नहीं हो पाते। इसी प्रकार, मड़ई का केवल hut कहना उसके स्थानीय रूप और उपयोग को सीमित कर देता है। ऐसी स्थिति में अनुवाद या तो अधूरा रह जाता है या अत्यधिक व्याख्यात्मक हो जाता है।

स्थानीयपरकता केवल शब्दों तक सीमित नहीं रहती, बल्कि अर्थ बोध की पद्धति तक विस्तृत होती है। उदाहरण के लिए, हिंदी में प्रयुक्त वाक्य- "उसकी भाषा में देहाती सादगी झलकती है" का अर्थ केवल शैली से नहीं, बल्कि ग्रामीण जीवन के अनुभवों से जुड़ा होता है। यदि इसका सीधा अनुवाद किया जाए— His language reflects rural simplicity तो मूल वाक्य में निहित आत्मीयता और सामाजिक संदर्भ काफी हद तक कम हो जाता है। इसी प्रकार, किसी मरुस्थलीय क्षेत्र में प्रयुक्त वाक्य- "यहाँ पानी सोने के बराबर है" केवल जल की कमी नहीं, बल्कि जीवन की कठिन परिस्थितियों का भी संकेत देता है, जिसे शब्दशः अनूदित करना प्रभावहीन हो जाता है। स्थानीयपरक सीमा प्रशासनिक और सामाजिक अनुवादों में भी स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। भारत की प्रशासनिक व्यवस्था से जुड़े शब्द जैसे- ग्राम सभा, राजस्व गाँव, आंगनवाड़ी, पंचायत सचिव के लिए अन्य भाषाओं में केवल आंशिक समकक्ष शब्द मिलते हैं। उदाहरणस्वरूप, Gram Sabha को केवल village council कहना उसकी संवैधानिक भूमिका और कार्यक्षेत्र को पूरी तरह स्पष्ट नहीं करता। इसलिए अनुवादक को अक्सर शब्द को मूल रूप में रखते हुए अतिरिक्त व्याख्या जोड़नी पड़ती है। इससे यह स्पष्ट होता है कि स्थानीयपरक शब्दों की समस्या केवल भाषिक नहीं, बल्कि प्रशासनिक और संस्थागत भी होती है।

स्थानीयपरक मुहावरे और लोकोक्तियाँ इस सीमा को और अधिक जटिल बना देती हैं। उदाहरण के लिए- "अब तो दूध का जला छाछ भी फूँक-फूँक कर पीता है", यह अभिव्यक्ति अनुभव से उपजी सावधानी को दर्शाती है। इसका शाब्दिक अनुवाद अर्थहीन होगा। इसी प्रकार- "अपने घर की आग पड़ोस को भी जलाती है" जैसी लोकोक्ति का प्रभाव केवल उसी सांस्कृतिक संदर्भ में पूर्ण रूप से समझा जा सकता है। लक्ष्य भाषा में समान प्रभाव उत्पन्न करने वाली अभिव्यक्ति हर बार उपलब्ध हो, यह आवश्यक नहीं है। परिणामस्वरूप अनुवाद में या तो भाव का सरलीकरण हो जाता है या सांस्कृतिक विशिष्टता का ह्रास।

14.7 पाठ की प्रकृति और अनुवाद की सीमाएँ

अनुवाद की प्रक्रिया को केवल एक भाषा से दूसरी भाषा में शब्दों के रूपांतरण के रूप में नहीं देखा जा सकता। वास्तव में अनुवाद उस पाठ की प्रकृति, उसके उद्देश्य और उसकी संप्रेषणात्मक भूमिका से गहरे रूप में जुड़ा होता है। प्रत्येक पाठ अपने भीतर एक विशिष्ट संरचना, शैली और प्रयोजन को समाहित करता है। यही कारण है कि किसी पाठ का अनुवाद कभी सरल प्रतीत होता है, तो कभी अत्यंत जटिल। साहित्यिक, प्रशासनिक, वैज्ञानिक, तकनीकी अथवा मीडिया से जुड़े पाठ- सभी की भाषिक प्रकृति भिन्न होती है और इसी भिन्नता के कारण अनुवाद की सीमाएँ भी अलग-अलग स्तरों पर उभरकर सामने आती हैं। अनुवादक के लिए यह आवश्यक हो जाता है कि वह सबसे पहले यह समझे कि मूल पाठ का उद्देश्य भावात्मक अभिव्यक्ति है, तथ्यात्मक सूचना देना है या स्पष्ट निर्देश प्रदान करना है, क्योंकि इसी के आधार पर अनुवाद की दिशा तय होती है। साहित्यिक पाठों की प्रकृति मूलतः भावप्रधान और शैलीनिष्ठ होती है। कविता, कहानी, उपन्यास या नाटक में शब्द केवल अर्थ के वाहक नहीं होते, बल्कि वे भाव, प्रतीक, ध्वनि और सांस्कृतिक संकेतों को भी व्यक्त करते हैं। उदाहरण के लिए, यदि किसी कहानी में वाक्य आता है- "उसके जीवन में साँझ उतर आई थी" तो इसका आशय केवल दिन के अंत से नहीं, बल्कि जीवन के अवसान, थकान या निराशा से होता है। यदि इसका अनुवाद केवल Evening had come into his life कर दिया जाए, तो मूल भाव पूरी तरह स्पष्ट नहीं हो पाता। यहाँ अनुवादक को लक्ष्य भाषा में ऐसी संरचना तलाशनी पड़ती है, जो जीवन की इस सांकेतिक अवस्था को व्यक्त कर सके। इसी स्तर पर साहित्यिक पाठ में अनुवाद की सीमा उभरती है, क्योंकि भाव और प्रतीक को दूसरी भाषा में उसी तीव्रता से स्थानांतरित करना प्रायः

संभव नहीं होता। इसके विपरीत, साहित्येतर या कार्यालयी पाठों की प्रकृति अपेक्षाकृत वस्तुनिष्ठ और उद्देश्यपरक होती है। प्रशासनिक, विधिक या सरकारी दस्तावेजों में भाषा का प्रयोग स्पष्ट, एकार्थी और निश्चित अर्थ में किया जाता है। उदाहरण के लिए, किसी आदेश में लिखा वाक्य- "यह आदेश तत्काल प्रभाव से लागू होगा" का अनुवाद करते समय शब्दों में किसी प्रकार का भावात्मक या शैलीगत परिवर्तन नहीं किया जा सकता। यदि इसे This order may be implemented soon अनूदित कर दिया जाए, तो "तत्काल" का आशय समाप्त हो जाता है। यहाँ अनुवाद की सीमा रचनात्मकता नहीं, बल्कि अर्थ की सटीकता और संरचनात्मक अनुशासन से निर्धारित होती है। फिर भी, अलग-अलग भाषाओं की प्रशासनिक परंपराओं के कारण समान पदों के लिए उपयुक्त शब्द ढूँढना कई बार कठिन हो जाता है। वैज्ञानिक और तकनीकी पाठों की प्रकृति और भी अधिक विशिष्ट होती है। ऐसे पाठों में प्रयुक्त शब्द सामान्य भाषा में प्रचलित अर्थ से अलग, निश्चित वैज्ञानिक या तकनीकी परिभाषा के अंतर्गत प्रयुक्त होते हैं। उदाहरण के लिए, विज्ञान के पाठ में प्रयुक्त शब्द "कार्य" का अर्थ सामान्य भाषा में किए गए किसी भी काम से नहीं, बल्कि भौतिकी में परिभाषित ऊर्जा संबंधी प्रक्रिया से होता है। यदि अनुवादक विषय ज्ञान से परिचित न हो, तो वह शब्द का सामान्य अर्थ लेकर अनुवाद कर सकता है, जिससे पाठ भ्रामक हो जाता है। इस स्तर पर अनुवाद की सीमा भाषिक न होकर ज्ञानात्मक और वैचारिक बन जाती है। मीडिया पाठों की प्रकृति अपेक्षाकृत समसामयिक, प्रभावशाली और पाठक केन्द्रित होती है। समाचार, विज्ञापन और डिजिटल सामग्री में भाषा का प्रयोग तात्कालिक प्रभाव उत्पन्न करने के लिए किया जाता है। उदाहरण के लिए, किसी विज्ञापन की पंक्ति- "एक कदम बेहतर भविष्य की ओर" यदि शब्दशः अनूदित कर दी जाए, तो लक्ष्य भाषा में उसका प्रभाव कम हो सकता है। इसलिए अनुवादक को मूल संदेश बनाए रखते हुए भाषा और शैली में परिवर्तन करना पड़ता है। इस प्रक्रिया में कभी-कभी मूल पाठ से कुछ दूरी भी बन जाती है। यही मीडिया पाठ के स्तर पर अनुवाद की एक महत्त्वपूर्ण सीमा है।

(1) साहित्यिक पाठ में भाव, शैली और अर्थ का अनुवाद

(क) सैद्धांतिक विवेचन

साहित्यिक पाठ में भाव और शैली एक-दूसरे से इस प्रकार जुड़ी होती हैं कि उन्हें अलग-अलग करके नहीं समझा जा सकता। साहित्यकार अपने अनुभवों, संवेदनाओं और अंतर्मन की अवस्थाओं को केवल कथ्य के माध्यम से व्यक्त नहीं करता, बल्कि वह भाषा की लय, शब्द चयन, प्रतीकों, उपमाओं, बिंबों और व्यंजनाओं के सहारे अपने भावों को कलात्मक रूप देता है। यही शैली साहित्यिक पाठ की आत्मा बनती है और पाठ को सामान्य भाषा से अलग पहचान प्रदान करती है। जब पाठक किसी रचना को पढ़ता है, तो वह केवल सूचना ग्रहण नहीं करता, बल्कि भाषा के सौंदर्य के माध्यम से लेखक की अनुभूति को अनुभव करता है।

साहित्यिक अनुवाद की प्रक्रिया में यह संबंध और अधिक महत्त्वपूर्ण हो जाता है। यदि अनुवादक केवल शाब्दिक अर्थ को केंद्र में रखकर अनुवाद करता है, तो वह मूल रचना के भावात्मक और सौंदर्यात्मक पक्ष की उपेक्षा कर देता है। ऐसे में अनुवाद यद्यपि अर्थ के स्तर पर सही प्रतीत हो सकता है, किंतु वह मूल पाठ के प्रभाव को उत्पन्न करने में असफल रहता है। उदाहरण के लिए, किसी कविता में प्रयुक्त प्रतीक या बिंब यदि केवल शब्दशः अनूदित कर दिए जाएँ, तो वे लक्ष्य भाषा के पाठक के लिए अर्थहीन या सपाट हो सकते हैं। इससे रचना की आत्मा नष्ट हो जाती है। इसी कारण साहित्यिक अनुवाद में भावानुकूलता और संदर्भानुकूलता को विशेष महत्व दिया जाता है। अनुवादक को यह समझना पड़ता है कि कौन-सा शब्द केवल सूचना देता है और कौन-सा शब्द भाव, अनुभूति और सांस्कृतिक संकेत का संवाहक है। कई बार एक ही शब्द के अनेक अर्थ होते हैं, और अनुवादक को संदर्भ के आधार पर यह निर्णय लेना पड़ता है कि कौन-सा अर्थ उपयुक्त है। भाव और शैली के बीच संतुलन बनाए बिना किया गया अनुवाद प्रायः नीरस, कृत्रिम और प्रभावहीन हो जाता है। अतः साहित्यिक अनुवाद की सफलता इसी में निहित है कि अनुवादक मूल रचना के भाव सौंदर्य और शैलीगत विशेषताओं को लक्ष्य भाषा में यथासंभव जीवंत रूप में प्रस्तुत कर सके।

(ख) उदाहरण

अंग्रेजी मूल काव्यांश:

Dreaming when Dawn's left hand is in the sky,

I heard a voice within the tavern cry,

Awake, my little ones, and fill the cup,

Before life's liquor in its cup be dry.

हिंदी भावानुवाद:

जब उषा का हाथ नभ में फैला था,

मदिरालय से आती आवाज मैंने सुनी,

उठो मेरे बालको, प्याले भर लो,

जीवन की मदिरा सूख जाने से पहले।

व्याख्या:

इस उदाहरण से स्पष्ट होता है कि साहित्यिक अनुवाद में शब्दानुवाद के स्थान पर भावानुवाद अधिक प्रभावी होता है। यहाँ 'Dawn's left hand' समय और चेतना का प्रतीक है, जबकि 'life's liquor' जीवन की क्षणभंगुरता को दर्शाता है। हिंदी अनुवाद में इन प्रतीकों को सांस्कृतिक अनुकूलता के साथ रूपांतरित किया गया है, जिससे मूल भाव सुरक्षित रहता है।

(2) काव्य अनुवाद की जटिलता

(क) सैद्धांतिक विवेचन- काव्य साहित्य भाषा की अभिव्यक्ति का सबसे संवेदनशील और कलात्मक रूप माना जाता है। इसमें भाषा केवल अर्थ वहन का माध्यम नहीं रहती, बल्कि वह स्वयं एक सौंदर्यात्मक अनुभव बन जाती है। छंद, लय, तुक, रस, अलंकार और ध्वनि सौंदर्य- ये सभी तत्व मिलकर कविता को विशिष्ट बनाते हैं। कवि अपने भावों और अनुभूतियों को शब्दों की ध्वनि, गति और संरचना के माध्यम से इस प्रकार गढ़ता है कि पाठक केवल अर्थ ही नहीं, बल्कि एक गहरी भावनात्मक अनुभूति भी प्राप्त करता है। इसी कारण काव्य अनुवाद अन्य साहित्यिक विधाओं की अपेक्षा अधिक जटिल और चुनौतीपूर्ण कार्य बन जाता है।

काव्य अनुवाद में अनुवादक के सामने सबसे बड़ी सैद्धांतिक समस्या यह होती है कि वह अर्थ को प्राथमिकता दे या लय और छंद को। यदि अनुवादक मूल कविता के अर्थ को पूरी तरह सुरक्षित रखने का प्रयास करता है, तो प्रायः छंद, तुक और ध्वनि सौंदर्य नष्ट हो जाते हैं। इसके विपरीत, यदि वह मूल छंद और लय को बनाए रखने का प्रयास करता है, तो अर्थ में परिवर्तन या संक्षेप अनिवार्य हो जाता है। इस प्रकार अर्थ और रूप के बीच एक प्रकार का द्वंद्व उत्पन्न होता है, जिसे पूरी तरह सुलझाना संभव नहीं होता।`

(ख) उदाहरण

हिंदी मूल:

कहत नटत रीझत खीझत,

मिलत खिलत लजियात।

अंग्रेज़ी भावानुवाद:

The dancer speaks with smiling eyes,

Meeting, blooming, yet veiled in shy delight.

व्याख्या:

यहाँ 'रीझत', 'खिलत' और 'लजियात' जैसे शब्द भावों की सूक्ष्म परतें रचते हैं। अंग्रेजी अनुवाद में इन्हें 'smiling eyes' और 'shy delight' के माध्यम से भावात्मक रूप से व्यक्त किया गया है। इससे स्पष्ट होता है कि काव्य अनुवाद में पूर्ण समानता नहीं, बल्कि भावात्मक साम्य ही लक्ष्य होता है।

(3) प्रतीक, अलंकार और बहुअर्थी शब्दों का अनुवाद

(क) सैद्धांतिक विवेचन- साहित्यिक भाषा की सबसे महत्त्वपूर्ण विशेषता उसका प्रतीकात्मक और बहुअर्थी होना है। साहित्य में शब्द केवल अपने कोशीय (dictionary) अर्थ तक सीमित नहीं रहते, बल्कि वे संदर्भ, संस्कृति, परंपरा और भाव-संवेदना के आधार पर अनेक अर्थ ग्रहण कर लेते हैं। प्रतीक, अलंकार और बहुअर्थी शब्द साहित्यिक अभिव्यक्ति को गहन, कलात्मक और प्रभावशाली बनाते हैं। यही तत्व साहित्य को सामान्य भाषिक संप्रेषण से अलग करते हैं, परंतु अनुवाद की दृष्टि से यही तत्व सबसे अधिक जटिलताएँ भी उत्पन्न करते हैं।

प्रतीकात्मक शब्द किसी ठोस वस्तु, व्यक्ति या स्थिति के माध्यम से किसी अमूर्त भाव या विचार को व्यक्त करते हैं। उदाहरणतः 'दीपक' शब्द केवल प्रकाश का साधन नहीं, बल्कि आशा, ज्ञान और चेतना का प्रतीक भी हो सकता है। इसी प्रकार 'अंधकार' अज्ञान, भय या सामाजिक दमन का संकेतक बन जाता है। जब ऐसे प्रतीकों का अनुवाद किया जाता है, तो अनुवादक के सामने यह समस्या आती है कि लक्ष्य भाषा और संस्कृति में वही प्रतीक समान अर्थ और प्रभाव उत्पन्न करेगा या नहीं। यदि प्रतीक का सीधा अनुवाद कर दिया जाए, तो संभव है कि उसका सांस्कृतिक और भावात्मक अर्थ नष्ट हो जाए। बहुअर्थी शब्दों की समस्या इससे भी अधिक जटिल है। एक ही शब्द अलग-अलग संदर्भों में भिन्न अर्थ ग्रहण करता है। उदाहरण के लिए 'हरि' शब्द का प्रयोग ईश्वर, हरियाली, सूर्य अथवा चेतना के अर्थ में हो सकता है। यदि अनुवादक किसी एक अर्थ को चुनता है, तो अन्य संभावित अर्थ स्वतः समाप्त हो जाते हैं। इससे मूल साहित्यिक पाठ की बहुअर्थकता (polysemy) और व्यंजना क्षीण हो जाती है। कई बार यह निर्णय करना अत्यंत कठिन हो जाता है कि कौन-सा अर्थ प्रधान है और कौन-सा गौण। अलंकारों- जैसे उपमा, रूपक, मानवीकरण आदि का अनुवाद भी इसी श्रेणी की चुनौती है। अलंकार भाषा की शोभा बढ़ाते हैं और भावों को सघन बनाते हैं। किंतु सभी अलंकार हर भाषा में समान रूप से प्रभावी नहीं होते। इसलिए अनुवादक को कभी-कभी अलंकार को यथावत रखने, कभी उसके समतुल्य अलंकार खोजने और कभी केवल भाव को सुरक्षित रखने का निर्णय लेना पड़ता है।

(ख) उदाहरण

हिंदी मूल:

हरि बोलो, हरि में समाओ।

संभावित अंग्रेजी अनुवाद:

Chant the name of Hari and merge into the divine.

व्याख्या:

यहाँ 'हरि' शब्द ईश्वर, हरियाली और चेतना- तीनों अर्थों को समेटे हुए है। अंग्रेजी अनुवाद में केवल 'divine' लिखने से बहुअर्थिता सीमित हो जाती है। इसलिए कई बार अनुवादक को व्याख्या या टिप्पणी का सहारा लेना पड़ता है।

अपनी प्रगति जांचें

प्रश्न 1:- भाषा की संरचना, अर्थ और सांस्कृतिक संदर्भ के आधार पर स्पष्ट कीजिए।

प्रश्न 2:- भाषा की प्रकृति के स्तर पर अनुवाद की प्रमुख सीमाएँ कौन-कौन सी हैं?

प्रश्न 3:- सामाजिक-सांस्कृतिक संदर्भ अनुवाद को किस प्रकार प्रभावित करते हैं?`

(4) साहित्यिक अनुवाद में अनुवादक की भूमिका

(क) सैद्धांतिक विवेचन- साहित्यिक अनुवाद की प्रक्रिया को केवल एक भाषा से दूसरी भाषा में शब्दों के रूपांतरण के रूप में नहीं देखा जा सकता। वास्तव में साहित्यिक अनुवाद में अनुवादक की भूमिका एक सह-सर्जक (co-creator) की होती है, क्योंकि उसे मूल लेखक की रचना दृष्टि, भाव लोक और संवेदनात्मक संरचना में प्रवेश कर उसी प्रभाव को लक्ष्य भाषा में पुनः निर्मित करना होता है। साहित्यकार जिस अनुभूति, कल्पना और सौंदर्यबोध के साथ अपनी रचना करता है, अनुवादक को भी उसी मानसिक और भावनात्मक स्तर पर पहुँचकर कार्य करना पड़ता है। यही कारण है कि साहित्यिक अनुवाद एक रचनात्मक प्रक्रिया मानी जाती है, न कि यांत्रिक या तकनीकी कार्य।

मूल साहित्यिक पाठ में शब्दों के पीछे भाव, बिंब, प्रतीक, सांस्कृतिक संकेत और ध्वन्यात्मक सौंदर्य छिपा होता है। यदि अनुवादक केवल शब्दार्थ को पकड़कर अनुवाद करता है, तो रचना का भावात्मक और कलात्मक पक्ष नष्ट हो जाता है। इसके विपरीत, जब अनुवादक मूल लेखक के भाव लोक को समझकर लक्ष्य भाषा में समान अनुभूति जगाने का प्रयास करता है, तब वह एक नई रचना का सृजन करता है, जो मूल से प्रेरित होती है, किंतु लक्ष्य भाषा में स्वतंत्र अस्तित्व भी रखती है। इस प्रक्रिया में अनुवादक की साहित्यिक संवेदना, भाषा बोध और सृजनात्मक क्षमता निर्णायक भूमिका निभाती है। सह-सर्जक के रूप में अनुवादक को यह तय करना पड़ता है कि कहाँ शब्द निष्ठा आवश्यक है और कहाँ भावानुकूल स्वतंत्रता। उसे मूल पाठ के प्रति निष्ठा और लक्ष्य भाषा की स्वाभाविकता के बीच संतुलन साधना होता है। अत्यधिक शाब्दिक अनुवाद पाठ को बोझिल बना देता है, जबकि अत्यधिक स्वतंत्रता मूल रचना से विचलन पैदा कर सकती है। इसलिए साहित्यिक अनुवाद में अनुवादक की भूमिका एक संवेदनशील रचनाकार की होती है, जो दो भाषाओं और दो संस्कृतियों के बीच सेतु बनाकर साहित्यिक सौंदर्य और संवेदना का सफल संप्रेषण करता है।

(ख) उदाहरण

हिंदी मूल:

उसकी खामोशी में भी एक पूरी कथा बसती थी।

अंग्रेजी अनुवाद:

Even her silence carried an entire story within it.

व्याख्या:

यह अनुवाद शब्दों से अधिक भाव को स्थानांतरित करता है। यही साहित्यिक अनुवाद की सफलता का मापदंड है। अनुवादक की साहित्यिक संवेदना और सृजनात्मक क्षमता ही साहित्यिक अनुवाद को सार्थक बनाती है।

मीडिया साहित्य के स्तर पर अनुवाद

मीडिया साहित्य में समाचार पत्र, टेलीविज़न समाचार, विज्ञापन, रेडियो, डिजिटल मीडिया और सोशल मीडिया से संबंधित सामग्री आती है। मीडिया अनुवाद का उद्देश्य केवल सूचना देना नहीं, बल्कि पाठक या दर्शक का ध्यान आकर्षित करना भी होता है। इसलिए इसमें भाषा को सरल, प्रभावशाली और संक्षिप्त रखा जाता है। मीडिया अनुवाद में सबसे बड़ी चुनौती यह होती है कि मूल भाषा का संदेश कम शब्दों में लक्ष्य भाषा में उसी प्रभाव के साथ प्रस्तुत किया जाए। समाचार शीर्षक और विज्ञापन वाक्य विशेष रूप से अनुवाद की कठिन परीक्षा होते हैं।

उदाहरण 1 (अंग्रेजी समाचार शीर्षक)

City breathes easy after heavy rainfall

हिंदी अनुवाद

भारी बारिश के बाद शहर को मिली राहत

व्याख्या:

यहाँ "breathes easy" एक मुहावरेदार प्रयोग है। इसका शाब्दिक अनुवाद "आसानी से साँस लेता है" करने पर समाचार शैली नहीं बनती। इसलिए भावानुसार "राहत मिलना" प्रयोग किया गया है। यह मीडिया अनुवाद की विशेषता है कि भाव को प्राथमिकता दी जाती है, शब्दों को नहीं।

महत्वपूर्ण बिंदु

साहित्यिक, वैज्ञानिक, मीडिया तथा कार्यालयी पाठों की भिन्न प्रकृति के कारण अनुवाद की सीमाएँ भी अलग-अलग रूपों में प्रकट होती हैं, जिससे अनुवादक को पाठ-प्रकृति के अनुसार रणनीति अपनानी पड़ती है।

14.8 वैज्ञानिक और तकनीकी साहित्य के पाठ के स्तर पर अनुपाद:

वैज्ञानिक एवं तकनीकी साहित्य का अनुवाद आधुनिक ज्ञान-समाज की एक अनिवार्य आवश्यकता बन चुका है। विज्ञान, प्रौद्योगिकी, चिकित्सा, अभियंत्रिकी, सूचना प्रौद्योगिकी, कृषि विज्ञान तथा पर्यावरण अध्ययन जैसे क्षेत्रों में निरंतर नवीन शोध और आविष्कार हो रहे हैं। इन क्षेत्रों में उपलब्ध ज्ञान यदि केवल एक सीमित भाषा तक ही सीमित रह जाए, तो उसका सामाजिक और शैक्षिक लाभ व्यापक स्तर पर नहीं पहुँच पाता। इसलिए वैज्ञानिक एवं तकनीकी अनुवाद का प्रमुख उद्देश्य इस विशिष्ट ज्ञान को विभिन्न भाषाओं के माध्यम से अधिकाधिक लोगों तक पहुँचाना है, ताकि शिक्षा, अनुसंधान और व्यावहारिक उपयोग के नए अवसर सृजित हो सकें।

इस प्रकार के अनुवाद में सटीकता, तथ्यात्मकता और पारिभाषिक शुद्धता सर्वोपरि होती है। साहित्यिक अनुवाद की भाँति यहाँ भावात्मक लचीलापन या सृजनात्मक स्वतंत्रता की गुंजाइश बहुत कम होती है। वैज्ञानिक पाठों में प्रयुक्त प्रत्येक शब्द, प्रतीक, सूत्र या संकल्पना का एक निश्चित और स्थिर अर्थ होता है। यदि अनुवाद में किसी भी स्तर पर अस्पष्टता या त्रुटि आ जाए, तो उसका सीधा प्रभाव ज्ञान की विश्वसनीयता और उपयोगिता पर पड़ता है। उदाहरण के लिए, चिकित्सा विज्ञान में किसी रोग, औषधि या उपचार विधि से संबंधित शब्द का गलत अनुवाद गंभीर परिणाम उत्पन्न कर सकता है। इसलिए वैज्ञानिक अनुवाद में अनुवादक का विषय ज्ञान और तकनीकी समझ अत्यंत आवश्यक मानी जाती है। वैज्ञानिक एवं तकनीकी साहित्य में पारिभाषिक शब्दावली की भूमिका विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण होती है। कई बार लक्ष्य भाषा में किसी तकनीकी शब्द का प्रचलित समतुल्य उपलब्ध नहीं होता। ऐसी स्थिति में या तो शब्द को लिप्यंतरण के रूप में स्वीकार किया जाता है या फिर नए पारिभाषिक शब्द का निर्माण किया जाता है। दोनों ही स्थितियों में एकरूपता और मानकीकरण आवश्यक होता है, ताकि पाठक भ्रमित न हों। इस संदर्भ में शब्दकोशों, मानक शब्दावलियों और विशेषज्ञ परामर्श की भूमिका महत्त्वपूर्ण हो जाती है।

वैज्ञानिक भाषा वर्णनात्मक, वस्तुनिष्ठ और तर्कसंगत होती है। उदाहरण-

अंग्रेजी:

"Photosynthesis is the process by which green plants convert sunlight into chemical energy."

हिंदी (अनुवाद):

"प्रकाश संश्लेषण वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा हरे पौधे सूर्य के प्रकाश को रासायनिक ऊर्जा में परिवर्तित करते हैं।"

यहाँ किसी भी प्रकार की भावात्मकता या शैलीगत अलंकरण नहीं है। प्रत्येक तकनीकी शब्द- Photosynthesis, chemical energy का मानक हिन्दी रूप प्रयोग किया गया है, जिससे अर्थ में कोई भ्रम न उत्पन्न हो। तकनीकी अनुवाद में सूत्र, मापन इकाइयाँ और संक्षिप्त शब्द (Abbreviations) भी यथावत रखे जाते हैं-

अंग्रेजी:

"The temperature was recorded at 37°C."

हिंदी: "तापमान 37°C दर्ज किया गया।"

यहाँ °C को बदला नहीं गया, क्योंकि वैज्ञानिक लेखन में प्रतीकों की सार्वभौमिकता आवश्यक होती है। इस प्रकार वैज्ञानिक अनुवाद में भाषा से अधिक ज्ञान की शुद्ध प्रस्तुति महत्वपूर्ण होती है।

अपनी प्रगति जांचें

प्रश्न 4:- स्थानीयपरक शब्दों और अभिव्यक्तियों का अनुवाद क्यों कठिन होता है?

प्रश्न 5:- साहित्यिक पाठ और वैज्ञानिक/तकनीकी पाठ के अनुवाद में क्या मूलभूत अंतर है?

प्रश्न 6:- मीडिया अथवा कार्यालयी पाठ के संदर्भ में विवेचना कीजिए।

14.9 सारांश

अनुवाद को सामान्यतः दो भाषाओं के बीच अर्थ संप्रेषण की प्रक्रिया माना जाता है, किंतु व्यवहार में यह अनेक भाषिक, सांस्कृतिक, सामाजिक और पाठगत सीमाओं से घिरी एक जटिल प्रक्रिया है। प्रत्येक भाषा की अपनी संरचना, व्याकरण, अर्थ व्यवस्था और अभिव्यक्ति परंपरा होती है, जिन्हें पूर्ण रूप से दूसरी भाषा में स्थानांतरित करना संभव नहीं होता। इसी कारण अनुवाद में अर्थ-हानि, अर्थ परिवर्तन और संरचनात्मक परिवर्तन अनिवार्य हो जाते हैं। भाषा केवल शब्दों का समूह नहीं, बल्कि संस्कृति, इतिहास और सामाजिक अनुभवों की वाहक होती है। इसलिए सांस्कृतिक संदर्भ, मुहावरे, लोकोक्तियाँ, सामाजिक संबोधन और भावात्मक शब्द अनुवाद में विशेष कठिनाई उत्पन्न करते हैं। भाषा की बहुअर्थकता, लिंग व्यवस्था, वाक्य विन्यास और ध्वन्यात्मक सौंदर्य भी अनुवाद की सीमाओं को स्पष्ट करते हैं। स्थानीयपरक शब्द, प्रशासनिक पद, लोककथात्मक प्रतीक और सांस्कृतिक संकेत लक्ष्य भाषा में पूर्ण समतुल्य न मिलने के कारण अनुवाद को या तो व्याख्यात्मक बनाते हैं या आंशिक रूप से अपूर्ण छोड़ देते हैं। पाठ की प्रकृति के अनुसार अनुवाद की सीमाएँ भी भिन्न होती हैं। साहित्यिक पाठों में भाव, शैली और प्रतीकों का अनुवाद सबसे जटिल होता है, जबकि वैज्ञानिक और तकनीकी साहित्य में सटीकता, तथ्यात्मकता और पारिभाषिक शुद्धता सर्वोपरि होती है। इस प्रकार अनुवाद एक यांत्रिक नहीं, बल्कि विवेकशील, संतुलन आधारित और सृजनात्मक प्रक्रिया है।

14.10 प्रगति विवरण (केवल रूपरेखा)

प्रश्न 1 का उत्तर: भाषा की संरचना, अर्थ और सांस्कृतिक संदर्भ के कारण अनुवाद को पूर्ण समानता की प्रक्रिया नहीं माना जा सकता। प्रत्येक भाषा की अपनी व्याकरणिक बनावट, अर्थ निर्माण की प्रणाली तथा सांस्कृतिक पृष्ठभूमि होती है, जो दूसरी भाषा से भिन्न होती है। इस कारण मूल भाषा के अर्थ और अभिव्यक्ति का वही रूप लक्ष्य भाषा में पूरी तरह सुरक्षित नहीं रह पाता। इस संदर्भ में ऊपर दिए गए सैद्धांतिक विवेचन को देखा जा सकता है।

प्रश्न 2 का उत्तर: भाषा की प्रकृति के स्तर पर अनुवाद की प्रमुख सीमाएँ उसकी संरचनात्मक भिन्नता, बहुअर्थकता, लिंग व्यवस्था, सामाजिक संबोधन तथा भावात्मक अभिव्यक्ति से संबंधित होती हैं। इन तत्वों के कारण स्रोत भाषा के अर्थ सूक्ष्म संकेत लक्ष्य भाषा में आंशिक रूप से परिवर्तित हो जाते हैं। इन सीमाओं की विस्तृत चर्चा इकाई के संबंधित खंड में की गई है।

प्रश्न 3 का उत्तर: सामाजिक-सांस्कृतिक संदर्भ अनुवाद को गहराई से प्रभावित करते हैं, क्योंकि भाषा समाज के मूल्यों, विश्वासों और परंपराओं से निर्मित होती है। लोकोक्तियाँ, मुहावरे और सांस्कृतिक प्रतीक किसी विशेष समाज से जुड़े होते हैं, जिनका प्रत्यक्ष समतुल्य दूसरी भाषा में प्रायः उपलब्ध नहीं होता। इस विषय को स्पष्ट करने के लिए ऊपर दिए गए सांस्कृतिक उदाहरण सहायक हैं।

प्रश्न 4 का उत्तर: स्थानीयपरक शब्दों और अभिव्यक्तियों का अनुवाद कठिन होता है, क्योंकि वे किसी विशिष्ट भौगोलिक, सामाजिक और सांस्कृतिक परिवेश से जुड़े होते हैं। लक्ष्य भाषा में उनके लिए समान अर्थ और प्रभाव उत्पन्न करने वाले शब्दों का अभाव रहता है। इस कारण अनुवाद या तो व्याख्यात्मक हो जाता है या आंशिक अर्थ-हानि का शिकार होता है, जैसा कि इकाई में स्पष्ट किया गया है।

प्रश्न 5 का उत्तर: साहित्यिक पाठ और वैज्ञानिक/तकनीकी पाठ के अनुवाद में मूलभूत अंतर उनके उद्देश्य और भाषा प्रकृति के कारण होता है। साहित्यिक अनुवाद में भाव, शैली और सौंदर्य की रक्षा आवश्यक होती है, जबकि वैज्ञानिक/तकनीकी अनुवाद में सटीकता, पारिभाषिक शुद्धता और तथ्यात्मक स्पष्टता को प्राथमिकता दी जाती है। इस अंतर को समझने हेतु संबंधित अनुभाग का अवलोकन अपेक्षित है।

प्रश्न 6 का उत्तर: मीडिया तथा कार्यालयी पाठ के संदर्भ में अनुवाद का उद्देश्य त्वरित, स्पष्ट और प्रभावी संप्रेषण होता है। मीडिया अनुवाद में आकर्षण और प्रभाव महत्वपूर्ण होते हैं, जबकि कार्यालयी अनुवाद में स्पष्टता और एकार्थकता अनिवार्य होती है। इन दोनों प्रकार के पाठों में अनुवादक की भूमिका और सीमाएँ भिन्न होती हैं, जिनकी व्याख्या इकाई में विस्तार से दी गई है।

🔍 14.11 अधिक जानने के लिए पढ़ें

- तिवारी, भोलानाथ. (2004). अनुवाद-विज्ञान : सिद्धांत और प्रयोग. इलाहाबाद: किताब महल।
- वर्मा, धीरेन्द्र. (1998). भाषाविज्ञान और हिंदी भाषा. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन।
- सिंह, रामकुमार. (2010). भारतीय भाषाएँ : संरचना और संपर्क. नई दिल्ली: साहित्य भवन।
- मिश्र, कैलाशचंद्र. (2006). हिंदी भाषा की लिपि और ध्वनि-व्यवस्था. वाराणसी: नागरी प्रचारिणी सभा।
- त्रिपाठी, रामदेव. (2012). अनुवाद और भाषा-संरचना. नई दिल्ली: वाणी प्रकाशन।
- शुक्ल, सत्यदेव. (2009). भारतीय भाषाओं का तुलनात्मक अध्ययन. प्रयागराज: लोकभारती प्रकाशन।
- अग्रवाल, सुधीर. (2015). लिप्यंतरण : सिद्धांत और व्यवहार. नई दिल्ली: नेशनल पब्लिशिंग हाउस।
- पाण्डेय, शिवकुमार. (2011). देवनागरी लिपि : विकास और प्रयोग. भोपाल: मध्यप्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादमी।
- सिंह, चंद्रभानु. (2014). अनुवाद, लिप्यंतरण और भाषा-संपर्क. पटना: बिहार हिंदी ग्रंथ अकादमी।
- दुबे, महेंद्रनाथ. (2008). भारतीय भाषाओं में अनुवाद की परंपरा. वाराणसी: विद्या विहार।

❓ 14.12 अभ्यास

(क) संक्षिप्त प्रश्नों के उत्तर लिखिए—

1. अनुवाद की प्रक्रिया में अर्थ और स्वरूप के स्तर पर कौन-सी सीमाएँ उत्पन्न होती हैं?
2. भाषा की संरचनात्मक भिन्नताएँ अनुवाद को किस प्रकार प्रभावित करती हैं?
3. बहुअर्थक शब्द अनुवाद में किस प्रकार समस्या उत्पन्न करते हैं?

4. सामाजिक संबोधन की भिन्नता अनुवाद को क्यों जटिल बनाती है?
5. स्थानीयपरक शब्दों के अनुवाद में मुख्य कठिनाई क्या होती है?
6. वैज्ञानिक अनुवाद में शुद्धता को क्यों सर्वोपरि माना जाता है?

(ख) निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लिखिए-

1. भाषा की प्रकृति के स्तर पर अनुवाद की सीमाओं का विवेचन प्रस्तुत कीजिए।
2. सामाजिक और सांस्कृतिक संदर्भ अनुवाद की प्रक्रिया को किस प्रकार सीमित करते हैं, इसका विश्लेषण कीजिए।
3. लोककथाओं और मुहावरों के अनुवाद में आने वाली समस्याओं पर प्रकाश डालिए।
4. स्थानीयपरक अभिव्यक्तियों के अनुवाद की सीमाओं को उदाहरणों सहित स्पष्ट कीजिए।
5. साहित्यिक पाठ के अनुवाद में भाव, शैली और प्रतीक की भूमिका का विवेचन प्रस्तुत कीजिए।
6. वैज्ञानिक, तकनीकी तथा मीडिया पाठों के अनुवाद की विशेषताओं और सीमाओं का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत कीजिए।

शब्दकोश:-

बहुअर्थकता : बहुअर्थिता, स्थानीयपरकता : क्षेत्रीयता, संरचना : विन्यास, सांस्कृतिक : परंपरागत इत्यादि।

*** ***** ***